राजस्थान
1987

सम्पादक

डॉ० मनोहर प्रभाकर
संयुक्त निदेशक, जन सम्पर्क निदेशालय
राजस्थान

□

अरविन्द बुक हाऊस
चौड़ा रास्ता
जयपुर 302003

प्रकाशक :
अरविन्द बुक हाऊस
चौड़ा रास्ता जयपुर-3
फोन : 72695

मूल्य : रु. 40/-

मुद्रक :
बाहुबली प्रिन्टर्स
लालकोठी, टोंक रोड
जयपुर

सृजन सहयोग

के. पी. आरोड़ा

घनश्याम शर्मा

□

शोध-संदर्भ-प्रस्तुति

आदर्श शर्मा

प्रस्तावना

पाठकों, विद्यार्थियों और प्रतियोगी परीक्षाओं में बैठने वाले उम्मीदवारों की आवश्यकता पूर्ति से प्रेरित यह ग्रन्थ राजस्थान के इतिहास, संस्कृति, साहित्य, कला और बहुआयामी विकास की झांकी एक स्थान पर प्रस्तुत करने का विनम्र प्रयास है। प्रामाणिक स्रोतों से संकलित सामग्री पर आधारित जो दिग्दर्शन इसके कलेवर में कराया गया है, वह राजस्थान के बारे में जिज्ञासा रखने वाले प्रत्येक व्यक्ति के लिए उपादेय हो सके, यही प्रयत्न इसके प्रस्तुतीकरण की पृष्ठभूमि में रहा है।

हम उन सब विद्वानों के प्रति आभार-नत हैं, जिनके ग्रन्थों, लेखों अथवा अन्य रचनाओं से हमें इसके लेखन में सहायता मिली है। विशेष रूप से हम श्री रामगोपाल विजयवर्गीय, श्री मोहनलाल गुप्त, श्री रावत सारस्वत, श्री नन्दकिशोर पारीक, श्री जयनारायण आसोपा तथा श्रीमती सावित्री परमार के प्रति कृतज्ञ हैं, जिनके द्वारा लिखित सामग्री का इसमें यथा स्थान उपयोग किया गया है' पुस्तक में चित्रकला का अध्याय श्रीमती चन्द्रावती शर्मा द्वारा और स्वाधीनता-संग्राम विषयक आंशिक सामग्री डॉ. देवदत्त शर्मा द्वारा तैयार की गई है। इसके लिए हम उनके प्रति आभारी हैं।

—सम्पादक

विषय-सूची

राजस्थान- 1987

———

1
भौगोलिक परिचय

राजस्थान प्रदेश 23°.03 से 30°.12 उत्तरी अक्षांशों एवं 69°.30 से 78°.17 पूर्वी देशान्तर रेखाओं के मध्य स्थित है। राजस्थान की पश्चिमी तथा उत्तरी पश्चिमी सीमा अन्तर्राष्ट्रीय सीमा है जो पाकिस्तान व राजस्थान को अलग करती है। प्रदेश की अन्य सीमाएं उत्तर व उत्तर-पूर्व में पंजाब, हरियाणा, दिल्ली तथा उत्तरप्रदेश से पूर्व व दक्षिण में गुजरात राज्य से मिली हुई है। प्रदेश की कुल सीमा 5933 किलोमीटर लम्बी है, इसमे से पाकिस्तान से लगी सीमा 1070 किलोमीटर है। पाकिस्तान की सीमा से लगे प्रदेश के प्रमुख जिले हैं श्रीगंगानगर, बीकानेर, जैसलमेर व बाड़मेर। राज्य का कुल क्षेत्रफल 3,42,274 वर्ग किलोमीटर है तथा जन संख्या 1981 में हुई जनगणना के अनुसार 34,108,292 है। क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान भारत का दूसरा सबसे बडा राज्य है।

राजस्थान जापान और जर्मनी से कुछ छोटा है। इंगलैंड मे दुगुना तथा इजराइल से सत्रह गुना अधिक बड़ा है।

राजस्थान का आकार एक विषम कोण चतुर्भुज की भांति है।

राजस्थान की प्राकृतिक आकृति और जलवायु पर अरावली पर्वत शृंखला का विशिष्ट प्रभाव है। 692 किलोमीटर की लम्बाई में यह शृंखला राज्य में उत्तर-पूर्व से दक्षिण-पश्चिम क्षेत्र मे फैली हुई है। यह एक स्थापित तथ्य है कि अरावली पर्वत शृंखला संसार की प्राचीनतम पर्वत श्रेणियों में से एक है। अरावली का पश्चिमी भाग मरुस्थलीय तथा अर्द्ध मरुस्थलीय है जहां बालू के बडे-बड़े टीलों की प्रधानता है। शुष्क जलवायु होने से इस क्षेत्र की जनसंख्या व अर्थव्यवस्था भी सदैव से प्रभावित रही है। राज्य का पूर्वी भाग नदी बेसिनों (थाल) एवं दक्षिणी पठार का अंग है।

भौतिक लक्षणों के आधार पर प्रदेश को चार भू आकृतिक भागों में बांटा जा सकता है :—

1. पश्चिमी बालू का मैदान
2. अरावली पर्वतीय क्षेत्र
2. उत्तर–पूर्वी मैदान
4. दक्षिणी–पूर्वी पठार

1. पश्चिमी बालू का मैदान—अरावली पर्वतमाला के पश्चिम तथा उत्तर-पश्चिम में राज्य के वृहत भू-भाग में बालू का मैदान है। यह क्षेत्र 1,75000 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र में फैला है। इस भू-भाग में वर्षा बहुत कम होती है। पूर्वी भाग अर्द्ध-मरुस्थली क्षेत्र है तथा पश्चिमी क्षेत्र विशाल मरुस्थल है।

(अ) मरुस्थलीय क्षेत्र—पाकिस्तान की सीमा से लगे जैसलमेर, बीकानेर, बाड़मेर जिलों के अतिरिक्त चूरू, जोधपुर व नागौर के कुछ हिस्से मरुस्थलीय क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं। थार रेगिस्तान के नाम से विख्यात यह क्षेत्र लूनी नदी के उत्तरी किनारे तथा उत्तर-पूर्व में शेखावाटी क्षेत्र तक फैला हुआ है। इस क्षेत्र में 8 किलोमीटर की लम्बाई तथा 90 से 370 मीटर की ऊंचाई में बालू टीले पाये जाते हैं। यहा प्राकृतिक जीवन बहुत ही चुनौतियों भरा है। धूल भरी आंधियों के थपेड़े, पानी का अभाव, भीषण गर्मी व सर्दी इस क्षेत्र की प्रमुखता है।

ग्रीष्म ऋतु में 32° सेन्टीग्रेड से 48° सेन्टीग्रेड तक तापमान रिकार्ड किया जाता है। वर्षा पूर्व में 25 सेन्टीमीटर से पश्चिम में 10 सेन्टीमीटर तक घट जाती है। जैसलमेर में औसतन सामान्य वर्षा 16.40 से. मी., बाड़मेर मे 27.75 से. मी., बीकानेर मे 26.37 से. मी., चूरू मे 32 55 से. मी., नागौर मे 38.86 से. मी. तथा जोधपुर में 31.07 से. मीटर औसतन वर्षा होती है।

गर्मी में यहां धूल भरी आंधियां चलती हैं। ज्यों-ज्यों उत्तर-पश्चिम की ओर बढ़ते हैं त्यों-त्यों वर्षा की औसत कम होती जाती है तथा भू-जल की गहराई भी बढ़ती जाती है। पानी के अभाव में प्राकृतिक वनस्पति नाम मात्र ही की पाई जाती है। कहीं-कहीं छोटी-छोटी कांटेदार झाड़ियां पाई जाती हैं। इस क्षेत्र में बाजरा प्रमुख फसल है। पशुओं मे ऊंट महत्त्वपूर्ण है। 1962 में भू-सर्वेक्षण द्वारा वैज्ञानिको ने यह जानकारी दी थी कि मरुक्षेत्र उत्तर के गंगा सिन्धु बड़े मैदान का ही एक भाग है। यह क्षेत्र घाघरा व सरस्वती जैसी प्रमुख नदियों के विलीन हो जाने से मरुस्थल मे परीणत हो गया। कहा जाता है कि इसी भू-भाग मे बहने वाली पवित्र सरस्वती नदी के तट पर वेदों की रचना की गई थी।

अब इस क्षेत्र का कायाकल्प होने लगा है। गंगनहर एवं इन्दिरा गांधी नहर (राजस्थान नहर) के निर्माण के फलस्वरूप इस क्षेत्र में अब भरपूर पैदावार तथा हरियाली दिखाई पड़ने लगी है।

(ब) अर्द्ध-शुष्क मैदान—इस क्षेत्र के उत्तर में घाघरा नदी का क्षेत्र है। दक्षिणी-पूर्वी भाग मे लूनी नदी अपनी कई सहायक नदियों के साथ फैली हुई है, जिसमें जोधपुर, बाड़मेर के अधिकाश भाग तथा पाली, जालौर व सिरोही जिले के पश्चिमी भाग स्थित हैं। इस क्षेत्र में प्राचीन चट्टानें भी पाई जाती हैं तथा भूमिगत जल भी अपेक्षाकृत अधिक गहरा नहीं है। बाजरा, मूंग व मोठ की फसलों के अतिरिक्त कपास, गन्ना, तिलहन व दालों की पैदावार की जाती है। प्रमुख व्यवसाय खेती व पशुपालन है।

2. अरावली पर्वतीय क्षेत्र—लगभग 692 किलोमीटर की लम्बाई में फैली अरावली पर्वत शृंखला दक्षिण-पश्चिम में खेड़े ब्रह्म से उत्तर-पूर्व में खेतड़ी तक फैली हुई है। यह पर्वतमाला राज्य को दो प्राकृतिक हिस्सों में बांटती है। राज्य का 3/5 भाग पश्चिम में तथा 2/5 भाग पूर्व में स्थित है।

माउन्ट आबू में स्थिति गुरुशिखर इस पर्वत माला की सर्वोच्च 1772 मीटर ऊंची चोटी है तथा औसत ऊंचाई 100 मीटर है।

अरावली प्रदेश खनिज सम्पदा की दृष्टि से काफी धनी है। लोहा, सीसा, जस्ता, चांदी, अभ्रक, तांबा, मैगनीज, यूरेनियम, राक फास्फेट, ग्रेनाइट आदि प्रमुख खनिज हैं।

जयपुर, अजमेर, उदयपुर व अलवर नगर अरावली की सुरम्य घाटियों में बसे हैं।

3. पूर्वी मैदान—अरावली श्रेणी के पूर्वी तथा दक्षिणी पूर्व में स्थित समतल भू-भाग पूर्वी मैदान के नाम से जाना जाता है। दो भागों के इस भाग में उत्तरी क्षेत्र मेवाड़ के मैदान या बनास बेसिन तथा दक्षिणी भाग छप्पन मैदान कहलाते हैं, भरतपुर, सवाईमाधोपुर, उदयपुर का पूर्वी भाग, पश्चिमी चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, अजमेर, टोंक, जयपुर तथा अलवर के दक्षिणी-पूर्वी उदयपुर, बांसवाड़ा, चित्तौड़गढ का दक्षिणी भाग एवं डूंगरपुर जिले मे छप्पन मैदान का विस्तार परिलक्षित है। समतल मैदान होने तथा अनुकूल वर्षा की औसत से यह क्षेत्र प्रदेश का सर्वाधिक प्राकृतिक उपजाऊ क्षेत्र है। बनास, खारी, बरेच, मोरेल, माही, साबी, गंभीरी नदियों पर जल बांध के निर्माण हो जाने से सिंचाई सुविधा में वृद्धि की गई है। इस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था अपेक्षाकृत अच्छी है। कृषि, उद्योग-धन्धे व पशुपालन जीविकोपार्जन के प्रमुख साधन हैं। गेहूं, ज्वार, तिलहन, दालें व बाजरा प्रमुख फसलें हैं। भरतपुर, सवाईमाधोपुर, भीलवाड़ा एवं उदयपुर में औद्योगिक क्षेत्र भी स्थापित हैं।

4. दक्षिण-पूर्वी पठार—कोटा, बून्दी, झालावाड़ तथा चित्तौड़गढ़ जिले का कुछ भाग हाड़ोती क्षेत्र कहलाता है। यह क्षेत्र चम्बल नदी के सहारे दक्षिणी-पूर्वी भाग मे स्थित है। यह क्षेत्र चम्बल व इसकी सहायक नदियो के कारण काफी उपजाऊ है। इस क्षेत्र के दो भाग हैं—विन्ध्यन कगार तथा दक्कन लावा पठार।

नदियां—अरावली पर्वत श्रेणी के कारण राज्य की जल प्रवाह प्रणाली दो भागों में बांटी जाती है। प्रथम बंगाल की खाड़ी की ओर बहने वाली तथा दूसरी अरब सागर की ओर प्रवाहित होने वाली नदियां।

प्रमुख नदियां—

(अ) चम्बल—बारहमासी नदियो मे केवल चम्बल ही एक मात्र नदी है जो वर्ष भर पानी से प्रवाहित रहती है। इस नदी का उद्गम स्थल मध्यप्रदेश में मऊ के निकट विन्ध्याचल पर्वत का उत्तरी ढाल है। लगभग 325 किलोमीटर उत्तर की

ओर बहने के पश्चात चम्बल नदी चौरासीगढ़ के निकट मध्यप्रदेश से राजस्थान में प्रवेश करती है। राज्य में 60 किलोमीटर तक सकड़े एवं गहरे क्षेत्र में बहने के बाद चम्बल खुली घाटी में काली सिन्ध, पार्वती व बनास संगम तक बहती है। धौलपुर के दक्षिण में इस नदी के किनारों पर असंख्य गलीदार भूमि का निर्माण हुआ है। जो चम्बल का बीहड़ क्षेत्र भी कहलाता है। चम्बल का जल यमुना नदी में मुरादगंज उत्तरप्रदेश में जाकर मिल जाता है। चम्बल राजस्थान के लिए सिंचाई व विद्युत का प्रमुख स्रोत बनी हुई है। गांधी सागर, राणा प्रताप सागर, जवाहर सागर तथा कोटा बैराज चम्बल पर बने प्रमुख बांध हैं।

(ब) बनास—उदयपुर जिले में कुम्भलगढ़ के निकट खमनौर की पहाड़ियों से निकल कर तथा लगभग 480 कि. मी. तक की लम्बाई में बहने वाली बनास बारह मास जल प्रवाहित नदी है। मेवाड़ मैदान के मध्य मे बहने वाली यह नदी सवाईमाधोपुर जिले में दक्षिण की ओर मुड़कर चम्बल नदी में गिरती है। इसकी सहायक नदियां मौसमी ही होती हैं।

बेड़च—उदयपुर की गोगुन्दा की पहाड़ियों से बेड़च नदी आरम्भ होती है तथा 190 कि. मी. तक प्रवाहित होने के बाद यह नदी भीलवाड़ा-मांडलगढ़ के समीप त्रिवेणी संगम स्थल पर बनास में मिल जाती है।

कोठारी—उदयपुर जिले के उत्तरी भाग दिवेर नामक स्थान से निकलने वाली कोठारी नदी 145 कि. मी. मैदानी यात्रा करने के बाद भीलवाड़ा के पूर्व में बनास नदी में ही गिरती है।

खारी—यह नदी भी बनास में गिरती है। यह भी उदयपुर जिले के देवगढ़ के समीप अरावली शृंखला से निकल कर गुलाबपुरा, विजयनगर होती हुई देवली के निकट बनास में जा मिलती है।

बनास की अन्य सहायक नदियां मैनाल, मानसी, बांडी, मोरेल हैं।

काली सिन्ध—इस नदी का उद्‌गम भी मध्यप्रदेश है तथा झालावाड़ व कोटा जिलों में प्रवाहित होकर यह नौनेरा स्थान पर चम्बल से मिल जाती है।

(स) पार्वती—मध्यप्रदेश-विन्ध्याचल पर्वत से निकलने वाली यह नदी बून्दी जिले के पूर्व में प्रवाहित होती हुई चम्बल नदी में मिल जाती है।

2. लूनी नदी—अन्नासागर अजमेर अरावली शृंखला से लूनी का उद्‌गम होता है। यहां से निकल कर यह नदी जोधपुर, बाड़मेर व जालौर जिलों में 320 किलोमीटर लम्बी यात्रा पूरी कर कच्छ के रन में विलीन हो जाती है। यह पूर्णतया मौसमी नदी है तथा वर्षा होने पर ही बहती है। नदी की विशेषता है कि अजमेर से बालोतरा तक इस नदी का पानी अपेक्षाकृत मीठा तथा इसके बाद अधिकाधिक खारा होता चला जाता है। इस नदी की अनेक सहायक नदियां हैं—जिनमें सूकड़ी, , , जोजरी, जवाई, बाडी, सरस्वती, मीठड़ी, सगाई आदि प्रमुख हैं।

3. माही नदी—मध्यप्रदेश-मालवा के पठार से माही नदी का उद्गम हुआ है। यह उत्तर व उत्तर-पश्चिम दिशा में बांसवाड़ा जिले की दक्षिणी सीमा तक बहती है। यहां से यह नदी मेवाड़ की पहाड़ी तथा दक्षिण-पश्चिम की ओर मुड़ जाती है। यही पर माही, सोन व जाखम नदियां मिलती है। माही नदी डूंगरपुर व बांसवाड़ा जिलों की सीमा को अलग करती है।

4. साबरमती—यह नदी उदयपुर जिले की दक्षिण-पश्चिमी अरावली शृंखला से निकल कर दक्षिण की ओर बहती है तथा गुजरात में बहती हुई कैम्बे की खाड़ी में गिर जाती है।

5. पश्चिमी बनास—सिरोही जिले की आबू-अरावली शृंखला से निकल कर पश्चिमी बनास नदी गुजरात राज्य में बहती है तथा पश्चात् कच्छ के रन मे ही अपना अस्तित्व खो देती है।

6. घग्घर—कालका-शिवालिक घग्घर का उद्गम स्थल है। हरियाणा-पजाब मे प्रवाहित होकर यह नदी राजस्थान के श्रीगंगानगर जिले के हनुमानगढ के पश्चिम में तीन किलोमीटर की लम्बाई में बहती है। वर्षा ऋतु मे घग्घर मे प्रायः बाढ़ की आशंका रहती है तथा अधिक बाढ़ से इसका पानी पाकिस्तान के रेतीले भाग में विलीन हो जाता है।

7. काकनेय—थार रेगिस्तान में नदी की कल्पना तक नही की जा सकती परन्तु काकनेय नदी जैसलमेर से 27 किलोमीटर दूर कोहरी गाव से अपनी जीवन यात्रा आरम्भ करती है तथा उत्तर-पश्चिम मे 44 किलोमीटर प्रवाहित होकर यह नदी 40 कि. मी के घेरे में "बुज झील" का निर्माण करती है।

8. कांटली नदी—झुंझुनू जिले को दो भागों में बाटने वाली कांटली नदी 95 किलोमीटर की लम्बाई में बहती है। यह रेतीले टीलों मे विलीन हो जाती है।

9. साबी नदी—जयपुर जिले मे शाहपुरा के निकट से निकलकर यह नदी अलवर जिले मे बहती है तथा बाद में हरियाणा के पटौदी नामक ग्राम के उत्तर मे विलीन हो जाती है।

10 बाण गंगा नदी—जयपुर जिले के बैराठ की पहाडियों से निकलने वाली बाणगंगा 380 किलोमीटर की लम्बाई में बहती हुई भरतपुर जिले में बहती है तथा बाद में उत्तर प्रदेश में यमुना नदी में गिर जाती है।

11. मन्था नदी—जयपुर जिले के मनोहर थाना नामक स्थान से निकल कर यह नदी सांभर झील में गिर जाती है।

राजस्थान – जलवायु—

जलवायु :

भारतीय उप महाद्वीप के उत्तर-पश्चिम में स्थित होने से राजस्थान की जलवायु अधिकांश भाग में शुष्क रहती है। लगभग आधा भाग शुष्क तथा शेष भाग मे आर्द्र उष्ण मानसून क्षेत्र में स्वतः ही बंट गया है। प्रदेश में ग्रीष्म, वर्षा तथा शीत ऋतु तीन प्रमुख ऋतुएं हैं।

ग्रीष्म ऋतु—मार्च से प्रारम्भ होकर जून मास तक ग्रीष्म ऋतु रहता है। प्रदेश मे इस मौसम में तापमान 32° सेन्टीग्रेड से 43° सेन्टीग्रेड तक तापमान पाया जाता है। मई व जून के मध्य तक प्रदेश के अधिकांश भाग में भारी गर्मी रहती है तथा दोपहर अपेक्षाकृत अधिक गर्म। पश्चिमी राजस्थान के कुछ भागों मे भीषण गर्मी के कारण 45° से. ग्रे. से भी ऊपर तक तापमान पहुंच जाता है। इस मौसम मे भयंकर लू चलती है तथा रेगिस्तानी इलाके में बालू रेत के टीले ही अस्थिर हो जाते हैं। रेत भरी आंधियों का औसत गंगानगर क्षेत्र में 27 दिन, कोटा में 5 दिन, अजमेर व झालावाड़ में तीन दिन प्रतिवर्ष रहता है।

वर्षा ऋतु—वर्षा ऋतु अरावली तथा उसके निकटस्थ क्षेत्रों में जून मास के अन्त में तथा पश्चिम व उत्तरी पश्चिमी भाग में जुलाई के मध्य में आरम्भ हो जाती है। प्राकृतिक स्थिति के कारण राज्य मे वर्षा का वितरण असमान रहता है।

(1) अरावली के पूर्व तथा दक्षिण में 50 सेन्टीमीटर से 80 से. मी. तक वर्षा होती है।

(2) अरावली के पश्चिमी भाग से मरुस्थलीय सीमा तक 30 से 50 सेन्टीमीटर वर्षा होती है।

(3) थार क्षेत्र में वार्षिक 10 से. मी. से 30 से. मी. तक वर्षा का औसत रहता है।

शीत ऋतु—मध्य सितम्बर से फरवरी तक शीत ऋतु रहती है। सितम्बर माह में वर्षा प्रायः समाप्त हो जाती है तथा अक्टूबर माह में उच्चतम तापमान 33° सेन्टी ग्रेड से 38 सेन्टी ग्रेड के मध्य तथा न्यूनतम 18° से 50° सेन्टी ग्रेड के मध्य बना रहता है। मानसून के लौटने के कारण सापेक्षिक आर्द्रता शनैः शनैः घटने लगती है तथा जनवरी तक सर्दी बढ़ जाती है। उच्चतम तापमान प्रदेश में 20° सेन्टी ग्रेड से 25° से. ग्रेड तथा न्यूनतम 3.3° से 10° से. ग्रेड के बीच रिकार्ड किया जाता रहा है। प्रदेश के कई रेगिस्तानी जिलों मे हिमांक बिन्दु से भी नीचे तापमान पहुंच जाता है तथा कड़ाके की सर्दी पड़ती है।

मिट्टियां—प्रदेश मे आठ प्रकार की मिट्टियां पाई जाती हैं—ये मिट्टी की किस्में नदी घाटियों, अरावली पर्वत शृंखला तथा रेगिस्तानी भू-भाग मे व्याप्त प्राकृतिक स्थिति के कारण ही प्राप्त होती हैं।

1. मरुस्थलीय मिट्टी - श्रीगंगानगर, बीकानेर, चूरू, बाड़मेर, जैसलमेर, जोधपुर व जालौर जिलों के रेगिस्तानी इलाके मे पीली मिट्टी से पीली भूरी, बलुई से बलुई चीनी मिट्टियां देखी जा सकती है। वर्षा की कमी तथा ढीली संरचना के कारण इस मिट्टी में उर्वरक शक्ति कम पाई जाती है।

2. लाल मिट्टी—नागौर, जोधपुर, जालौर, पाली, चूरू व. झुंझुनू जिलो में.

लाल मिट्टी—पीले भूरे रंग से लेकर लाल भूरे रंग की मिट्टी पाई जाती है। यह मिट्टी अपेक्षाकृत उपजाऊ होती है।

3. **भूरी काली मिट्टी**—चित्तौड़गढ़, भीलवाड़ा, कोटा और टोंक जिलों में मुख्यतः धारवाड़ियन चट्टानों से विकसित भूरी काली मिट्टी का विकास हुआ है। ये मिट्टी मध्यम श्रेणी की सिंचित मिट्टियां हैं।

4. **लाल पीली मिट्टी**—अरावली पर्वत के पश्चिमी पहाड़ी क्षेत्रों में लाल-पीली मिट्टी पाई जाती है। पहाड़ी क्षेत्र होने से इस मिट्टी की उर्वरक शक्ति कम होती है। यह मिट्टी सिरोही, पाली, उदयपुर, चित्तौड़गढ़ व अजमेर जिलों में पाई जाती है। भीलवाड़ा, बांसवाड़ा व चित्तौड़गढ़ के कुछ क्षेत्रों में मिश्रित मिट्टी पाई जाती है।

5. **साधारण काली मिट्टी**—कोटा, बूंदी, झालावाड़ व सवाईमाधोपुर जिलों में काली मिट्टी पाई जाती है जो अत्यन्त उपजाऊ होती है।

6. **प्राचीन कांप मिट्टी**—यह मैदानी भागों में पायी जाती है यह चूना रहित होती है। अतः सिंचाई के लिए अनुकूल होती है—जयपुर, टोंक, अजमेर, अलवर, सीकर व भीलवाड़ा जिलों के मैदानी भागों में यह मिट्टी पाई जाती है।

7. **कछारी मिट्टी**—इस मिट्टी में चूना, पोटाश, फासफोरस व लोह खनिज की मात्रा होती है तथा यह राज्य की नदी घाटियों, चम्बल के मैदानों—सवाई माधोपुर, बूंदी, अलवर तथा भरतपुर जिलों में पाई जाती है। यह भी सिंचाई के लिए उपयुक्त होती है।

8. **लियो सोल और रेगो सोल**—प्रदेश की पहाड़ियों तथा पश्चिम राजस्थान की छितरी पहाड़ियों में कंकरीली मिट्टी पाई जाती है यह मिट्टी काली छिछली होती है तथा सीमित गहराई के कारण कृषि के लिए अनुकूल नहीं होती है।

वनस्पति—जलवायु एवं प्राकृतिक स्थिति के अनुसार प्रदेश में अलग-अलग स्थानों पर अलग-अलग वनस्पति पायी जाती है। रेगिस्तानी पश्चिमी क्षेत्र में जहां वर्षा का अभाव रहता है। छोटी-छोटी कटीली झाड़ियां पाई जाती हैं। जबकि दक्षिण पूर्व में मिश्रित पतझड़ तथा उष्ण कटिबन्ध में सुन्दर वनों को देखा जा सकता है।

1. **मरुस्थलीय वनस्पति**—अरावली पर्वत शृंखला के उत्तर-पश्चिमी क्षेत्र में वनस्पति बहुत ही कम व दूर-दूर कहीं कहीं दिखाई पड़ती है। इस क्षेत्र में दो प्रकार की स्थिति में वनस्पति की पैदावार होती है एक प्रकार की वनस्पति वह जो वर्षा पर निर्भर रहती है तथा दूसरी प्रकार की वनस्पति वह पायी जाती है जो इस क्षेत्र के अपने धरातलीय जल पर निर्भर रहती है। शुष्क जलवायु के कारण पौधों की संख्या छोटी तथा जड़ें गहरी होती हैं। पेड़ों पर कांटे होते हैं। इस क्षेत्र में ऊंट, भेड़ व बकरियां पाई जाती हैं।

2. **अर्द्ध-शुष्क वनस्पति क्षेत्र**—सिरोही-पाली, सीकर-झुंझुनू तथा बाड़मेर

जिलों के कुछ भागों में जहां अरावली की पहाड़ियां व पथरीली जमीन है वहां झाड़, इमली व कांटेदार झाड़ियां आदि पाये जाते हैं। इस क्षेत्र में लोमड़ी, खरगोश, भेड़िया जरख व गीदड़ जैसे पशु पाये जाते हैं।

अरावली पर्वतीय वनस्पति—इस क्षेत्र में जहां अच्छी वर्षा होती है वहां वनों की भी उसी के अनुरूप बहुतायत है। उदयपुर, बांसवाड़ा, डूंगरपुर, चित्तौड़गढ़, अजमेर, जयपुर, अलवर व भीलवाड़ा जिले इस क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं तथा यहां गूलर, नीम, आम, बड़, बहेड़ा, महुआ, धोक, आदि वृक्ष पाये जाते हैं। यहां घनी वनस्पति के कारण गाय, बैल, बकरियां, भैंस व घोड़े जैसे उपयोगी पशु भी पाये जाते हैं।

4. पूर्वी मैदानी वनस्पति – अलवर, भरतपुर, टोंक तथा कोटा जिलों के इस भाग में वर्षा काफी अधिक होती है। इसी के अनुसार इस क्षेत्र में सालर, बांस, सेमल, पलाश, सफेद धोक जैसे वृक्षों का बाहुल्य है। भरतपुर का विश्व विख्यात घना अभयारण्य भी इसी वनस्पति की देन है।

पशु-सम्पदा—पशु-धन की दृष्टि से राजस्थान का भारत में विशिष्ट स्थान है। यहां गोवंश की 9 उत्तम नस्लें, भेड़ों की 8 नस्लें, बकरियों की 6 नस्लें तथा ऊंटों की 4 उत्तम नस्लें पाई जाती हैं। घोड़ों की उत्तम नस्लें भी प्रदेश की प्रसिद्ध नस्लों में से एक हैं। प्रदेश की पशु-सम्पदा में निम्नलिखित उल्लेखनीय हैं—

1. राठी क्षेत्र—बीकानेर के पश्चिमी भाग, गंगानगर तथा जैसलमेर क्षेत्र में अधिक दुधारू गायें पाई जाती हैं। इस गाय की नस्ल राठी कहलाती है। इस क्षेत्र में ऊंटनियां तथा भेड़ें भी काफी संख्या में पाई जाती हैं।

2. सांचोरी व कांकरेज क्षेत्र—बाड़मेर के पूर्वी भाग, जालौर, सिरोही, पाली के पश्चिमी तथा दक्षिण-पश्चिमी भाग एवं उदयपुर जिलों में सांचोरी व कांकरेज नस्ल पायी जाती है। कांकरेज नस्ल के बैल काफी बलशाली होते हैं। इस नस्ल की गायें भी अधिक दूध उत्पादन की दृष्टि से प्रसिद्ध हैं। इस क्षेत्र के ऊंट व बकरों से ऊन का भी काफी उत्पादन होता है।

3. थार पारकर क्षेत्र—बाड़मेर, जैसलमेर व जोधपुर के जिन हिस्सों में इस नस्ल की गायें पायी जाती हैं–उसे थार पारकर क्षेत्र कहाजाता है। यहां की गायें औसतन 30 से 40 पौण्ड तक दूध प्रतिदिन देती है। जैसलमेरी व बीकानेरी नस्ल के ऊंट, जैसलमेरी तथा मारवाड़ी भेड़ें व बकरियां इस क्षेत्र की प्रमुख नस्लें हैं।

4. उत्तरी नहरी क्षेत्र—इस क्षेत्र में मुख्यत. गंगानगर जिले के सिंचित क्षेत्र को सम्मिलित किया जाता है। इस क्षेत्र में हरियाणी व राठी नस्ल की गायों व मुर्रा नस्ल की भैंसों के अलावा जैसलमेरी तथा बीकानेरी नस्ल के ऊंट भी इसी क्षेत्र पाये जाते हैं।

5. नागौरी क्षेत्र—नागौरी नस्ल के बैल सुगठित व बलशाली होते हैं। यह नस्ल मुख्य रूप से नागौर जिले में तथा दक्षिण-पूर्वी बीकानेर, चूरू व बीकानेर जिलों के दक्षिण-पश्चिमी भाग, मध्य तथा पश्चिमी जयपुर जिले, अजमेर के उत्तरी तथा पाली जिले के उत्तरी-पश्चिमी भागों में पायी जाती है। इसके अतिरिक्त मारवाड़ी भेड की नस्ल ऊन और मांस के लिए प्रसिद्ध है।

6 वृहद हरियाणी क्षेत्र—राज्य के उत्तरी-पूर्वी भाग से दक्षिणी-पूर्वी भाग तक फैले क्षेत्र में हरियाणा नस्ल का गोवंश, चोकला, नाली व मारवाड़ी नस्ल की भेड़ें जमुना पारी, बरबारी, अलवरी और सिरोही नस्ल की बकरियां तथा मालानी नस्ल के घोड़े पाये जाते हैं। इस क्षेत्र मे मुख्यतः अलवर, झुंझुनूं, जयपुर, टोंक, सीकर, भरतपुर, गंगानगर तथा चूरू जिलों के हिस्से आते हैं।

7. मेवाती क्षेत्र – राजस्थान का ऐसा भाग जो दिल्ली व उत्तर प्रदेश के निकट है वहां मेवाती नस्ल की गायें पायी जाती हैं। इसके अतिरिक्त मुर्रा भैंसें व बकरे-बकरियां भी पाये जाते हैं।

8. राठ क्षेत्र—राज्य का यह क्षेत्र पंजाब के समीप उत्तर पूर्वी भाग में स्थित हैं। यहां राठ नस्ल का नस्ल का पशु-धन पाया जाता है जो खेती के उपयोग मे आते हैं।

9. मालानी क्षेत्र—मध्य-प्रदेश व गुजरात की सीमा से लगे क्षेत्र को मालानी क्षेत्र कहा जाता है। यहां मुर्रा नस्ल के भैंसे व भैंस मिलती हैं।

10. मीर क्षेत्र—राज्य के पूर्वी भाग में मीर क्षेत्र स्थित है। यहां रेडा अथवा अजमेरा नस्ल के पशु प्राप्त होते हैं। गायें यहां उत्तम नस्ल की होती हैं जो औसतन 16 से 20 पौंड तक दूध प्रतिदिन का उत्पादन देने में सक्षम हैं।

जन-संख्या

जन-संख्या की समस्या कृषि-उत्पादन व अन्य आर्थिक योजनाओं से जुड़ी है। इस महत्त्व को गम्भीरता से 1951 मे राजस्थान के गठन के बाद ही स्वीकारा गया। इसके पूर्व अलग-अलग रियासतों में जनगणना कार्य हुआ अवश्य परन्तु नियमित नहीं। 1872 से पूर्व जयपुर व भरतपुर राज्यो में जनगणना का कार्य किया गया था जब कि अजमेर मेरवाड़ा मे 1871 में पहली बार जनगणना की गई थी। प्रथम पूर्व जनगणना राजपूताने में 1901 में की गई थी तथा इसके उपरान्त प्रत्येक दस वर्षों के अन्तराल से जनगणना की जाती रही है।

1901 मे राजपूताने की जनसंख्या 103 लाख थी तथा 1981 मे सम्पन्न हुई जनगणना के उपरान्त, प्रदेश की आबादी 342 लाख पहुंच गई है। 1971 में

जन-संख्या 2,57,65,806 थी। दस वर्षों के अन्तराल में 84,96,056 की वृद्धि अर्थात 32.97 प्रतिशत वृद्धि रिकार्ड की गई है। वर्तमान में पुरुषों की संख्या 1,78,54,154 है जब कि स्त्रियों की संख्या 1,64,07,708 है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि प्रदेश की जनसंख्या 1901 से 1981 के मध्य 230 प्रतिशत बढ़ गई है।

जैसा कि ऊपर लिखा जा चुका है, क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान भारत में दूसरे स्थान पर है। क्षेत्रफल की दृष्टि से यह भारत के 10.84 प्रतिशत भाग में अवस्थित है तथा आबादी की दृष्टि से 4.6 प्रतिशत भाग में ही लोग आवास करते है। जनगणना की दृष्टि से राजस्थान का स्थान देश मे 9वां है।

राजस्थान राज्य मे जनसंख्या का घनत्व 100 है अर्थात् एक वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में 100 व्यक्ति आवास करते हैं। यह घनत्व राज्य के 27 जिलों में अलग-अलग है। यह एक दिलचस्प तथ्य है कि भरतपुर जिला, जिसका क्षेत्रफल 5150 वर्ग किलोमीटर है, की आबादी 12,95,890 है। यह राज्य के समस्त जिलों में घनत्व की दृष्टि से उच्चतम है—इसका घनत्व 259 है। दूसरी ओर जैसलमेर जिला है जो क्षेत्रफल की दृष्टि से राज्य का सबसे बड़ा जिला है परन्तु घनत्व मात्र 6 ही है। जैसलमेर का क्षेत्रफल 38401 वर्ग किलोमीटर है।

विकास का सीधा प्रभाव जहां बढ़ती जनसंख्या के कारण भी है वहीं राजस्थान की भौगोलिक स्थिति के कारण भी अनेक विषमताएँ दिखलाई पड़ती हैं। राजस्थान के पश्चिमी जिलों में यद्यपि जनसंख्या कम है परन्तु विषम जलवायु व साधनों के अभाव में विकास की गति भी अपेक्षाकृत कम ही रही है। दूसरी ओर अधिक आबादी वाले जिलों में बढ़ती जनसंख्या एक राष्ट्रव्यापी समस्या बनी हुई है।

यहां यह भी उल्लेख करना आवश्यक है कि राज्य की 21 प्रतिशत जन-संख्या शहरों में रहती है। 1981 की गणना के अनुसार प्रदेश में शहरी जन-संख्या 72,10,508 तथा ग्रामीण जन-संख्या 2,70,51,354 थी। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्र में पुरुषों की संख्या 1,40,13,454 तथा शहरी क्षेत्र में पुरुषों की संख्या 38,40,700 रिकार्ड की गई थी।

जनसंख्या को नियन्त्रित करने हेतु प्रदेश मे देश की भांति निरन्तर गम्भीर प्रयास किये जा रहे हैं, जिनका उल्लेख आगे किया जायेगा।

प्रशासनिक —राज्य में प्रशासनिक दृष्टि से 27 जिले, 81 उप खण्ड, 27 जिला परिषदें, 200 तहसीलें, 236 पंचायत समितियां तथा 7292 ग्राम पंचायतें हैं। 1981 की जनगणना के अनुसार राज्य में शहर व नगरों की संख्या 201 है जब कि कुल ग्रामों की संख्या 37,124 है। इनमें से आबाद ग्रामों की संख्या 34968 है।

साक्षरता—1981 की जनगणना के आधार पर राजस्थान में शिक्षितों का प्रतिशत 24.38 है जब कि देश का प्रतिशत 36.17 है। 1901 में राजपूताने की साक्षरता केवल 3.47 प्रतिशत थी। उस समय 6.42 प्रतिशत पुरुष तथा 0.11 प्रतिशत स्त्रियां साक्षर थीं। 80 वर्ष पूरे होने पर पुरुषों की साक्षरता का प्रतिशत 36.30 हो गया तथा स्त्रियों का 11.42 प्रतिशत हो गया है।

प्रदेश में सर्वाधिक साक्षरता प्रतिशत अजमेर जिले की है जहां 35.01 लोग साक्षर हैं तथा सबसे कम साक्षरता प्रतिशत बाड़मेर जिले का है जहां मात्र 11.90 लोग ही साक्षर हैं। इसी प्रकार ग्रामीण क्षेत्रों में सर्वाधिक प्रतिशत 22.57 अलवर की है तथा न्यूनतम ग्रामीण साक्षरता प्रतिशत बाड़मेर की 9.11 है।

इसी प्रकार शहरी क्षेत्र में साक्षरता की सर्वोच्च स्थिति बांसवाड़ा की है जहा साक्षरता प्रतिशत 59.28 है।

2
इतिहास की झलकियाँ

राजस्थान के नाम में ही कुछ ऐसा जादू है कि स्मरण मात्र से इतिहास आंखों में चढ़ आता है। अतीत के एक से एक सुनहले पृष्ठ चलचित्र की तरह दृष्टि-पथ में तैरने लगते हैं। उत्तर-पश्चिम में अजगर-सा फैला रेगिस्तान, दक्षिण-पूर्व में चम्बल की चंचल जलधाराओं से स्नात हाड़ौती का पठार, उत्तर-पूर्व में मेवात का उपजाऊ मैदान और सुदूर दक्षिण में पलाश वनों से आच्छादित हरा-भरा वागड़ प्रदेश, सभी के कण-कण में इस प्रदेश के पुरातन गौरव की गाथायें गूंजती हैं।

यही वह धरती है, जिसके उत्तरी-पश्चिमी भाग में कभी वह प्रातः स्मरणीया सरस्वती बहती थी, जिसके तट पर वैदिक ऋषियों ने ऋग्वेद की ऋचाओं का सृजन किया था। यहीं पैदा हुआ था, भीनमाल में, संस्कृत का वह उद्भट कवि माघ, जिसकी कीर्ति-कथाएं साहित्य के इतिहास में स्वर्णाक्षरों में अंकित हैं। कवियों की इसी यशस्वी परम्परा में इस भू-भाग को संवारा था, चन्दरबरदाई, बांकीदास, दुरसा आढ़ा और सूर्य मल्ल जैसे शौर्य गायकों ने जिनकी वाणी ने सूरमाओं को अपनी स्वाधीनता की रक्षा के लिए मौत का वरण करने की प्रेरणा दी थी। वीर रसात्मक कविता की ओजस्वी धारा सदियों तक यहां बही, तो पद्माकर, बिहारी और मतीराम सरीखे कवियों ने शृंगार और नीति के अपने काव्यो द्वारा जन-रंजन के परम लक्ष्य के प्रति अपने आपको समर्पित किया। सुन्दरदास, लालदास, चन्द्रसखी और मीरां के पदों की अमृत-गंगा आज राजस्थान मे ही नही निकटवर्ती गुजरात और मालवा के घर-घर में शताब्दियो से प्रभु-प्रेम का सात्विक संदेश पहुंचा रही है। नगरों और गांवों में सैकड़ो की संख्या मे खड़े यहां के दुर्ग और किले रण-बांकुरों की रक्तरंजित कुर्बानियो के साक्षी हैं, तो यहां के राजप्रासाद इस भू-भाग की सम्पन्न सामन्ती संस्कृति और इसी से प्रसूत विपुल ऐश्वर्य और विलास मूर्तमन्त स्मारक हैं। अनगिनत देवालय और देवरे इस शौर्यभूमि के जन-जन की हार्दिक भावनाओं को प्रतिबिम्बित करने वाले हैं, जिन्होने हर मत और सम्प्रदाय को परम की प्राप्ति का मार्ग स्वीकार किया और मुक्त भाव से अपने इष्ट और आराध्य की उपासना की।

राजस्थान का हर नगर और गाँव अपने आप मे एक ऐतिहासिक स्मारक है। कवियों, लेखकों, चित्रकारों और फोटोग्राफरों ने इसकी छवि को नाना रूपों में रूपायित करने का प्रयत्न किया है, पर कोई इसके विलक्षण व्यक्तित्व को अपने समग्र रूप में बांध न सका। एक अतृप्त प्रेमी के हृदय की बहुरंगी व्यञ्जनाओं जैसी इसकी महिमा का बखान आज भी नाना रूपों में जारी है।

यहाँ यह उल्लेख करना अप्रासंगिक न होगा कि आज हम जिस भू-भाग को राजस्थान के नाम से जानते है, उसने अंग्रेजी शासन से पूर्व कभी भी एक राजनैतिक इकाई के रूप में अपना अस्तित्व ग्रहण नही किया था।

इस प्रदेश के भिन्न-भिन्न भाग भिन्न-भिन्न काल और परिस्थितियो मे भिन्न-भिन्न नामों से जाने जाते थे। महाभारत काल मे इस प्रदेश का बीकानेर क्षेत्र जो उस समय जांगल की संज्ञा से अभिहित किया जाता था, कौरवो के पैतृक राज्य का ही एक अंग था। इसी प्रकार विराटनगरी जिसे आजकल वैराठ कहा जाता है, मत्स्य प्रदेश के राजा विराट के अधिकार में थी। एक ऐतिहासिक प्रवाद के अनुसार एक बार कौरवों के भड़काने पर त्रिगर्त (कांगड़ा-पंजाब) के राजा सुशर्मा ने विराट के गोधन का अपहरण कर लिया और जब विराट नरेश अपने गोधन को मुक्त कराने गये तो स्वयं ही बन्दी बना लिए गए। बाद मे कौरवों ने राजा विराट पर आक्रमण कर दिया, किन्तु अर्जुन की सहायता से कौरव हार गए और विराटाधीश की विजय हुई। राजस्थान के किसी राजा की विजय का यह पहला ऐतिहासिक उदाहरण है। इस घटना के बाद जब पांडवों ने चक्रवर्ती राज्य की स्थापना की तो नकुल ने मरुभूमि और मध्यमिका का इलाका विजय किया तथा पुष्कर क्षेत्र के लोगों को अधीनस्थ किया। सहदेव ने मत्स्य तथा अवंति के राजाओं से अपनी अधीनता स्वीकार कराई और उन्हे कर देने के लिए विवश किया। इस प्रकार लगभग सारा राजस्थान पांडवों के चक्रवर्ती साम्राज्य मे सम्मिलित था।

महाभारत काल के पश्चात् सिकन्दर के आक्रमण तक जिस प्रकार हिन्दुस्तान का कोई इतिहास उपलब्ध नही होता, ठीक उसी प्रकार राजस्थान का भी कोई इतिहास उपलब्ध नही होता। सिकन्दर के आक्रमण के परिणामस्वरूप पंजाब की अनेक जातियों ने राजस्थान में आकर शरण ली। राजस्थान में स्वतन्त्रता प्रेमी लोगों को शरण देने की परम्परा बहुत ही विशद रही है। शिवि लोगों ने तो चित्तौड के निकट गिरी में अपने जनपद की राजधानी स्थापित की थी और मालव लोग भी जयपुर राज्य के दक्षिणी पूर्वी भाग मे नागरछल नामक स्थान पर आकर रहे थे। इन स्थानों से उनके सिक्के भी प्राप्त हुए हैं। सिकन्दर के आक्रमण के पश्चात् ये लोग राजस्थान में किस वक्त आये इसका तो कोई ठीक समय निश्चित नही है. किन्तु इतना सुनिश्चित है कि सिकन्दर के बाद ये समस्त गणराज्य

तथा सम्पूर्ण राजस्थान चन्द्रगुप्त मौर्य के आधीनस्थ हो गया था क्योंकि उसका राज्य काबुल से लेकर गुजरात दक्षिण में मैसूर तथा हिरात से लेकर ठेठ मगध तक था। जयपुर डिवीजन में बैराठ नामक कस्बे में अशोक का एक छोटा शिलालेख भी मिला है। बृहद्रथ को मारकर पुष्यमित्र शुंग द्वारा मौर्य साम्राज्य पर आधिपत्य करने के बाद भी मौर्यों का राज्य आठवीं शताब्दी तक मारवाड़ तथा मेवाड़ में कहीं-कहीं था। शुंगों के काल में बमन के यूनानी शासक ने राजस्थान पर आक्रमण कर दिया और मध्यमिका पर जिसे आजकल नगरी के नाम से पुकारते हैं, घेरा डाल दिया किन्तु शुंगों से हार मानकर उसे सिंध और सौराष्ट्र की तरफ हट जाना पड़ा।

यूनानियों के पश्चात् शक, कुशाण और हूण लोगों ने एक के बाद एक भारत को आक्रान्त किया। शक लोग स्वतन्त्र राजाओं के रूप में तो पंजाब तक आकर रह गये परंतु कुशाणों के क्षेत्रपाल के रूप में वे पूर्व में मथुरा तक तथा दक्षिण में उज्जैन तक पहुंच गये। इस प्रकार शक संवत् के प्रारम्भ तक करीब 46 वर्ष तक राजस्थान पर कुशाणों का राज्य रहा। इसके पश्चात् राजस्थान, उज्जैन और कच्छ, के शक क्षत्रप नहपाण ने स्वतन्त्र होकर महाक्षत्रप की उपाधि धारण कर राज्य करना प्रारम्भ किया। उसके दामाद उशवदान ने पुष्कर में एक गांव भी दान किया था। इसके पश्चात् महाक्षत्रप नहपाण दक्षिण के सातवाहन वंश से हार गया किन्तु आगे चलकर रुद्रदामा नाम के दूसरे महाक्षत्रप ने उसके राज्य को पुनः शकों के अधीनस्थ कर लिया और उसकी सीमा का विस्तार ठेठ नासिक तक कर लिया व 393 ईस्वी तक शकों का राज्य इस प्रदेश पर रहा। कुशाण तथा शक ये दोनों ही आर्य जाति के लोग थे। और शिव के अत्यन्त भक्त थे। हां, कनिष्क बाद में बौद्ध अवश्य हो गया था किन्तु उसके सिक्कों पर शिव मूर्ति का अंकन इस बात का द्योतक है कि उसकी आस्था शिव में भी अवश्य रही होगी।

गुप्तवंश में समुद्रगुप्त महाप्रतापी राजा हुआ था। उसने राजस्थान के पूर्वी भाग में रहने वाली जातियों को कर देने के लिए विवश कर दिया था। सम्पूर्ण राजस्थान पर गुप्तों का आधिपत्य चन्द्रगुप्त विक्रमादित्य के जमाने में ही हुआ। विक्रमादित्य ने शकों के आखिरी महाक्षत्रप रुद्रसिंह को मारकर सारा पश्चिमी हिन्दुस्तान अपने अधिकार में कर लिया और उज्जैन को अपनी दूसरी राजधानी बनाई। 499 ई० तक गुप्त राजा राजस्थान पर राज्य करते रहे और उसके बाद हूणों के प्रभाव का विस्तार होने लगा।

हूणों में तोरमाण महाप्रतापी राजा हुआ। उसने गाधार, पंजाब तथा कश्मीर से आगे बढ़कर गुजरात, काठियावाड़, राजपूताना तथा मालवा पर अधिकार कर लिया। 589 ई० तक हूण लोग राजस्थान पर राज्य करते रहे। ये लोग आर्य जाति के थे तथा शिव के भक्त थे। तोरमाण के पुत्र

मिहिरकुल का बनाया हुआ एक शिव मन्दिर उदयपुर डिवीजन स्थित बाड़ोली नामक स्थान पर आज भी मौजूद है। मन्दसोर के राजा यशोधर्मन ने तोरमाण के बेटे मिहिरकुल को पश्चिमी हिन्दुस्तान से मार कर भगा दिया और उसके बाद पूर्वी राजस्थान तथा अरावली के निकट के पश्चिमी भागों पर गुर्जरों का राज्य हो गया। गुर्जर लोग लगभग 70 वर्ष तक राजस्थान पर राज्य करते रहे। उनकी राजधानी भीनमाल थी जो आजकल जोधपुर डिवीजन के जालौर जिले का एक गांव है। सन् ६०० ईस्वी के आस-पास गुर्जरों का राज्य हर्षवर्धन के पिता प्रभाकरवर्धन द्वारा उजाड़ दिया गया। केवल उनकी कुछ जागीरें अलवर जिले में रह गईं। शेष इलाके हर्षवर्धन के अधीनस्थ प्राचीन क्षत्रियों के हाथ में चले गये। जांगल प्रदेश की राजधानी नागौर में असल में नागवंशियों का आधिपत्य था किन्तु बाद में वह नागों के हाथ में चला गया और उन्होंने अपना कब्जा दक्षिण में मण्डोर तक बढ़ा लिया। मौर्यवंशी लोग चित्तौड़ से मारवाड़ के रेगिस्तान को पार करते हुए सिन्ध तक पहुंच गए। गुर्जरों की राजधानी भीनमाल तथा उसके निकटवर्ती क्षेत्रों पर चावड़ों का राज्य हो गया। अरावली के दक्षिण में आकर गुहिल लोग बस गए और उन्होंने भीलों को प्रसन्न कर भीली इलाके का शासन हाथ में ले लिया। कोटा डिवीजन का प्रदेश आगे-पीछे मध्य भारत के नागवंशियों के हाथ में चला गया। इस प्रकार हर्षवर्धन के काल में अर्द्ध स्वतन्त्र ये विभिन्न राज्य फैले रहे। हर्षवर्धन के देहान्त के पश्चात् कन्नौज के साम्राज्य में अराजकता फैल गई और भीनमाल के रघुवंशी परिहार राजा नागभट्ट ने उस पर आधिपत्य कर लिया। वह भीनमाल को अपनी राजधानी बनाकर राज्य करने लगा और उसने अपने युग में सिन्ध के मुसलमानों को भी परास्त किया। इसी नागभट्ट के वंश में एक नागभट्ट और हुआ जिसे नाहड़राव भी कहा जाता है। उसने कन्नौज के साम्राज्य पर स्वामित्व प्राप्त कर लिया। उसके अधीनस्थ आन्ध्र, सैधव, विदर्भ, कलिंग, बंग, मालव, किरात, तुरुष्क, वत्स और मत्स्य इत्यादि प्रदेश थे। इस तरह सारा उत्तरी भारत उसके अधीन हो गया। जब तक परिहारों का प्रभाव रहा तब तक मुसलमान लोग सिन्ध और मुल्तान से एक इंच भी आगे न बढ़ सके किन्तु इन लोगों ने अरब लोगों को कभी खदेड़ कर नहीं भगाया क्योंकि यह धर्म-भीरू थे। जब कभी भी मुसलमानों द्वारा अरबों को भगाने की बात की जाती वे लोग मुल्तान के सूर्य मन्दिर में घुस आने की धमकी देते और ये लोग सूर्यवंशी होने के कारण अगाध श्रद्धा रखते थे। इसलिए इनको भी अपने मन पर काबू रखना पड़ता। इधर परिहार भी किसी विदेशी हमले का डर नहीं होने के कारण शिथिल हो गए और यह शिथिलता इस हद तक बढ़ गई कि इस राज्य को कायम होने के 20 वर्ष बाद सन् 1018 में महमूद गजनवी इसे रौंदता हुआ आगे निकल गया। महमूद गजनवी ने परिहारों की भूमि मारवाड़ में होकर सोमनाथ पर आक्रमण कर दिया और परिहार लोग उसे आगे बढ़ने से नहीं रोक सके।

महमूद गजनवी के आक्रमण से अन्तिम हिन्दू साम्राज्य समाप्त हो गया और उसके ध्वंसावशेषों पर कई छोटे-छोटे राज्य स्थापित हो गये। राजस्थान के उत्तर में नागौर से दिल्ली तक चौहानों का राज्य हो गया। इन लोगों ने अपनी राजधानी नागौर से हटाकर सांभर बना ली। और बाद में राज्य के विस्तार के साथ अजमेर को अपनी राजधानी बना ली। मारवाड़ के मध्य भाग पर परमारों का राज्य हो गया। मारवाड़ के दक्षिण-पश्चिम में सांचोर में सोलंकियों का राज्य स्थापित हुआ और अरावली के उस पार चित्तौड़ तक अब गहलोतों का प्रभाव प्रबल हो गया। ये सीमायें थोड़ी बहुत बदलती अवश्य रहीं किन्तु जब मुहम्मद गौरी ने हिन्दुस्तान पर आक्रमण किया उस समय हिन्दुस्तान में अजमेर का चौहान राजा पृथ्वीराज सबका सिरमौर था। उसने आस-पास के राजाओं को एकत्रित कर तुर्कों का मुकाबला किया। तुर्क लोग हार कर भाग गये किन्तु पृथ्वीराज ने राजपूती शान और आन के अनुसार भगोड़े लोगों का पीछा करना उचित नहीं समझा यदि वह ऐसा कर सकता तो मोहम्मद गौरी का खात्मा उसी आक्रमण से हो जाता। उसकी इस भूल का परिणाम यह हुआ कि दूसरे आक्रमण में पृथ्वीराज हार गया।

गुलाम वंश के सुल्तान अल्तमश ने चौहानों को आखिरी बार हरा कर अजमेर में तुर्कों का राज्य स्थापित कर लिया। यहां एक बात उल्लेखनीय है कि तेरहवीं शताब्दी में तुर्कों का राज्य उत्तर भारत में स्थापित हो जाने से कई राजपूत राजाओं ने राजस्थान में शरण ली और वे लोग अरावली के पूर्व, पश्चिम और उत्तर-दक्षिण में बस गये। ठीक इसी प्रकार 900 वर्ष पहले भी सिकन्दर के आक्रमण के समय अनेक जातियों ने राजस्थान में आकर आश्रय ग्रहण किया। कछावा लोग ग्वालियर नगर से पश्चिम में हट कर जयपुर में आ गए। राठौड़ सामन्त बदायूं छोड़ कर मारवाड़ आ बसे। चौहान लोग अजमेर छोड़ कर मारवाड़ के दक्षिण पश्चिम सिरोही तथा दक्षिण-पूर्व बूंदी में आकर बस गये। भाटी लोग भटिंडा तथा भटनेर छोड़ कर एक दो सदी में जैसलमेर आकर जम गये। इस प्रकार पुराने राजाओं और उन राजाओं के पुत्रों की अन्तिम शरणस्थली होने के कारण राजस्थान में आर्यों की जन जातियां तथा उनके तौर तरीके आज तक उपलब्ध होते हैं। मालवा तथा गुजरात का समृद्ध प्रदेश तो तुर्कों के हाथ में चला गया किन्तु राजस्थान की रेगिस्तानी तथा ऊबड़-खाबड़ भूमि राजपूतों के स्वामित्व में ही रही। आगे चल कर अलाउद्दीन खिलजी ने राजस्थान को एक बार फिर झिंझोड़ा। उसने रण-थम्भौर, जालौर तथा नाडोल में गुहलोतों को हराया किन्तु अलाउद्दीन के देहावसान के तुरन्त बाद ही राजपूत पुनः स्वतन्त्र हो गये। मेवाड़ के सिसौदियों ने गुजरात और मालवा के उन सूबेदारों को जो स्वतन्त्र होकर बादशाह बन गये थे, कई बार हराया व राणा कुम्भा ने तो मालवा पर विजय प्राप्त कर वहां के ...ह को बन्दी बना लिया था। चित्तौड़ का विजय स्तम्भ इस घटना का आज

भी साक्षी है किन्तु इन लोगों में महत्त्वाकांक्षा और कूटनीतिज्ञता का अभाव होने के कारण ये कोई सुदृढ़ साम्राज्य की स्थापना नहीं कर सके। गुहलोतों की स्थिति सन् 1526 ई. तक काफी मजबूत हो गई। जिस वक्त बाबर ने हिन्दुस्तान पर हमला किया उस वक्त उसे भी भारत को विजय करने के लिए भारत के सबसे बड़े राजा चित्तौड़ के महाराणा संग्रामसिंह से लोहा लेना पड़ा। राणा सांगा हार अवश्य गये, किन्तु फिर भी बाबर ने राजस्थान में कदम नहीं रखा, क्योंकि उसे राजपूतों के शौर्य का परिचय मिल चुका था। अब राजस्थान का इलाका पूरी तरह बंट गया था। जैसलमेर में भाटी, बीकानेर, जोधपुर में राठौड़, अरावली के दक्षिणी पूर्वी भाग में गुहलोत और बूंदी-सिरोही में चौहान तथा जयपुर में कछावों की सत्ता स्थापित हो चुकी थी। बाबर के बेटे हुमायूं को परास्त करने के बाद शेरशाह ने मारवाड़ के राजा मालदेव पर चढ़ाई की। मालदेव बड़ा पराक्रमी शासक था। उसका दबदबा उत्तरी गुजरात से लेकर राजस्थान तक था। शेरशाह किसी तरह मालदेव को परास्त तो कर सका किन्तु उसके मुंह से यह बात अवश्य निकली कि "मुट्ठी भर बाजरे के लिए हिन्दुस्तान का राज्य खो बैठता।" शेरशाह से त्रस्त बाबर का बेटा हुमायूं राजस्थान में शरण लेने आया किन्तु उसके साथियों द्वारा मारवाड़ में कुछ बैलों का कत्ल किये जाने के कारण मारवाड़ के राजा मालदेव ने शरण देने से इन्कार कर दिया और हुमायूं सिन्ध से होकर फारस की तरफ चला गया। हुमायूं का बेटा अकबर बड़ा प्रबल बादशाह हुआ और उसने राजस्थान के सब राजाओं को अपना सामन्त बना लिया। मारवाड़ के राजा राव चन्द्रसेन ने जब सामन्त बनने के बारे के अपनी अस्वीकृति दे दी तो अकबर ने उसके भाई राव उदयसिंह को राजा बना दिया और चन्द्रसेन को पहाड़ों की शरण लेनी पड़ी। चित्तौड़ के राणा प्रताप ने भी अकबर की अधीनता स्वीकार करने से इन्कार किया और मृत्युपर्यन्त उसने अकबर की अधीनता स्वीकार नहीं की। हल्दी घाटी के युद्ध में राणा प्रताप की हार हुई और उसे भी चित्तौड़ छोड़कर चावंड में शरण लेनी पड़ी। अकबर ने राजपूत राजाओं पर निगरानी रखने के लिए एक सूबेदार की नियुक्ति की। तभी से अजमेर के सूबे की नींव पड़ी। वास्तव में राजस्थान के एकीकरण की नींव का सूत्रपात इस घटना को माना जा सकता है क्योंकि इससे पहले सब राजा लोग अपने को पृथक्-पृथक् रूप से स्वतन्त्र समझते थे किन्तु अब वे एक सूबे में बंध गये।

राजपूतों द्वारा मुगलों से सम्बन्ध जोड़ने के फलस्वरूप भारत की राजनीति में एक स्थिरता आई और अमन-चैन कायम हुआ। इस युग मे साहित्य, संगीत और ललित कला का बड़ा विकास हुआ। हिन्दू-मुस्लिम संस्कृति के संगम से एक नई हिन्दुस्तानी संस्कृति का उद्भव हुआ। किन्तु औरंगजेब के सिंहासनारूढ़ होते ही सारा मानचित्र बदल गया। उसकी कट्टर नीतियों से राजपूत राजा तंग आ गये।

मुगलों के बाद मराठों ने राजपूत राजाओं को तंग करना प्रारम्भ किया और उनसे चौथ वसूल की। ये लोग गद्दी के हकदारों में से किसीएक का पक्ष लेकर उन्हें आपस में लड़ा देते थे। इस प्रकार परस्पर लड़ने से धीरे-धीरे उनकी शक्ति क्षीण होती गई और आखिरकार भीतरी और बाहरी अशान्ति से तंग आकर राजस्थान के राजाओं ने 19 वी शताब्दी मे अंग्रेजों से संधि कर ली। यद्यपि संधि में प्रदर्शन तो मित्रता का ही किया गया था परन्तु स्पष्ट रूप से सर्वस्व अंग्रेजो का ही था। अंग्रेजों के आगमन के साथ हिन्दुस्तान के इतिहास मे एक नया दौर शुरू हुआ। भारत की संस्कृति पर पश्चिम की छाप लगी। खान-पान, रहन-सहन, आचार व्यवहार जीवन का कोई भी पक्ष इससे अछूता नही रहा। विदेशी सत्ता और सामन्ती व्यवस्था के दोहरे दुश्चक्र से ग्रस्त होकर समूचा जन-मानस छटपटाने लगा। पूरी एक शताब्दी गुलामी की यह अवस्था भारतवासियों को असह्य हो गई और 1857 में पहला स्वतन्त्रता संग्राम हुआ।

स्वाधीनता संग्राम की कहानी

बहुधा राजस्थान के राजनीतिक इतिहास से अपरिचित व्यक्ति इस भ्रांत धारणा से ग्रस्त हैं कि इस सामन्ती भू-भाग का स्वाधीनता संग्राम से कोई सक्रिय सम्बन्ध नही था। ऐसे व्यक्तियो का सबसे बड़ा तर्क यह है कि यहा के लोग ब्रिटिश सत्ता से शासित न होकर अपने ही राजाओं और सामन्तो से शासित थे और इसी कारण उनका जो भी संघर्ष था वह इसी वर्ग के विरुद्ध था। किन्तु तात्विक दृष्टि से देखने पर यह ज्ञात होगा कि राजस्थान की रियासतो मे जब निरकुश शासन तन्त्र और उससे प्रसूत दमन, उत्पीड़न, अत्याचार और आर्थिक शोषण,के विरुद्ध जन-चेतना जागृत होकर लोकमन्त्री मांगो की संवाहिका बनी, तो यह संघर्ष स्वतः ही ब्रिटिश सत्ता के साथ हो गया, क्योकि जनता यह निरन्तर अनुभव कर रही थी कि जिस दुष्चक्र की वह शिकार है, उसके प्रणेता और सम्पोषक अंग्रेज ही हैं। दूसरी ओर रियासतों के आन्तरिक मामलो मे ब्रिटेन के हस्तक्षेप ने भी यहा के राजन्य वर्ग में असन्तोष उत्पन्न कर दिया। देशी रियासतों के सामन्तों में इस नई भावना ने जन्म लिया कि ब्रिटेन उनकी स्वायत्तता में व्याघात उत्पन्न कर रहा है। इस प्रकार ब्रिटिश विरोध की चेतना का यह उदीयमान स्तर राजस्थान मे बहुत पहले ही उजागर हो गया था।

राजस्थान में अंग्रेजों का हस्तक्षेप

पूरी एक शताब्दिक तक नेतृत्व विहीन राजस्थान के राजपूत-शासक जब और पिण्डारियो की लूट-पाट से तंग आ गये, तो उनके सामने सिवा इसके

कोई विकल्प न था कि ब्रिटिश साम्राज्यवाद का समर्थन करें और उसके बदले में अपने संरक्षण को सुनिश्चित करें। ब्रिटिश सरकार भी इस तथ्य से भली भांति अवगत थी कि अपने साम्राज्य को सुदृढ़ बनाने और उसका विस्तार करने के लिए देशी राजाओं की सहायता अनिवार्य है।[1] इस पारस्परिक आवश्यकता का प्रतिफल यह हुआ कि 1803 से 1818 के बीच राजस्थान की विभिन्न रियासतों ने ईस्ट इण्डिया कम्पनी के साथ ऐसी संधियां करली, जिनका अर्थ व्यावहारिक दृष्टि से अंग्रेजी प्रभुत्व को स्वीकार कर लेना था।

अब यह स्पष्ट हो चुका था कि राजस्थान के राजा शान्ति एवं व्यवस्था बनाये रखने में अक्षम हो चुके थे और इसके लिए वे अंग्रेजी सत्ता के मुखापेक्षी बने थे।[2] इन सन्धियों में औपचारिक रूप से कहा तो यह गया कि बाह्य आक्रमण की स्थिति में अंग्रेजी हकूमत उनकी रक्षा करेगी और आन्तरिक मामलों मे वे स्वतन्त्र रहेंगे, तथापि व्यावहारिक रूप में इस आश्वासन पर अधिक लम्बी अवधि तक आचरण नहीं किया जा सका।

1818 से 1857 के बीच राजस्थान के प्रति अंग्रेजी सत्ता की जो नीति रही, वह कभी हस्तक्षेप की, कभी मौन धारण कर अपने हितों के प्रति जागरूक रहने की, कभी संरक्षण और सहयोग करने की और कभी अपनी शक्ति से आतंकित करने की थी। इसी प्रक्रिया से इन पिछले पांच दशकों में समूचा राजस्थान ब्रिटिश-सत्ता के शिकंजे में आ चुका था। राजे-महाराजे नाम मात्र के शासक रह गये थे। वास्तविक सत्ता ब्रिटेन के हाथों मे जा चुकी थी। तथापि इस बीच ऐसे अवसर भी आये जब कुछ स्वाभिमानी तत्वों ने जयपुर, जोधपुर, कोटा और भरतपुर में ब्रिटिश सत्ता के हस्तक्षेप का खुला विरोध किया। भले ही यह विरोध किसी व्यापक राष्ट्रीय भावना से अनुप्रेरित नहीं था, तथापि जनता और जागीरदारों के एक छोटे से वर्ग और कतिपय राजाओं के अन्तर्मन में निहित ब्रिटिश विरोधी आक्रोश का व्यन्जक अवश्य था।

जन-आक्रोश और 1857 का विप्लव

इस तथ्य के बावजूद कि अधिकांश राजा लोग अंग्रेजी सत्ता के अधीन अपने स्वत्व को सुरक्षित मानकर उसके प्रति अपनी निष्ठा का परिचय दे रहे थे, कुछ ऐसे राजा भी थे जो भीतर ही भीतर अंग्रेजी सत्ता के प्रति आक्रोश से परिपूर्ण थे। उदाहरण के लिए जोधपुर का राजा मानसिंह संधि के गठबन्धन में बंधने के बाद भी ब्रिटिश सत्ता के प्रतिनत होने में अपने को अपमानित अनुभव करता था। सन्धि के दायित्वों के प्रति वह उपेक्षापूर्ण रहा और जब गवर्नर जनरल ने उसे ब्रिटिस विरोधी तत्वों को शरण न देने के आदेश प्रदान किये तो वह शरणागत वत्सलता के अपने

अधिकार पर दृढ़ रहा। उसने चेतावनियों की चिट्ठियों को भी उपेक्षाभाव से देखा और अजमेर में आयोजित दरबार का भी बहिष्कार किया। किन्तु अंग्रेजों के सबसे बड़े शत्रु थे सामन्त सरदार और जागीरदार थे, जिन्हें ब्रिटिश सत्ता ने राजनीतिक दृष्टि से अस्तित्वहीन कर दिया था।

महारावल डूंगरपुर को अपदस्थ किये जाने पर चारों ओर से व्यक्त व्यापक आक्रोश, जोधपुर में लाडू सहलो पर राठौड़ भीमजी द्वारा किया गया हमला और जयपुर में कैप्टेन ब्लैक की हत्या आदि के विभिन्न प्रकरण इस तथ्य को उजागर करने में सक्षम हैं कि राजस्थान में अंग्रेजों के आगमन को मन से नहीं स्वीकारा गया और उनके प्रति विरोध की भावना किसी न किसी रूप में बराबर बनी रही। जयपुर में कैप्टेन ब्लैक की हत्या जिस सुनियोजित ढंग से की गई, वह तत्कालीन ब्रिटिश विरोधी वातावरण की कथा कहने के लिए पर्याप्त है। इस प्रकार एक ओर जहां सत्ता परक निजी स्वार्थों के साथ-साथ धर्म और संस्कृति के विनाश की आशंका से ग्रस्त सामन्त और जागीरदार जिन्हें सूर्यमल्ल जैसे चारण कवियों ने अपने ओजस्वी प्रबोधन द्वारा अनुप्राणित किया था, अंग्रेजों के प्रति अपने आक्रोश की वीरोचित व्यन्जना के लिए व्याकुल थी, तो दूसरी ओर सामान्य जनता भी अंग्रेज-विरोधी भावना से ओतप्रोत थी, क्योंकि ब्रिटिश सत्ता की स्थापना के साथ ही राजस्थान में भुखमरी, अकाल, बेरोजगारी और आर्थिक शोषण का कुचक्र चल पड़ा था।

यही कारण था कि अंग्रेजी अमलदारी की नींव हिलाने वाले 1857 के विप्लव की शुरूआत होते ही राजस्थान में भी नसीराबाद, नीमच, ऐरिनपुरा, देवली आदि अनेक स्थानों पर स्थित भारतीय सैन्य टुकड़ियों ने विद्रोह का बिगुल बजा दिया। इस भू-भाग मे सामूहिक जन-आक्रोश का कदाचित् यह प्रथम विस्फोट था। क्रान्ति की इन चिनगारियों ने इन छावनियों से प्रारंभ होकर पूरे राज्य को अपने आप मे समेट लिया। सन् 1857 मे राजस्थान के अन्तर्गत 18 देशी रियासतें, अजमेर का ब्रिटिश शासित क्षेत्र और नीमच की छावनी सम्मिलित थी। यह गवर्नर जनरल के एजेन्ट पी. लारेन्स के राजनीतिक शासन के अधीन था। उदयपुर, जयपुर, जोधपुर, भरतपुर और कोटा की पांच प्रमुख रियासतों में पोलीटिकल ऐजेन्ट थे, जो ए. जी. जी. के अधीन सर्वोच्च सरकार का प्रतिनिधित्व करते थे। नसीराबाद, नीमच, देवली और एरिनपुरा में फौजी केन्द्र थे, जहां सभी सैन्य टुकड़ियों में देशी सिपाही थे। ब्रिटिश अधिकारियों की अधीनता मे केवल दो स्थानीय दल ब्यावर तथा खैरवाड़ा में तैनात थे, जिनमें भील और भेर लोग थे।

जिन क्षोभपूर्ण परिस्थितियों मे अधिकांश राजाओं ने ब्रिटिश सत्ता से संधियां की थी, उन्हें देखते हुए 1857 के विद्रोह में राजाओं से किसी प्रकार के सहयोग की अपेक्षा करना व्यर्थ था। अधिकांश राजवंश ब्रिटिश समर्थक थे और वे अंग्रेजी सत्ता

के हर कदम के प्रबल प्रशंसक थे। ऐसी स्थिति में यह कल्पना करना भी कठिन था कि राजस्थान का यह विशाल भू-भाग अंग्रेजी सत्ता के प्रति विद्रोह के इस महायज्ञ में अपनी स्वैच्छिक आहुति देगा। आगे चल कर राजस्थान के विप्लव कालीन घटना चक्र और उसके विविध परिदृश्यों ने इस धारणा को पुष्ट किया।

विद्रोह की ज्वाला जैसे ही भड़की, मेवाड़, मारवाड़ और ढूंढाड़ के राजाओं ने नीमच, नसीराबाद और दक्षिणी मारवाड़ की छावनियों के अंग्रेज अधिकारियों और उनके परिजनों की विद्रोहियों से रक्षा करने के लिए उन्हें अपने राज-प्रासादों और अन्तःपुरों में शरण दी। इतना ही नहीं, जब विद्रोहियों ने इन राजाओं से आगे आकर विद्रोह का नेतृत्व करने का अनुरोध किया, तो उन्होंने सर्वथा विपरीत आचरण कर अपनी सेनाएं विद्रोहियों को कुचलने के लिए भेजी। कुछ अपवादों को छोड़कर सभी राजाओं में अंग्रेज-भक्ति की होड़ लग गई। जैसा कि अप्रत्याशित नहीं था, बावजूद इसके कि सैनिकों का शंखनाद सुनकर भरतपुर तथा अलवर से मेव और गूजर, आउवा के ग्रामीण, निम्बाहेड़ा के नागरिक, कोटा की प्रजा और टोंक के लोगों ने विद्रोहियों के स्वर में स्वर मिलाकर ब्रिटिश सत्ता को चुनौती दी और ब्रिगेडियर जनरल लारेन्स को पराजित करने के साथ-साथ जोधपुर के पोलीटिकल ऐजेन्ट मैसन और कोटा के पोलीटिकल ऐजेन्ट बर्टन को मौत के घाट उतार दिया। अन्ततोगत्वा ब्रिटिश सेनाओं ने विद्रोहियो को पराजित कर दिया और अत्यन्त क्रूरता पूर्वक दमन कर दिया गया।

समूचे भारतीय सन्दर्भ में 1857 के विप्लव को चाहे सैनिक विद्रोह की संज्ञा दी जाय चाहे, इसे भारत का प्रथम स्वाधीनता संग्राम कहा जाय, किन्तु जहां तक राजस्थान में घटित घटनाओं का संबन्ध है, भले ही इस विद्रोह को व्यापक जन-समर्थन न मिला हो और इसके पीछे मुख्यतः असन्तुष्ट जागीरदार और ठाकुर ही रहे हों, यह अपनी समस्त सीमाओं के बावजूद उस जन आक्रोश का प्रथम विस्फोट तो निश्चय ही था, जिसकी परिधि उपयुक्त नेतृत्व मिलने पर और अधिक विस्तृत और बहुआयामी हो सकती थी।

जैसा कि ए. आर. देसाई ने कहा है "1857 का विद्रोह जनतान्त्रिक आधार पर बने देश के राष्ट्रीय संयुक्तीकरण की ऐतिहासिक रूप से प्रगतिशील भावना द्वारा अनुप्रेरित नहीं था, फिर भी ब्रिटिश शासन को उसने जो चुनौती दी थी, उसने बाद के युग में बहुत सारे भारतीयों के लिए देश भक्ति मूलक प्रेरणा का काम दिया और यह विदेशी शासन को उठा फैंकने की लोगों की इच्छा का प्रतीक बना।"

राजस्थान के सन्दर्भ में उसी कथन को ध्यान मे रखते हुए यह निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि 1857 में सीमित जन आक्रोश का जो पहला विस्फोट हुआ उसने भावी लोक चेतना की एक ऐसी पृष्ठभूमि तैयार कर दी, जिसने आगे

चलकर उन विभिन्न जन-आन्दोलनों को प्रेरणा दी जो इस सामन्ती भू-भाग में स्वाधीनता का अलख जगाने में सफल हुए।

नव चेतना का उदय

लगभग दो दशक तक राजस्थान की जनता पराभव की इसी भावना से अभिभूत रही, किन्तु उसकी अन्तश्चेतना की चिनगारियां बुझी नहीं थीं। अपने पुराने इतिहास और स्वाधीनता-संघर्षों में अपने पूर्वजों द्वारा किये गये गौरवपूर्ण कृत्यों की स्मृतियां उसके मानस में जीवित थीं। कर्नल टाड की पुस्तक "एनल्स एण्ड एन्टीक्विटीज आफ राजस्थान" ने भी जब उन वीरतापूर्ण कृत्यों का अतिशयोक्ति पूर्ण यशोगान किया, तो उसके अनुवादों के माध्यम से यहां शिक्षित वर्ग को निराशा के प्रवाह में अपने पैर टिकाने के लिए एक समयानुकूल सम्बल मिला। इधर राजस्थान के वीर चरित्रों को नायक बनाकर हिन्दी, गुजराती तथा बंगला भाषाओं में जो देश भक्ति पूर्ण साहित्य काव्य, नाटक और कहानियों के रूप में सृजित किया गया, उससे जहां राजस्थान में अपने सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक वैभव के प्रति अनुराग-भाव जागृत हुआ, वहां भारत के राष्ट्रीय नवजागरण में भी उसने अपनी सार्थक भूमिका अदा की।

इसी पृष्ठभूमि में राजस्थान की भूमि पर महर्षि दयानन्द का अवतरण और आर्य समाज की स्थापना हुई। 1880 से 1890 के बीच आर्य समाज की अनेकों शाखाएं राजस्थान में खोली गई। जहां उन्होंने वेदोत्तर पौराणिक धर्म की विसंगतियों और विद्रूपों पर प्रहार किया, वहां सामाजिक कुरीतियों के विरुद्ध भी जिहाद बोला। वे राजनीतिक चेतना के लिए धर्म और समाज-सुधार को एक अस्त्र के रूप में प्रयोग कर रहे थे। क्योंकि उनकी मान्यता थी कि अज्ञान और अन्धविश्वास के उन्मूलन के बिना राष्ट्र को उन्नत, स्वतन्त्र और स्वावलम्बी बनाना दुष्कर है। उन्होंने राजस्थान के राजन्य वर्ग और जनता को स्वधर्म, स्वराज्य, स्वदेशी और स्वभाषा का चार सूत्रीय सन्देश दिया और यह उपदेश दिया कि उक्त चारों तत्वों को अपनाये बिना राष्ट्र का उद्धार संभव नहीं। उन्होंने वेद सम्मत धर्माचार, स्वदेशी वस्तुओं का उपयोग और हिन्दी का राष्ट्रभाषा के रूप में प्रयोग स्वराज्य की प्राप्ति के लिए अनिवार्य माना और यह कहा कि इसके बिना सच्ची स्वाधीनता असंभव है।

कहना न होगा कि दयानन्द के आन्दोलन ने राजस्थान में वैचारिक क्रान्ति का सूत्रपात किया। वह न केवल एक धार्मिक एवं सामाजिक आन्दोलन था, अपितु उसके माध्यम से देश प्रेम और राष्ट्रीयता का भाव जागृत करने में बहुत बड़ा योगदान मिला। अपने बहुचर्चित ग्रन्थ 'सत्यार्थ प्रकाश' के दूसरे संस्करण का संशोधन एवं

परिवर्द्धन उन्होंने उदयपुर के महाराणा सज्जनसिंह के आतिथ्य में रह कर ही किया। इसी संस्करण में उन्होंने यह सन्देश दिया। "कोई कितना ही करे, परन्तु जो स्वदेशी राज्य होता है, वह सर्वोपरि उत्तम होता है, अथवा माता-पिता के समान कृपा, न्याय और दया के साथ विदेशियों का राज्य भी पूर्ण सुखदायी नही है।"

दयानन्द का यह सन्देश जहां समूचे भारतीय राष्ट्रीय आन्दोलन की आधारशिला बना वहां इसने राजस्थान के जन-मानस में भी देश-प्रेम को जागृत किया, और उस चेतना को जो 1857 के विद्रोह के बाद सुप्तप्राय हो चुकी थी, फिर से जागृत किया।

इसी बीच साहित्य और पत्रकारिता के क्षेत्र मे भी कुछ ऐसे प्रयत्न हुए जिन्होने राष्ट्रीय भावना को जागृत करने में अग्नि में घृत की तरह कार्य किया। बंकिमचन्द्र का 'आनन्द मठ' प्रकाशित हो चुका था, जिसमे वारेन हैस्टिंग्ज के समय अंग्रेजों से छापामार युद्ध करने वाले सन्यासियों को राष्ट्रीय योद्धाओं के रूप मे चित्रित किया गया था। उनके मुख से मातृ-भूमि की वन्दना के निमित्त भारत के राष्ट्रीय गान""'"वन्दे मातरम्" की रचना की गई। मातृ भूमि की यह वन्दना देश के कोने-कोने में मुखरित हो उठी और राजस्थान भी इससे अछूता न रहा।

आर्य समाज के केन्द्र अजमेर से देश-हितैषी, परोपकारक, जगहितकारक, राजस्थान समाचार, राजस्थान टाइम्स, राजस्थान-पत्रिका और राजपूताना गजट आदि अनेक पत्रो का प्रकाशन हुआ, जिनमे से प्रथम चार ने आर्य समाजी विचार धारा के सम्पोषक होने के नाते जहा धार्मिक एवं सामाजिक सुधारो तथा राष्ट्रीय चेतना से सबधित सामग्री प्रकाशित की, वहां अन्तिम तीन पत्रो ने अंग्रेजी शासकों और देशी रियासतो के राजाओ के कुशासन और अत्याचारों का पर्दाफाश किया। राजस्थान टाइम्स पर जयपुर के दीवान कान्तिचन्द्र मुखर्जी द्वारा चलाया गया मान-हानि का बहुचर्चित मुकदमा राजस्थान में किसी अखबार के विरुद्ध मानहानि का पहला ऐतिहासिक दावा था। इन पत्रों ने तो लोक-चेतना जागृत करने का महत्वपूर्ण कार्य किया ही, आर्य समाज के धर्म प्रचारकों द्वारा सरल-तरल शब्दावली में रचे गये भजनों और गीतों ने भी देशानुराग जागृत करने में अपनी सक्रिय भूमिका अदा की।

इसी के साथ कुछ ऐसी और घटानाएं घटित हुई जिनसे राष्ट्र-वादी विचार धारा के लोगो को बड़ा सम्बल प्राप्त हुआ। एक और छपनिया का वह लोकाख्यानक भीषण अकाल पडा, जिसकी कथाएं आज भी लोगों को रोमांचित करती है। दूसरी और अंग्रेजो द्वारा करोड़ो रुपये का अन्न देश से बाहर ले जाया जा रहा था और यहां के जन-धन के बल पर विदेशो मे अपने साम्राज्य विस्तार के खर्चीले युद्ध लड़े जा रहे थे। मारवाड़ में जब गरीब जनता भूख से त्राहि-त्राहि कर रही थी उसी समय 1899 मे मारवाड़ के राजा के छोटे भाई प्रतापसिंह की [illegible]

एक बड़ी फौज चीन में वहां के देश-भक्तों के विरुद्ध लड़ने को भेजी गई। अंग्रेजों के प्रति असन्तोष बढ़ाने में इस घटना ने भी अपनी आहुति दी और राष्ट्रवादियों को इससे बड़ा बल मिला।

सन् 1903 में जब लार्ड कर्जन ने एडवर्ड सप्तम के राज्यारोहण समारोह के सिलसिले में दिल्ली में भारत भर के राजाओं महाराजाओं को एकत्र कर ब्रिटिश ताज के प्रति भारतवासियों की राजभक्ति का विराट प्रदर्शन करना चाहा, तो महाराणा उदयपुर को विशेष रूप से आमन्त्रित किया गया। कर्जन के अत्यधिक आग्रह पर राणा फतहसिंह दिल्ली दरबार में सम्मिलित होने के लिए प्रस्थान हो गया, किन्तु दरबार में सम्मिलित होने से पूर्व ही उसे दयानन्द के शिष्य शाहपुरा के क्रान्तिकारी कृष्णसिंह बारहट ने "चेतावणी रा चूंगट्या" द्वारा अपने गौरव और स्वाभिमान का भान करा दिया और वह वापस लौट आया। इस कविता में मेवाड़ की उस उज्जवल परम्परा का स्मरण कराया गया था, जिसमें कभी विदेशियों के सामने सिर नहीं झुकाया गया था। इस घटना ने राजस्थान के राजन्य वर्ग और जन सामान्य दोनों के मानस को राष्ट्रीय चेतना से झकझोर दिया। कहना न होगा कि राजस्थान का राजनीतिक, आर्थिक और सामाजिक ढांचा भी मध्य युगीन इपर सामन्ती स्तर का बना था। ब्रिटिश सत्ता की अधीनता स्वीकार करने से स्वतन्त्र जीविकोपार्जन के पुराने सभी रास्ते रुक जाने और स्वतन्त्र प्रतिभा और पूंजी के विनियोग के प्रायः सब अवसर रुद्ध हो जाने के कारण पुराना मध्य वर्ग लगभग समाप्त हो चुका था। अब यहां मुख्यत: दो ही वर्ग बच रहे थे--एक उच्च अभिजात विशेषाधिकार या भू सत्ता प्राप्त शासकों-जागीरदारों आदि का और दूसरा साधारण गरीब-अशिक्षित जनता का और उन दोनों के ऊपर विदेशी गुलामी का जूआ रखा था। अतः इन दोनों वर्गों की सबसे बड़ी वेदना अंग्रेजों की गुलामी थी, जिसका प्रतिकार पूर्ण स्वाधीनता में ही हो सकता था। इस प्रकार राजस्थान में विदेशी सत्ता को उखाड़ फेंकने की उद्दाम आकांक्षा सहज स्वाभाविक थी।

सन् 1885 में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस की स्थापना अपने आप में एक युगान्तरकारी घटना थी। आरम्भ में कांग्रेस की मुख्य मांगें केवल प्रशासनिक सुधारों तक सीमित थीं किन्तु शनैः शनैः जन जागृति के फलस्वरूप इसके उद्देश्यों में परिवर्तन हुआ और अन्ततः इसके द्वारा पूर्ण स्वाधीनता की मांग की गई। राष्ट्रीय कांग्रेस का प्रभाव तीव्रगति से बढ़ने लगा। सन् 1887 में गवर्नमेंट कालेज अजमेर के छात्रों ने मिलकर कांग्रेस कमेटी की स्थापना की और 1888 में जब प्रयाग में राष्ट्रीय कांग्रेस का चतुर्थ अधिवेशन हुआ, तो अजमेर का प्रतिनिधित्व उसमें भी किया गया।

स्वदेशी आन्दोलन

महर्षि दयानन्द ने स्वधर्म, स्वभाषा, स्वदेशी और स्वराज का जो मन्त्र दिया था, उसके अनुरूप राजस्थान के नागरिकों में जागृति उत्पन्न करने के लिए स्वदेशी आन्दोलन आरम्भ किया गया। बांसवाड़ा, सिरोही, मेवाड़ और डूंगरपुर में स्वामी गोविन्द गिरि के प्रभावशाली नेतृत्व में यह आन्दोलन संचालित किया गया। विदेशी वस्तुओं का बहिष्कार कर केवल स्वदेशी वस्त्रों को पहनने का निश्चय किया गया। लोगों से मद्यपान छोड़ने और अपने राजनीतिक अधिकारों की प्राप्ति के लिए संघर्ष करने का आह्वान किया गया। इन गतिविधियों से ब्रिटिश सरकार चिन्तित हो उठी और उसने एक आदेश जारी करके देशी राजाओं से अनुरोध किया कि स्वदेशी आन्दोलन को पूरी तरह 'कुचल' दिया जाय।

इधर बंगाल-विभाजन के आदेश से जो आक्रोश-उत्पन्न हुआ, उसकी हवा राजस्थान में भी पहुंचने लगी। अंग्रेजी सरकार ने राजस्थान के सभी राजाओं को आगाह किया कि वे अपने-अपने राज्यों की सीमा में क्रान्तिकारी साहित्य और आतंकवादी साधनो का प्रवेश न होने दें। परिणामतः दमन-चक्र शुरू हुआ। जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, कोटा, उदयपुर, बूंदी, किशनगढ़ और कई अन्य राजाओं ने अपने-अपने राज्य में आदेश जारी किये कि किसी भी प्रकार के क्रान्तिकारी संगठन में सम्मिलित होना अथवा क्रान्तिकारी साहित्य रखना या पढ़ना-पढ़ाना और किसी भी सार्वजनिक सभा में बिना अनुमति भाग लेना दण्डनीय अपराध माना जायेगा। इतना ही नही आर्य-समाज के साहित्य को भी जब्त करने के आदेश दिये गये और ब्रिटिश विरोधी प्रचार पर पाबन्दी लगादी गई।

इन सारे नियन्त्रणों के बावजूद राजस्थान में क्रान्तिकारी आन्दोलन अपनी जड़ें जमाने लगा। राजस्थान में क्रान्तिकारियों का नेतृत्व जयपुर में अर्जुनलाल सेठी, कोटा में केसरीसिंह बारहट और अजमेर में खरवा के राव गोपालसिंह और कृष्णा मिल्स ब्यावर के दामोदरदास राठी कर रहे थे। भारत के मूर्धन्य क्रान्तिकारी रास बिहारी बोस, शचीन्द्र सान्याल, हमीरचन्द, अवध बिहारी आदि इनके निकट सम्पर्क में थे। अपने आन्दोलन को चलाने के लिए धन-संग्रह के उद्देश्य से क्रान्तिकारियों के इस समूह द्वारा बिहार के निमेज गांव के जैन उपासरे पर छापा मारने, जोधपुर के एक धनी महन्त को कोटा लाकर उसकी हत्या करने, दिल्ली में लार्ड हार्डिंग पर बम फेंकने आदि की जो कार्यवाहियां की गई उसके फलस्वरूप उन्हें लम्बी सजाएं भुगतनी पड़ीं। इन गतिविधियों ने भी उग्रराष्ट्रवाद की भावना को पोषित करने में अपना योग-दान दिया।

कृषक आन्दोलनों की श्रृंखला

राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में राजनीतिक चेतना जागृत करने की दिशा में

कृषक आन्दोलनो ने असाधारण भूमिका निभाई। इन आन्दोलनों के माध्यम से एक ऐसी जागृति आई जिसने लोगों को अपने राजनीतिक अधिकारों के प्रति सजग किया। आर्थिक शोषण, उत्पीड़न, अत्याचार, नाना प्रकार के टैक्सों की भरमार, लाग-बाग और बेगार का एक अन्तहीन सिलसिला जागीरदारी क्षेत्रों में चल रहा था। इस कुचक्र के विरुद्ध सबसे प्रथम विद्रोह करने का बीड़ा मेवाड़ के बिजोलिया ठिकाने के कृषकों ने उठाया और राजस्थान के दूसरे क्षेत्र के कृषकों के सम्मुख भी विद्रोह का मार्ग प्रशस्त कर दिया। बिजोलिया का यह कृषक-आन्दोलन 1918 से विजयसिंह पथिक के तेजस्वी नेतृत्व में आरम्भ हुआ था।

यह कहना असंगत न होगा कि किसान आन्दोलनो के जरिये राजनीतिक जागरण का जो सिलसिला राजस्थान मे शुरू हुआ, उस शृंखला का सूत्रपात बिजौलिया के कृषक आन्दोलन से हुआ। बिजौलिया के सार, बेगूं, सवरड़, दूदवा, सारा, सीम और सिरोही जैसे अनेक स्थानो पर किसान आन्दोलन हुए, जिन्होने राजस्थान मे लोक–जागरण का अलख जगाने की महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

भील आन्दोलन

देश के स्वाधीनता संग्राम के इतिहास में राजस्थान के दक्षिण-पश्चिमी अंचल के भील आंदोलनों की विशिष्ट एवं रोचक भूमिका रही है।

प्रकृति से स्वच्छन्दता प्रेमी भील जन जाति के लोग किसी भी थोपी गई सत्ता के प्रति स्वभावतः घृणा का भाव रखते आये हैं। राजस्थान में अंग्रेजी शासन के प्रभाव के साथ ही अनेकानेक प्रकार के सुधारों के क्रियान्वयन के फलस्वरूप सदियों से चले आ रहे भीलों के अधिकारों पर भी कुठाराघात होने लगा। इससे उत्तेजित होकर सन् 1818 में पहली बार भील समुदाय ने सरकारी अधिकारियों की अवमानना कर विभिन्न प्रकार की कानून विरोधी गतिविधियां प्रारम्भ करदी। बारापाल, आशीयगढ़, कोटड़ा, पायी तथा सिरोही बासवाड़ा व डूंगरपुर जिले के पहाडी अंचलो में यत्र-तत्र छोटे-मोटे आन्दोलन शुरू होने लगे। भील समुदाय के प्रारम्भिक आंदोलन को तत्कालीन शासको द्वारा सख्ती से कुचल दिया गया, किन्तु 1922 से 1935 के बीच मोतीलाल तेजावत, भोगीलाल पड्या तथा हरिदेव जोशी द्वारा भील आंदोलन का नेतृत्व सभाले जाने के बाद इन्हे कुचल पाना इतना आसान नही रह गया। तत्कालीन रियासती शासको द्वारा नाना प्रकार के करो, बेगार तथा समान आधार पर जमीनो के पट्टे दिये जाने के प्रयासों का जमकर विरोध किया जाने लगा। सन् 1922 मे चले भील आंदोलन को कुचलने के दौरान 325 परिवारों 1800 नर-नारियो, 640 मकानो, 7085 मन खाद्यान्न तथा 600 गाड़ियों को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया गया। भील समुदाय मे अपने अधिकारों की रक्षा के लिए पनपी इस चेतना को नागरिक अधिकारो की रक्षा के लिए एक चुनौतीपूर्ण

आंदोलन की संज्ञा दी गई और इन्हें सख्ती से दबा दिया गया। भील आंदोलन के नेता मोतीलाल को इस दौरान अनेकानेक यंत्रणाओं का सामना करना पड़ा, किन्तु वे अडिग बने रहे। इस प्रारम्भिक आंदोलनों ने राष्ट्रीय स्तर पर भील समुदाय में एक नई चेतना का सूत्रपात किया।

प्रजा मण्डलों की भूमिका

कांग्रेस के गठन के पश्चात् प्रारंभ मे इस संस्था के कार्य क्षेत्र में देशी रियासतें शामिल नहीं थीं। देशी राज्यों के प्रति कांग्रेस की नीति की व्याख्या सर्वप्रथम सन् 1920 में महात्मा गांधी द्वारा की गई। सन् 1938 में कांग्रेस के अधिवेशन में पहली बार देशी रियासतों को भी भारत का अभिन्न अंग मानने तथा देशी राज्यों में उत्तरदायी सरकारों की स्थापना तथा नागरिक स्वाधीनता सुनिश्चित किये जाने का प्रस्ताव स्वीकार किया गया। तदनुसार राजपूताना की विभिन्न रियासतों में रचनात्मक गतिविधियां प्रारम्भ करने तथा रियासती शासन की प्रजा को मौलिक अधिकार प्रदान कराने के लिए प्रजा मण्डलों का गठन किया जाने लगा।

सर्वप्रथम अप्रेल, 1938 में माणिक्यलाल वर्मा के नेतृत्व में मेवाड़ प्रजा मण्डल के नाम से कुछ उत्साही कार्यकर्ताओं के एक संगठन का गठन किया गया। इस संस्था के गठन के साथ ही इसे अवैध घोषित कर दिया गया। विरोधस्वरूप कार्यकर्ताओं ने भी नागरिक अवज्ञा तथा सत्याग्रह जैसे उपायों का सहारा लिया। प्रजा मण्डल के कुछ कार्यकर्ताओं को जेलों में ठूंस दिया गया तथा आंदोलन से जुड़े सभी संदिग्ध लोगों के विरुद्ध दमनात्मक कार्यवाही की गई। प्रतिबन्ध की समाप्ति सन् 1941 में प्रजा मण्डल की गतिविधियों पर लगाया गया प्रतिबन्ध वापिस ले लिये जाने पर हुई और प्रजा मण्डल ने रचनात्मक गतिविधियों पर अपना ध्यान केन्द्रित कर दिया।

रचनात्मक दौर की इन गतिविधियों के दौरान स्वर्गीय मोहनलाल सुखाड़िया भी इसके एक उत्साही कार्यकर्ता थे। सन् 1942 में महात्मा गांधी के निर्देशानुसार प्रजा मण्डल के नेताओं ने महाराणा को ब्रिटिश सत्ता से अपना नाता तोड़ लेने के लिए काफी दबाव डाला। महाराणा द्वारा ऐसा न किए जाने पर हड़ताल तथा जेल भरो अभियान शुरू किए गए। फलस्वरूप पुनः प्रजा मण्डल के कार्यकर्ताओं की बैठकों तथा जुलूस आदि निकाले जाने पर रोक लगा दी गई और कई लोगों ने अपनी गिरफ्तारी दी। सन् 1945 तक मेवाड़ में जन आक्रोश रह-रहकर भड़कता रहा।

कोटा प्रजा मण्डल का गठन 1936 में किया गया। मण्डल द्वारा समय-समय पर पारित प्रस्तावों से स्पष्ट होता है कि अपने समूचे कार्यकाल में मण्डल की

गतिविधियां निरन्तर जारी रहीं और इस दौरान निरक्षरता के उन्मूलन, सावाल की समुचित व्यवस्था, किसानों को सिंचाई के लिए पर्याप्त पानी, रबी की फसल को हुई क्षति का मुआवजे देने आदि कई प्रस्ताव पारित किये गये। कोटा प्रजा-मण्डल के कार्यकर्ताओं द्वारा हड़ताल व सत्याग्रह आयोजित करने के अलावा उत्तरदायी सरकार की स्थापना की मांग भी की जाती रही। अलवर व भरतपुर रियासतों में प्रजा मण्डलों की स्थापना सन् 1938 में की गई। इसकी गतिविधियां भी मुख्यतः सत्याग्रह, नागरिक अवज्ञा तथा उत्तरदायी सरकार की मांग पर ही केन्द्रित थी।

नागरिक स्वाधीनता की प्राप्ति के लिए सर्वप्रथम 1936 में जोधपुर में एक नागरिक स्वाधीनता संगठन का गठन किया गया। तत्कालीन जोधपुर सरकार ने संस्था के गठन के साथ ही इसे प्रतिबंधित कर दिया। इसके फलस्वरूप सन् 1938 तथा परवर्ती वर्षों में जोधपुर में राजनैतिक सरगर्मियों के कारण निरन्तर तनावपूर्ण स्थिति बनी रही। सन् 1938 के प्रारम्भ में ही सुभाषचन्द्र बोस जोधपुर आये तथा उन्होंने कांग्रेस का संदेश जन-जन तक पहुंचाया। सुभाष की इस यात्रा से राजनैतिक कार्यकर्ताओं में एक नये उत्साह का संचार हुआ। फलस्वरूप मई, 1938 में मारवाड़ लोक परिषद् का गठन किया गया। मारवाड़ लोक परिषद् के गठन का उद्देश्य मुख्यतः मारवाड़ में उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए संघर्ष करने तक ही सीमित था, किन्तु सामन्ती शासकों की विविध प्रकार की ज्यादतियों के निराकरण के लिये छेड़े गये जन आंदोलनों के कारण शीघ्र ही यह अपने ढंग की सबसे महत्वपूर्ण संस्था बन गई। जल्दी ही इसने आंदोलनों की शुरूआत कर दी। जिसके फलस्वरूप इसे अवैध घोषित कर दिया गया। सन् 1942 में चन्दावल और नीमाज में गम्भीर वारदातें हो गईं और रियासती शासन के अधिकारी मण्डल के कार्यकर्ताओं के पीछे हाथ धोकर पड़ गये। जयनारायण व्यास जैसे तेजस्वी जननायक ने इस आंदोलन का नेतृत्व किया था। सन् 1942 तक लोक परिषद् ने राज्य के राजनैतिक जीवन में अपनी गहरी जड़ें जमा ली। परिषद के समय-समय पर आयोजित सत्रों व बैठकों में उत्तरदायी सरकार दिवस मनाये जाने तथा जागीरदारों के विरुद्ध किये गये जन आंदोलनों का दूरगामी प्रभाव पड़ा जिसके कारण जनमानस बराबर उद्वेलित बना रहा। जो भी हो, सन् 1942 के अंत तक इसके सदस्यों की गिरफ्तारियों का सिलसिला चलता रहा। सन् 1944 की गर्मियों में जाकर इन लोगों को रिहा किया गया।

सन् 1938 के अन्त तक जयपुर में भी प्रजा मण्डल की स्थापना कर दी गई। जनवरी 1940 में जयपुर प्रजा मण्डल ने एक पर्चा निकालकर राज्य की दमनकारी नीतियों की भर्त्सना की जिससे भड़क कर रियासत के प्रधानमन्त्री राजा ज्ञान नाथ ने मण्डल को गम्भीर परिणामों की धमकी दे डाली। पुलिस ने प्रजा मण्डल के कार्यालय पर छापा मारा तथा बहुत सारे कागजात अपने साथ ले गये। अन्त

2 अप्रेल, 1940 को रियासत द्वारा संस्था को मान्यता प्रदान कर दी गई और इसे जन मानस तैयार करने तथा लोगों के शिकवे-शिकायतें महाराजा तक पहुंचाने का अधिकार प्रदान कर दिया गया। सन् 1941 में हीरालाल शास्त्री ने रियासत में सुधार किये जाने की मांग उठाई जिसके फलस्वरूप 1942 में गठित की गई एक समिति की सिफारिशों के अनुसार रियासत में कई एक संवैधानिक सुधार लागू किये गये।

इसी प्रकार डूंगरपुर रियासत में उत्तरदायी शासन की मांग को भी वहा के महारावल द्वारा दबाये जाने के प्रयासो के तहत रियासत में खादी टोपी पहनने तक पर पाबन्दी लगा दी गई। डूंगरपुर प्रजा मण्डल के अध्यक्ष, भोगीलाल पंडया को उनके साथियों सहित 30 अप्रेल, 1946 को गिरफ्तार कर लिया गया ताकि मण्डल की गतिविधिया ठप्प हो जायें। कुछ दिनो बाद भोगीलाल पंडया को जेल से रिहा कर दिया गया। इसी बीच 31 मई, 1947 को पानावाड़ा ग्राम में पुलिस की ज्याद-तियां इस कदर बढ गई कि लोगों की जम कर पिटाई की गई और महिलाओं तक को नहीं बख्शा गया।

रियासत के प्रजामण्डल की ओर से घटना के तथ्यों का पता लगाने के लिए जब भोगीलाल पंड्या स्वयं पानावाड़ा गांव गये तो गांव में तैनात रियासती सेना के जवानो ने न केवल उनकी जमकर धुनाई की अपितु उन्हें गिरफ्तार भी कर लिया। जेल में उन्हे नाना प्रकार की यत्रणायें दी गई और बिना किसी सुनवाई के उन्हें जेल में रखा गया। अन्ततः रियासत में शांति एवं व्यवस्था की स्थिति उत्पन्न करने की दृष्टि से श्री पण्डया तथा अन्य राजनैतिक बन्दियों को महारावल द्वारा 30 जून, 1947 को मुक्त किया गया।

बांसवाड़ा में प्रजा मण्डल नाम से एक संगठन की स्थापना 1945 में की गई। मण्डल का मुख्य उद्देश्य रियासती अधिकारियों के सम्मुख प्रजा की विभिन्न मांगों को प्रस्तुत करना तथा शांतिपूर्ण तथा वैधानिक तरीकों से उनका समाधान प्राप्त करना था। इस ओर जन-चेतना तैयार करने के लिए प्रजा मण्डल ने अपने कार्यक्रमों को अखबारों, भाषणो तथा प्रदर्शनों के माध्यम से प्रचारित कराया।

सन् 1945-46 में खाद्यान्न की कमी से रियासत के सामने बड़ी गम्भीर स्थिति उत्पन्न हो गई। इस स्थिति से निपटने के लिए प्रजा मण्डल ने अनाज परिषद् का गठन किया तथा खाद्यान्न स्थिति सुधारने मे रियासती प्रशासन की असफलता को उजागर करने के लिए जन-आंदोलन छेड़ा। इसके तहत रियासत से खाद्यान्नों की निकासी पर रोक लगाने, कीमतों को नियंत्रित करने तथा समुचित वितरण व्यवस्था किये जाने की मांग की गई।

तत्पश्चात् नवम्बर, 1945 में प्रजा मण्डल ने रियासत में सामन्ती शासन के स्थान पर उत्तरदायी सरकार की मांग की घोषणा कर डाली। अपनी रचनात्मक गतिविधियों को कारगर ढंग से चलाने के लिए प्रजा मण्डल ने अपने कार्यक्रमों में छात्रों एवं किसानों को भी जोड़ा। मण्डल ने भ्रष्टाचारी अधिकारियों के खिलाफ आवाज उठाने, बेगार प्रथा को समाप्त कराने तथा रियासत की वन सम्पदा के संरक्षण के सम्बन्ध में सुनियोजित नीति बनाने का भी कार्यक्रम बनाया। रियासती शासन ने एक अध्यादेश जारी कर प्रजा मण्डल द्वारा आयोजित सभी प्रकार के प्रदर्शनों, जुलूसों तथा सभाओं पर पाबन्दी लगादी।

यद्यपि सन् 1946 में रियासती शासकों ने विधान सभा के संविधान में संशोधन करने तथा इसे जन आकांक्षा के अनुरूप बनाने के उपायों की घोषणा करदी थी तथापि प्रजा मण्डल ने प्रस्तावित संशोधनों को पर्याप्त नहीं माना। सितम्बर, 1947 में प्रजा मण्डल ने पुनः पूर्णतः उत्तरदायी सरकार की अपनी मांग उठाई। अन्ततः 1948 में रियासत में लोकप्रिय सरकार कायम हो पाई।

इस समूचे दौर में बांसवाड़ा के जन-जन में देश भक्ति की भावना कूट-कूट कर भर देने में श्री हरिदेव जोशी के भाषणों, गतिविधियों तथा जन सेवा के उनके कार्यों का विशेष योगदान रहा।

बीकानेर रियासत में भी वहां की जनता सामन्ती शासन के दमन व यंत्रणा से त्रस्त थी जहां सभी प्रकार की राष्ट्रीय गतिविधियों पर शासन के अध्यादेशों द्वारा अंकुश लगा दिया गया था। सन् 1942 में रघुवीर दयाल गोयल की अध्यक्षता में बीकानेर प्रजा मण्डल द्वारा रियासत में उत्तरदायी शासन की स्थापना के लिए आंदोलन चलाने का निश्चय किया गया। इस पर उन्हें रियासत से निर्वासित कर दिया गया तथा आंदोलन को कुचलने के लिए दमनकारी कदम उठाये गये। प्रेस अधिनियम के जरिये राज्य में प्रकाशन सम्बन्धी गतिविधियों पर रोक लगादी गई। सन् 1946 के किसान आंदोलन के दौरान किसानों पर निर्मम अत्याचार किए गये। 1 जुलाई, 1946 को रायसिंह नगर में पुलिस द्वारा गोली चलाये जाने पर जनता में उत्साह का ज्वार उमड़ पड़ा। महाराजा सार्दूलसिंह द्वारा रियासत में उत्तरदायी सरकार बनाने की घोषणा किये जाने पर ही वातावरण कुछ समय के लिए शांत हो पाया।

जैसलमेर रियासत में वहां के महारावल के निरकुंश शासन के दौरान किसी भी संगठन को शासक के अत्याचारों के विरुद्ध आवाज उठाने की छूट नहीं थी। सागरमल गोपा ही ऐसे अकेले व्यक्ति थे जिन्होंने लोगों में अपने राजनैतिक अधिकारों के लिए जागृति उत्पन्न की। सन् 1930 में जब जवाहर दिवस समारोह का आयोजन चल रहा था, सागरमल गोपा को गिरफ्तार कर लिया गया। थोड़े दिन बाद ही उन्हें रिहा भी कर दिया गया। सागर मल गोपा इसके बाद रियासत छोड़कर नागपुर चले गये और वहीं से जैसलमेर के अत्याचारी शासन के बारे में अखबारों

में लिखने लगे। जैसलमेर में जब 1939 में प्रजा मण्डल की स्थापना की जाने लगी तो इस पर तत्काल रोक लगा दी गई। सन् 1941 में सागर मल गोपा को पुनः गिरफ्तार कर लिया गया और 3 अप्रैल, 1946 को जेल में ही उनकी इह लीला समाप्त हुई। सागरमल गोपा की मृत्यु के पीछे गहरी साजिश थी।

इस प्रकार सन् 1938 के बाद से सिरोही, धौलपुर, करौली, बूंदी व शाहपुरा इत्यादि राजस्थान की लगभग सभी रियासतों में भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस द्वारा निर्धारित नीति के अनुसार प्रजा मण्डल स्थापित होने लगे थे। इन प्रजा मण्डल के सदस्यों की गतिविधियों तथा बलिदानों ने समूचे प्रदेश में ऐसी जबर्दस्त फिजां बनादी थी जिससे राजस्थान के रियासती शासकों को मजबूर होकर अपने यहां की शासन व्यवस्था में विभिन्न प्रकार के संवैधानिक सुधार करने पड़े। इन रियासतों में निरकुश शासन प्रणाली के स्थान पर पूर्णतः जन-तांत्रिक व्यवस्था की स्थापना कराना प्रजा मण्डलों की निश्चय ही एक सराहनीय उपलब्धि थी।

इसी बीच 15 अगस्त, 1947 को लगभग एक हजार साल की लम्बी गुलामी के पश्चात् भारत ने स्वाधीनता के एक सर्वथा नये युग में प्रवेश किया। स्वाधीनता प्राप्ति के इस सुयोग के साथ ही देशी रियासतों और संघीय सरकार के संबंधों पर पुनर्विचार की प्रक्रिया शुरू हुई। हैदराबाद, जूनागढ़ और कश्मीर रियासतों को छोड़कर लगभग सभी देशी रियासतों के तत्कालीन शासकों ने भी भारत संघ के साथ अपने राज्यों को मिलाने की इच्छा जताना शुरू कर दिया।

स्वाधीनता प्राप्ति के समय राजस्थान में केन्द्र शासित अजमेर-मेरवाड़ा को छोड़कर कुल 22 देशी रियासतें और रजवाड़े थे। देश के तत्कालीन गृहमंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल के देशी राज्यों के रियासती शासकों को भारत संघ में शामिल हो जाने के आह्वान के साथ ही राजस्थान में भी रियासतों के एकीकरण की प्रक्रिया शुरू हो गई।

एकीकरण

भारत के तत्कालीन गृह मंत्री सरदार वल्लभ भाई पटेल ने 15 अगस्त 1947 को जूनागढ़, काश्मीर एवं हैदराबाद को छोड़कर सभी रियासतों को भारतीय संघ का अंग बना लिया था। राजस्थान की अलग-अलग रियासतों ने भी भारतीय संघ का अंग बनने की सहमति दे दी थी।

राजस्थान का वर्तमान स्वरूप विभिन्न चरणों में हुआ था। 27 फरवरी, 1948 को अलवर, भरतपुर, धौलपुर व करौली की रियासतों का विलीनीकरण इन रियासतों के नरेशों की सहमति प्राप्त कर दिल्ली में किये जाने का निर्णय लिया गया। इन चार रियासतों को "मत्स्य संघ" नाम दिया गया जिसका सुझाव श्री कन्हैया

लाल माणिक्य लाल मुंशी ने महाभारत काल में इस क्षेत्र के इतिहास के संदर्भ में दिया था। 18 मार्च, 1948 को मत्स्य संघ का विधिवत् उद्घाटन श्री एन. वी. गाडगिल ने किया तथा मत्स्य की राजधानी अलवर रखी गयी। इन चार रियासतों का क्षेत्रफल 7589 वर्गमील, आबादी 18,37, 994 तथा राजस्व आय 183 लाख प्रतिवर्ष थी।

इस संघ के निर्माण के साथ ही राजस्थान के गठन की प्रक्रिया आरम्भ हो गई। विलीनीकरण को मुख्यतया पांच अवस्थाओं में बांटा जा सकता है :-

1. मत्स्य संघ	18 मार्च, 1948
2. राजस्थान संघ	25 मार्च, 1948
3. संयुक्त राजस्थान	18 अप्रेल, 1948 + उदयपुर
4. राजस्थान	30 मार्च, 1949
5. मत्स्य संघ का राजस्थान में विलय	15 मई, 1949

मत्स्य संघ के गठन के दौरान ही बांसवाड़ा, बूंदी, डूंगरपुर, झालावाड़, किशनगढ़, कोटा, प्रतापगढ़, शाहपुरा व टोंक रियासतों के तत्कालीन नरेशों से एक संघ बनाने के विषय मे वार्ता की जा रही थी। कोटा, झालावाड़ व डूंगरपुर के नरेश 3 मार्च, 1948 को एक छोटा संघ बनाने का प्रस्ताव लेकर दिल्ली गये थे। परन्तु स्टेट विभाग ने सुझाव दिया कि इस मे उदयपुर को भी सम्मिलित कर लिया जाय। 4 मार्च, 1948 को स्टेट विभाग के प्रतिनिधि श्री वी. पी. मेनन ने विभिन्न राजाओं से विचार विमर्श किया तथा यह तय किया गया कि इस संघ के कोटा नरेश राजप्रमुख बने तथा राजधानी कोटा रहे। बूंदी व डूंगरपुर के नरेश उप राजप्रमुख व जूनियर उप राज प्रमुख बने। परन्तु अन्ततः 9 रियासतों को सम्मिलित कर 25 मार्च, 1948 को राजस्थान संघ की स्थापना हुई। इनमें बांसवाड़ा, बूंदी, डूंगरपुर झालावाड़, किशनगढ़, कोटा, प्रतापगढ़, शाहपुरा व टोंक सम्मिलित हुए। इस संघ की राजधानी कोटा रखी गई तथा क्षेत्रफल 17,000 वर्गमील तथा जनसंख्या 24,00,000 थी। इसकी राजस्व आय 2 करोड रुपये वार्षिक थी।

इस संघ की स्थापना के तुरन्त बाद महाराणा उदयपुर ने स्टेट विभाग को पत्र लिख कर सहमति दी कि उदयपुर को भी इनमें शामिल कर लिया जाय। 15 अप्रेल, 1948 को संयुक्त राजस्थान के निर्माण के विषय में संबंधित नरेशों ने समझौते पर हस्ताक्षर किये।

18 अप्रेल, 1948 को भारत के प्रधान मंत्री श्रीजवाहरलाल नेहरू ने संयुक्त राजस्थान का उद्घाटन किया। इस संघ का क्षेत्रफल 29977 वर्गमील तथा आबादी 42,60, 918 तथा वार्षिक आय 316 लाख रुपये थी।

अब राजस्थान की रियासतों मे जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, जैसलमेर तथा ही ऐसी शेष रियासतें थीं जो एकीकरण के अन्तर्गत नही आई थीं। इनमें

से कुछ रियासतें अपने को स्वतन्त्र रखना चाहती थीं। 11 जनवरी, 1949 से 14 जनवरी, 1949 के मध्य बची हुई रियासतों को भी सम्मिलित करने हेतु स्टेट डिपार्टमेन्ट द्वारा निरन्तर वार्ताएं व प्रयास किये जाते रहे। सरदार पटेल ने अन्त मे 14 जनवरी, 1949 को उदयपुर की एक सार्वजनिक सभा मे घोषणा की कि जयपुर, जोधपुर, जैसलमेर, व बीकानेर ने राजस्थान में सम्मिलित होना सिद्धान्ततः स्वीकार कर लिया है तथा इस पर शीघ्र ही कार्यवाही कर दी जायेगी।

वृहत्तर राजस्थान के संबंध में तीन उलझनें थी —राजप्रमुख का पद, राजधानी का प्रश्न तथा मंत्री मण्डल का चुनाव। काफी वाद–विवाद के उपरान्त यह सहमति हुई कि उदयपुर के महाराणा राजस्थान के महाराज प्रमुख होंगे, जयपुर नरेश महाराज प्रमुख तथा कोटा नरेश उप राज प्रमुख। राजधानी जयपुर रहेगी।

30 मार्च, 1949 को राजस्थान का विधिवत् गठन सरदार पटेल ने किया। इस समय इसका क्षेत्रफल 1,21,028 वर्गमील, आबादी 1, 12, 43, 964 तथा वार्षिक राजस्व आय 10,48,18, 333 रूपये थी। राजस्थान के पहले मुख्य मंत्री श्री हीरा लाल शास्त्री बने।

राजस्थान में अभी तक मत्स्य संघ शामिल नहीं हुआ था अतः इस दिशा में भी वार्ताएं शुरू की गई। अलवर व करौली एक मत से राजस्थान में शामिल होना चाहते थे। परन्तु भरतपुर व धौलपुर पूरी तरह स्पष्ट नहीं थे। कुछ लोग इसे उत्तर प्रदेश का अंग बनाना चाहते थे। स्व० पटेल ने एक समिति श्री शंकर राव देव की अध्यक्षता में बनाई जिसने इस क्षेत्र की जनता की राय लेकर सिफारिश की कि ये रियासतें राजस्थान का अंग बनना चाहती है। अतः 15 मई, 1949 को इन रियासतों को राजस्थान का अंग बना लिया गया।

अब केवल सिरोही का प्रश्न शेष रह गया इस रियासत के संबंध मे गुजरातियों व राजस्थानियों के परस्पर विरोधी दावे किये जाते रहे। सिरोही के नेता भी इस विषय में विभाजित थे। अतः यह तय किया गया कि सिरोही के आबूरोड व देलवाड़ा तहसील को बम्बई प्रान्त तथा शेष भाग को राजस्थान में मिला दिया गया।

अब राजस्थान का क्षेत्रफल 1, 28, 426 वर्गमील, जन संख्या 153 लाख तथा वार्षिक आय की स्थिति 18 करोड़ रूपये हो गई।

इस बीच जन तन्त्र की प्रक्रिया में आम चुनाव भी हुए तथा लोकप्रिय सरकारें निर्वाचित होकर कार्य करने लगीं।

1 नवम्बर, 1956 के पश्चात अजमेर राज्य, आबूरोड व देलवाड़ा सुनेल टप्पा भी राजस्थान में मिल गये तथा सिरोंज का क्षेत्र मध्य भारत मे चला गया। इस प्रकार तत्कालीन 22 देशी रियासतों व केन्द्र शासित क्षेत्र अजमेर के विलयीकरण से आज के राजस्थान का निर्माण हुआ।

3

खनिज संसाधन

खनिज उत्पादन में राजस्थान ने आजादी के बाद देश में महत्वपूर्ण स्थान बना लिया है। अरावली क्षेत्र खनिजों का सर्वाधिक धनी क्षेत्र है जहां सीसा, जस्ता, चांदी, अभ्रक, लोहा, ताम्बा, मैंगनीज, एस्बैस्टस आदि खनिज न केवल पाये जाते हैं वरन् इनका दोहन भी किया जा रहा है। कई खनिजों के सम्बन्ध में राजस्थान का एकाधिकार है—जैसे शीशा, ताम्बा, जिंक व पन्ना। खड्डी के उत्पादन में 85.5 प्रतिशत का योगदान है जबकि अभ्रक के उत्पादन में बिहार व आन्ध्र प्रदेश के बाद राजस्थान का स्थान है। इसी प्रकार स्टेटाइट 84.5 प्रतिशत, एस्बेस्टस 72. प्रतिशत, फेल्डस्पार 49.6 प्रतिशत तथा कैलसाइट का 35 प्रतिशत उत्पादन राजस्थान में होता है।

प्रदेश की खनिज सम्पदा को तीन भागों में बांटा जा सकता है:—

1. आग्नेय खनिज—इनमें लिग्नाइट कोयला एवं पेट्रोलियम प्रमुख हैं।

2. धातु खनिज—ताम्बा, लोहा, शीशा, जस्ता, चांदी, केरिलियम, मैंगनीज, व टंगस्टन।

3. अलौह खनिज–एस्बस्टस, नाईराइट, बेन्टोनाइट, इमारती पत्थर, एमरल्ड, गारनेट, कांच बनाने की बालू, थाइनाइट, चूना, पत्थर, संगमरमर, अभ्रक, घीया-पत्थर आदि।

अरावली क्षेत्र यदि धातु खनिज की दृष्टि से धनी है तो पश्चिमी राजस्थान जिप्सम, लवण, लिग्नाइट, टंगस्टन, संगमरमर, ग्रेनाइट आदि के लिए प्रसिद्ध है।

ताम्बा—भारत के मानचित्र पर खेतडी का नाम ताम्बे के उत्पादन के लिए प्रसिद्ध है। हिन्दुस्तान कॉपर लिमिटेड द्वारा ताम्बे का भरपूर दोहन किया जा रहा है। ताम्बा अलवर व खेतडी में पाया जाता है। 30 किलोमीटर लम्बी खेतड़ी ताम्बा पट्टी का पूर्ण सर्वेक्षण किया जा चुका है। इस पट्टी के उत्तर में 30 किलोमीटर क्षेत्र में 850 लाख टन के भण्डार का भी पता लग चुका है। माधानकदान, कोलिहान, चांदमारी, बनवास, ढोलमाला, अकवाली, सतकुई, सिघाना–मुरादपुरा में भी ताम्बे की खानें हैं।

नीम के थाने के निकट भी 60 किलोमीटर लम्बी ताम्बे की पट्टी की नई खोज की जा चुकी है। अलवर में खो-दरीबा तथा भागोनी में ताम्बे के भण्डार हैं

वहां लगभग 58 लाख टन कच्ची धातु के दोहन की सम्भावना बताई जाती है। भीलवाड़ा में पुर-बनेड़ा क्षेत्र की 34 किलोमीटर लम्बी पट्टी में दो खनिज पाये जाते हैं। पश्चिमी क्षेत्र में ताम्बा तथा पूर्वी क्षेत्र में सीसा-जस्ता।

सीसा व जस्ता :—सीसे व जस्ते की जावर (उदयपुर) में बहुत बड़ी खान अत्यन्त प्राचीन है। 14 वीं व 18 वीं शताब्दी में यहां पर खनन किये जाने की पुष्टि हुई है। 1950 से 1960 की अवधि में इस क्षेत्र का व्यापक सर्वेक्षण किया गया तथा इस क्षेत्र में 6 करोड़ 30 लाख टन से अधिक खनिजों का पता चला। वर्तमान में इस क्षेत्र के दोहन का कार्य हिन्दुस्तान जिंक लिमिटेड द्वारा किया जा रहा है।

भीलवाड़ा जिले में राजपुरा-आगूचा खण्ड में भी ढ़ाई करोड़ टन भण्डार होने का अनुमान है। इन भण्डारों में चांदी की प्रतिटन 37 ग्राम प्राप्त होने की सम्भावना बताई जाती है। इसके अतिरिक्त अजमेर जिले के सावर टिक्खी क्षेत्र में 23½ लाख टन कच्ची धातु होने के प्रमाण मिले हैं। सिरोही के डेरी क्षेत्र में भी 8 लाख टन के भण्डार का पता लग चुका है।
आगुचा में सीसा-जस्ता खनिज भण्डार अत्यन्त उच्च श्रेणी का बताया जाता है।

लोहा व मैंगनीज :—यद्यपि लोह व मैंगनीज के भण्डार अधिक महत्त्वपूर्ण नहीं हैं फिर भी निम्न श्रेणी के लोहे खनिज जयपुर, उदयपुर तथा भीलवाड़ा जिले में पाये जाते है। चौमू-मोरीजा, नीलमा तथा डावला लौह क्षेत्र जयपुर जिले में हैं। उदयपुर में उरलमत्ता, अभीसवाली तथा भीलवाड़ा में पुर-बनेड़ा बैल्ट उपलब्ध है।

टंगस्टन :—युद्ध सामग्री के निर्माण में टंगस्टन का योगदान रहता है इसलिए जोधपुर संभाग के डेगाना क्षेत्र में जो भी टंगस्टन निकाला जाता है उसका अपना महत्त्व है। यहां जो भी खनिज प्राप्त होता है वह रक्षा विभाग को दे दिया जाता है।

बेरिलियम :—आणविक शक्ति आयोग द्वारा इस खनिज के उपयोग से राजस्थान में इसके दोहन को स्वतः ही गति मिली है। ग्रेनाइट व पैगमेनाइट श्रेणी की चट्टानों में पाया जाने वाला यह खनिज हल्का व चुम्बकीय होता है। प्रदेश में 11.5 प्रतिशत से 14 प्रतिशत तक बेरिलियम मिश्रित पदार्थ पाया जाता है, जो उत्तम किस्म का माना जाता है। यह उदयपुर व जयपुर संभागों में पाया जाता है।

रॉक फास्फेट व फास्फोराइट :—1966 में जैसलमेर जिले के बिरमानिया में फोस्फोराइट प्राप्त हुआ। बाद में उदयपुर में कानपुर, माटोन, डाबनकटोरा, कारबरी, सीसारमा, नीमच, भाटा, बारगांव, झामर-कोटड़ा मे फास्फोराइट के भण्डारों का पता चला। इस खनिज का उपयोग सुपर फास्फेट खाद तथा फास्फोरिक एसिड बनाने में किया जाता है। जयपुर क्षेत्र में भी अथाह खनिज का भण्डार प्राप्त हुआ है। पूर्व में इस खनिज का आयात किया जाता था परन्तु अब इसके समुचित दोहन से विदेशी मुद्रा की बचत सम्भव होने लगी है।

झामरा कोटड़ा की खानें देश भर में विशिष्ट स्थान रखती है। यहाँ 5 करोड़ टन
के उच्च श्रेणी के खनिज भण्डार पाये गये हैं। उदयपुर के अन्य स्थानों पर भी
88 लाख टन खनिज भण्डार प्राप्त होने की संभावना है। इसके अतिरिक्त जैसलमेर
के बिरमानिया तथा फतेहगढ़ में भी रॉक फास्फेट के भण्डार प्राप्त हुये हैं जिनकी
क्षमता 43½ लाख टन आंकी गयी है।

पाइराइट-पिरोटाइट—गंधक का तेजाब कई महत्वपूर्ण उद्योगों में अपना
योगदान देता है। गंधकयुक्त खनिजों में पाइराइट व पिरोटाइट प्रमुख हैं। राजस्थान
में सीकर जिले के सलादीपुर में इस खनिज का दोहन किया जाता है। 7 किलो-
मीटर लम्बी पट्टी में 11 करोड़ 20 लाख टन से अधिक परिमाण में यह खनिज
प्राप्त हुआ है। इसका दोहन भारत सरकार के पाइराइट्स फास्फेट्स एण्ड केमिकल्स
लिमिटेड द्वारा किया जा रहा है।

जिप्सम (कैलशियम सल्फेट)—अमोनियम सल्फेट, सीमेन्ट, प्लास्टर ऑफ पेरिस
के लिए खड़िया मिट्टी खनिज का विशेष उपयोग होता है। बीकानेर क्षेत्र में 18 करोड़
टन क्षमता तथा नागौर क्षेत्र में 90 करोड़ टन क्षमता के भण्डार पाये गये हैं जहाँ
इस खनिज का भरपूर दोहन भी किया जा रहा है। इसके अतिरिक्त भरतपुर,
बाड़मेर, पाली व श्रीगंगानगर जिले में भी जिप्सम के भण्डार प्राप्त हुए हैं। यह उल्ले-
खनीय है कि भारत में जितना जिप्सम प्राप्त होता है उसमें राजस्थान का योगदान
90 प्रतिशत है। जिप्सम वर्तमान में देश के विभिन्न कारखानों में भिजवाया जाता
है—इसमें सिन्दरी खाद कारखाना प्रमुख है।

एस्बैस्टस—इस खनिज का 80 प्रतिशत उत्पादन राजस्थान में होता है। यह
खनिज विभिन्न सामग्री जैसे एस्बैस्टस कागज, सीमेन्ट, रस्सियां, अग्निरोधक
एस्बैस्टस आदि प्रमुख हैं। अजमेर, पाली व उदयपुर जिले के कवली कोटड़ा, ढाल
गारिया, कागदर की पाल, ऋषभदेव और देलना नामक स्थानों पर लगभग 2½
लाख टन खनिज होने का अनुमान है।

सोपस्टोन या घीया पत्थर—राष्ट्रीय उत्पादन का 80 प्रतिशत सोपस्टोन
राजस्थान में उत्पादित होता है। इसका उपयोग सौन्दर्य प्रसाधन, कीट रसायनों, रबड़,
कागज, चीनी मिट्टी के बर्तन बनाने में किया जाता है। उदयपुर, जयपुर, सिरोही,
भीलवाड़ा, टोंक, सवाई माधोपुर व झुंझुनू जिलों में सोपस्टोन प्रचुर मात्रा में पाया
जाता है। अनुमान है कि लगभग 50 लाख टन खनिज का भण्डार इन क्षेत्रों में है।

बोलेस्टोनाइट—मिट्टी के बर्तन, मीनाकारी काच, कागज व प्लास्टिक
उद्योगों में बोलेस्टोनाइट नामक खनिज का उपयोग होता है। पाली जिले के खेडा-
उपरला नामक स्थान पर इस खनिज की खानें हैं। आकार-प्रकार में भारत की यह
मात्र खान है।

पन्ना एवं गारनेट—पन्ना व गारनेट कीमती पत्थर होते हैं जो जेवरात में जड़ने के काम आते हैं। पन्ने के उत्पादन में राजस्थान का एकाधिकार रहा है। इसकी खानें अजमेर व उदयपुर में हैं। गारनेट अजमेर, भीलवाड़ा, टोंक जिलो में पाया जाता है।

फ्लोराइट—स्टील व एल्यूमीनियम उद्योग समूह में फ्लोराइट खनिज काम में आता है। यह खनिज डूंगरपुर, उदयपुर व जालोर क्षेत्र में मिलता है।

अभ्रक—बिहार व आन्ध्र के बाद अभ्रक उत्पादन में राजस्थान का स्थान आता है। विद्युत संबधी सामान में अभ्रक का विशेष उपयोग होता है। माइका अथवा अभ्रक उद्योग लगभग 35 वर्ष पुराना है। जयपुर से उदयपुर के मध्य 320 किलोमीटर में अभ्रक की खानें फैली हुई हैं। भीलवाड़ा, टोंक व अजमेर में इस खनिज की महत्त्वपूर्ण खानें है।

बेराइट—इस खनिज का उपयोग पैट्रोलियम पदार्थों के उत्पादन में किया जाता है तेल के कुंए खोदते समय "ड्रिलिंग मड" के रूप में बेराइट का उपयोग किया जाता है। सीमित मात्रा मे यह खनिज भरतपुर, बूंदी एव उदयपुर जिलों मे उपलब्ध है। नाथद्वारा मे भी अभी हाल ही मे बेराइट खनिज का पता लगा है।

चूने का पत्थर—राजस्थान में चूने के पत्थर के सीमित भण्डार हैं—परन्तु जहां भी उपलब्ध है वह गुणवत्तता की दृष्टि से अच्छी श्रेणी के हैं। अजमेर, बूंदी, चित्तौड़गढ़, जोधपुर, कोटा, नागौर व पाली जिलों मे जो भण्डार मिले है—वे मोटे अनुमान के अनुसार 200 से 250 करोड़ टन के बीच है। हाल ही मे रासायनिक तत्वों से भरपूर चूने के पत्थर के भण्डार जैसलमेर जिले में भी पाये गये है। नागौर जिले का गोटन नामक स्थान चूना उद्योग के लिए विख्यात है। सवाईमाधोपुर, लाखेरी, निम्बाहेड़ा, चित्तौड़गढ़, कांकरोली व सिरोही मे सीमेन्ट फैक्ट्रियां इस बात का प्रमाण है कि प्रदेश में चूने के पत्थर का समुचित भण्डार है। सीमेन्ट के मिनी प्लान्ट भी इसलिए लगाये जा रहे हैं।

रिफेक्टरी खनिज—उदयपुर, अजमेर, भीलवाड़ा, डूंगरपुर व बांसवाड़ा क्षेत्र मे सिलिका, फायरक्ले, कायनाइट आदि कुछ ऐसे खनिज पाये जाते हैं—जिनका उपयोग अन्दरूनी ईंटें बनाने मे किया जाता है। सिलिका मिट्टी का भण्डार अजमेर, अलवर, टोंक, भीलवाड़ा व जयपुर जिलो के कुछ हिस्सों में उपलब्ध है। यह काच व चीनी के बर्तन उद्योग मे काम में आता है।

बैण्टोनाइट, मुलतानी मिट्टी व काओलिन जैसे खनिज वनस्पति उद्योग में तेलों व चरबी साफ करने के काम में आते हैं। ये खनिज बीकानेर, जैसलमेर, बाड़मेर, कोटा व नागौर जिलो में पाये जाते है।

इमारती पत्थर—राजस्थान इमारती पत्थरों का गढ़ माना जा सकता है। जोधपुर का गुलाबी, करौली का लाल, जैसलमेर का पीला, कोटा व चित्तौड़गढ़ का सलेटी घिया भी पुराने एवं आधुनिक दोनों ही युगों के निर्माण मे अपना स्थान बनाये हुए है— ग्रेनाइट पत्थर जो सिरोही व जालौर के अंचल मे उपलब्ध है वह भी ऊंची श्रेणी का है जिससे विदेशों में समाधियों व इमारतों में छतरियां बनाई जाती हैं।

इमारती पत्थरो में संगमरमर का स्थान सबसे ऊपर है। मकराना का संगमरमर तो देश के अनेक ऐतिहासिक भवनों में उपयोग में लाया जा चुका है। आगरे का ताजमहल व कलकत्ता का विक्टोरिया स्मारक इसके उदाहरण मात्र हैं। संगमरमर आबूरोड, बूंदी, डूंगरपुर, जयपुर, अजमेर, किशनगढ़ में भी पाया जाता है। इसके अतिरिक्त भी कुछ अन्य भण्डार पाये गये हैं।

सोडियम सल्फेट—डीडवाना (नागौर में) सोडियम सल्फेट की प्राकृतिक झील है। यह कागज बनाने तथा चमड़ा बनाने के काम में भी आता है।

पोटाश—मारवाड़ सुपरग्रुप की 50 हजार वर्ग किलोमीटर के क्षेत्र में फैले पोटाश के विपुल भण्डार चुरू, गंगानगर और बीकानेर जिले में हैं। 482 मीटर की अधिकतम मोटाई में सोडियम क्लोराइड का पता चला है।

लिग्नाइट—भूरे रंग के इस कोयले मे 30 प्रतिशत आर्द्रता है। पलाना में 230 लाख टन कोयले का भण्डार होने का अनुमान है। पलाना लिग्नाइट के समुचित उपयोग के लिए केन्द्र व राज्य सरकारें एक ताप बिजली घर की स्थापना विचार कर रही हैं। यदि यह प्रस्ताव व्यावहारिक रहा तो प्रदेश में बिजली की कमी बहुत हद तक दूर हो सकेगी।

तेल की खोज—जैसलमेर क्षेत्र में तेल की खोज के कार्य का निर्णय भारत सरकार ने लिया है। जैसलमेर मे बड़े पैमाने पर निकट भविष्य में सर्वेक्ष व ड्रिलिंग का कार्य हाथ मे लिया जायेगा।

प्रदेश मे खनिजों के दोहन से जो आय हो रही है वह भी प्रति वर्ष बढ़ है। 1981 में राज्य को 127.57 करोड़ रूपये की आय हुई थी वह अब बढ़ 2858.8 लाख तक पहुंच गई है।

4
सामाजिक जीवन

राजस्थान की सामाजिक संरचना बड़ी वैविध्यमयी एवं इन्द्रधनुषी है। यहां अनेकानेक जातियों, धर्मों और भाषाओं के बोलने वाले लोग रहते हैं। यहां के मूल निवासियों के अतिरिक्त यहां पंजाब, सिन्ध, उत्तर-प्रदेश, गुजरात, बंगाल, महाराष्ट्र तथा मद्रास आदि अनेक प्रदेशों के लोग यहां निवास करते हैं और वे यहां के सांस्कृतिक सूत्र में ऐसे बंध गये हैं कि वे इस प्रदेश के अविच्छिन्न अंग हो गये हैं।

सन् १९६१ की जनगणना के अनुसार राजस्थान में कुल मिला कर १,०५,-६४,०८२ पुरुष और ९५,९१,५२० स्त्रियां निवास करती हैं। समाजशास्त्रियों के मतानुसार यहां के निवासी मुख्यतः इन्डो-आर्यन तथा आर्यो-द्राविड़ियन वर्ग के हैं। विशुद्धतः द्राविड़ियन वर्ग के निवासी भी राजस्थान में हैं और इस वर्ग के अन्तर्गत यहां के भील मुख्यतः आते हैं।

राज्य की इस विशाल आबादी में हिन्दू, जैन, सिक्ख, मुसलमान तथा ईसाई सभी धर्मों के मानने वाले लोग हैं। हिन्दुओं की कुल मिला कर लगभग १५० जातियां और उप-जातियां हैं, जिनमें ब्राह्मण, राजपूत, वैश्य, कायस्थ, मीणा, बलाई, माली, भील, जाट, अहीर, नाई, धोबी, दर्जी, ढाकोत, चमार, कलाल, आदि मुख्य हैं।

मुसलमानों में शेख, पठान, मेव, मुगल, सैयद आदि जातियां हैं। कुछ ऐसी भी जातियां हैं जो धर्म से मुसलमान है, किन्तु आचार-व्यवहार से हिन्दुओं जैसी हैं। इनमें खानजादा, कायमखानी तथा मेव आदि की गणना की जाती है।

वेश-भूषा

राजस्थान के निवासियों की वेश-भूषा में बड़ा वैविध्य है। यह विविधता न केवल एक जाति या वर्ग से दूसरी जाति या वर्ग के बीच ही उपलब्ध होती है, अपितु एक क्षेत्र से दूसरे क्षेत्र के बीच भी इसके दर्शन होते हैं। किन्तु इतनी विविधता के बावूजद भी उनमें एक आन्तरिक समानता है, जो राजस्थानी संस्कृति की विराटता की परिचायक है। उदाहरण के लिए राजपूत वर्ग साफे बांधता है जबकि अन्य जातियों के लोग पगड़ियां बांधते हैं अथवा टोपी लगाते हैं। ग्रामीण लोग जो साफे बांधते है वे भी पगड़ियों की तरह ही बांधते हैं। ये पगड़ियां भी विभिन्न क्षेत्रों में विभिन्न ढंग

भी पहनी जाती है। जयपुर में पगड़ियों में धारदार लपेट होते हैं तो हाड़ौती में ग्वाल
पंथों की पगड़ी पहनी जाती है। उदयपुर की पगड़ी भी यद्यपि छाता पंखे
की होती है लेकिन उसका सिरा उठा हुआ रहता है। धोती जो कि सर्वमान्य पोशाक
है, अलग-अलग ढंग से पहनी जाती है। कोई दो भाग की धोती पहनते हैं तो कोई तीन
भाग की धोती पहनते हैं, कोई धोती को घुटनों तक चढ़ाये रखते हैं, तो कोई पैरों
को पैरों तक लम्बी रखते हैं। –

देहातों और नगरों में पुरुषों की पोशाक में अन्तर है। नगरों की पोशाक में
अचकन तथा शेरवानी और उसके नीचे धोती अथवा चूड़ीदार पैजामा का प्रयोग
किया जाता है जबकि देहातों में अंगरखी और घुटने तक की ऊंची धोती पहनने की
प्रथा है। अब तो गांवों तथा नगरों में काफी साधारण पोशाक खादी का कुर्ता
खादी का पायजामा और खादी की टोपी चलने लगी है लेकिन फिर भी आधी से अधिक
जनता इसे नहीं अपनाती। देखा-देखी और फैशन का असर राजस्थान में कोई
नहीं है। नित नये फैशन चलते हैं और नित नये ढंग की पोशाक अपनायी जा
लगी है। शहरों में लगभग 50 प्रतिशत लोग आज भी कोट, पैन्ट, बुशर्ट, हैट आ
का प्रयोग करते हैं।

स्त्रियों की वेश-भूषा प्रायः एक-सी होती है। लूगड़ी, ब्लाउज, अंग
कब्जा और लहंगा औरतों के पहनावे की मुख्य चीजें हैं। विशेषकर ग्रामीण औ
अपनी लूगड़ी, लहंगे और अन्य पहनावे की वस्तुयें रंगीन और कलात्मक पहनती हैं
लहंगे और लूगड़ियों को तथा अंगिया को गोटा लगाकर सजाया जाता है। मुसलमा
स्त्रियों की पोशाक चूड़ीदार पायजामा और ओढ़नी है। ये स्त्रियां चूड़ीदार पायजा
पर एक चोगा और धारण करती हैं, जिसे तिलका के नाम से सम्बोधित किया जाता
है और उसके ऊपर सिर ढकने के लिए ओढनी पहनती हैं। सिंधी और पंजाबी
महिलायें सलवार और गरारा पायजामा पहनती हैं, बदन पर कुर्ता एवं सिर ढकने
के लिए दुपट्टे का प्रयोग करती हैं।

आभूषण पहनने का रिवाज राजस्थान में खूब है। यहां तक कि पुरुष लोग
भी आभूषण पहनते हैं। पुरुषों के आभूषणों में मुरकी, लौंग, चूड, अगूठी आदि प्रमुख
हैं। यद्यपि इनका प्रचलन धीरे धीरे बहुत कम होता जा रहा है तथापि ग्रामीण
क्षेत्रों में अभी भी लोग इन्हें पहनना पसन्द करते हैं।

स्त्रियों के आभूषणों में तो राजस्थान में जितनी विविधता और सुन्दरता
मिलती है, वह शायद ही कहीं अन्यत्र उपलब्ध हो। सिर से लेकर पांव तक स्त्रियां
आभूषणों से अलंकृत रहना पसन्द करती हैं। यद्यपि आधुनिक सभ्यता के प्रसार के
साथ अब इसमें परिवर्तन अवश्य आ गया है तथापि स्त्रियों की आभूषण-प्रियता
बराबर अपने नित नये रूप में बनी हुई है। गांवों में आज भी परम्परागत आभूषण

पहने जाते हैं और चूंकि अधिकांश जनता ग्राम-वासिनी है, इसलिए जो आभूषण ग्रामीण महिलाओं द्वारा पहने जाते हैं वे आज भी राजस्थान की महिलाओं की आभूषण-रुचि का प्रतिनिधित्व करते हैं।

श्री अगरचन्द नाहटा द्वारा संपादित 'सभा श्रृंगार-वर्णन-संग्रह' के पृ० ३ १० में वर्णित ६३ आभरण (४) और (५) में राजस्थान के स्त्री-आभूषणों के नाम इस प्रकार दिये गये हैं

४- अणवट, अंगूठी, विछिया, पोलरी, कड़ी, कांबी, कांकण, कटिमेखला, झांझर, बाजुबन्ध, बहिरखा, पूंची, छाप, वींटी, हार, अर्द्धहार दुलड़ी, चौकी, माला, मोरड़ी, घड़ी, चीरू, सांकली, तेसड़, जिहड़ा, पायल, मोतीसरी, सीसफूल, तलो, नवरंग, नवग्रही, बोर, अकोटा, झाल, खवगाली, खीटली, पानडी, नकफूली, नकवेसर सिंघो, घूघरी, राखड़ी, सहेंली।

5. (1) राखडी, (2) वेणी, (3) सहेलडी, (4) झावउ, (5) सइथउ, (6) टीलउ, (7) चाँदलउ, (8) कांच, (9) शीशफूल, (10) फूली, (11) मोरिला (12) पनड़ी, (13) अरहट्ठ, (14) नकवेसर, (15) कांटल, (16) नकफूली, (17) कुंडल, (18) चीड, (19) वटला, (20) अकउडा, (21) नागला, (22) तांडक, (23) बाली, (24) हारादिक, (25) नीबोली, (26) मादलिया, (27) हांस, (28) चीड, (29) दुलड़े, (30) सांकली, (31) बालियां, (वालमी), (32) चूड़ी, (33) कांकण, (34) कांकणी, (35) बहिरखा (36) पहुंचिया (37) हथवालड़ा (38) कांचूवा (39)कटिमेखला (40) झांझर (41) नेउर (42) कडला (43) अंघड़ी (44) घूघरी, (45) घुघरा, (46) पाउलि, (47) कावी, (48) बिछिया, (49) मुद्रा इत्यादि स्त्री जनाभरण नामानि।

राजस्थान के परम्परागत प्रमुख स्त्री-आभूषणों का संक्षिप्त विवरण अंग-उपांगों के क्रम से नीचे प्रस्तुत किया जा रहा है।

सिर

शीश-फूल—जब स्त्रियां सिर पर बोरला (चूड़ामणि) नहीं गुंथवाती हैं, उस समय वे बालो को सुव्यवस्थित रखने के लिये सिर पर शीश फूल बांधती है। यह बनावट मे बड़ा सुन्दर होता है।

शीश पट्टी—यह भी शीश फूल के स्थान पर प्रयुक्त किया जाने वाला एक अन्य गहना है, किन्तु यह बनावट में शीश फूल की भांति मन-भावक नही होता। इसका स्वरूप वहुत साधारण होता है। शीश फूल की भांति इसका अधिक प्रचलन नही है।

भाल

बोरला—यह अत्यन्त पुराना शिरोभूषण है। महाकाव्य रामायण एवं महा-

भारत जैसे हमारे प्राचीन ग्रन्थों में भी इसका उल्लेख मिलता है। राजस्थानी महि-
लाओं का तो यह अतीव प्रिय आभरण है। वे बड़े चाव से इसे सिर व ललाट की
सन्धि पर धारण करती हैं। इसके बीच में कांच या हीरों आदि का जड़ाव कराया
जाता है, जिनसे यह प्रकाश में बहुत चमकता है। यह आकार में बड़ा या छोटा भी
होता है।

सरी—यह बहुत पतली होती है और बोरले के पास से दोनों कानों तक
बांधी जाती है।

फीणी—यह अंगुल चौड़ी होती है और सरी के नीचे बांधी जाती है। यह
सरी के जितनी ही लम्बी होती है।

सांकलो—यह यहां के लोक गीतों मे अपने दूसरे नाम-मैंमद से बहुत ज्यादा
प्रसिद्ध है और माथे की शोभा बढ़ाने वाला अद्वितीय आभूषण है। यह दो अंगुल
चौड़ी होती है और फीणी के नीचे बांधी जाती है। इसके बीच में एक लड़ लगी
रहती है, जिसे बोरले में डाली जाती है। यह भी सरी व फीणी जितनी लम्बी
होती है।

लंचा (लांचा)—यह मोतियों का बनाया जाता है और सांकली के स्थान
पर प्रयुक्त किया जाने वाला यह दूसरा आभूषण है। इसकी बनावट बड़ी मन-
भावन होती है।

मांग-टीको—यह बड़ा सुन्दर गहना है। इसे बोरले के स्थान पर बांधा जाता
है। इसके एक गोल टिकड़ा आगे होता है और पीछे एक लड़ लगी रहती है, जिसे
चुटले के बांधा जाता है।

टीकी—सुहाग की प्रतीक मानी जाती है। प्रायः सभी सुहागिन स्त्रियां रोली
या हींगलू की टीकी नित्य माथे पर लगाये रहती है, मगर कई रसिक स्त्रियां सोने
की भी छोटी-सी गोल टीकी अपने माथे पर लगाती हैं।

टीको—टीकी के स्थान पर ही लगाया जाता है। यह भी सोने का बनता है
किन्तु इसका आकार पान के जैसा होता है।

नाक

कांटा—सुहागिन स्त्रियां सदैव नाक पर पहने रहती हैं। यह चांदी, सोने,
मोती तथा हीरे आदि का बनाया जाता है।

बालानाथ—इसे सौभाग्यवती स्त्रियां समय-समय पर अनेक उत्सवों पर
धारण करती रहती हैं। यह हरदम पहिने रहने का गहना नही है। यह सोने की
खोल तांत की बनी हुइ होती है, जिसके अन्दर मोती पिराये हुए रहते हैं। बड़ी नथ
में एक मोतियों की लड़ या साधारण तागे की डोरी लगी रहती है, जिसे कान से
बांध दिया जाता है।

भोगलो—नाक मे पहनी जाती है। आज कल इसका प्रचलन नहीं रहा।

कान

पत्ती—कान का गहना है। यह या तो केवल चांदी या सोने की बनी होती है अथवा मणि की। यह विभिन्न रूपों में निर्मित की जाती है।

लूंग—यह केवल सोने या मोती-हीरे की बनी होती है। इसे कान के छिद्र में पहन कर पीछे की डांडी पर छोटा-सा पेच कस दिया जाता है, जिससे इसके गिरने का भय नहीं रहता। इसे आदमी भी पहनते हैं।

झूमका—कान का बड़ा मन भावन आभूषण है। लोक गीतों में इसका उल्लेख मिलता है। इसकी रचना में कला का अच्छा नमूना रहता है। यह सोने अथवा मोतियों का बना होता है।

सुरलिया—आजकल का प्रचलित गहना नहीं रहा। यह चांदी या सोने का बना होता है। इसके पीछे की डांडी काफी मोटी होती है जिसके लिए कानों के छिद्रों को अधिक बड़ा करना पड़ता है। अब इसका स्थान "टॉप्स" ग्रहण कर चुके हैं।

बाली—यह कानों के ऊपरी भाग में तीन-तीन की संख्या में पहनी जाती है, जिनमें मोती या लाल आदि पिरोये जाते हैं।

छाती

हार—भारत का बहुत प्राचीन आभूषण है। इसका प्रचलन मुख्यतया राजघरानों एवं धनवान लोगों में मिलता है। यह हीरे, मोती व सोने आदि कीमती पदार्थों का बनता है।

कंठी—सोने अथवा चांदी की भी बनती है। यह कई लड़ों की होती है। सात लड़ वाली कंठी को 'सतलड़ी' कहा जाता है तथा एक लड़ की कंठी को जिसके नीचे हनुमान आदि की मूर्ति लगी होती है 'डोरा' कहा जाता है।

झालर—सोने व चांदी दोनों ही धातुओं का बनता है। इसकी बनावट सुन्दर होती है, मगर वह आजकल महिला समाज में अधिक प्रिय नहीं रहा। इसके स्थान पर एक नया गहना 'कालर' चल पड़ा है।

मटरमाला—छाती की शोभा बढाने में अनूठा गहना है। यह गोल सोने के मणियों की बनी होती है।

हमेल—यह बड़ा विचित्र एवं भारी भरकम गहना होता है। इसके एकदम बीच में जड़ावदार एक गोल टिकड़ा लगा रहता है तथा इधर-उधर सुन्दर पत्तियां लगी रहती हैं। यह सोने व चांदी दोनों का ही बनता है। आजकल यह जाटों में ही अधिक प्रचलित है।

उपर्युक्त छाती के गहने यद्यपि गले के अन्दर ही पहने जाते है, किन्तु छाती तक लटके रहने से छाती की अपूर्व शोभा बढ़ाते हैं। इसलिए इन्हें छाती के आभूषण कहना ही सम्यक जान पड़ता है।

बाहू

बाजूबन्ध—आजकल निम्न जाति की स्त्रियों में अधिक प्रचलित है। पहिले उच्च-वर्णीय महिलाएं भी इसे बड़े चाव से धारण करती थीं। यह चार अंगुल चौड़ा एवं वजन में भारी होता है। यह सोने व चांदी दोनों धातुओं का बनता है।

अणत—आकार में गोल होता है। यह अन्दर तांबे का होता है और ऊपर सोने या चांदी का पत्र चढ़ा रहता है।

टंड्डा (टड्डा)—यह भी आकार में अणत जैसा गोल होता है। सिर्फ दोनों में भेद यही है कि 'अणत' इकहरा होता है और टंडा तिहरा।

बट्टा—बाजूबन्ध के आगे पहनने का भूषण है। सम्प्रति यह प्रचलन से हट गया है।

तकमा—बाजूबन्ध का दूसरा रूप है। यह वजन में कम भारी एवं बनावट में अत्यन्त सुन्दर होता है। इसके अन्दर मीने और जड़ाव का बड़ा सुन्दर काम होता है।

कलाई

चूड़ा—सभी सौभाग्यवती महिलाएं सदैव कलाई के पास पहने रहती हैं। यह हाथी दांत, लाख या कांच का बना होता हैं। बहुत-सी धनवान महिलाएं सोने का भी चूड़ा पहनती हैं।

बन्द—चूडे से काफी बड़ा होता है और वजन में भी बहुत भारी होता है। इसकी कटाई बड़ी अच्छी होती है। आजकल इसका चलन कम पड़ता जा रहा है।

बंगड़ी—बंगड़ी और बन्द का मेल है। यदि दो बन्दों के बीच में बंगड़ी न हो, तो उसकी शोभा का मठ मारा जाता है। बन्द और बंगड़ी का रूप कुछ साम्य होता है मगर बंगड़ी होती है उससे छोटी।

पछेली—बन्द के स्थान पर दूसरा गहना है। इसका रूप करीब-करीब वैसा ही होता है, किन्तु वजन मे उससे बहुत हल्की होती है। इसकी कटाई देखने योग्य होती है।

कड़ा—पछेली के पास पहनने का गहना है।

छड़—सोने की बहुत पतली चूडी होती है। यह कड़े के आगे पहनी जाती है।

नौगरी—पुरानी पीढ़ी की नारियों की कलाईयों का प्रिय आभूषण रह गया है—जैसा कि अनेक पुराने लोक-गीतों से प्रकट होता है, मगर अब तो इस आभरण का महिला समाज में नामोनिशान ही नहीं रहा।

पूंचियाँ—सोने का बना होता है। इसका रूप घड़ी के फीते जैसा होता है।

✓हथफूल—राजस्थान का अलौकिक आभूषण है। इसकी छवि देखते ही बनती है। यह हथेली के पिछले भाग पर धारण किया जाता है। इसके बीच में एक फूल

और उसमें पांच छल्ले लगे रहते हैं, जिन्हें पांचों अंगुलियों में पहनना पड़ता है और इसका एक भाग कलाई में बांधा जाता है। यह सोने, चांदी और मोतियों का बनता है।

अंगुलियां

छल्ला—चांदी और सोना दोनों का बनता है। सभी श्रेणी की महिलाएं अपनी अंगुलियों पर धारण करती हैं। यह पैरों की अंगुलियों में भी पहना जाता है।

छाप (मुंदड़ी)—अंगुलियों का बहुत पुराना गहना है। यह चांदी, सोने, हीरे, मोती, माणक आदि की विभिन्न रूपों में बनाई जाती है।

कटि

तागड़ी—कटि का एक मात्र एवं बड़ा मनोहर गहना है। यह भी पुराने गहनों में एक है। यह सोने, चांदी, मोती आदि की बनाई जाती है और कई प्रकार की बनती है। कंदोरो, कणगती आदि इसके अन्य नाम है।

पिण्डली से निचला भाग (पैर)

पाजेब—बहुत हल्की होती है। यह पतली जंजीर जैसी होती है और इसके नीचे चारों तरफ घुंघरू लगे रहते हैं।

पैंजणी—एक तरह से चांदी का बहुत मोटा कड़ा ही होता है। इसके नीचे घुंघरू भी लगाए जाते हैं।

पायल—चांदी की बनी होती है। इसके कंगूरों की कटाई बहुत सुन्दर होती है। यह वजन में बहुत भारी होती है।

पैरों की अगुंलियां

बिछिया—घुंघरू लगाया हुआ पोला ही है। यह राजस्थानी महिलाओं का बड़ा रंगीला आभूषण है। लोकगीतों मे इसका उल्लेख बहुलता से मिलता है।

धर्म

राजस्थान में मुख्यतया हिन्दू धर्म, बौद्ध, सिक्ख धर्म, ईसाई धर्म और मुसलमान धर्म मानने वाले निवास करते हैं।

हिन्दू धर्म

हिन्दू धर्म में सैकड़ों मत-मतान्तर एवं सम्प्रदाय पाये जाते है। राजस्थान में जो प्रमुख सम्प्रदाय एवं मत पाये जाते हैं उनमें शक्ति उपासक, रामोपासक, वैष्णव, शैव आदि मुख्य है। राजपूत, चारण, भाट, कायस्थ आदि के नाम से सम्बोधित की जाने वाली जातियां मुख्य रूप से आद्य शक्ति की उपासना करती है। वैष्णव-संप्रदाय

में दक्षिण भारत के प्रसिद्ध धर्माचार्य वल्लभ सम्प्रदाय के उपासक मुख्य रूप से मिलते हैं। इस सम्प्रदाय की दो मुख्य गद्दियां राजस्थान में नाथद्वारा और कोटा में है। इस सम्प्रदाय के लोग पुष्टिमार्गी होते हैं और कृष्ण भगवान की सेवा बाल रूप में करते हैं। वैसे मत में पूजा निषिद्ध है। रामोपासकों में राम स्नेही प्रमुख है और ... है। कुछ रामानन्दी भी राजस्थान में पाये जाते हैं ... र मत का प्रचलन राजस्थान में नहीं के बराबर-सा है। केवल उदयपुर का राज घराना जो कि शिव की एकलिंग रूप में पूजा करता है इसका अपवाद माना जा सकता है। इस सबके अतिरिक्त बाबा जी, मल्लीनाथ जी, रामदेव जी, दादू जी, पाबू जी आदि प्रसिद्ध व्यक्तियों के द्वारा स्थापित मतों के अनुयायी भी राजस्थान मे मिलते है। कुछ संख्या में कबीर पंथी भी राजस्थान पाये जाते हैं। नाथ-सम्प्रदाय का, भी अधिक तो नहीं लेकिन प्रचलन राजस्थान अवश्य है और जोधपुर के राज घरानों द्वारा इसको समर्थन मिला है। जोधपुर महामंदिर में नाथ सम्प्रदाय के मानने वाले राजस्थान मे बिखरे हुए हैं।

जैन धर्म

इस मत को मानने वाले मुख्तः दो सम्प्रदायों में विभक्त हैं—(1) दिगम्ब (2) श्वेताम्बर। मूलभूत सिद्धान्तों में विशेष भेद न होते हुए भी स्त्री मुक्ति, स्व मुक्ति, केवली का कवलाहार, शुद्र मुक्ति आदि कई एक मान्यताओं में काफी मतभे है। दिगम्बरो के साधु वस्त्र धारण नहीं करते और श्वेताम्बर मत के साधु सफेद व धारण करते हैं। जैन धर्म के आदि तीर्थंकर श्री ऋषभदेव और अन्तिम चौबीस तीर्थंकर श्री महावीर हुए है। राजस्थान मे जैन धर्मावलम्बी काफी संख्या में हैं।

सिक्ख धर्म

भारत के विभाजन से पूर्व राजस्थान मे सिक्खो की संख्या अधिक नहीं थी लेकिन भारत के विभाजन के बाद राजस्थान मे सिक्खो की संख्या मे काफी वृद्धि हुई है। इस धर्म के अनुयायी निराकार ईश्वर में विश्वास करते हैं और गुरु ग्रन्थ साह की पूजा करते हैं।

बौद्ध धर्म

राजस्थान में बौद्ध धर्मावलम्बी अल्प संख्या में हैं। ऐतिहासिक अनुसन्धान से प्राप्त तथ्यो के अनुसार प्राचीन काल में जयपुर व मेवाड़ में बौद्ध-धर्म का काफ प्रचलन था लेकिन अब नितान्त लोप-सा हो गया है।

ईसाई धर्म

राजस्थान में ईसाइयों की संख्या ज्यादा नहीं है। अंग्रेजी शासन-काल में जब धर्म परिवर्तन हुआ तब ईसाई धर्म का प्रचार हुआ था। इस धर्म के अनुयायी

राजस्थान के अजमेर जिले में अधिक पाये जाते हैं। राजस्थान में मैथोडिस्ट, रोमन कैथोलिक, एंग्लीकन व प्रोटेस्टेंट ईसाई मिलते हैं।

मुसलमान धर्म

राजस्थान में मुसलमान धर्म का प्रादुर्भाव मुसलमान बादशाहों द्वारा राजस्थान के अनेक भागों पर विजय प्राप्त करने के साथ-साथ हुआ। हिन्दुओं में धर्म परिवर्तन के कारण भी मुसलमानों की संख्या में वृद्धि हुई है। मुसलमानों के दो वर्ग सुन्नी और शिया हैं। इस धर्म के समस्त अनुयायी राजस्थान में फैले हुए हैं।

जन-जातियां और उनका सामाजिक जीवन

राजस्थान में जो विभिन्न जातियां और उप-जातियां निवास करती हैं, उनमे जन-जातियों और घुम्मकड़ जातियों का अपना विशिष्ट स्थान है। इन जातियो की जानकारी के बिना राजस्थान का जो वैविध्यमय सामाजिक जीवन है, उसका चित्र अपने समग्र रूप में नहीं समझा जा सकता।

यहां हम संक्षेप में राजस्थान की जन-जातियों एवं घुम्मकड़ जातियों का विवरण प्रस्तुत कर रहे हैं :—

भील

भील राजस्थान के प्राचीनतम निवासी हैं। ये लोग मुख्यतः बांसवाड़ा, डूंगरपुर और उदयपुर जिलो में तथा आंशिक रूप से चित्तौड, सिरोही, जालौर, पाली, बूंदी और कोटा जिलों में बसे हुए है। भीलों की जन-संख्या आठ लाख से भी ऊपर है। सम्भवतः इतनी अधिक संख्या में और दूसरी कोई जन-जाति इस प्रदेश में नही है। भीलों की भाषा बागडी अथवा भीलाडी है।

भील लोग छोटे-छोटे समूहो में टेकड़ियों पर झोपड़ियां बना कर रहते हैं। भीलों की बस्ती 'पाल' कहलाती है। गांव का मुखिया 'गमैती' कहलाता है और उसका निर्णय सारे समुदाय को मान्य होता है।

इन लोगों का प्रमुख धान्धा खेती करना तथा वनों से जडी-बूटियां और दूसरी चीजें एकत्र कर उन्हें बेचना है।

भीलों का सामाजिक जीवन बड़ा सुसंगठित है। खतरे के समय ढोल बजा कर जब एक पाल से दूसरे पाल तक खबर पहुंचाई जाती है, तो ये लोग तुरन्त इकट्ठे हो जाते हैं और संकट का सामना करते हैं।

जब किसी के यहां पुत्र का जन्म होता है तो इसकी सूचना भी ढोल बजा कर ही दी जाती है। भीलो में विवाह की प्रथायें बड़ी मनोरंजक हैं। जब किसी लड़की की सगाई तय होती है तो वर पक्ष, कन्या पक्ष को 30 रुपये से लेकर 50 रुपये तक 'दापे' के रूप में देता है। यदि "दापा" नही दिया जाता तो सगाई का

बन्ध विच्छेद हो जाता है। भीलों में तलाक और विधवा विवाह की प्रथा प्र-
चलित है। जब किसी स्त्री का पति मर जाता है, तो वह विधवा होने पर दूसरा
विवाह करने के लिए स्वतन्त्र है। यदि स्वर्गवासी पति का छोटा भाई होता है, तो
विधवा-स्त्री उसी के 'नाते' बैठ जाती है। यदि कोई विवाहिता-स्त्री अपने पहले
पति को छोड़ कर दूसरा पति कर लेती है, तो दूसरे पति को इसका मुआवजा पहले
पति को देना होता है और इसका फैसला पंचायत करती है।

भील लोग नाच-गान और मौज-मजे करने के शौकीन होते हैं। प्रायः कुछ
के मौके पर मद्यपान खुब खुल कर किया जाता है। उनकी मान्यता है कि शराब के
बिना कोई उत्सव पूरा नहीं हो सकता।

भीलों के लोक-गीत बहुत मनोरंजक हैं। दिन-भर की मेहनत-मजदूरी के
बाद शराब के नशे में मस्त ये गीतों की स्वर-लहरी में अपने आपको डुबो देते हैं।
यह निःसंकोच कहा जा सकता है कि भीलों ने यदि अपने अस्तित्व के साथ
किसी चीज की रक्षा की है, तो अपने गीतो और नृत्यों की।

वैसे तो भीलो मे शादी-विवाह, बालक के जन्म आदि के अवसर पर अनेकों
प्रकार के नृत्य प्रचलित हैं, किन्तु उनके विशेष और अत्यन्त प्रिय लोक नृत्य प्रचलित
हैं :—"घण्णा" यानी घेर, "नेजा" और 'गवरी' (गौरी-नृत्य)।

घेर नृत्य मे स्त्री पुरुष अपने-अपने झुंड बनाते है। स्त्रियां अर्द्ध-चन्द्राकार
पंक्ति में एक दूसरे का हाथ पकड़ कर खड़ी हो जाती हैं और तीखी आवाज के साथ
गीत गाती हुई, कमर झुकाती हुई, कभी आगे बढ़ती हैं और कभी पीछे हटती हैं।
बीच-बीच मे वे जोर से तालियां भी पीटती चलती हैं। नृत्य में भाग लेने वाली
स्त्रियां "घेरणिया" और पुरुष "घेरिये" कहलाते हैं। पुरुष ढोल और मादल की
ताल पर नृत्य करते हैं। उनके हाथ मे लकड़ी की छड़ियां और तलवारें होती हैं।
नृत्य जब अपनी पूर्णता पर होता है तब ढोल और मादल की आवाज, गीतो के
स्वर और तलवारों की चमक से ऐसा दृश्य उपस्थित हो जाता है कि जैसे बादल
गरज रहे हों और बिजलियां चमक रही हों। भीलों का यह नृत्य देखते ही
बनता है।

होली के बाद भीलों का नेजा नृत्य उनके शौर्य और वीरता का द्योतक है।
गांव के बाहर किसी देवस्थान के समीप यह नृत्य होता है। किसी पेड़ पर या बांस
पर एक नारियल लटका दिया जाता है, जिसे पुरुषो मे से किसी एक को, जो उसे
लाने मे सफल हो सके, लाना होता है। पुरुषों का झुंड बांस और लकड़ी से सुस-
ज्जित वृक्ष के नीचे रहता है। नृत्य के आरम्भ होने पर पुरुषो का समूह छः बार वृक्ष
तक आता है और स्त्रियो की मार से फिर पीछे हट जाता है। सातवीं बार स्त्रियां
जाती हैं और फिर पुरुषों मे उस नारियल को ले आने की होड़ लग जाती है। जो
पुरुष उसे ले आता है, वह अत्यन्त प्रशंसित होता है।

गवरी नृत्य पार्वती जी (गौरी) की पूजा के निमित्त भाद्रपद मास में किया जाता है। यह नृत्य बड़ा ही रोचक और मनोरंजन पूर्ण होता है। इस नृत्य का सम्पूर्ण वर्णन कर सकना यहां संभव नही है। इतना ही कहा जा सकता है कि जहां इस नृत्य का होना निश्चित किया जाता है, वहां पहली रात को "गौरी-स्थापना" कर दी जाती है। दूसरे दिन वहां नृत्य होता है। इस नृत्य में भील लोग विभिन्न प्रकार की वेश-भूषाएं धारण करके आते हैं और भिन्न-भिन्न प्रकार से नृत्य करते हैं।

भीलों के धार्मिक रीति-रिवाज एवं अन्धविश्वास बहुत कुछ हिन्दू धर्म से मिलते-जुलते हैं। उनके देवी-देवता, त्यौहार, पूजा-प्रथायें भी हिन्दू धर्म की ही देन हैं।

भीलों की पूजा-पद्धति अधिकतर वाम-मार्गी है। उन्हें हम जैन, वैष्णव, शैव आदि सम्प्रदायों में विभाजित नही कर सकते।

वैसे भील, जैनियों के आदि तीर्थंकर ऋषभदेव का पूजन भी करते हैं तथा उन्हें जैनियों के समकक्ष पूजा का अधिकार है परन्तु उनकी उक्त देवता की पूजा-विधि जैनियों से पृथक है।

सामान्यतः भील पशुबलि-प्रथा, भूत-प्रेत, देवी-देवता, भोपा उतारना तथा प्रेतात्मा के आव्हान में विश्वास रखते हैं।

छुआ-छूत का भेद उनमें नहीं है, मद्यपान तथा मांसाहार भी जीवन का एक अंग है।

सामाजिक व धार्मिक रीति-रिवाज व पूजा-पद्धति में पुराने अन्ध विश्वासों व प्रथाओं का चलन पाया जाता है।

वाममार्गी साधुओं में से बहुत से स्वयं जन-जातियों में से आये थे।

उच्च हिन्दू, जैन, शैव, वैष्णव सम्प्रदाय में जितना स्थान जन्मजात पण्डित का है उतना इनका कभी भी नही रहा। कबीर, रैदास, नाथपंथी, कनफरों व वैरागियों ने जन-जातियों में से अपने शिष्य चुने, जहां "जाति-पांति पूछे नही कोई, हरि को भजे जो सो हरि का होई" का मूल मन्त्र मुख्य था।

प्रारम्भ में आदिवासी इन वाममार्गी साधुओं से कतराते रहे परन्तु धीरे-धीरे प्रायः प्रत्येक ग्राम में इन्होने अपने भक्त बना लिये।

उक्त भगत-प्रथा आज आदिवासी क्षेत्र में प्रधान धार्मिक स्रोत है। साथ ही वह इतनी अधिक सुधारवादी भी है कि भीलों के कतिपय महत्त्वपूर्ण सामाजिक रीति-रिवाज व परम्पराओं को महत्त्वहीन ठहरा कर उनका अन्तिम संस्कार किया जा रहा है।

वाममार्गी इन गुरुओं के गद्दीधर कमलनाथ, आबू, देव सोमनाथ, गौरम आदि पर्वतीय तीर्थ स्थानों में रहते हैं तथा धूनी प्रज्वलित रखते हैं।

ये लोग भीलों को अपनी शिष्य परम्परा में दीक्षित करते हैं। दीक्षित भील मद्यपान व मांसाहार का त्याग कर देता है। वह अपने घर में धूनी प्रज्वलित रखता है तथा इकतारे पर सायं-प्रातः गुरु द्वारा प्रदत्त परम्परागत भजनों को गाता है।

भगत के लिए प्रातः स्नान-ध्यान आवश्यक है। ये लोग सिर पर पीला वस्त्र बांधे रहते हैं जिससे इन्हें आम भीलों में से अलग रूप में पहचाना जा सकता है। प्रायः प्रत्येक भगत के घर पर एक सफेद ध्वज लहराता रहता है। ये लोग वाममार्गी साधुओं का सत्कार करते हैं।

विशेष अवसरों पर रविवार अथवा मगल को 'फला' या चौकड़ी के कुछ भगत किसी एक भगत के घर गुप्त रूप से एकत्रित होते हैं और मध्य रात्रि को धूनी प्रज्व-लित कर गुरु के भजनों को गाते हुये रात्रि जागरण करते हैं। इस पूजा को ये संत 'जाम्मा जगाना' कहते हैं।

रुई को घी मे भिगो कर ये बाती संजोते हैं और धूनी की अग्नि प्रज्वलित करते हैं।

भीलों मे भगत का काफी आदर व सम्मान पाया जाता है। ये लोग स्वच्छता तथा खान-पान व आचार मे कुछ प्रगति लिए हुए रहते हैं।

अमूमन तौर पर भगत दूसरे भील के घर कच्चा भोजन व जल ग्रहण नहीं करता है। ये लोग अपने को आम भीलों से ऊंचा मानते हैं।

भगत प्राचीन परम्परा के विरोधी होने के साथ-साथ काफी सुधारवादी भी हैं परन्तु इनका सुधारवाद राजनीतिक सूझ-बूझ की अपेक्षा धार्मिक स्वरूप लिये हुये है।

ये लोग शरीर में प्रेतात्माओं के अवतरण के विरोधी हैं तथा देवताओं के सात्विक रूप के उपासक है।

भगतों मे अधिकतर कबीर पंथियो की छाप है। ये लोग तीर्थ-यात्रा व गंगा स्नान आदि मे भी विश्वास रखते हैं। भगतों का दाह संस्कार किया जाता है जबकि वाममार्गियों को दफनाया जाता है।

समाधि को कुछ लोग पक्की बनवा देते है तथा कुछ मिट्टी चढ़ा कर ही सन्तोष कर लेते हैं।

गिरासिया

भीलों के बाद दूसरी प्रमुख जन-जाति गिरासिया है। गिरासिया लोगों की जन्म-भूमि जोधपुर का गोड़वाड़ इलाका, सिरोही मे मूला और बलारिया तथा मेवाड़ मे कोठडा, सराडा, सलुम्बर, खेरवाडा, फलासिया और लसाडिया है। जनगणना आंकडों के अनुसार इनकी जनसख्या पचास हजार से ऊपर है। मारवाड़ के गोड़वाड़ इलाके में सिवाणा, कोयलवमव, करौन, गारिया और धुण्डी बेरी नामक गांवों मे इनकी बहुतायत है, जहां इनकी सख्या लगभग 4000 है। शेष गिरासिया मे

और सिरोही में है। मीणा और भील आदिम जातियों की कुल जनसंख्या का तीन–साढ़े तीन प्रतिशत गिरासिया लोगों का है। इतिहासकारों का मत है कि मेवाड़ के भोमट इलाके की जवास, जूड़ा, पहाड़, मादड़ी, पानरवा और आगना जागीरों के भोमियों का भी गिरासिया लोगों से गहरा सम्बन्ध है।

गिरासियों के इष्ट देवता शिव, भैंरु तथा देवी हैं। मारवाड़ के बाली व देसूरी तहसीलों में त्रिलोकेश्वर महादेव का इनका अपना मेला होता है जहां ये हजारों की संख्या में आते हैं। इनके पुरोहितों को 'भोपा' कहते हैं जो इनकी जाति में से ही होते हैं पर ब्राह्मण भी इनके यहां आते जाते हैं। सफेद रंग के पशुओं को ये लोग विशेष श्रद्धा से देखते हैं और उन्हें पवित्र मानते हैं। इस विषय में एक किवदन्ती प्रचलित है कि बहुत पुराने जमाने में एक पहाड़ी गांव में भीषण आग लग गई जिसमें अनेक चौपाये जल मरे। इनमें एक सफेद सांड भी था जो अर्ध–जला रहने के कारण पहिचाना नहीं जा सका और अन्य पशु के धोखे से गिरासियों ने उसके मांस की गोठ कर डाली। पर वास्तविक बात प्रकट होते ही उन्हें बड़ा पश्चाताप हुआ और तभी से वे सफेद रंग के पशु को विशेष आदर की दृष्टि से देखने लगे।

होली और गणगौर गिरासियों के मुख्य त्योहार हैं। होली को ये लोग विशेष उत्साह से मनाते हैं। स्त्री–पुरुषों की टोलियां आनन्द मग्न होकर साथ–साथ नाचती हैं। गणगौर के उत्सव पर गिरासिया युवतियां घूमर–नृत्य करती हैं। सुन्दरियां गोलाकार समूह में जौ के हरे–भरे पौधे को सिर पर रखकर नृत्य करती हैं और युवक ढोल तथा बांसुरी की धुन पर उनके चारों ओर विभोर होकर नाचते रहते हैं। इनके गीतों को, उच्चारण भेद के कारण, भीलों के अतिरिक्त दूसरे लोग कम समझ पाते हैं। इन गीतों में अरावली पर्वत श्रेणी की मनोहर प्रकृति, पेड़–पौधों और उनमें स्वच्छन्द विचरण करने वाले पशु–पक्षियों का सरस वर्णन मिलता है।

शकुनों में इनका विश्वास बहुत अधिक है। किसी भी कार्य का श्रीगणेश करने के पहले भैंरु जी अथवा माताजी के मन्दिर में जाकर गेहूं, जौ और मक्का के 'आखे' (अक्षत) चढ़ाये जाते हैं। मन्दिर का भोपा इन 'आखों' में से कुछ दाने लौटा देता है जिन्हें उसी समय गिना जाता है। यदि दानों की संख्या इच्छित संख्या से मेल खा जाती है तो बहुत ठीक समझा जाता है अन्यथा खराब। शकुन ठीक हुए बिना ये लोग कार्यारम्भ नहीं करते।

तीन प्रकार के विवाह-सम्बन्ध इनमें पाये जाते हैं। 'मोर बन्धिया' विवाह में अन्य हिन्दुओं की भांति फेरे, चवरी और मोर की रस्म की जाती है और ब्राह्मण का आना आवश्यक है। दूसरा विवाह 'पहरावणी' कहलाता है। इसमें साधारण रूप से फेरों की रस्म की जाती है तथा ब्राह्मण का होना भी आवश्यक नहीं है। विवाह की तीसरा प्रकार 'तनाणा' कहलाता है जिसमें न तो सगाई ही होती है और न चंवरी

व फेरों की रस्म ही की जाती है। गांव के बाहर पशु चराते हुये लड़का अपनी प्रेयसी
स्पर्श कर लेता है। इस सम्बन्ध की सूचना लड़का अथवा लड़के के माता-पिता लड़की के
मां-बाप के पास पहुंचा देते हैं। इस सूचना के कुछ समय पश्चात् लड़की के घर वाले
गांव के पंचों और मुखिया को, जिसे सहलोत कहते हैं, बुलवाते हैं। ये लोग विवाह
के लिये 'दापा' निश्चित करते हैं। साधारणतः दापा 12 बछड़ों और 12 वस्त्रों का
होता है जो लड़के वाले लड़की के मां-बाप को देते हैं। पंचों और सहलोत को भी एक-एक
बछड़ा तथा एक-एक वस्त्र देना पड़ता है। दापा निश्चित होने के बाद वर वधू को
अपने घर ले जाता है। एक अन्य रिवाज के अनुसार लड़का जंगल में अपनी प्रेयसी का
स्पर्श करने के स्थान पर उसे अपने घर ले आता है। लड़की के मां बाप उसे खोई हुई
जानकर तलाश करते हैं और पता लगने पर लड़के के घर के सामने एकत्रित होकर पत्थर
फेंकते हैं। इस अवसर पर पंच लोग एकत्रित होकर बीच-बचाव करते हैं और दापा
निश्चित कर देते हैं। 'दापे' की वस्तु का तुरन्त देना अनिवार्य नहीं है। कई बार दो
दो पीढ़ियों तक दापे का भुगतान होता रहता है।

इनमें नाता अथवा करवा की प्रथा भी प्रचलित है। विवाहित स्त्री के
साथ भी पुनर्विवाह किया जा सकता है और उसके पहले पति को दूसरे पति की ओर
से दापा देकर प्रसन्न किया जाता है। भतीजा अपनी चाची को और चाचा
अपने भतीजे की बहू को स्त्री रूप में ग्रहण कर ले तो कोई बुरी बात नहीं समझी
जाती।

गिरासिया लोग भी अपने मुर्दों को जलाते हैं। बारहवें दिन मांस और
मक्के का दलिया सभी रिश्तेदारों को खिलाया जाता है जिसे 'कांधिया' कहते हैं
मौसर की रस्म जब चाहे तब की जाती है। हिन्दुओं की भांति इनके उत्तराधिकार के
नियम होते हैं। पिता की सम्पति मे पुत्रों को बराबर हिस्सा मिलता है तथा पुत्रियां
वंचित रखी जाती हैं।

गिरासियो के झोंपड़े पृथक-पृथक पहाड़ियों पर बने होते हैं। इनके गांव में
भीलों के अतिरिक्त दूसरी जातियां नही बस पाती। भीलों को ये अपनी रैयत
मानते हैं। प्रत्येक गांव में एक मुखिया होता है जिसे ये सहलोत कहते हैं जो अपने
आपको ठाकुर के रूप मे मानता है। सहलोत की आज्ञा का कड़ा पालन किया जाता
है। वैसे इन लोगों का मुख्य धन्धा तो कृषि ही है पर ये लोग मेहनत नही करते।
जब तक ओबरी मे एक रोज के लिए भी पर्याप्त मक्की के दाने हैं तब तक गिरासिया
श्रम करने का कष्ट नही करेगा। अन्न समाप्त होने पर ही ये लोग जीविका की खोज
मे जाते है तथा लकड़ी और घास बेच कर अपना काम चला लेते हैं। जगलों में शहद
मूसली प्रचुरता से उपलब्ध होते हुए भी ये उसे नहीं छूते और भील लोग इन्हे बेचकर
अच्छा लाभ कमा लेते हैं। सच्चा गिरासिया कभी लुटेरा नही बनता, वह हमेशा
ईमानदारी और सच्चाई का जीवन बिताता है। ये लोग अपने खेतों का लगान

निश्चित समय पर बिना किसी हील-हुज्जत के दे देते हैं। इतने सरल होते हुए भी ये अपने नियमों के पक्के होते हैं। कोई भी व्यक्ति इनकी आज्ञा के बिना कोई वस्तु इनके गांव से बाहर ले जाने का साहस नहीं करता। ऐसी घटना होने पर इन लोगों की मान्यता है कि ले जाने वाले व्यक्ति पर दैवी-प्रकोप हो जायेगा और वह विपत्ति तभी टल सकती है जब ले जाने वाला वस्तु के स्वामी को लाल पगड़ी और कुछ कपड़े भेंट स्वरूप दे। भेंट प्राप्त होने पर वस्तु का स्वामी दोषी व्यक्ति पर थूक देगा और सारी विपत्तियां काफूर हुई समझी जायेंगी। ऐसे ही अनेक जादू टोनों में इनकी दृढ़ आस्था है। ये लोग वाममार्गियों की भांति कई प्रकार के जादू करते हैं।

सामान्य गिरासिया पुरुष की साधारण वेष-भूषा सिर पर पोतिया, कमरबन्ध और धोती है। स्त्रियां काले रंग के घाघरे, बाहों में लाख के चूड़े और पैरों में चांदी तथा पीतल के कड़े पहनती हैं। सोने और चांदी के ग्रीवा भूषण भी पहने जाते हैं। शीत ऋतु में कड़ाके की ठंड पड़ते हुए भी ये लोग रुई का उपयोग नहीं करते तथा आग जला कर जाड़ा दूर करते हैं। इसे ये लोग 'सी-सुख' कहते हैं।

इन लोगों के नाम अधिकतर वारों पर होते हैं, जैसे-थावरिया, सोमिया, मंगलिया, बुधिया इत्यादि। जो जिस वार को उत्पन्न होता है उसका नाम उसी वार पर रख दिया जाता है। ये लोग राजपूतों की भांति सीधे और विनम्र तथा वीर और तेजस्वी होते हैं। इनके यहां 'अमल' का प्रयोग खुल कर किया जाता है। बड़े-बड़े झगड़े भी अमल की मनुहार से प्रीत में परिणित कर दिये जाते हैं। समाज में वयोवृद्धों का बड़ा आदर होता है। विशेषकर स्त्रियां बड़े-बूढ़ों को बड़ी श्रद्धा से देखती हैं। आलस्य और काम न रहने के कारण वे स्त्रियों के साथ ही रहते हैं, जिससे सन्तान बहुत होती हैं।

अपनी इन आदतों और परिस्थितियों के कारण गिरासिया निर्धन तथा अर्द्ध-बुभुक्षित रहते हैं। सरल और अनजान, वे निर्धनता मे जन्म लेते हैं, रोग में बड़े होते हैं और भूख मे अपना अन्त पाते हैं। किन्तु उनका जीवन दर्शन कभी उनके मन को छोटा नहीं होने देता, उनकी आत्मा अपराजित और शरीर सहनशील ही बना रहता है। कोई अतिथि घर में हो तो सारा परिवार भूखा सो जायेगा, किन्तु अतिथि को कोई कष्ट नहीं देगा।

शताब्दियों के शोषण और उत्पीड़न के अनन्तर पाली जिले के बाली और देसूरी ग्राम विकास क्षेत्रों मे इन उपेक्षित लोगों के जीवन में अब एक नया अध्याय खुल रहा है। पर्वतों में अपने एकाकी आवासों को छोड़कर गिरासिया लोग अब अधिकाधिक संख्या में नीचे मैदान में अन्य लोगों के साथ घुल-मिल रहे है। कृषि, सिंचाई, शिक्षा, सहयोग आदि प्रवृत्तियों के विस्तार और विकास द्वारा उनके आर्थिक जीवन को ऊंचा उठाने का कार्यक्रम मूर्त-रूप ले रहा है। स्थान-स्थान पर बड़े बड़े

सामुदायिक केन्द्र तथा उनकी गतिविधियां अब गिरासियों के स्वस्थ मनोरंजन के साधन हैं ।

काथोड़िया

काथोड़िया राजस्थान की ऐसी जन-जाति है, जिसकी आर्थिक स्थिति अत्यन्त दयनीय है।

काथोड़िया मूलतः भील ही हैं, किन्तु अपने व्यवसाय के कारण ही इनका यह नाम पड़ गया है।

कोई 50 वर्ष से अधिक हुए जब बम्बई राज्य के पश्चिम खानदेश जिले के भील यहां आये थे। वनों के ठेकेदारों ने, जो प्रायः सभी बोहरा मुसलमान हैं, कत्था बनाने में इन लोगों की कुशलता से प्रभावित होकर इन्हें अच्छी कमाई के सब्ज-बाग दिखाकर इधर आने के लिए प्रेरित किया था और इन भोले-भाले भीलों के लगभग 250 परिवार उदयपुर के वनों मे आ गये थे। बोहरा ठेकेदारों ने इन्हें फलासिया, कोटड़ा और खैरवाड़ा की तहसीलों मे, जहां कत्था बनाने के लिए खैर के झाड़ बहुतायत से उपलब्ध थे, बिखेरा और तब से आज तक इन लोगों के शोषण के बल पर वे लखपति बन गये किन्तु काथोड़ियो को पेट भरने को रोटी और तन ढ़ंकने को एक कपडा भी सुलभ न हो पाया।

कत्था बनाने के लिए यह लोग खैर के वृक्ष की छाल उतार कर उसके भीतर के कोमल भाग को छोटे-छोटे टुकडो मे काट लेते हैं। इन टुकड़ों को मिट्टी की हांडियों में उबाला जाता है और एक प्रकार का काढा बना लिया जाता है। छान कर सुखा लेने के बाद यही काढा जमकर लाल कत्था बन जाता है। लाल कत्था बनाने की कला में काथोड़िया महिलायें सिद्धहस्त हैं। वैसे घटिया किस्म का कत्था भी बनता है, जिसे काला कत्था कहते हैं। प्रतिवर्ष अक्टूबर से फरवरी तक कत्था बनाने के मौसम में विंध्य-प्रदेश से एक अन्य काथोडियो का वर्ग इधर आया करता है और वही यह घटिया कत्था बनाता है।

घने जंगल के बीच अर्द्ध-नग्न और अर्द्ध-बुभुक्षित स्त्री, पुरुष और बालक अपनी उभरी हुई हड्डियों वाले कधो पर खैर की बडी-बड़ी डालियों को ले जाते हुए जहा दिखाई देते हो, समझिये काथोडिया परिवार है। इन लोगों के काम का कोई समय निश्चित नही है। सब कुछ उनके मालिक ठेकेदारों की कृपा पर ही निर्भर है। पर इस कठोर परिश्रम के लिए एक काथोडिया परिवार को प्रतिदिन सेर भर मक्का और उसके अनुपात से नमक-मिर्च मिल जाय तो पर्याप्त माना जाता है। सप्ताह में एक बार आधी बोतल शराब का प्रलोभन काथोड़ियो के लिए बहुत होता है क्योंकि नित्यप्रति अपमानो के कडवे घूंट पीने वाले यह लोग शराब की घूंट को सचमुच मीठा समझते हैं। फरवरी मे जब कत्था बनाने का समय समाप्त होता है

तो ठेकेदार कायोड़िया पुरुष और कायोड़िया महिला को एक-एक धोती भी प्रदान करने की 'कृपा' करता है। धोती कहा जाने वाला यह वस्त्र दो-तीन गज से अधिक नहीं होता जिससे कायोडिया लोग कठिनाई से ही अपनी लज्जा ढक सकते हैं। मार्च से सितम्बर तक का बेरोजगारी का समय निकालने के लिए ठेकेदार प्रत्येक परिवार को 5-6 मन अनाज भी उधार दे देता है, किन्तु अगला मौसम आरम्भ होने तक यह उधार किस प्रकार चुकाया जा सकता है ? परिणाम में कायोड़िये अनेकानेक वर्षों तक एक ही ठेकेदार का काम करने के लिए बाध्य रहते हैं।

सात माह की बेरोजगारी कायोडियों की अवस्था को एकदम असहाय और दयनीय बना देती है। वर्षाऋतु तो उनके लिए और भी विषम होती है। संसार में कुछ भी अपना न रखने वाले यह लोग तब जंगलों में इधर-उधर भटकते रहते हैं और महुआ तथा कोलीकांदा जैसे जंगली कंदमूल पर अपना निर्वाह करते हैं। कोलीकांदा ऐसी विषाक्त जड़ बताई जाती है कि इसके स्पर्श मात्र से ही खुजली हो जाती है। जो हो, अनेक बार जब यह वस्तुयें भी दुर्लभ होती हैं तो कायोड़िया लोग वन में पक्षियों को मार कर अथवा मृत पशुओं के मांस को खाकर ही जीवित रहने का प्रयत्न करते हैं।

अक्टूबर आने पर कायोड़िया वापस काम पर जाते हैं। दिन भर का काम पूरा होने पर कत्थे को कोई भी पत्थर उठा कर तोल लिया जाता है और कायोड़िया दल का नेता जिसे 'नायक' कहते है, भजमनसाहत से, ठेकेदार की यह बात मान लेता है कि वह पत्थर पांच सेर ही है। कत्थे के तोल के आधार पर उनकी मजदूरी निर्धारित होती है, किन्तु जो रकम जुड़ती है उसमें से उधार दिये हुए अनाज, मसालों, कपड़े और शराब का मूल्य घटा दिया जाता है और कायोडियों को कठिनाई से कुछ पैसे ही मिल पाते हैं।

घास, पत्ते और बांसों के बने हुए कायोड़ियों के आवास वर्षाऋतु में बेकार हो जाते हैं और उनके परिवार एक सघन वृक्ष की छाया में आकाश की ओर टकटकी लगाये और मौसम साफ होने की प्रतीक्षा करते हैं। कड़ी सर्दी की रातें बच्चों को पत्तों से ढक कर काटी जाती हैं, बड़े तो रातभर अलाव जलाकर ढोलक पर नाचते-गाते ही सवेरा कर लेते हैं।

आर्थिक दृष्टि से असहाय यह कायोड़िया जाति सामाजिक रूप से भी इतनी ही पिछड़ी हुई है। बाहरी संसार से उनका सम्बन्ध जोड़ने वाली एक मात्र कड़ी ठेकेदार और उसके कर्मचारी हैं जिन्होंने आधुनिक वस्तुओं के प्रति उनके दृष्टिकोण को और भी कडा तथा उदासीन बनाने में सहायता दी है। उनके जीवन और व्यक्तित्व मे वे सभी विशेषतायें है जो अन्य जन-जातियों में देखी जाती हैं। सत्यभाषी और विनम्र कायोड़िया लोग परिश्रमी तो है ही। उनकी भाषा मराठी, गुजराती और बागड़ी का मिश्रण है।

वैसे उनके रीति-रिवाज हिन्दुओं से मिलते हैं, किन्तु मृतक का दाह-संस्कार नहीं होता, दफन होता है। पांच सम्बन्धी मृतक के मुख में चावल रखते हैं और उसके हाथ पर एक रुपया अथवा पैसे। पांच दिन बाद परिवार के लोग हजामत कराते हैं।

होली, दीवाली और रक्षाबन्धन यह लोग धूमधाम से मनाते हैं। सामूहिक नृत्य और गान की होड़ लगी रहती है। कालिका माता की पूजा सामान्य है और किसी प्रिय जन के रोगाक्रान्त होने पर वे कालिका की प्रसन्नता के लिए जंगल जलाते देखे जाते हैं। वन की जड़ी-बूटियों की दवा भी करते हैं, किन्तु अन्ध-विश्वास के कारण जंतर-मंतर और झाड़-फूंक के उपचार पर ही श्रद्धा अधिक रहती है।

पुत्र-जन्म पर सामूहिक आनन्दोत्सव होता है। नवप्रसूता स्नान के अनन्तर सूर्य की पूजा करती है और परिवार के लोग अतिथियों के साथ गाते-बजाते हैं। नवजात शिशु को वृक्ष की डाली से लटके हुए कपड़े के भूले में भुलाया जाता है।

सामूहिक नृत्य का सर्वोत्तम अवसर विवाह होता है। वर को, वधु के पिता को दस रुपये से लेकर इक्कीस रुपये तक 'दापा' देना पड़ता है। सालड़ी के वृक्ष की चार लकड़ियों को खड़ा कर एक मण्डप बना लिया जाता है जिस पर जामुन के पत्तों की छाया की जाती है। इसके नीचे अग्नि की साक्षी मे विवाह सम्पन्न होता है।

इस प्रकार राजस्थान का सामाजिक जीवन यहां के निवासियों की वेश-भूषा और उनके रीति-रिवाज नाना रंगी हैं। आधुनिक सभ्यता के प्रसार के साथ पारम्परिक जीवन का यह इन्द्रधनुषी मानचित्र तेजी से बदल रहा है। अब नगरों में ही नहीं गांवों में भी तेजी से बदलाव आ रहा है और इस बदलाव के चिन्ह सभी ओर दृष्टि गोचर होने लगे हैं।

5
लोक साहित्य

राजस्थान लोक साहित्य की दृष्टि से भी बहुत सम्पन्न है। लोक साहित्य के अन्तर्गत (1) लोक कथाएं, (2) पवाड़े (लोक कथा काव्य), (3) लोक गीत तथा (4) कहावतें, मुहावरे, पहेलियां इत्यादि आते हैं। कुछ लोग लोक नाटकों को लोक साहित्य के अन्तर्गत मानते हैं। सर्वप्रथम हम राजस्थानी लोक कथाओं पर प्रकाश डालेंगे।

राजस्थानी लोक कथाएं मुख्यतः नीति, वृत्त, प्रेम, मनोरंजन तथा पुराण सम्बन्धी हैं। राजस्थान में कहानी कहने वाली विभिन्न जातियां हैं और वे अपने विशिष्ट ढंग से कथाएं कहती हैं। ये लोक कथाएं, विविध प्रकार की हैं। बालकों की कथाएं, बालिकाओं की कथाएं, स्त्रियों के लिए कथाएं तथा पुरुषों के लिए कथाएं। बाल कथाओं को दादा या नानी के कहानियां कह सकते है जिन्हें बूढ़ी औरतें घर के बच्चों को सोने से पहले सुनाती हैं। इन कहानियों की दुनियां बड़ी रंगीन है। इसमें जड़-चेतन का भेद समाप्त हो जाता है। पेड़, पहाड़, नदी-निर्झर सभी बोलते हैं। मनुष्य की भाषा में अपना दुःख-सुख प्रकट करते हैं। परियां आकाश में उड़ती हैं। देवता और राक्षस भी कहानियों के पात्र मिलते हैं।

बाल कथाओं में सबसे पहिले वे कहानियां आती हैं जो एकदम छोटे शिशुओं को सुनाई जाती हैं। इन कहानियों की दुनियां भी बच्चो की उम्र की तरह छोटी ही रहती है। इनके सभी पात्र बच्चों के परिचय से बाहर की वस्तु नहीं होते। ये कहानियां होती भी बहुत छोटी हैं। प्रायः इनमें किसी प्रकार की शिक्षा पर ध्यान नहीं दिया जाता। इनमें सरस कौतूहल मात्र रहता है। ऐसी जन-कथाओं का मनोवैज्ञानिक आधार बड़ा सबल होता है। पत्तों पर डगलियों, बिल्ली अर चीड़ो, भैंस को पीटो अर चीड़ी, चीड़ो चीड़ी, बांदरो बांदरी अर नार, जूं कीड़ी को जुंवाई, घेरणी चिरचियो मिरचियो, चीड़ो अर चुस्सी, खुरपली, टीटण चुस्सी मुस्सी भायली गादड़ो अर कागलो, काड़ी अर कमेड़ी, मींडको अर चीड़ो, भटकाचर, कागलो अर कोचरी आदि-आदि कहानियां इसी प्रकार की हैं। इनमें से उदाहरण के लिये "पत्तो अर डगलियो" नामक कहानी प्रस्तुत की जाती है—

'एक पत्तो अर ड..लियो भायला हा। दोनूं एक बाड़ी में रहता। आंधी
आती तो डगलियो पत्तो नै ढक लेतो। मेह आतो तो पत्तो डगलिए न ढक लेतो।
न वो उडतो अर न वो गलतो। एक दिन आंधी अर मेह दोनूं सागं आया। पत्तो
उडगो अर डगलियो गलगो।"

इन बाल कथाओं में बहुत सी कहानियां पद्यमय होती हैं। पद्यों की भाषा
बड़ी सरस होती है। साथ ही इनमें गजब की गति होती है। इन कहानियों में भी
शिक्षा की तरफ विशेष ध्यान नहीं दिया जाता। रोचकता ही इनकी खूबी होती है।
कमेड़ी अर चुस्सो, चुस्मो चुस्सी, मैंस की जूं, भिंडियो, कागलो अर चिड़ी, राजाजी
की बिल्ली, चुस्सी अर मीढकी, गादड़ो अर लूंकड़ी, आदि-आदि कहानिया इस
श्रेणी की हैं। इनमे से उदाहरणस्वरूप "राजाजी की बिल्ली" नामक कहानी
प्रस्तुत की जाती है।

"एक बिल्ली गैले पर आकर बैठगी। थोड़ी सी वार में गुड को गाडो आयो।
गाड़ीबान बोल्यो—बिल्ली बिल्ली ए, बलद्या मारेगा। बिल्ली बोली—मैं तो
राजाजी की बिल्ली, मैं तो चाबूं सक्कर लिल्ली, मेरो बांयो कान भर दे। गाड़ीवान
बोल्यो—गेरो रे रांड के कान में गुड़ की डली।

पछै सक्कर को गाड़ो आयो। गाड़ीवान बोल्यो–बिल्ली बिल्ली ए, बलद्या
मारेगा। बिल्ली बोली–मैं तो राजाजी की बिल्ली, मैं तो चाबूं सक्कर तिल्ली, मेरो
बांयो कान भर दे। गाडीवान बोल्यो–गेरो रे रांड के कान मे सक्कर की चूंटी।

थोड़ी देर पछै तेल को गाड़ो आयो। गाडीवान बोल्यो—बिल्ली बिल्ली ए
बलद्या मारेगा। बिल्ली बोली—मैं तो राजाजी की बिल्ली, मैं तो चाबूं सक्कर
तिल्ली, मेरो बांयो कान भर दे। गाड़ीवान बोल्यो—गेरो रे रांड कै कान मे तेल
को टोपो।

बिल्ली आपका दोनूं कान डाढ़ा भरा कर आपके बचियां कनै आयी अर गुड़
सक्कर तेल आगे गेर कर बोली—ल्यो रे बचियो, धाप-धाप कर खाल्यो।

राजस्थान की लोक प्रचलित बाल कथाओ में एक वर्ग उन कहानियों का है
जिनके अन्त मे कोई पद्य कहा जाता है उस पद्य में उस कहानी का सार समाया
रहता है। ये कहानियां संस्कृत के हितोपदेश एवं पंचतन्त्र की कहानियों के समान
हैं। इनमें शिक्षा की प्रधानता रहती है। ऐसी कहानियों का नाम भी उस पद्य
रूप में ही बताया जाता है। कुछ पद्य इस प्रकार है—

बाप घराई केरड़ी, माय उगाही भीख।
तूं के जाणें बावली, बडूं घरां री सीख ? ॥1॥

बाजीगर को बांदरो, छोड़ सक्यो ना जाल।
तेरे लागै कामड़ी, मेरै ऊठै भाल ॥2॥

इनके अतिरिक्त और भी बहुत ज्यादा शिक्षाप्रद बाल कथाएं लोक प्रचलित हैं। ऐसी जनप्रिय कहानियों के नाम यहां दिये जाते हैं—

नार अर गऊ, बिल्ली अर मोर की अचिया, नार की धूरी में गादड़ो, गादड़ पट्ठो, पटकलो यांठ काठ को आदमी, मोतियां की मेती, च्यार कागला, नारी को दूध, जाट का पन्द्रा बेटा, सूरज घोड़ो, गादड़ो-गादड़ी, सुपने का लाडू, गुरुजी अर कागलो, स्याणो बांदरो, नेकी को बदलो, डमडमी के डेरू, गादड़ो अर कागलो, कुत्तो अर मींडो, भोज अर गादड़ो।

राजस्थानी लोक कथाओ मे परियों की कहानियां भी काफी है। दुनियां भर में ऐसी कहानियों का प्रचार है। आकाश में उड़ने वाली और इच्छानुसार रूप धारण करने वाली ये परियां बालकों को बड़ी प्रिय लगती हैं। इन कहानियों में रोचकता बहुत होती है। बच्चे इन्हें सुनते-सुनते मुग्ध हो जाते हैं। यहां कुछ ऐसी कहानियों के नाम दिए जाते है :—

सोनै को फूल, रात की रानी, हिरण अर परियां, पाप को फल, राजा को सुपनो, सोनै को हिरण, सात परियां, सोनल परी, सात सहेलियां, परियां को देस आदि।

परियों की तरह ही बाल जगत में जादू की कहानियों का भी प्रचार काफी है।

निम्नलिखित कहानियां इस श्रेणी में अधिक प्रचलित हैं :—

मर्द को मर्द, दो अंगूर, दे दनादन, सोनी मींडो, कुमारदेव, डमडम जादूगर, चिपमचिपा, सोने का महल, गलो, ईंट सैं सोनो, राजा भोज अर सुनेरो हिरण, लड़की अर नागदेव, ऊंट सैं बकिरियां, लग लग घोटा, बंद सैं बकरो, दूध मैं सांप, मोती को खेत, राजा भोज सैं कुत्तो, बिना पाणी को महल, जादूगर व फकीर, कामरु देस आदि।

इनके अलावा बच्चो में ऐसी कहानियों का भी काफी प्रचार है, जिनमें डायन, भूत और राक्षस अपने कारनामे दिखलाते है। इनके अति मानवीय कर्म भी बड़े रोचक हैं।

उदाहरणस्वरूप यहां एक जन-कथा दी जाती हैं, जो बड़ी ही लोकप्रिय है। इस लोक कथा का नाम "न्यौलियो राजा" है—

एक राजा के दो राणी ही। एक नै हो सुहाग अर दूसरी ने हो दुहाग। सुहागण के च्यार बेटा जाया अर दुहागण के जायो एक न्यौलिया। राजा का बेटा बड़ा होया जद घोड़ां चढ़ता अर न्यौलिये नैं सवारी करण नै देई एक बिल्ली। एक दिन

ब्याह कंवर घोड़ां पर चढ़ कर सिकार खेलण बन में गया। न्योलियो भी साथे
दिल्ली पर चढ़ कर सागै गयो। सिकार लेर भागता-भागता बै पाबूं गैलो भूलगा।
रात होगी जद एक छोटो सो बैं घर देख्यो। कंवर बैं घर में जाकर बासो लियो।
बो घर हो एक डाकण को। कंवरां नैं बेरो कोनी पड्यो। डाकण मोत लाड्यार
करकै जिमाय अर सुया दिया। ब्याह कंवर तो सोगा पण न्योलियो जागतो रयो।
थोड़ी देर पछै डाकण ऊठी अर आपकी छुरी काढ़ कर धार करणै बारणै गई।
न्योलियो सारी बात जाणगो। डाकण का बेटा भी बठै ही सूत्या हा। न्योलियो ऊ
कर आपकै भायां नैं तो डाकण के बेटां कै गाबां में सुया दिया और डाकण कै बेटां
आपके भायां की जगा सुया दिया और डाकण का बेटा नैं आपके भायां की ज
सुया दिया। थोड़ी देर पछै डाकण छुरी लेर आई और आपके ही बेटा के छुरी प
दी। न्योलियो बोल्यो—न्योलियो राजा जागै है, डाकण छुरी पलारै है।
डाकण को काम तो पूरो होगो। न्योलियो आपके भायां नैं जगाया अर दिन ऊगतो।
सगला आपके घोड़ां पर चढ़ कर चल्या गया। डाकण रोवती रहगी। दिन में घरे
लादगो। घरां पूंच कर कंवरां आपके बाप नैं रात का सारा हाल सुणाया। रा
न्योलिए पर मोत राजी हुया। न्योलिए नैं पाटवी कयर करय्यो अर बैं की मां
सुहाग दियो।

जन-कथाओं में हास्य रस की कहानियों की भी भरमार है। बी
लाल बुझक्कड़ और सेखसल्ली पर तो बहुत ही ज्यादा विचित्र-विचित्र कह
नियां कही सुनी जाती हैं। साथ ही कंजूस बनिया, कायर, राजपूत तथा मूं
सभासदों के बारे मे असंख्य लोक प्रचलित किस्से मिलेंगे। चमार, डोम, ढ़ाढ़ी
नायक आदि जातियों से सम्बन्धित कहानियो की भी कोई गिनती नही।
इनमें हास्य रस की धारा सी बहती है। ऐसी कहानियो मे राजस्थानी वातावरण
बड़ा ही स्पष्ट रहता है। यहा कुछ हास्य रस की लोक कथाओं के नाम दिये जाते
है—चमारी राणी, बीरबल की बेटी, घलिये की घेली, लालाराम खाती, रमज्यान
सरीफ, च्यार चोर अर डूम पंसेरीराम घुणियो, बहरां की भाण, राजा कै च्यार कान,
चकमलजी सेठ, कुछनी बांदरी, जाट अर काजी, पडखाऊ, कठै निमटूं, काजी अर
तेरण, जाट को चाद तोड़णो, काणी की मा माणी, जुंवाईजी, हाजी नांजी,
गुडमिठड़ी, झूठ बराबर मजा नही, बटउड़ो। फलसो कुवाड़ सारा बैरी, लापसड़ी
खाऊं, कंजूस जाटणी, लढ़ाक पडत, थानियो मलकियो, चेलपरी, जाट नौकर,
सीपली कुत्ती, जाट-जाटणी, चमार-चमारी, तेजाताण, बारठजी की बेटी, को ब्याह,
चीड़ो अर चमार, चमार सासरै गयो, ढ़ाढ़ी अर जाट, कूंजड़ी कूंजड़ा को ब्याह,
ढेढ़ हाकम, चमारां को घोड़ो, खोजा को घोड़ो, अमलदार, कुणसो ठाकर, नार
मारयो, सेखसल्ली की चोरी, काजीजी का च्यार नोकर, अन्धेर नगरी, मूरख
राजा, तीसमारखा आदि।

हास्य रस की कहानिनों के अतिरिक्त हंसी के चुटकले राजस्थान में असंख्य हैं। लोग बातचीत के दौरान में इनका प्रयोग करते हैं। इनसे बातचीत रंगीन बन जाती है। ये चुटकुले छोटी-छोटी कहानियों के रूप में कहे जाते हैं। यहां उदाहरण दिया जाता है—

स्याले की मौसम। रात की बरात। एक डूम कूचं कन्ने बैठ्यो सी मरै। कन्ने एक सोड़ अर एक सारंगी। थोड़ी देर पछे सी को जोर होयो। आपकी सोड़ पर सारंगी लेकर रीति खेत में बड़गो। आधी रात नं एक चोर आयो। चोर भी सी मरै। करम जोग सैं खेत कानी गयो। डूम सूत्यो हो। चोर डूम की सोड़ उतारली अर सारंगी खोस कर भाजगो। डूम डरतो दावलगो। रात नं सी मरतो करड़ो होगो।

राजस्थानी लोक कथाओं का एक संस्करण, "चौबोली" नाम से प्रकाशित किया जा चुका है। यहां श्रीमती रानी लक्ष्मीकुमारी चूड़ावत द्वारा संग्रहीत "लालजी-पेमजी" नामक एक लोक कथा दी जा रही है।

लालजी-पेमजी

किसी गांव में लालजी नामक एक चोर रहता था। उसके बराबर होशियार चोर दूर-दूर तक नहीं था। लालजी जब बूढ़ा हो गया तो उसकी इच्छा हुई कि अपना हुनर किसी सुयोग्य व्यक्ति को सिखा दे। पर बहुत तलाश करके पर भी कोई सुयोग्य पात्र नही मिला। आखिर एक दिन वे पात्र की तलाश में घर से निकल पड़े।

दूसरे गांव में पेमजी नामक एक अन्य चोर रहता था। यद्यपि वह लालजी जैसा होशियार नही था, फिर भी उसके हाथ की सफाई तारीफ के लायक थी। पेमजी ने लालजी का नाम सुन रखा था। इसलिये उससे मिलने की इच्छा करके घर से निकल पड़ा। लालजी ने पेमजी का नाम सुना था। दोनों ने एक-दूसरे को पहले कभी नही देखा था। अचानक रास्ते में दोनों का मिलना हुआ। जगल में एक पेड़ के नीचे बैठ कर दोनों ने आपस मे परिचय किया और खूब बातचीत की। लालजी ने पेमजी की परीक्षा लेनी चाही। सामने पेड़ पर एक पक्षी के घोंसले की ओर इशारा करते हुए लालजी ने कहा-पेमजी, यह पक्षी जो बोल रहा है, इसके नीचे अण्डे हैं। इसके अण्डे चुरा लाओ तो जानूं। पेमजी ने ऊंट के चार मीगने लिये और पेड़ पर चढ़ गया। पक्षी ज्योंही दूहक कर ऊंचा उड़ता, पेमजी उसके नीचे से अण्डा तो निकाल लेते और मीगना रख देते। इस प्रकार उसने चारों अण्डे निकाल लिये। इधर लालजी भी उसके पीछे-पीछे पेड़ पर चढा। उसने पेमजी की जेब से चारो अण्डे निकाल कर चार मींगने रख दिये और जल्दी से नीचे उतर कर अपनी जगह पर आ बैठा। पेमजी ने नीचे आकर जेब में हाथ डाला तो अण्डे के स्थान पर मीगने

आखिर उसे मालजी की होशियारी

लपने, पर बड़ा हैरान हुआ।

होना पड़ा।

अब दोनों चोरों ने चोरी के लिए यहीं जाने की सोची। दोनों ने चलते ...
अहमदाबाद की ओर बढ़ाये। यहां पहुंच कर उन्होंने किले की गुम्बद पर से ...
कलश काट लाने का विचार किया। आधी रात के पहले ही दोनों किले की दीवार
के पास पहुंचे गये। बारह बजे के डंके लगे। हर डंके की चोट के साथ एक कील
दीवार में गाड़ते गये और यों बारह कीलें गाड़ कर ऊपर चढ़ गये और कलश का
लिया। किले के पास ही एक सुनार का घर था। उसने सोना कटने की आवाज
पहचानी और सुनारी से कहा—"कहीं सोना काटा जा रहा है, मैं तलाश में जाता हूं"
दोनों चोर कलश ले कर श्मशान में पहुंचे और गाड़ने का विचार करने लगे। इस
सुनार पहले ही जाकर मुर्दों में सो गया। लालजी ने कहा—'पेमजी, मुर्दों में कोई
सोया हुआ तो नहीं है, इसकी जांच कर लो।" इस पर पेमजी ने भाला लिया और
सब मुर्दों की जांघों में घुमाता गया। मुर्दों की जांघों में खून कहां से निकलता!
जब सुनार की जांघ में भी भाला घुमाया तो सुनार ने जांघ से भाला निकाले
समय चतुराई से भाले में लगे खून को रूमाल से पोंछ डाला। इस तरह निश्चिन्त
होकर दोनो चोरों ने कलश को गाड़ दिया और चले आये। उनके जाते ही सुनार
उठा और कलश निकाल कर ले आया।

दूसरे दिन लालजी और पेमजी कलश निकालने श्मशान में गये तो वहां कु
न मिला। इस पर लालजी बहुत नाराज हुआ और उसे यकीन हो गया कि मुर्दों
जरूर कोई जीता आदमी सोया हुआ था। इसका पता लगाने के लिए उन्होंने ए
तरकीब सोची। गांव में आकर प्याज और हल्दी का ठेका ले लिया। जब गांव
उन्होंने भी प्याज और हल्दी का ठेका ले लिया तो गांव में कहीं भी प्याज और हल्दी
नहीं बिक सकती थी। जिस किसी को जरूरत हो, वह उन्हीं के पास जाय। इधर
सुनार की जांघ में जो भाले का घाव हो गया था, उससे वह रात भर कराहता रहा।
सुबह होते ही उसने सुनारी से कहा—"जाओ, बाजार से प्याज और हल्दी ले आओ,
जिससे घाव अच्छा करें। सुनारी सारे गांव में घूमती रही, पर कहीं भी प्याज
हल्दी नहीं मिली। आखिर उसी ठेकेदार से दोनो चीजें ले बड़बड़ाती हुई घर आई।
सुनार ने जब यह सुना तो उसने माथा ठोक लिया। उसने कहा—"जल्दी बाहर
जाकर देखो, कोई तुम्हारे पीछे तो नहीं आया।" सुनारी ने बाहर जाकर देखा भी,
पर उसे कुछ नहीं दिखाई दिया। इसके पीछे पेमजी ने सुनारी के पीछे-पीछे आकर
उसके घर पर एक निशान बना दिया था। सुनार ने खुद बाहर निकल कर देखा तो घर
के निशान हो रहा था। उसने उसी ढंग का निशान पड़ोस के सारे घरों पर बना
दिया और आकर लेट गया।

रात को जब लालजी और पेमजी दोनों सुनार के घर की तलाश में आये तो देखते हैं कि सारे घरो के एक से निशान हो रहे हैं। इस पर वे बडे असमंजस में पड़े। आखिर हर घर की दीवार से कान लगाकर सुना तो घायल सुनार की कराह सुनाई दी। दीवाल मे से सेंध लगा कर उन्होंने कलश और दूसरा सोने का जेवर भी सुनार के घर से निकाल लिया और ऊंटों पर सवार होकर भाग गये। दोनो के गांवों के रास्ते जब अलग-अलग होने लगे तो धन का बंटवारा करने का विचार किया। सब चीजें आधी-आधी बांट ली गई; पर एक सोने की पायलों की जोड़ी पर मामला अड़ गया। सुनार ने यह पायलों का जोड़ा बादशाह की बेटी के गहनों में से चुरा कर रखा था। लालजी ने कहा—"पेमजी, मैं तो बूढ़ा आदमी हूं, मेरी घर वाली पायलो का क्या करेगी? अच्छा हो, दोनों पायलें तुम ही ले जाओ।" पर पेमजी नहीं माना। उसने कहा—यह बात नही हो सकती, एक-एक पायल ही बांट ली जाय।" लालजी ने उसे बहुत समझाया और कहा कि तुम्हारी बहू झगड़ा कर बैठेगी, इससे अच्छा हो, तुम्हीं इसे ले जाओ। पर पेमजी के न मानने पर एक-एक पायल बांट ली और अपने-अपने घर चले गये।

पेमजी ने घर आकर पायल स्त्री को दिया। वह पायल देख कर बहुत खुश हुई पर जब यह देखा कि एक ही पायल है तो उदास हो गई। न खाये, न पीये, आटी-पाटी लेकर सो गई। पेमजी के मन में बड़ी दुविधा हुई। उसने सोचा, यदि लालजी की बात मान लेता तो कितना अच्छा रहता। आखिर स्त्री को राजी करने के लिये लालजी के गांव गया। अब मांगने से शर्म लगती थी, इसलिये रात को चोरी करके लालजी की बुढ़िया के पांव में से पायल निकाल लाया। पायल पाकर पेमजी की बहू बड़ी खुश हुई।

जब लालजी ने सुबह पायल चुराये जाने की बात सुनी तो पेमजी की इस करतूत पर उसे बड़ा क्रोध आया। वह सीधा पेमजी के गांव गया। पेमजी की बहू सोने की दोनों पायलें पहने ऊपर के कमरे में सो रही थी, जिसमें खेत से लाई हुई कपास भी पड़ी थी। लालजी ने कपास में आग लगादी और पेमजी की बहू को उठा कर अपने गांव ले आया। पेमजी गांव में कहीं गया हुआ था। आग लगने की खबर सुनी तो दौड़ा पर तब तक सब समाप्त हो चुका था। उसने समझा, उसकी बहू उसी आग में जल कर राख हो गई होगी।

बहुत दिन बीत जाने पर उसने दूसरी शादी करने की सोची। अच्छी लड़की की खोज में घूमता हुआ वह एक दिन लालजी के गांव में आ निकला। लालजी को सारा किस्सा सुनाया। लालजी ने भी सारी बातें कहीं और पेमजी से बोला—तुम शादी करना चाहते हो, तो यह मेरी बेटी है, इसके साथ शादी कर लो। यों कह

कर पेमजी की बहू उसको लौटा दी और साथ में अपने हिस्से की पायल भी दे दी। पेमजी अपनी बहू को लेकर राजी-खुशी घर को लौट आया।

इन राजजस्थानी लोक कथाओं में यहां का सांस्कृतिक चित्रण निखरा हुआ है। इन लोक कथाओं में सांस्कृतिक चित्रण की दृष्टि से व्रत कथाओं का अपना विशिष्ट स्थान है। व्रतों का स्थान महिला समाज में अत्यन्त महत्वपूर्ण है और प्रत्येक व्रत की कथाएं है जिन्हें महिलाएं अवश्य सुनती हैं। राजस्थानी नारियों के लिए वे व्रत कथाएं ही वेद पुराण हैं और इनके माध्यम से ही संस्कृति की धारा अभी तक राजस्थानी घरों में प्रवाहित है। इन व्रत–कथाओं की विशेषता यह है कि इनके अन्त में सर्व-मंगल-कामना व्यक्त की जाती है उदाहरण के लिए "नामपंचमी" व्रत-कथा का अन्त दृष्टव्य है :

"हे नाग देवता, साहूकार का छोटा बेटा की भू नैं टूठ्या, जिसा सबनैं तूठिजो कहता नैं, सुणता नैं, हुंकारा भरता नैं, अधेरी-उजालै सबकी रिच्छा करिजो महाराज।"

महिला समाज में कातिक मास की कहानियों का अलग ही साहित्य है। ये कहानियां भी पुण्यमयी हैं। इनसे धर्म, नीति और सदाचार की बड़ी पुनीत शिक्षाएं मिलती है। साथ ही ये कहानियां बड़ी रोचक भी हैं। कातिक स्नान करने वाली स्त्रियां प्रातः काल मन्दिर में जाती हैं। वहां वे हरजस गाती है और पवित्र कहानियां कहती सुनती हैं। इन कहानियों में आचार के उत्तम उपदेश है। साथ ही ये कहानियां है भी काफी संख्या में। यहां कुछ कहानियों के नाम दिये जाते हैं—हाकली ताकली, लिछमीजी, सूरजनारायण, महादेव पारबती, बालाजी, बिसपतजी, सनीसरजी, कातिक तुलसां, बुधजी, नगर बसेरै की, लपसी-तपसी, न्यामदे-स्यामदे, सतनारायण, राम लिक्षमण, बढ़िया माइ, बिणजारो, नितनेम, कठियारों, गणेसजी, इल्ली घुणियो, सूरजनारायण की छोरी, सुसरो भू, पचभिखो, पचीरथी, तिलकमहाराज, रामबाई, धरम की भाणजी, अलूणी भू, धरम की भूखी अर दाम की भूखी, बिसराम देवता, बिनायक, मीठंको मीडंकी, पीपल पथवारी, कीड़ी नैं कण हाथी नैं मण, गंगा जमना आदि।

उदाहरण के लिए यहां "इल्ली अर घुणियो" नामक कहानी प्रस्तुत की जाती है —

एक ही इल्ली और एक हो घुणियो। इल्ली बोली-आ रे ! घुणियां, कातिक न्हावां। घुणियो बोल्यो-बाई तूं न्हाले। तूं तो मेवा मिस्टान्न में रवै अर मैं मोठ बाजरे मैं रंवूं। सो मैं तो कोनी न्हावूं। इल्ली राजा की बाई कै पल्ले कै लाग कर न्हा आती अर घुणियो बैठ्यूयो रहतो। कातिक उतरतं की पून्यूं नैं दोनूं मरगा :

इल्ली राजा के घरां बाई होई अर घुणियो राजा को मींडो होयो। बाई बड़ी होई जद राजाजी बींको व्याह करय्यो। बाई सासरै जावण लागी जद राजाजी बोल्या-बाई, कोई चीज मांग। बाई बोली—म्हनैं तो यो थारो मींडो दे द्यो। राजाजी बोल्या-बाई मीडो तो मामूली चीज है और कोई बड़ी चीज मांग। पण बाई जिद करके मीडो ही लियो।

राजा की बाई सासरै आगी। मीडे नै बांध दियो म्हैल के तलै। मींडो बाई न देखै जद बोले—"रिमको झिमको ए, श्याम सुन्दर बाई थोड़ो पाणीडो प्या।"-मीडै की बोली सुणकर राजा की राणी बोलै—"मैं कवै छो रैं, तूं सुणै छो रैं, भाई म्हारा घुणिया कातिकड़ो न्हा।"

मीडै अर राणी की बात सुण कर द्योराणी जिठाणी राजा नै लगायो-या कं राणी, जाण जुगारी, कामण गारी। मिनखां सैं तो बात सारा करै, या जिनावरां से बात करै। राजा बोल्यो—कानां सुणी कोन्या मानूं। आंख्या देखी मानूं। दूसरै दिन राजा लुककर बैठगो। अर मीडे की अर राणी की पाछी बा ही बात होइ—"रिमको झिमको ए, स्याम सुन्दर बाई थोड़ो पाणीड़ो प्या।" मैं कवै छो रे, तूं सुणै छो रे, भाई म्हारा घुणिया कातिकड़ो न्हा। राजा सारी बात सुण कर बाहर आयो अर राणी नै पूछ्यो—या के बात है? राणी सारी बात खोलकर बता दी राजा भोत राजी होयो। आप कातिक न्हायो अर सारी नगरी नै कातिक न्हावण को हुकम दियो।

हे कातिक का ठाकर, राई दामोदर, इल्ली नै टूट्यो जिसो सैं नै टूटियो घुणिये नै टूट्यो जिसो कोई नैं मत ना टूटिए—कहतैं सुणतैं नै, हुंकारा भरतां नै।

इसके बाद राजस्थान की जन-कथाओं में वे कहानियां आती हैं, जिनको सुनने-सुनाने के लिए मण्डली जुड़ती हैं। इनका कथानक काफी लम्बा होता है और उनमे कई प्रकार की अनेकों घटनाएं रहती हैं। सबसे पहले प्रेम कथाओं पर विचार किया जाता है। ये कहानियां काफी लम्बे समय से इस प्रदेश मे लोक प्रचलित हैं। इन प्रेम कथाओं के साथ वीरता का तत्व मिला सा रहता है। प्रेमी तथा प्रेमिका के मिलन के पहिले काफी दिक्कतें प्रस्तुत होती हैं और अन्त में सुख के साथ कहानी समाप्त होती है। कई कहानियां दुखान्त भी होती हैं। यहां कुछ प्रेमकथाओं के नाम दिये जाते हैं।

ढ़ोलो मरवण, रसालू नोण्दे, माधवानल काम कन्दला, विक्रम ससिकला, खींवो आमल, लांछा काटवो, हीर-रांझो, णणकदे खैंगार: चन्नण- मलियागिरी, जगमल भारमा, सुलतान निहालदे, पूंगलगढ़ की पदमणी, नागमदे, सोनलदे, मौमल मेहऊमली, सुधबुध सालंगिया, बीरमदे सहजादी, पन्ना बीरमदे, भोज-भानमति, व्रजमुकुट पदमावती, रिसालू बेलादे, कोड़मदे, तारा-पिरथीराज, सयणी बीजानन्द

रुठीराणी, पदमणी-रतनसेन, बीरसिंघ-रतना, ससिपन्ना, नागजी-नागमती, ऊमादे सांखली आदि।

इनके अतिरिक्त ऐसी कहानियां राजस्थान में बड़ी संख्या मे लोक प्रचलित हैं, *जिनमें ठग, चोर तथा धाड़ी लोगों का वृत्तान्त है।*

यहां ठगों की लोक कथाओं के नाम दिए जाते हैं। बामण अर ठग नगरी, सेरिए की ठग लड़की, गफूरियो ठग, बावलो और ठग, जाट अर बाणियो, घोलिए की घेली, राजहंस, राजा भोज की लुगाई, चौधरी अर सूरतदास, लुगाई अर च्यार ठग, ठग और राजा, सेठाणी को मरणो, राणी अर चमार, सुनेरी हीरो, राजकुमारी अर ठग, बामणी और ठग की लुगाई, डेढ़ छैल की नगरी मे ढाई छैल, नागो नाड़, धोबण अर तेली को लड़को, मुसाणां मैं मुरदो बोल्यो, मामो भाणजो, जाट अर बाणियो, मूंछ मूंडी रांडडी, राजा भोज, राजा और नाई, दूनो अर ठग, ठग अर बाणियो, नाई अर गूजर, जाट गूजर अर चमार भायला, मुरदो महात्मा आदि।

इसी प्रकार चारों की कुछ कहानियों के नाम इस प्रकार हैं—

ग्यानी चोर, खप्परियो चोर, गंजियो चोर, खीर की चोरी, पीतल की थाली, भारमल चोर, चन्नण की चोरी, डमडमी मैं चोर, कचोलै की चोरी, दिन मैं चोरी, मुखमल का गूदड़ा, सोने की ईंट दूध को कटोरो, चोर अर सेठाणी, लेलोट अर *बकलवचेर बुढया अर चोर,* दो जुंवाई, चमार के घरां चोर, मंगतियो कंवर, च्यार चोर अर फितूचंद, गफूरखां अर जाट, सोने को फूल, *लालगरू के घर मैं चोर,* चोरी से खाडो भरणो, डोकरी अर चोर, राजा अर चोर, खीवो बीजो आदि।

धाड़िगों की प्रसिद्ध कहानियां निम्नलिखित हैं—

दुल्लो धाड़ी, दयाराम धाड़ी, डूंगजी जुंहारजी, सोनै को मूंदड़ो, सपट बजीर, बनेसिंघ, राजा भोज अर फूलांदे, बजीरमल धाड़ी, उदाराम धाड़ी, नोलखो हार, हरफूल, धाड़ी कुसपाल, बामण अर धाड़ी, धनपालसिंघ मीयो अर मीरो, हामानपरो, खादरखां, धाड़ी अर सेठ, उगमसिंघ धाड़ी आदि।

उदाहरण के लिए इन लोक कथाओं में से एक कहानी "डेढ छैल की नगरी में अढ़ाई छैल" नामक दी जाती है। इसमें एक चोर की चतुराई का वर्णन है—

एक राजा घणो स्याणो, बड़ो नामवरी हालो। एक दिन की बात राजा कन्नै एक कागद आयो। कागद बाच्यो—डेढ़ छैल की नगरी में ढाई छैल आयो है, ठगैगो, ठगावैगो नहीं। राजा विचार करय्यो—चोर घणा ही देख्या। यो कोई बडो चोर है जिको जणा कर चोरी करे। कोतवाल नैं बुलाकर हुकम दियो—आज नयों चोर आयो है। ढाई छैल नाम है। गांव में चोरी नहीं होवै अर आज ही चोर भी पकड़्यो जावे। नही तो नोकरी चली जावैगी। कोतवाल अरज करी—हुकम, मोत चोर पकड़ कर कैद कर दिया, यो चोर कठे जासी।

कोतवाल रात नै घोड़ै पर गस्त देवै। एक बजी। वो एक सूनी फूटी हेली कन्नै से निकल्यो। हेली में चाकी पीसणै की आवाज सुणी। घोड़ो थाम्यो। उतर कर हेली में गयो। देखै तो एक डोकरी फाट्या गाबा पैरयां चाकी पीसै है। पूछ्यो—माई, तू कुण है? सारी नगरी सोवै तू फूटी सूनी हेली में चाकी पीसण अठै से आई। डोकरी जवाब दियो—भाया, मै के आई राम मारयो बो ढाई छैल गैल पड़गो। बोल्यो—डोकरी मैं आधी रात पाछै चोरी कर कै घोड़ै पर आवूंगा जिको दाणो दल कर त्यार राखिए, नही तो ज्यान नै खैर कोनी। हेली भी सूनी वो ही बताई। सो भाया, मै तो डरती अठै दाणां दलू हूं। तूं कुण है? कोतवाल बोल्यो—माई तेरी भावूं कोई ही होवो। तूं एक काम कर, जगां तो मै बैठस्यूं और तूं मेरा कपड़ा बदल कर तेरै घरां जा। डोकरी बोली—भाया, तेरी खुसी। पण मेरी ज्यान की निगह राखिए। कोतवाल बोल्यो—डोकरी, डरै मत ना तन्नैं कोई डर कोनी। डोकरी कपड़ा बदल कर चली गई। कोतवाल बैठ्यो सूनी हेली में डोकरी का कपड़ा पहर्या दाणो दलै। दो बज्या च्यार बज्या। कोई कोनी आयो। भाग फाटी कोतवाल देख्यो—मौत खारी होई। ल्हुकतो छिपतो आपकै घरां गयो। घर का यो हाल देख कर डरग्या। पाछै पिछाण कर गाबा दिया।

दूसरै दिन राजा कोतवाल नै बुला कर चोर मांग्यो। चोर कठै? कोतवाल सूं सारी हकीकत पूछी। राजा कै झाल ऊठी और कोतवाल नै बरखास्त करयो। पाछै फौजदार ने बुला कर ढाई छैल नै पकड़ण को हुकम दियो। फौजदार हुकम सिर माथै लेकर गयो।

फौजदार घोड़ै पर चढ़्यो गस्त देवै। चोर नै गस्त देवै। चोर ने जरूर पकड़णो, नही तो राजाजी कोतवाल हाली करसी। रात की दो बजी बाहर की बस्ती मांय एक कूवै कन्नै से नीसर्यो। एक आदमी कूवै की खेल मे ऊकड़ बैठ्यो सी मरै। फौजदार कनै जाकर पूछ्यो—अरै भाई, तू अठै कुण है? रातनै एकलो बैठ्यो सी क्यूं मरै है? आदमी बोल्यो—हुजूर मैं गरीब धाणको हूं। मेरै तो ढाई छैल गैल पड़ रयो है। आज घरां जाकर बोल्यो—मैं नगरी मे चोरी करकै आवूंगा जद रात नै कूवै कन्नै जरूर मिलिए अर घोड़ै के खैरो करिए। जै नही पायो तो ज्यान की खैर नही। सो मैं तो डरतो अठै ढाई छैल ने उडीकूं हूं। फौजदार बोल्यो—एक काम कर, तू तो मेरा कपड़ा ले अर मैं तेरी जगां खड़्यो होस्यूं। मैं फौजदार हूं अर ढाई छैल नैं पकड़ण आयो हूं। बो आदमी मानगो और फौजदार का कपड़ा पहर तथा घोड़ै पर चढ आपके घरै गयो। फौजदारजी धाणकै का गाबा पैर कर खेल में बैठगा। घण्टा होई दो घंटा होई। कोई भी कोनी आयो। फौजदारजी सी मरता करड़ा होगा। भाग फाटी जद लोग देख्या। देख कर पिछाण्या। राज में खबर करी फौजदार की चर्चा चाली।

तीसरै दिन राजाजी बोल्यो—नौकरां सैं के होवे ? ढाई छैल नैं मैं पकड़स्यूं।
रात होई राजाजी एकला चबूतरै बैठ्या । कन्नै काठ धरायो । च्यारूं कानी गस्त देवे अर चबूतरै आकर बैठज्यावै । एक बजी जद एक भलै घरां की भू हाथ में थाली अर थाली मे चालणी सैं ढक्यो दीयो लेर निकली । राजाजी कै कनै आई जद राजाजी ऊठ्या अर पूछ्यो भाई तू कुण अर रात नैं कैयां निकली ? वा बोली—जी के कहूं ? दोराण्यां-जिठाण्यां का ताना सहती-सहती आधी होगी । मेरे टाबर कोनी होवे जिकै टूणोकरण जावूं हूं । पण थारे कन्नै यो काठ को लकड़ो ओड वडो क्यूं पड़्यो है ? राजाजी बोल्या यो काठ है । चोर नैं पकड़ कर ईमें जड़स्यां । वा बोली-जी, कैंया जड़स्यो ? एक बार मन्नैं भी जड़ कर दिखावो । राजाजी बोल्या-यो लुगायां कै काम कोनी, चोरां ने पकड़ कर जडनै को काठ है । वा बोली जी, मेरो मन करै है क देखूं, आदमी काठ मे कैंया जड़्यो जावै है । सो एक बर मन्नै जड़ कर दिखावै राजाजी देख्यो-बिचारी को मन है, दिखाद्या पण लुगाई नैं के काठ में जुड़ां, स्वै आपां ही जड़्या जाकर दिखा देस्यां । वा बोली—थारी मरजी । सारी तरकीब राजाजी नैं पूछती गई अोर राजाजी नै काठ में जुड़ कर तालो ढक दियो । ताली हाथ में ली अर सटदे नीसरगी । राजाजी देख्यो-भोत खारी होई । जो के ? काठ में जड़्या पड़्या रह्या । दिन उग्यो लोग पिछाण्या । तालो तुड़ाओ । राजाजी घर में गया । नगर में चरचा चाली । लोग घबराया ।

राजाजी म्हैला जाकर हुकम दियो-नगर में डूंडी पीटद्यो ढाई छैल का सारूं गुन्ना माफ । गढ़ में आकर मिलो अर ईनाम पावो थोड़ी देर पाछै ही एक जवान मोट्यार घोडै पर चढ़ कर बजारूं—बजार गढ़ मे गयो । राजाजी नै नजर करी। आपको नाम बतायो । राजाजी भोत राजी होया, भोत बड़ी बकसीस करी । राजा को वडो फौजदार करय्यो ।

वीरता सम्बन्धी कतिपय लोक-कथाएं निम्नलिखित हैं :—

उडणो पिरथीराज, जगदेव पंवार, कहवाट सरवहियो, अमरसिंघ राठौड़, गोरा बादल, बीरमदे, सुलतान, गूगो चौहाण, पाबू राठौड़, पदम सिंघ, अनाड़सिंघ, बल्लारसिंघ, ऊंगो, ल्हालरदे, सोनचीडी का सूण, गरड़ पंख, राणी नैं दे सूंटो, राजा अर कुम्हार, विणजारो भोमसिंघ, सोनै की फली, बिणजारै को लड़को, हातमसिंघ चौहाण, जखड़ो : मुखड़ो, राजा बलदेव, चकवो-चकवी, कंकर नै देसूंटो, सजानसिंघ, चुण्डोजी, सादूलो भाटी, बूलजी चापावत, आदि-आदि । राजस्थानी ख्यातों में एवं यहा की वातों में वीरता की कहानियो का तो कोई पार ही नही है । इनमे है एक कहानी "ल्हालरदे" नामक उदाहरण के रूप में प्रस्तुत की जाती है—

"अलसी कै ल्हालर नहि होती, अलसी जाती ऊत"

गड चूंटालै का ठाकर अलसी मादा पड़्या । ओस्ता चाक्योड़ी । दुख पावै। भाई बंध भेला होया । ठाकरां नैं मतस्या पूछै, पण ठाकर बोलै नही । ठाकरां कै

कंवर कोनी। एक बाई, नांव ल्हालर दे, बाई पूछ्यो-बाबोसा, आपकी मनस्या बताओ।ठाकर बोल्या-के मनस्या बताऊं ? पूरी होती कोनी लागै । भाई बन्ध बोल्या-आप बतावो, पूरी करस्यां । ठाकर बोल्या-मेरे दो बातां की मन में रहगी। एक तो मैं टोडरमल का कोनी गुवाया अर दूसरां मैं गुजरात मैं मूंगघड़े का घोड़ा कोनी खेद्या। लोग बोल्या-पहली बात तो मामूली है । आप लड़की गोद लेयो अर टोडरमल का गुवावो, पण दूसरी बात की कोई हां कोनी भरै । मूंगघडै का घोड़ा खेदणी टेडी खीर है । ठाकर बोल्या- दोनूं बातां की पक्की होए बिना मेरा प्राण कोनी निकलै । अन्त मे ल्हालरदे बोली-बाबोसा, आप चैन पावो आपका दोनूं काम मैं करस्यूं । ल्हारदे बीड़ो चाब्यो अर ठाकर मोक्ष पाया ।

सारा काम पूरा करके ल्हालरदे आपके बाबोसा की मनस्या पूरी करणे की सोची । रात नै मरदाना भेष धारण करय्यो घोडे पर चढी अर गढ़ मैं से निकलगी। कोई नै भी सागै कोनी लियो । मूंगघडै को गैलो पकड्यो । चालतां-चलतां कई दिन होगा । एक दिन एक ठाकर गैलै चालता मिल्या । ठाकरां के सागै खवास हो ।दोनूं ल्हालरदे को तपतेज देख कर ठमक्या । पूछ्यो-आप सिरदार सिध पधारो हो । ल्हालर दे सारी बात बताई । ठाकर भी मूंगघडै का घोड़ा खेदन ही जावै हा । दोनूं जणा को एक ही काम । दोनूं पक्कीकरी- एकजणो घोडा खेदसी अर दूसरो पीठ झेलसी । घोड़ा दोनूं आधा-आधा बांटसी । ल्हालर दे कै पीठ झेलणो-पांती आयो ।

आखर मूंगघडै को बीड़ आयो । बीड़ में घोड़ा देख्या । एक सैं एक सुन्दा चरै । बीड़ में नगारो पड्यो । जो कोई घोड़ा खेदे, तो जाती बिरियां नगारो बजावे । पछै दो-दो हाथ होज्या । ल्हालर दे बोली—ठाकरां, आप चोखा घोड़ा लेकर चालो । गैल की भीड मैं झेल लेस्यूं । ठाकर अर खवास घोड़ा चुगकर गैलै गेर दिया । आप लैर हो लिया । पछै ल्हारदे नगारै पर डंका दिया । नगारो बाज्यो, जाणै इन्दर गाज्यो हो । मूंगघडै ने अचरज होयो, आज नंगाडै पर इतना डंका देवण की हिम्मत कुण करी ? फौज चढी बीड़ में गया तो एक जोधजवान रजपूत घोडै पर खड्यो देख्यो । कोई सागै ना । मूंगघडे को ठाकर बोल्यो—भई तेरी जुवानी अर तेज देखकर तो जी भौत राजी होवे है, पण तूं काम करड़ो कर लियो । म्हारा घोड़ा खेद लिया । ल्हालरदे बोली–वीरां को तो यो ही काम है । ठाकरां फौज नै खपावण क्यूं ल्याया । मैं घोडे पर खडयो होकै मेरी सांग गाड़ देस्यूं । आपको कोई भी रजपूत मेरी सांग पाछी काढ्यो अर थारा घोड़ा पाछा ल्यो । बात ठीक उतरी मूंगघडै का ठाकर मानगा । ल्हालर दे घोड़े को चक्कर देकर सांग गाडी । कई जणा जोर अजमायो, पण सांग धरती मे अगंद को पग होगी । मूंगघडै का ठाकर भौत राजी होया । घोड़ा ल्हालरदे का होगा ।

ल्हालरदे विदाई लेकर चाली । गैल में ठाकर अर खवास मिल्या । लार की

बात ल्हालरदे सुणाई। घोड़ां की पांती होगी। एक घोड़ो बाकी बच्यो। न ठाकर लेवै अर न ल्हालरदे लेवै। जिद होगी। ल्हालरदे तलवार को हाथ मारकर घोड़ै का दो टुकड़ा कर दिया। सवास पिछाण करी। मरद कोनी लुगाई है। ठाकरां के बात में कह्यो। ठाकर बोल्या—आपको गांव कुण सो? ल्हालरदे जवाब दियो—गांव को नाम कोनी बतावां। ठाकर जिद करय्यो। ल्हालरदे बोली—म्हारी बात पूरी करता का बाचा द्यो तो गाव का नाम बतावां। ठाकर बोल्या—बाचा दिया। ल्हालरदे सारी बात सुणाई। आखर बोली—अब आप तो बणोगा कन्या अर मै बींद बणकर जान लेकर आस्यूं। आपने ब्याह कर गड चुटाले ले ज्यासूं अर टोडरमल का गुवाम्यूं या म्हारी बात है। सो पूरी होणी चाहे। ठाकर बाचा दे चुक्या हा भरी अर आपके गांव कोटकिलूरै गया।

ब्याह को म्हूरत होयो। ल्हालरदे बींद बणी। सारा नेगचार गड चुटाले मे होया। पछै जान कोटकिलूरै चाली। ठाकर बीनणी बण्या। फेरा होया जान की खातीरदारी होई। जान पाछी गड चुटाले आई। टोडरमल का गाया। अलसी जी की दोनूं मनस्या पूरी होई। ल्हालरदे मरदाना भेस उतारय्या। जनाना भेस लिया। सासरै गई। सुख चैन से ठाकर रवै लागा। ल्हालरदे के कंवर होयो। नाव कढायो हल्ल। कवर बडो होयो। एक दिन सिकार नै गयो। बन मे न्हारी को बचियो देख्यो। मन में करय्यो-यो ही तो हाऊ नहीं है के? आज हाऊ नै पकड़स्यां। आगैसी जाकर न्हार कै बच्चा ने पकड़ लियो। गले रस्सो घाल कर गढ़ मे लेगो। नगर का लोग देख्यो। गड की परगै देख्यो। आप सीधो रावलै मे गयो। आपकी मां ने बोल्यो—मां, आज मैं हाऊ पकड कर ल्यायो हूं। ल्हालर दे बोली – ना लाला, यो तो न्हार को बच्चो है। ईं की मा ढूढती होसी, बिचारै नै पाछो बन मे छोड कर आ। हल्ल पाछो गयो और बन मे न्हार का बच्चा ने छोड कर आयो। नगरी का लोग बोल्या-सिंघणी के तो सिंघ ही जनमैं। कोटकिलूरै के ठाकरा की बनणी बणनो महलो होगो।

राव गया, ल्हालर गई, गया जमी मैं हल्ल।
सूरवीर तो चल्या गया, पडी रह गई गल्ल।

इस प्रकार राजस्थानी लोक-कथाएं कई प्रकार की हैं। साथ ही हर प्रकार की जन-कथाओं की संख्या भी काफी बड़ी है। इन जन-कथाओं में जन-जीवन की बड़ी स्पष्ट झांकी देखने को मिलती है। विविध प्रकार के मानव चरित्र भी अपना रूप इन लोक-कथाओं में दिखाते हैं। साथ ही इनमे शिक्षा का भण्डार भी है। इनमे सबसे बड़ा तत्व कौतूहल का रहना है। फलस्वरूप ये कथाएं बड़ी ही मनोरजक होती हैं। घटना तत्व की महत्ता इन कथाओं को रंग देती है। साथ ही

लोकप्रियता के कारण एक ही कहानी स्थान-स्थान पर थोड़े बहुत परिवर्तन के साथ भी कही और सुनी जाती हुई मिलेगी।

[illegible] मनोरंजन [illegible] [illegible] बुढ़िया की बात [illegible] जो आज भी विद्वानों तक को अपने लालित्य तथा सौन्दर्य से मुग्ध किए है। यह बात इस प्रकार है :-

एक बार राजा भोज और महाकवि माघ रास्ता भूल गए। उन्हें उज्जैन जाना था।

उन्होंने बुढ़िया से पूछा "यह रास्ता कहां जाता है ?"

बुढ़िया ने कहा "यह रास्ता तो यहीं रहेगा। तुम लोग कौन हो ?

उन्होंने उत्तर दिया "हम तो बटाऊ हैं, पथिक है।"

बुढ़िया ने कहा "पथिक केवल सूर्य और चन्द्रमा हैं, तुम कैसे पथिक ?"

तब उन्होंने कहा "हम तो पाहुने हैं।"

बुढ़िया बोली "पाहुने तो केवल दो हैं, एक धन, दूसरा यौवन।"

तब वे बोले "हम तो राजा हैं।"

बुढ़िया बोली "राजा भी केवल दो ही हैं, एक इन्द्र दूसरा यम। तुम सच बताओ, हो कौन ?"

इस पर राजा भोज और माघ पण्डित ने हार कर कहा "हम तो हारे हुए हैं"

इस पर बुढ़िया बोली "हारे हुए भी दो हैं, एक तो कर्जदार और दूसरा बेटी का बाप।"

अन्त मे दोनो ने कहा "हम तो कुछ भी नहीं जानते, जानकार तो तू ही है।"

इस पर बुढ़िया ने कहा तू राजा भोज और यह माघ पण्डित है। जाओ यही उज्जैन का रास्ता है।

[illegible]कगीत

राजस्थान के ग्रामीण क्षेत्रों में जिस किसी को भी वहां के पनघटों पर जल भरती हुई ग्राम-बालाओं, मेलों में मस्ती से नाचते हुए युवक-युवतियों और विजन वन प्रान्तर में गोधन चराते हुए चरवाहों को लोक-संगीत की स्वर लहरी में बहते हुए देखा और सुना है, उन्हें यह अनुमान सहज ही हो सकता है कि राजस्थान लोक-गीतों की दृष्टि से कितना समृद्ध प्रदेश है। सहस्त्रों की संख्या में उपलब्ध इस प्रदेश के लोक-गीतों में विषयों की विविधता इतनी असाधारण है कि अन्यत्र उसका प्राप्त होना दुर्लभ सा ही प्रतीत होता है। ब्राह्म मूहुर्त में चक्की पीसती हुई महिलाओं को देखिए या मध्यान्ह में कुंए पर चरस चलाते हुए किसानों को, वे कोई न कोई लोक-गीत गाते हुए ही मिलेंगे।

राजस्थान के लोक गीत यहां के जन-मानस के विभिन्न पक्षों को बड़ी स्पष्टता के साथ प्रतिबिम्बित करते हैं। इन गीतों में यहां के जन-साधारण के हर्ष रुदन, उल्लास-विषाद और करुणा तथा गौरव की भावनाओं का बड़ा मार्मिक चित्रण हुआ है। स्थूल रूप से इन गीतों का विषयवार वर्गीकरण निम्न प्रकार किया जा सकता है।

(1) प्रकृति सम्बन्धी लोकगीत

(2) परिवार सम्बन्धी लोक-गीत

(3) त्योहारों और पर्वों के लोक-गीत

(4) धार्मिक लोक-गीत

(5) विविध विषयक लोक-गीत

प्रकृति सम्बन्धी लोक-गीत

प्रकृति ने अपनी सुषमा का दान देने में राजस्थान के साथ अतिशय इदा की है। इसलिए सहज रूप से यहां के निवासी निसर्ग-सौन्दर्य के बड़े प्यासे रहे और उनकी यह पिपासा लोक-गीतों में बड़े ही कलात्मक ढंग से अभिव्यक्त हुई है इस प्रकार के लोक गीतों में सबसे अधिक वर्षा ऋतु से सम्बन्धित हैं, क्योंकि मरुभू होने के कारण यहां इस ऋतु का असीम महत्व है। वर्षा के मौसम में यहां आनन्द और उल्लास के अनेक त्योहार मनाए जाते है। हरियाली अमावस्या और श्रावणी तीज तो इस ऋतु के सबसे बड़े प्रसिद्ध त्योहार हैं।

वर्षा ऋतु के जो लोक-गीत प्रचलित हैं। उनमें प्रकृति की छटा का वर्ण आलंबन और उद्दीपन दोनों ही रूपों में बड़ा सुन्दर किया गया है। ऋग्वेद के सू में वर्षा का जो कल्याणकारी रूप प्रस्तुत किया गया है, उससे वर्षा ऋतु संबंधी अनेक राजस्थानी लोक गीतों का भाव-साम्य दिखाई देता है, जिनमें स्वतन्त्र रूप ऋतु सौन्दर्य को चित्रित किया गया है। इस तथ्य की पुष्टि में ऋग्वेद का एक सू और एक राजस्थानी लोक गीत यहां उद्धृत है :—

प्रवाता वान्ति पतयन्ति विद्युत उदोषधीजिहते पिन्वतेस्वः।
इरा विश्वस्मै भुवनाय जायते यत् पर्जन्य : पृथिवी रेत सावति।
यस्य व्रते पृथिवी नमीति यस्य व्रते शफवज्जर्भुरीति।
यस्य व्रते औषधीर्विश्वरूपा : सनः पर्जन्य : महिशर्म यच्छ।१

(पवन वेग से चलता है, बिजलियां गिरती हैं, औषधिया अंकुरित होती हैं आकाश क्षरित होता है यह जो पन्य जल रूपी रस से पृथ्वी का सिंचन होता है, सर्व जगत कल्याण के लिए भूमि समर्थ होती है जिसकी कामना से पृथ्वी सम्यक्‌नत होती है, जिसके शुभ दर्शन से खुरवाले प्राणी उत्साहित होते हैं जिसके फलस्वरूप औषधियां विविध रूपों से अंकुरित होती है, वह पर्जन्य हमे परम कल्याण प्रदान करे।)

राजस्थानी लोक-गीत

नित बरसो, मैहा बागड़ में । नित बरसो०
मोठ-बाजरो-बागड़ निपजै
गूंहड़ा निपजै खादर में । नित बरसो०
मूंगर चंवला बागड़ निपजै
जवड़ा निपजै खादर में । नित बरसो०
टौड-टौडिया बागड़ निपजै
बैल्या निपजै खादर में । नित बरसो०
भेड-बाकरी बागड़ निपजै
भैंस्या निपजै खादर में । नित बरसो०

उद्दीपन रूप मे जहां प्रकृति वर्णन आया है, उसमे विप्रलंभ शृंगार की भावना प्रखर रूप मे मुखरित हुई है और ऐसा होना स्वाभाविक भी है, क्योंकि मध्य-युग में यहा के वीर युवकों को अक्सर युद्ध स्थल में या राजाजी की किसी अन्य चाकरी मे सलग्न रहना पड़ता था और उनकी अर्द्धांगिनियों को घरों में ही एकाकी जीवन व्यतीत करना पड़ता था । आज भी राजस्थान के गांवों के जो लोग कलकत्ता, बम्बई या आसाम मे व्यवसाय-रत हैं, उनकी पत्नियां अक्सर गांवों में ही रहती हैं । साल में केवल 1-2 माह के लिए उनके पति घर आते हैं और फिर लम्बा बिछोह देकर चले जाते हैं । वर्षा ऋतु से सम्बन्धित "निहालदे-सोढा" नामक एक ऐसा ही लोक-गीत राजस्थान मे बड़ा लोकप्रिय है । इस लोक-गीत में विरहणी नायिका अपने प्रवासी पति का आह्वान करती है । वह कहती है "प्रिय सावन भादों की रंगीन रितु आ गई है । छप्पर पुराने पड़ गए हैं, कमजोर बांस तड़कने लगे हैं, बादलों मे बिजली चमक रही है, तुम्हारी प्रिया महल में अकेली डरती है, इसलिए हे गुलाब के फूल ! तुम जल्दी से घर आ जावो । आगे चल कर वह यौवन की क्षण-भंगुरता का चित्रण करती हुई उसे जल्दी घर लौटने का आग्रह करती है ।

गीत इस प्रकार है :—

सावण तो लाग्यो पिया, भादवो जी कांहि बरसण लाग्यो मेंह,
बरसण लाग्यो जी मेह, हो जी ढोला मेह ।
अब घर आय जा गोरी रा रे बालमा हो जी ॥ टेक ॥
छप्पर पुराणा पिया पड़ गया रे कोई तिड़कण लागा,
तिड़कण लागा बोदा बांस, हो जी ढोला बांस,
अब घर आय जा बरसा रुत भली हो जी ॥१॥
बादल में चमके पिया बीजली रे, कोई मेला मे डरपै,
मेलां में डरपै घर री नार, हो जी छोटी नार,

कागद व्है तो ढोला बांच लू ंजी ।
करम न बांच्यो, करम न बांच्यो जाय ।
अब घर आय जा मारा थारी लग रही हो जी ॥3॥
टावर व्है तो पीया राख लू ंजी ढोला ।
जोबन राख्यो, जोबन राख्यो न जाय,
अब सुध लीजो गोरी रा सायबा हो जी ॥4॥
अंग में नही मावें कांचली जी ,ढोला हिवडे नहीं मावें,
हिवडे नही मावे हार, हार, हो जी ढोला ।
अब घर आय जा गोरी रा बालम ओ जी ॥5॥
आवरा—आवरा कह गयो रे ढोला, कर गयो कवल अनेक
कर गयो कवल अनेक ।
अब घर आय जा बरसा रुत भली हो जी ॥6॥

प्रकृति सम्बन्धी दूसरे लोक गीतों मे वे गीत हैं, जिनमे वृक्षों, पौधो, लताओं और पशु-पक्षियों को प्रतीक बना कर हृदय की कोमल भावनाओं की अभिव्यक्ति की गई है। "पीदीनों" "पीपली" "मेंहदी" और "कुरजां" ऐसे ही सुप्रसिद्ध गीत हैं। "कुरजां" की समानता तो एक माने में कालिदास के "मेघदूत" के बादल से की जा सकती है, क्योंकि दोनो को ही सन्देश-वाहन का दायित्व सौंपा गया है। अन्तर केवल इतना है कि "मेघदूत" का बादल प्रेमी के सन्देश का वाहक है, जब कि कुरजां प्रेमिका के सन्देश की वाहिका। "कुरजां" और "पीपली" नामक गीत हिन्दी रूपान्तर सहित यहां प्रस्तुत हैं।

कुर्जां

तू छै ये कुर्जा भायली, तू छै धरम की भैरा,
एक संदेशो ये बाई म्हारो ले उडो, ये म्हारो राज ।
कुर्जां म्हारा पीव मिला दे ये ।
बी लसकरिये नैं जाय कहिये क्यूं परणी थे मोय ?
परण पिराछित क्यूं लियो ये जी रह्या क्यूं न अखन कुंवार ।
कुंवारी ने वर तो घणां छा जी ।
ऊठी कुर्जां ढलती माझल रात,
दिनड़ो उगायो भाऊजी रा देश में जी म्हाका राज ।
बैठ्या पना मारू तखत बिछाय,
कागद राल्या भंवरजी की गोद में जी म्हांका राज ।
आवो ये कुर्जां बैठो म्हारे पास,

कुर्जांजी री भेजी भठै भाई, जी म्हांका राज ।
थारी घण की भेजी भठै भाई, जी,
थारी घण का कागद साथ-भंवर थे बांच लेवो म्हांका राज ।
भन्न बिना रयो ये न जाय ।
दूध दलां का थारी घण खण लिया जी म्हांका राज ।
बिंदली तो सरब सुहाग,
काजल टीकी की थारी घण खण लियो जी म्हांका राज ।
मोया बिना रह्यो ये न जाय,
हिंगलू ढोल्या को थारी घण खण लियो जी म्हांका राज ।
चुनडी को सरब सुहाग,
गोटा मिसरू को थारी घण खण लियो जी म्हांका राज ।
भाज उणमणा हो रया जी, रह्यो के संदेशों माय,
के चित भायो थारो देसड़ो जी के चित भाया माई बाप,
भायेला दिलगीरी क्यूं लायाजी ।
ना चित भायो म्हारो देसड़ो जी ना चित्त भाया माई बाप,
भायेला म्हाने गोरी चित्त भाई जी ।
भो ल्यो साथीड़ो थारो साथ,
भो ल्यो राजाजी थारी नोकरी जी ।
भायेला म्हें तो देश सिधारस्यां जी ।
झटसी घुड़ला कस लिया जी, करली घोड़े पर जीन,
करवा म्हाने वेग पगाद्यो जी ।
दांतला करो कुवा बावड़ी जी, मल-मल करो भसनान ।
मवर थाने वेग पुगाद्यां जी ।

कुर्जां एक छोटी चिड़िया होती है । एक विरहणी उससे कहती है—हे कुर्जां, तू मेरी प्यारी सखी है । तू मेरी धर्म की बहन है । हे बहन ! मेरा यह सन्देशा लेकर उडो भौर मेरे प्रियतम को मुझसे मिला दो ।

उस लश्करिये को जाकर कहना कि तुमने मुझे क्यों ब्याहा था ? तुम क्वांरे क्यों न रह गए ? मुझ क्वांरी के लिए तो बहुत से घर मिल जाते ।

भाधी रात ढलने पर कुर्जां उड़ी । दिन उगते-उगते वह प्रियतम के देश में पहुंच गई ।

पति तख्त बिछा कर बैठा था । कुर्जां ने पति की गोद में स्त्री का पत्र गिरा दिया । पति ने कहा—कुर्जां ! भाभो मेरे पास बैठो । किसकी भेजी हुई तुम यहां भाई हो ? कुर्जां ने कहा—तुम्हारी स्त्री ने मुझे यहां भेजा है । उसकी चिट्ठी साथ लाई हूं । उसे बांच लो ।

तुम्हारी स्त्री का यह हाल है कि जीने के लिए बेचारी को अन्न तो लेना ही पड़ता है। पर उसने दूध-दही न लेने की प्रतिज्ञा कर ली है। सुहाग-चिन्ह बिन्दी को रहने दिया है, पर काजल और टीकी न लगाने का उसने प्रण कर लिया है। सोये बिना कैसे रहा जा सकता है ? पर उसने पलंग पर न सोने का प्रण कर लिया है। सुहाग-चिन्ह चुनरी तो कैसे छोड़ी जा सकती है ? पर गोटे किनारी के रेशमी वस्त्रों के न पहनने का उसने प्रण कर लिया है।

कुर्जां की जुबानी अपनी प्यारी का संदेशा सुन कर पति उदास हुआ है। उसके साथी पूछते हैं—आज अनमने से क्यों दिखाई पड़ते हो ? क्या बात है ? क्या कहीं से कोई संदेशा आया है ? या देश की याद आई है ? या मां-बाप की सुध आई है ? मित्र ! चित पर उदासी क्यों झलक रही है ?

पति कहता है—हे मित्र ! न मुझे देश याद आ रहा है और न मां-बाप की सुध आ रही है। मुझे मेरी प्यारी स्त्री याद आ रही है।

लो साथियों ! तुम्हारा साथ छोड़ता हूं। लो, राजाजी, आपकी नौकरी छोड़ता हूं। मैं तो अपने देश जा रहा हूं।

झटपट घोड़ा कस कर उस पर जीन रख ली और उसने घोड़े से कहा—हे घोड़े ! मुझे जल्दी पहुंचा दो। घोड़े ने कहा—हे स्वामी ! कुंए पर दातुन करो, बावड़ी में खूब मल-मल कर नहा लो, मैं जल्दी ही पहुंचा दूंगा।

पीपली

बाय चल्या छा भंवरजी पीपली जी,
हां जी ढोला हो गई घेर घुमेर।
बैठण की रुत चाल्या चाकरी जी,
ओ जी म्हांरी सास सपूती रा पूत
मत ना सिधारो पूरब की चाकरी जी ॥1॥
ब्याय चल्या छा भंवर जी गोरड़ी जी,
हां जी ढोला हो गई जोध जुवान।
बिलसण की रुत चाल्या चाकरी जी,
ओ जी म्हारी लाल नणद रा ओ बीर
मत ना सिधारो पूरब की चाकरी जी ॥2॥
कुंए थारा घुड़ला भंवरी जी कस दिया जी,
हां जी ढोला कुंए थाने कस दिया जीण।
कुणरा जी रा हुकमा चाल्या चाकरी जी,
ओ जी म्हारे हीवड़े रा जीवड़ा
मत ना सिधारो पूरब री चाकरी जी ॥3॥

बड़े वीरे घुड़ला गोरी ! कम दिया जो ।
हां एक गौरी ! साथीड़ा कस दिया जोए ।
बापाजी रा हुकमा चाल्या चाकरी जी ॥4॥
रोक रुपंयो भंवरजी मैं बए जी
हां जी ढोला ! बए ज्याऊं पीली पीली-म्होर ।
भीड़ पड़ै जद भंवर जी ! बरत ल्यां जी ।
ओ जी म्हारी सेजां रा सिएगार !
पियाजी ! प्यारी ने सागै ले चालो ॥5॥
कदै न ल्याया भंवर जी ! सीरणी जी ।
हां जी ढोला ! कदे न करी मनुवार ।
कदै न पूछी मनड़े री बारता जी ।
ओ जी म्हारी लाल नएद रा बीर ।
थां बिन गौरी नै पलक न आवड़े जी ॥6॥
कदै न ल्याया भंवरजी ! सूतली जी ।
हा जी ढोला ! कदे बी बुएी नहीं खाट ।
कदे न सूत्या रलमिल सेज मै जी ।
ओ जी पियाजी ! अब घर आओ ।
थारी प्यारी उडीके महल मै जी ॥7॥
थारै रै बाबाजी ने चाए भंवर जी ! घन चएो जी
हां जी ढोला । कपड़े री लोभए माय ।
सैजां री लोभए उडीके गोरड़ी जी ।
थांरी गोरी उडावे काग ।
अब घर आओ जी कै धाई थारी नौकरी जी ॥8॥
अब के तो ल्यावां गोरी ! सीरणी ए ।
हां ए गौरी । अब करस्यां मनुवार ।
घर आय पूछां मनड़े री बारता जी ॥9॥
अब के ल्यावां गोरी सूतली जी ।
हां ए गौरी ! आय बुएांगा खाट ।
पछै सौस्यां रलमिल थारी सेज में जी ॥10॥
चरखौ तो ले ल्यूं मवरजी रांगलो जी ।
हां जी ढोला । पाड़ो लाल गुलाल ।
तकवो तो ले ल्यूं जी भंवरजी । बीजलसार को जी ।
ओ जी म्हारी जोड़ी रा भरतार !
पूएी मंगाल्यू जी क बीकानेर की जी ॥11॥

हे पति ! गांव उजड़ कर फिर बस जाता है। निर्धन को धन भी मिल जाता है। पर गया हुआ यौवन फिर नहीं लौटता। हे मेरे प्राणाधार! मैं तुम्हें बार-बार लिखती हूं। जल्दी आओ। तुम्हारी प्यारी अकेली है ॥ 15 ॥

हे पति ! यौवन सदा स्थिर नहीं रहता। यह तो बादल की छाया के समान है। समय पर बोया हुआ मोती उपजता है। हे पति मैं तुम्हारी बाट जोह रही हूं, जल्दी घर पधारो ॥ 16 ॥

उक्त गीतों के अतिरिक्त सूरज, चांद और सितारों से सम्बन्धित भी अनेक गीत हैं, जिनका भावात्मक सौन्दर्य देखते ही बनता है।

परिवार सम्बन्धी लोक-गीत

समाज शास्त्रीय अध्ययन की दृष्टि से राजस्थान के परिवार सम्बन्धी लोक-गीतों का बड़ा महत्त्व है। ये लोक-गीत यहां के पारिवारिक जीवन के साथ-साथ यहां के रीति-रिवाज और सामाजिक प्रथाओं पर पर्याप्त प्रकाश डालते हैं। परिवार सम्बन्धी लोक-गीतो मे भाई-बहन के सम्बन्ध, कन्या की बिदाई, पति-पत्नी के रसात्मक सम्बन्ध, ननद-भोजाई का झगड़ा, सास का दुर्व्यवहार आदि सभी पक्षों का प्रभावशाली चित्रण उपलब्ध होता है। जन्म और परिणय सम्बन्धी जो लोक-गीत प्राप्य हैं, इनमें प्रचलित परम्पराओं और प्रथाओं का विशद् विवरण प्रस्तुत किया गया है। अकेले विवाह सम्बन्धी लोक-गीतों की संख्या ही दर्जनों में होगी। बना-बनी के गीत, फेरों के गीत, बिदाई के गीत आदि अनेक गीत विवाह से सम्बन्धित है। यहां हम एक ऐसा बहुप्रचलित गीत उदाहरण के लिए दे रहे हैं, जिसमें पारिवारिक सुख समृद्धि के लोकादर्श का दिग्दर्शन कराया गया है।

आंबो मोरियो

मधुबन रो ए आंबो मोरियो, ओ तो पसर्‌यो ए सारी मारवाड़।
सहेल्यां ए आंबो मोरियो ॥1॥

बहू रिमझिम महलां से उतरी, कर सोला सिणगार।
सासूजी पूछ्‌या ए बहू थारे गैणो ए म्हानै पैरि दिखाव ॥
सहेल्यां ए. ॥2॥

सासू गहणा नैं के पूछो, गहणा ओ म्हारो सो परिवार।
म्हारा सुसरो गढ़ का राजवी सासूजी म्हारी रतन भण्डार ॥
सहेल्यां ए. ॥3॥

म्हारो जेठजी बाजूबन्द बांकड़ा, जिठाणी म्हारी बाजूबन्द की लूंब।
म्हारो देवर चुड़लो दांत को, देवराणी म्हारी चुडला की मजीठ ॥
सहेल्यां ए. ॥4॥

म्हारा कंवरजी घर रो चांदणो, कुल बहू ए दिवले री जोत।
म्हारी धीयज हाथ री मूंदड़ी, जंवाई म्हारे चमेल्यां रो फूल ॥

सहेल्यां ए. ॥5॥

म्हारी नणद कसूंमल कांचली, नणदोई म्हारो गज मोत्यां रो हार।
म्हारा सायब सिर को सेवरो, सायबाणी म्हे तो सेजांरा सिणगार ॥

सहेल्यां ए. ॥6॥

म्हे तो वार्‌याजी बहूजी थारे बोल नै, लड़ायो म्हारो सो परिवार।
म्हे तो वार्‌याजी सासूजी थारी कूख नै, थे जो जाया अर्जुन भीम ॥

सहेल्यां ए. ॥7॥

म्हे तो वार्‌याजी बाईजी थारी गोद नै थे खिलाया लिछमण राम।

सहेल्यां ए आवो मोरियो ॥8॥

मधुवन में आम बौरा है। अहा! यह तो सारे मारवाड़ में फैल गया है। हे सखियो! आम में बौर आया है ॥1॥

बहू सोलह शृंगार करके छम-छम करती हुई महल से उतरी। सास ने पूछा—हे बहू! तुम्हारे पास क्या-क्या गहने हैं? पहन कर मुझे दिखाओ ॥2॥

बहू ने कहा—हे सासजी! मेरे गहनों की बात क्या पूछती हो? मेरा गहना तो सारा परिवार है। मेरे ससुरजी घर के राजा हैं और सासूजी रत्नों की भण्डार हैं ॥3॥

मेरा पुत्र घर का चांद है और मेरी पुत्र-वधू दिये की जोत।
मेरी कन्या हाथ की अंगूठी है और मेरा जामाता चमेली का फूल है ॥4॥

मेरी ननद कुसुम्भी चोली है और ननदोई गजमुक्ताओं का हार। मेरे स्वामी सिर के मुकुट और मैं उनकी सेज का शृंगार हूं ॥5॥

यह सुन कर सास ने कहा-बहू मैं तो तुम्हारे बोल पर न्यौछावर हूं। तूने मेरे सारे परिवार को सुखी किया। बहू ने कहा—सासजी, मैं तो तुम्हारी कोख पर न्यौछावर हूं। तुमने तो अर्जुन और भीम जैसे प्रतापी पुत्र पैदा किये हैं।

और हे ननद! मैं तुम्हारी गोद पर न्यौछावर हूं। तुमने तो राम-लक्ष्मण जैसे भाइयों को गोद में खिलाया है ॥8॥

त्यौहार और पर्वों के लोक-गीत

राजस्थानी संस्कृति को यदि त्यौहार बहुला कहा जाय, तो कोई अत्युक्ति न होगी। दीपावली, दशहरा, रक्षा बन्धन और होली के त्यौहार तो सभी प्रदेशों में मनाये जाते हैं। किन्तु इन त्यौहारों के अतिरिक्त भी यहां ऐसे अनेकों पर्व और त्यौहार हैं जिनकी अपनी स्थानीय विशिष्टतायें हैं। गणगौर और तीज ये दो इसी कोटि के प्रमुख त्यौहार हैं, जो अपनी रंगीनी के लिए भारत भर में सुप्रसिद्ध हैं। उदाहरण के लिए दो गीत यहां प्रस्तुत हैं।

गणगौर का गीत

खेलण दो गिणगौर, भंवर म्हांनै खेलण द्यो गिणगौर
हे जी म्हारी सइयां जोवै बाट, भंवर म्हाने खेलण द्यो गिणगौर।

मार्य ने मैमद लाव, भंवर म्हारे माथा ने मैमद लाव
हीजी म्हारी रखड़ी रतन जड़ाय, भंवर म्हानें खेलणद्यो गिणगोर।

तीज का गीत

ए मां, चम्पा बाग में हींडो घला दे, तीज नैवली आई
ए मां, और सहेल्यां रै घर रो हीडो, म्हारै हीडो नाही
ए मां, हीडे हीडण हूं गई कोइ यन हींडे हिडाई
सेडा सहेल्यां म्हासूं मुख मोड़ियो, बिनां हींडिया ई आई ।
ए मां चम्पा बाग में हींडो घला दे, तीज नेवली आई ।

धार्मिक गीत

धर्म और भक्ति की भाव-धारा राजस्थान के लोक-जीवन में स्वच्छन्द रूप से वही । एक ओर यहां हिन्दुओं के सहस्त्रों देवी-देवताओं के मन्दिर और मण्डप दृष्टिगोचर होते हैं, तो दूसरी ओर मुसलमानों की मस्जिदें, सिक्खो के गुरुद्वारे, ईसाइयों के गिर्जाघर और जैनियो के तीर्थङ्करों की प्रतिमाओं से सुसज्जित देवालय यहां के शासकों की धार्मिक उदारता का उद्‌घोष करते हैं । यही कारण है कि यहां के लोक-गीतो में भक्ति-भावना की बड़ी सरल-तरल अभिव्यक्ति हुई है । इस प्रकार के लोक-गीतों में देवी-देवताओं के गीत प्रमुख हैं, जिनमें बालाजी, भैरोजी, गणेशजी, दुर्गा, शीतला माता तथा उन लोक-प्रतिष्ठापित वीरों के गीत हैं, जिनके महान् कार्यों के लिये जनता ने उन्हें देवतुल्य स्वीकार कर लिया । डूंगजी जवाहरजी, तेजाजी, रामदेवजी, पाबूजी राठौड़ आदि के गीत इसी कोटि मे रखे जा सकते हैं । इन धार्मिक गीतों में जहा सम्बन्धित देवता का प्रशस्ति-गान किया गया है, वहां उनसे तरह-तरह की अपनी हार्दिक कामनाओं को पूरा करने का भी अनुरोध किया गया है । कार्तिक मास मे गाये जाने "हरजस" (धार्मिक गीत) तो भक्ति सम्बन्धी लोक-काव्य के सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण अंग है । इन गीतों मे अक्सर राधा और कृष्ण को आधार बना कर आध्यात्मिक भावनाओं का चित्रण किया गया है । "हरजस" का एक उदाहरण यहां अप्रासंगिक न होगा—

हरजस

ए राधा ! भज लेनी राम, राम भजिया काया सूधरे, हरि राम ।
ओ रामजी, राम मोसू भजियो रै नही जाय, जिवड़ो धन में झिल रहियो
ओ हरि राम ।
ए राधा मत कर धन रो गुमैज धन धरती मे रेह जाई ॥1॥
ए राधा ! भज लेनी भगवान, राम सिवरियां काया सूधरै, हरि राम ।
ओ प्रभू मोसूं राम भजियो रे नही जाय जिवड़ो पूतरल में झिल रहियो
ओ हरि राम ।

एक राधा मत कर पूता रो गुमेज, पूत पड़ौसी ह्वै जाई।
आडी घालेला भीत, मूंडे बोलण री हुवेला सावली ॥2॥

ए राधा! भज लेनी राम राम भजियां काया सूधरे हरि राम।
ओ रामजी मोसूं राम भजियो रै नहीं जाय, जिवड़लो धीवड़ली में
झिल रहियो हरि राम।

ए राधा! मत कर धीवड़ली रो गुमेज, धीवड़ जंवाई-राणा ले जाई।
आडी देला सीख मुखड़ो देखण ही हवैला सावली ॥3॥

एक राधा! भज लेनी राम, राम भजियां काया सूधरे ओ हरि राम।
ओ रामजी मोसूं राम भजियो रै नहीं जाय, जिवड़ो जोबनिया में झिल
रहियो हरि राम।

ए राधा! मत कर जोबनिया रो गुमेज, अन्त बुढ़ापो आवसी ॥4॥

भगवान कृष्ण राधा से कहते हैं कि ए राधा! परमात्मा का स्मरण कर। इससे तुम्हारा उद्धार हो जायेगा। राधा उत्तर में निवेदन करती है—भगवन् मेरे से भगवन् भक्ति नहीं होती, क्योंकि मेरा जी माया में फंसा हुआ है। इस पर भगवान कृष्ण फिर राधा से कहते हैं कि राधा माया का तुझे व्यर्थ गर्व है। यह तो धरती (पृथ्वी) में रह जायेगी। इसलिये यही उपयुक्त है कि भगवान की उपासना की जाय। किन्तु राधा कहती है—मेरा जी पुत्रों के स्नेह में लिप्त है, मुझसे कभी परमात्मा का भजन नहीं होगा। भगवान कहते हैं—राधा पुत्रों का तू क्या घमण्ड करती है, वे एक दिन तुझसे पृथक होकर आड़ी भीत खड़ी कर देंगे और उनसे बोलने के लिये भी तू लालायित रहेगी अर्थात् तरसेगी। पुत्री को दामाद (जंवाई राणा) ले जावेंगे और उसका मुंह भी बड़ी कठिनाई से कभी-कभी देख सकेगी। यौवनावस्था अस्थिर है। अन्त में वृद्धावस्था आकर तुझे घेर लेगी और फिर कुछ न हो सकेगा।

विविध विषयक लोक-गीत

उपरोक्त चारों श्रेणियों में जिन गीतों की गणना की गई उनके अतिरिक्त कुछ पृथक-पृथक विषयों पर भी इक्के-दुक्के गीत विरल संख्या में उपलब्ध होते हैं। इन्हें हम विविध विषयक लोक गीतों की संज्ञा दे सकते हैं। कुछ गीत ऐसे हैं, जिनमें कतिपय प्रसिद्ध ऐतिहासिक घटनाओं को पद्यबद्ध किया गया है और कुछ गीत ऐसे हैं जो किसी वस्तु विशेष पर लिखे गये हैं—"रतन-राणा", "घुड़लो", "अमरसिंह-राठौड़" और "गोरबन्द" इत्यादि ऐसे गीतों मे प्रमुख हैं। इसके अतिरिक्त कुछ शकुन सम्बन्धी और अन्य विश्वासों सम्बन्धी गीत भी हैं। बच्चों के लोक-गीत भी विरल संख्या में उपलब्ध होते हैं। ये एक प्रकार की "नर्सरी रहाइम्स" ही हैं जिनमें तुकों के मिलने और सरल शब्दों की संयोजना को ध्यान में रखा गया है। बच्चों के गीत का एक उदाहरण यह दिया जा सकता है—

मेंह बाबा आजा

मेंह बाबा आजा।
घी नै रोटी खाजा॥
आयो बाबो परदेसी।
अबै जमानो कर देसी॥
ठांकणी में ढोकलो।
मेंह बाबो मोकलो॥

लोक-गीतों की गायन पद्धति

लोक-गीतों का महत्त्व केवल इनके भावनात्मक सौन्दर्य में ही निहित है ऐसा नहीं है। उनकी वास्तविक महत्ता तो उनके संगीतात्मक सौन्दर्य में है। प्रत्ये लोक-गीत को गाने की अपनी विशिष्ट गायन पद्धति होती है और जब यह उ पद्धति से न गाया जाय तब तक उससे पूर्ण रस-निष्पत्ति नही हो सकती। किसी भ लोक-गीत की पूर्ण भावाभिव्यंजना करने के लिए और श्रोता के साथ उसका साथ रणीकरण करने के लिए यह परमावश्यक है कि उसका संगीतात्मक प्रस्तुतीकरण किया जाय। राजस्थान के लोक गीतों में जिन रागों का प्रयोग मुख्य रूप से कि जाता है, उनमें काफी, बिलावल, खमाच, पीलू इत्यादि रागों का प्राधान्य है। "माड तो राजस्थान के लोक-संगीत की ऐसी विशिष्ट और सुप्रसिद्ध गायन प्रणाली है शनैः-शनैः शास्त्रीय राग का स्वरूप ही ग्रहण कर रही है। यह गायन प्रणाली इतनी अधिक लोकप्रिय हुई है कि राजस्थान से बाहर के प्रदेशो में भी यहां के लोक गायकों को आमन्त्रित किया जाता है।

पवाड़े

पवाडे वीर काव्य हैं। राजस्थानी में अनेक पवाड़े लोक-गीतो के रूप में सुरक्षित है। यहां हम दो पवाड़ो की चर्चा करेंगे जो अत्यन्त प्रसिद्ध हैं। इनमे से एक है पाबूजी का पवाड़ा और दूसरा है निहालदे।

पाबूजी।

पाबूजी राठौड़ थे और वीरत्व से पूर्ण इनका हृदय था। शरणागत की रक्षा करना ये अपना परम कर्त्तव्य मानते थे। अपने अलौकिक एवं देवतुल्य गुणों के कारण ही जनता की भावनाओं मे आज भी पाबूजी का रंग है। पाबूजी के पवाड़ों की संख्या लम्बी है।

पवाड़े का प्रारम्भ इस प्रकार होता है कि अमरकोट की सोढ़ी राजकुमारी के महल के नीचे से पाबूजी गुजरे। घोड़ो की घमासान मच गई। राजकुमारी री थाल के मोती धरती कांपने से हिलने लगे। चित्रण देखिए—

चमक्यो चमक्यो सहेल्यां रो साथ
कोई भावज्यां रो चमक्यो जाभो झूमको,

हारीड ली चुड़लां केरी मूल
कोई बाजूबन्द रा हाल्या पोया भूमका
खुलगी खुलगी नकवेसर री गूंज
कोई चूनड़ तो सालूड़ा भीणी सल भर्यो
हाली हाली मोत्यां बिचलो लाल
कोई काना केरा हाल्या बाली भूटणा
हाल्या हाल्या छाती परला हार
कोई पायलड़ो तो खुड़की बिछिया बाजिया।

सहेलियां बाहर झांक कर कहती हैं—अरे यह तो शूरवीर पाबूजी हैं। वे आगे कहती हैं—

देखोजी बाईजी ! पाबूजी राठौड़
कोई धरती तो राचैं बांरी चाल सूं
पाबूजी सरीखा होगा बिरला जुग में भूप
कोई जसड़े पाबूजी जुग में ऊजला।
पाबूजी बाईसा लिछमा रो अवतार
कोई राठौड़ी धरती मे मुड़के आविया
थारै ओ बाईजी ! भाई भतीजा मौत
कोई पाबूजी सरीखो जिणमे को नहीं
थारे ओ बाईजी राव घणा उमराव
कोई पाबूजी रे उंणियारै कुल में को नहीं।
देखो म्हे बाईजी थारी सगली फौज
कोई फौजां में पाबूरै जोड़ को नहीं
एकर बाईसां छाजें ओ चढ़ देख
कोई किसौ अब पाबूजी री सूरत मनोकरी ॥

इसके पश्चात् सहेलियां सोढ़ी राजकुमारी और पाबूजी की तुलना करती हैं।

पाबूजी और सोढ़ी राजकुमारी का विवाह निश्चित हो गया। पुरोहित पांच मोहरें और एक सोने का नारियल लेकर कोमलगढ़ पहुंचा। वहां पनघट पर पहुंच कर पनिहारियों से पाबूजी का ठिकाना पूछा। पनिहारियों ने कहा—

अगूणी कहीजें ओ जोसी पाबूजी री पोल
कोई केल तो भबरखें रै वां पाबूजी री पोल।
घोला तो कहीजें रै वां पाबूजी का म्हेल
कोई लाल तो किवाड़ी रे के पोल मंवर के पालिया

पोल्यां रै कहीजै रै यां चन्नण का किवाड़
कोइ आमा सामा कहिये पावूजी रा गोखड़ा ।

विवाह की तैयारी हुई । बरात के रवाना होने का समय समीप आया। पावूजी की सवारी के लिए देवल चारणी की कालमी घोड़ी, जिसकी नामवरी चारों ओर फैली हुई थी, मांगी गई । देवल देवी इस शर्त पर घोड़ी देती है कि उनकी गायों की रक्षा का भार पावूजी पर होगा । पावूजी ने कहा-किसी भी तरह होगा तुम्हारी गायों की रक्षा करूंगा । वे घोड़ी पर चढकर मण्डप मे जाते हैं । मंगल गीत गाये जा रहे थे । फेरे होने लगे । इतने मे घोड़ी हिनहिनाने लगी, पैर पटकने लगी और देवल की आवाज सुनाई दी कि "जायल खींची ने मेरी गायों को घेर लिया है।" इतना सुनते ही पावूजी ने हथलेवा छुड़ा लिया और जाने लगे । सोढ़ी जी ने पावूजी का पल्ला पकड़ कर पूछा—

कोई तो गुन्नो ओ पावू करियो म्हारो बाप,
कोई कांई तो गुन्नो ओ पावू करियो माता जलम की,
कोई तो गुन्नो करियो ओ पावू म्हारे परवार,
कोई तो गुन्नो ओ पावू म्हारे थें ओलख्यो ।।

पावूजी का उत्तर है—

वचन आप मरदां कै सोढ़ी कही जै एक ।
कोई धरम तो कही जै सोढ़ी जी फेरां आगलो ।।
वचनां का बाध्या जी सोढ़ी धरती अर असमान ।
वचनां का बांध्योड़ा जी सोढी पवन पांणी आगला ।
कोई वचनां हूं बडेरा जी सोढी जी जुग मे को नहीं ।
वचनां का बांध्या जी सोढ़ी धरती अर असमान ।

सोढी जी ने कहा कि आप अवश्य गायों की रक्षा कीजिये । पावूजी जाते जाते कह गये—

जीवांगा तो फेर मिलागा, सोढ़ी थां सूं आय ।
कोई मर ज्यावां तो ल्या देगो, ओठी म्हारा महमद मोलिया ।

शूरवीर पावूजी और उनके नायक वीरों ने खींची जिनराज को जा घेरा। घमासान युद्ध हुआ । पावूजी ने गायों को छुड़ा लिया । इनमें से एक बछड़ा नहीं मिला इसलिए पावूजी को पुनः खींची पर चढ़ाई करनी पड़ी । इस युद्ध में शूरवीर पावूजी, सातों नायक वीर और उनके कई सम्बन्धी काम आये । युद्ध के समाचार और पावूजी के शिरोभूषण लेकर सवार उमरकोट पहुंचा।

सोढ़ी जी अपनी सहेलियों के बीच उदास बैठी हुई थी उनके हाथों मे कारण डोरड़ा बंधा था । वह विवाह का वेश पहने हुई थी और उसके हाथ-पैरों में सुरंगी मेंहदी रची हुई थी । सवार सोढ़ी जी के सामने कुछ बोल नहीं सका । उसने

जाकर पाबूजी के शिरोभूषण और कांगण डोरड़े सोढ़ी जी के सामने रख दिये। सोढ़ी जी की स्थिति का चित्रण अब देखिए—

> नैणा तो देखी छै जद बा पाल भंवर की पाग।
> कोई किलंगी तो पिछाणी छै बा मुरजाले के सीस की।
> माथा कै लगा दी छै सायब की किलंगी पाग।
> कोई छाती के लगायां छै पाबू का कांगण डोरडा।
> छाती जो फाटी छै जी उजल्यो छै दिल दरियाव।
> कोई खाय तो तिंवाली धरती पर सोढ़ी छै पडी।

एक पहर के प्रयत्न के बाद जब सोढ़ी राजकुमारी की मूर्च्छा दूर हुई तो वह न के कायर मोर की तरह रोने लगी। रोते-रोते हिचकियां बंध गई और आंखों से ावन-भादों की झड़ी बरसने लगी। फिर उठ कर वह अपने माता-पिता, भाई और हेलियो के पास पहुंची। हाथ पसार कर मां से बिदाई का नारियल लिया। फिर पेता, भाई, भौजाई और सहेलियों से विदा ली। सोढ़ी राजकुमारी बोली—आप नोगों ने मुझे इतने प्यार से बड़ा किया और अब मैं ऐसे घर में जा रही हूं जहां से मैं नहीं लौटूंगी। तीज-त्यौहार आवेंगे, सभी सम्बन्धी मिलेंगे, किन्तु यह लाड़ली बेटी फिर नहीं मिलेगी।

सोढ़ी राजकुमारी रथ मे बैठ कर अपनी ससुराल पहुंची। प्रियतम के बाग-बगीचों को, महल-मालियों को, मेड़ी-ओवरों को और झाड़-झरोखों को आंसू भरी आंखों से पहली और अन्तिम बार देखा। प्रियतम के साज-सामान और वस्त्राभूषण देखे और फिर ससुराल वालो से कहा कि हम ऐसी घड़ी में मिले हैं कि सदा के लिए अलग होना पडा रहा है।

फिर रानी सोढी जी अपने हाथो से सूरजपोल के तेल सिन्दूर को छापा लगा कर अपने प्रियतम पाबूजी से मिलने के लिए रवाना हो गई। धरती पर जिनका मिलन न हो सका उनकी आत्माएं स्वर्ग मे परस्पर गुंथ गई।

दूसरा पवाड़ा है निहालदे सुल्तान का। "निहालदे" नामक पवाड़ा राजस्थान मे बहुत प्रसिद्ध है। यह कथा गीत एक विशाल पवाड़े के रूप में मुख्यतः शेखावाटी मे बड़े चाव से गाया और सुना जाता है। निहालदे के गाने वाले मुख्यतः जोगी हैं। इस पवाड़े मे 53 खंड हैं और इससे बड़ा पवाड़ा संभवतः राजस्थानी भाषा को छोड़ कर अन्य किसी भाषा में नहीं है।

निहालदे इन्द्रगढ़ के राजा मगपारि की राजकुमारी थी। निहालदे विवाह योग्य हुई तो राजा ने स्वयंवर के निमन्त्रण चारों ओर के राजकुमारों को भेजे। स्वयंवर के लिए वसन्त पंचमी की तिथि निश्चित की गई। चारों ओर के सैकड़ों ही राजा अपने राजकुमारों सहित एकत्रित हुए।

राजकुमारी निहालदे की ओर से घोषणा की गई कि जो राजकुमार ऊपर बंधी हुई मछली की परछाई को नीचे तेल में देखते हुए तीर से मछली को बेंध देगा वही वरमाला का अधिकारी होगा।

इसी अवसर पर कचीलगढ़ का राजा भी अपने राजकुमार फूल कुंवर और पाहुने सुलतान के साथ पहुंचा। सुलतान ईडर का राजकुमार था और प्रसिद्ध चक्रवेण के वंशज मेनपाल का पुत्र। एक बार सुलतान बाग में तीर से निशाना साध रहा था। अचानक ही तीर एक ब्राह्मण-कन्या के पानी से भरे कलश के जा लगा, जिससे कलश फूट गया और कन्या के कपड़े पानी से भीग गये।

इस घटना से ब्राह्मण ने उग्ररूप धारण किया और राजा के दरबार में पहुंच कर राजकुमार सुलतान की शिकायत कर दी। राजा ने सोचा—सुलतान बचपन में ही प्रजा को सताने लगा है तो बड़ा होने पर तो प्रजा का जीवन ही दूभर कर देगा। राजा ने कुंवर को बारह वर्ष का देश निकाला दे दिया।

राजकुमार सुलतान दूसरे देशों में घूमता हुआ भीख मांगने लगा। समय के फेर कि एक राजकुमार को घर-घर का भिखारी होना पड़ा। इस प्रसंग में 'निहाल सुलतान' में गाया जाता है—

> समै भी चिणवा दे रे भाई कूवा बावड़ी,
> समै मंगा दे घर–घर भीख,
> समै बली है रे मोटो, नर को कंवली जी,
> समै भी हिंडा दे रे एक छन माँ के पालणें।
> समै भी बंधा दे सिर के मोड़,
> समै भी चढ़ा दे चार जणा के घोड़ले,
> ईडर की नगरी में यो धनी एक पल ओपती,
> करता गादीपत राज जुहार।
> पिरजा भी लेती बा राजकुमार का बारण,
> खर-घर डोले रे यो एक पल फलसा झांकतो।।

भीख मांगते हुए सुलतान कचीलगढ़ जा निकला। राजमार्ग से कमधजराव की सवारी जा रही थी। इतने में एक बैल ने सुलतान के टक्कर मारी, तो सुलतान औंधे मुंह जा गिरा सुलतान की झोली में से दाने बिखर गये और वह पुनः उन्हें बीनने लगा। राजा घोड़े से उतर कर सुलतान के पास पहुंचा और कहने लगा, "दीखते तो राजकुमार जैसे हो, फिर यह वेष क्यों धारण कर रखा है ?"

सुलतान राजा की बात सुन कर रोने लगा। तब राजा ने सुलतान को अपने महल में ठहरा दिया। रानी ने उसके बड़े-बड़े बाल कटवा दिये और अच्छे कपड़े पहिना कर उसका पूरा आदर-सत्कार किया, फिर सुलतान भी इन्द्रगढ़ के स्वयंवर में पहुंचा।

स्वयंवर में कोई अन्य राजकुमार मछली वेधने में सफल नहीं हो सका। राजकुमार फूलकुंवर भी असफल रहा। सुलतान ने तुरन्त ही तेल में परछांई देखते हुए मछली वेंध दिया और इन्द्रगढ़ की राजकुमारी निहालदे से विवाह कर लिया।

सुलतान विवाह कर लौटा और जब फूलकुंवर असफल हो गया तो फूलकुंवर की मां को बहुत बुरा लगा। उसने कह ही दिया "तू कल तो भीख मांगता था और आज गढपति की लड़की से विवाह कर आया है।"

यह सुनते ही निहालदे को छोड़ कर सुलतान वहां से जाने लगा। निहालदे ने कहा, "मुझे भी साथ ले लीजिये—जो आपकी गति सो मेरी गति।"

सुलतान ने कहा, "मेरा क्या ठिकाना ? मैं कहीं जाकर ठिकाना कर आऊं। अगली तीज को आकर ले जाऊंगा। रावजी तुम्हे अपनी पुत्री की तरह ही प्रेम से रखेंगे।"

इस घटना के पश्चात् निहाल दे के दिन दुःख में बीतने लगे। यों तो राजा ने अलग बाग मे निहालदे को ठहराया, किन्तु फूलकुंवर उसको कई तरह के लोभ दिखाने लगा। निहालदे को सोते चैन, न जागते चैन। फिर थोड़े ही दिनों मे कामधज राव की मृत्यु हो गई तो निहालदे का जीवन कठिन हो गया।

सुलतान नरवरगढ पहुचा और राजा ढोला के दरबार में लाख टका वेतन पर काम करने लगा। इधर फूलकुंवर ने झूठा समाचार पहुंचा दिया कि निहालदे की मृत्यु हो गई। इस समाचार को सुनकर सुलतान बहुत दुःखी हुआ।

इधर एक नही, कई श्रावणी तीजें निकल गईं तो निहालदे बहुत दुःखी हुई। उसने मारु राणी की तीज पर सुलतान को भेजने का परवाना लिखा और सूचना भेजी कि अगर अगली तीज पर सुलतान न आवेंगे तो वह जल कर प्राण त्याग देगी। फूलकुंवर से छिपा कर किसी प्रकार पत्र पहुंचा दिया गया, किन्तु सुलतान को पहुंचने मे थोडा सा विलम्ब हो गया और निहालदे ने अपने प्राण त्याग दिये।

पाबूजी के अलौकिक चरित्र से प्रभावित होकर राजस्थान की जनता इनकी देवता के रूप में पूजा करती है। पाबूजी के मन्दिर राजस्थान के कई गांवों मे मिलते हैं और पाबूजी का मन्दिर फलौदी से 18 मील दूर "कौलू" गांव में बना हुआ है।

राठौड़ो के मूल पुरुष आसथानजी के पुत्रों में धांधलजी बड़े प्रतापी थे। पाबूजी इन्हीं वीर धाधजी के पुत्र थे। पाबूजी एक दृढ़प्रतिज्ञ, शूरवीर, शरणागत रक्षक और देवतुल्य पुरुष थे। इन्होने आना बाघेला के चांदोजी डामोजी आदि सात वीर थोरी नायकों को आश्रय देकर बड़े ही साहस का कार्य किया और इन नायकों ने भी मरते दम तक पाबूजी का साथ देकर अपने कर्तव्य का पालन किया। इन नायकों के वंशज आज भी पाबूजी री पड अर्थात् चित्रपट प्रदर्शित करते हुए "पाबूजी रा पवाड़ा" गाकर इस वीर-चरित्र का संदेश राजस्थान के घर-घर में पहुंचाते हैं। इन पवाड़ों की संख्या 52 है और इनमें राजस्थानी संस्कृति का सजीव चित्रण हुआ है।

एक समय उमरकोट की सोढ़ा राजकुमारी रंगमहलों में बैठ कर नौसर हार के मोती पिरो रही थी। बायें-दायें भौजाइयों की "बाड" लगी हुई थी और बायें और सात सहेलियां बैठी हुई थीं। इसी समय पाबूजी आना बाघेला को देने के लिए देवड़ा राव के ऊंट लेकर महल के नीचे होकर निकले। घोड़ों की घमासान मच गई और उनकी टापों से धरती कांपने लगी। सौढ़ी राजकुमारी का कोट गुंजायमान हो गया और खिड़कियां तथा दरवाजों के किवाड़ खड़कने लगे। थाल के मोती भी हिलने लगे और यह देख कर निहालदे सुलतान की अन्तिम प्रतीक्षा करते हुए गाय,

उड़ जा रे काग सांझ पड़ी,
चार पहर वाटड़ली जोई, मैड़यां खड़ी रे खड़ी।
रिमझिम बरस नैण दीरघड़ा,
लग ही झड़ी रे झड़ी।
पल पल बीते बरस बरोबर,
बीती जाय रे घड़ी।
उड़जा रे काग सांझ पड़ी॥

वास्तव में राजस्थानी इतिहास में वर्णित त्याग और बलिदान के अनुरूप ही निहालदे का चरित्र सम्बन्धित गीत में प्राप्त होता है। ऐसे उज्जवल चरित्रों से हमें आज भी कर्त्तव्यपरायणता, त्याग और साहस की प्रेरणा प्राप्त होती है।

6
लोकोत्सव

भारत की सांस्कृतिक परम्पराओं के अन्तर्गत जो त्यौहार अथवा लोकोत्सव सार्वदेशिक हैं, वे तो समूचे राजस्थान में उल्लास एवं उमंग के साथ मनाये ही जाते हैं, इसके अतिरिक्त उनके ऐसे त्यौहार भी हैं, जो इस प्रदेश की लोक संस्कृति के परिचायक हैं।

इन त्यौहारों का जन्म यहां की प्राकृतिक एवं सामाजिक परिस्थितियों से हुआ है। रेगिस्तान होने के कारण यहां वर्षा ऋतु का सदैव बड़ा महत्त्व रहा है। वर्षा के आते ही यहां के निवासी आनन्द और मौज मनाने की मनः स्थिति में आ जाते हैं। यही कारण है कि यहां वर्षा ऋतु में अनेक उत्सव और त्यौहारों का आयोजन होता है।

इस सभी लोकोत्सवों का इतिहास संक्षेप में यहां प्रस्तुत है :—

तीज

"तीज त्यौहारां बावड़ी, ले डूबी गणगौर" अर्थात् तीज वापिस त्यौहारों को लेकर आई और गणगौर उनको लेकर डूब गई। राजस्थान में गर्मियों के दिनों में कोई त्यौहार नहीं मनाया जाता। दो-तीन महीने तक मनोरंजन की दृष्टि से सामाजिक जीवन मे नीरसता आ जाती है। तीज आने के साथ ही त्यौहारों की शुरूआत होती है।

तीज के त्यौहार के पहले से ही चौमासा के गीत प्रारम्भ हो जाते हैं। ये चौमासा के गीत मारवाड़, बीकानेर, जैसलमेर और शेखावाटी के शुष्क अंचलों में विशेष गाये जाते हैं। ये इलाके वर्षा का मूल्य ठीक आंक सकते हैं। कुछ अंचलों में तो वर्षा पहले से ही गीत शुरू हो जाते हैं और कुछ इलाकों मे वर्षा के शुरू होते ही गीत प्रारम्भ होते हैं। अपने अपने मौहल्लों मे स्त्रियों के झुंड गीत गाना प्रारम्भ कर देते हैं। गांव-गांव और कस्बों-कस्बों में जब ये गीत गाये जाते हैं तब लोक-जीवन में उल्लास और उत्साह आ जाता है और सरसता उमड़ पड़ती है। कालिदास के यक्ष को जब आषाढ़ में बादल दिखलाई दे गया था तो उसने मेघ के द्वारा संदेश भेजा। बादल देखते ही उसकी विरह व्यथा जाग उठी। बरसात के लिये तरसने वाले प्रदेश तो वर्षा का कैसे उपकार नहीं मानें ?

किसी-किसी इलाके में तीज के त्यौहार की समाप्ति पर बरसात के गीत समाप्त कर दिये जाते हैं और किसी-किसी में समस्त चौमासे (आषाढ़, श्रावण, भादवा, आसोज) में गाये जाते हैं। तीज का त्यौहार मुख्यतः बालिकाओं और नव विवाहिताओं का त्यौहार है। इस त्यौहार के अवसर पर स्त्री समुदाय नये वस्त्र धारण करता है और घरों में पकवान बनते हैं। एक दिन पूर्व बालिकाओं का सिंजारा (शृंगार) किया जाता है। "आज सिंजारो, तड़के तीज, छोरियां ने लेगी गूगा पीर' उक्ति भी बालिकाएं कहती हैं। हाथों पैरों पर मेंहदी मांडी जाती है। विवाहिता बालिकाओं के ससुराल में 'सिंजारा' वस्त्र आदि भेंट-स्वरूप उनके माता-पिता भेजते हैं। तीज के त्यौहार पर लड़की अपने पिता के घर आती है।

इस त्यौहार के दिन किसी सरोवर के पास मेला भरता है। इसमें झूला डाला जाता है। सभी लोग उस पर झूलते हैं। गौरी (पार्वती) की प्रतिमा भी कहीं कहीं निकाली जाती है। तीज को कहीं-कहीं "हरियाली तीज" भी कहते हैं।

सिरोही जिले में तीज की पूजा के अन्तिम दिन विवाहिता बहिनों के भाई अपनी बहिनों को भेंट और पोशाक देते हैं। यदि सगा भाई न हो तो कुटुम्ब-कबीले का भाई यह कार्य सम्पन्न करता है। इसके पीछे एक दर्द पूर्ण कथा है कि अन्तिम पूजा के दिन पुराने जमाने में किसी बहिन का भाई उपहार देने नहीं आया। उसने उसकी बड़ी प्रतीक्षा की। अन्त में वह इस मानसिक वेदना के कारण कि उसके भाई के हृदय में अपनी बहिन के प्रति कोई प्यार नहीं है, जल में गिर पड़ी उसी समय उसका भाई पहुंचा भी किन्तु वह तो तब तक जल-मग्न हो गई थी।

श्रावण शुक्ला तीज को 'छोटी तीज' मनाई जाती है और 'बड़ी तीज' भादों के महीने में। छोटी तीज ही अधिक प्रसिद्ध है और इसी पर प्रायः सभी मेले लगते है। इन मेलों में ऊंटों और घोड़ों की दौड़ होती है जिसका दृश्य दर्शनीय होता है।

होली

होली का त्यौहार भी आदि त्यौहार है। इसके पीछे ऋतु परिवर्तन और रवी फसल की कटाई है। जाड़े की कठिन और कष्टदायक ऋतु के बाद बसंत का आगमन होता है और सर्वत्र सुहावना वातावरण हो जाता है।

होली के त्यौहार से कुछ दिन पूर्व गोबर के बड़कुल्ले बनाये जाते है। उनकी माला तैयार की जाती है। गोबर की ही होली की प्रतिमा बनाई जाती है। एक माला को थोड़ा जलाकर (होली की अग्नि में) निकाल भी लेते है और वह घर में रखी रहती है।

होलिका दहन के दिन होली जलने से कुछ समय पूर्व उस सामग्री का पूजन होता है। उनमें 'होली डांडा' भी रहता है। ढाल और तलवार भी लकड़ी के रहते है। ये उपकरण शौर्य और युद्ध की स्मृति करवाते हैं। गोबर आर्य संस्कृति की याद दिलाता है जिसमें गो और खेती की प्रधानता है।

फाल्गुन शुक्ला पूर्णिमा को होली का त्यौहार मनाया जाता है। राजस्थान के कुछ भागों में छारंडी के दिन अभिवादन करने और मन्दिरों में जाने की प्रथा है। इस दिन सभी लोग नृत्यगायन द्वारा अपना और दूसरों का मनोरंजन करते हैं।

दीपावली

राजस्थान मे दीपावली का त्यौहार बडे उत्साह से मनाया जाता है। 10-15 रोज पहले ही घरों और दुकानों की मरम्मत और सफाई की जाती है। काम में आने वाले औजार, कलम, दवात आदि की सफाई होती है। काली रोशनाई तैयार की जाती है। वही खाते नये डाले जाते हैं और पिछला हिसाब चुकाये जाने का तकाजा किया जाता है।

दीपावली से दो दिन पूर्व त्रयोदशी के दिन घर के बाहर एक दीपक जलाया जाता है। इसे 'जम दीया' (यम दीप) कहते हैं। उसमे एक कौडी भी डालते हैं। इसके पास बैठे रहना पड़ता है। घर के बाहर धूल की ढेरी बनाकर यह जलाया जाता है और हवा से उसे बचाने की पूर्ण चेष्टा की जाती है। दूसरे दिन छोटी दिवाली मनाई जाती है। इसमे 14 दीपक जलाये जाते हैं। कार्तिक कृष्णा अमावस्या का अंधकार दूर करने के लिये बड़ी दिवाली लगभग समस्त हिन्दुस्तान में मनाई जाती है। छोटी दिवाली को तेल की चीजें बनाई जाती है और बडी दिवाली को तेल और घी दोनों की। राजस्थानी पैदावार कैर तथा गुंवार की फली आदि विशेष रूप से तलकर खाई जाती है और शकुन माना जाता है। खरीफ की फसल लगभग कट जाती है। राजस्थान के अधिकांश भागो मे केवल यही एक फसल होती है अतएव लोगों को उत्साह भी रहता है। बड़ी दिवाली को कही 41, कही 51 और कही 101 दीपक जलाये जाते हैं। दीपावली पूजन रात्रि को लगभग 8-9 बजे होता है। पूजन के बाद भोजन होता है। घर का बड़ा-बूढा श्रद्धा और लगन से पूजन करता है। नंगे सिर पूजन नही होता। सभी बारी-बारी से लक्ष्मी जी की प्रतिमा अथवा चित्र को नमस्कार करते हैं। लक्ष्मी जी की छपी हुई या चित्रित तस्वीरें बिकती हैं। रुपये, मोहर आदि उनके सामने रखे जाते हैं।

एक दीपक रात भर लक्ष्मी जी के सामने जलता रहता है। घरो पर दीपक जलाकर रख दिये जाते हैं। पूजन के बाद बाजार में लोग रामरामी (नमस्कार) अपने मित्रों एवं सम्बन्धियों से करते हैं।

गोवर्द्धन पूजन अथवा अन्नकट

दीपावली का दूसरा दिन अर्थात् कार्तिक शुक्ला प्रतिपदा अन्नकूट अथवा गोवर्धन पूजन का दिन होता है। मन्दिरों में अन्नकूट (भोज) तैयार होता है। कुछ घरों में वह मन्दिरों से भेजा जाता है और बदले में उन्हे रुपया, इकन्नी, चवन्नी यथा शक्ति भेंट स्वरूप दे देते हैं। इसी दिन घर के आगे गोबर डाला जाता है। उसकी

पूजा होती है। दूसरे शब्दों में यह गाय की महत्ता बतलाता है। गोवर्धन का मतलब ही है, गोवंश की वृद्धि। केन्द्रीय सरकार पिछले कुछ वर्ष से इसी दिन से गौ संवर्द्धन सप्ताह मना रही है, जो गोपाष्टमी तक चलता है। गोवर्धन के दिन राजस्थान भर में छोटे, बड़ों के चरणों में नये वस्त्र पहन कर पड़ते हैं। इस अवसर पर जाति-पांति कम बरती जाती है। यद्यपि अपनी जाति वाले अत्यन्त निकट वालों के ही घर जाते हैं फिर भी आजकल जाति-पांति का भेद कुछ कम होता जा रहा है। प्रीति सम्मेलन भी इस दिन कहीं-कहीं मनाये जाते हैं। इस दिन विरोध-वैर भुला दिये जाते हैं और सभी जैरामजी की अथवा नमस्कार व नमस्ते करते हैं। जैसा प्रेम का वातावरण इस त्यौहार पर देखा जाता है वैसा और किसी त्यौहार पर नहीं। चरण स्पर्श इस त्यौहार पर ही अधिक होता है। होली पर भी सर्वत्र नहीं होता। अतएव गौ और गोवर तथा समृद्धि तीनों का नाता यह त्यौहार है। स्त्रियां भी अपने सम्बन्धियों के घरों में मिलने-जुलने के लिये जाती हैं।

दीपावली का त्यौहार प्रेम और उल्लास का त्यौहार है। गाने-बजाने होते हैं। रोशनी होती है। गोवर्धन पूजन के दिन कहीं-कहीं बछड़े का पूजन कर स्त्रियां उससे हल जुतवाने का शकुन करती हैं और गीत गाती हैं। बैलों के सींग रंगे जाते हैं और रंगों के छापे उनके बदन पर दिये जाते हैं। भरतपुर, अलवर उदयपुर की ओर यह प्रथा विशेष है।

दीपावली की रात्रि को 'हींड़' देने जाने की प्रथा राजस्थान में कई स्थानों पर प्रचलित है। वे लोग गौ पूजन करते हैं। गायों के गले में घंटियां बांधते हैं और हीड़ का एक विशेष गीत गाते हैं।

मेवाड़ में दिवाली से 15 दिन पहले ही लड़कों और लड़कियों की टोलियां प्रायः सबके घर गाती हुई निकल जाती है। स्त्रियों के द्वारा भी दिवाली के गीत गाये जाते है। लड़कों के द्वारा 'लोवड़ी' या 'हरणी' गीत गाये जाते हैं और लड़कियों द्वारा 'घुड़ल्यो'।

शीतलाष्टमी

होली पूजन से आठवें दिन यह त्यौहार पड़ता है। शीतला का तात्पर्य शीतल करने वाली से है। यह माता, चेचक, बोदरी आदि देवी के रूप में पूजी जाती है। प्रत्येक कस्बे अथवा गांव में इसके मन्दिर बने रहते हैं।

इसी दिन घुड़ले का त्यौहार मनाया जाता है। स्त्रियां इकट्ठी होकर कुम्हार के घर जाती हैं और छेदों से युक्त एक घड़े में दीवा रखकर अपने घर गीत गाती हुई वापिस आती हैं। यह घड़ा बाद में तालाब में बहा दिया जाता है। कहा जाता है कि मारवाड़ के पीपाड़ नामक स्थान पर कुछ स्त्रियां एक बार तालाब पर पौंछे में गई थी। अजमेर का सूबेदार मल्लू खां उन्हें ले गया। जोधपुर नरेश राव

सालतको को जब यह ज्ञात हुआ तब उन्होंने उसका पीछा किया। बड़ा भयंकर युद्ध हुआ। इस युद्ध में मल्लू खां के सेनापति घुड़लेखां का सिर तीरों से छेद डाला गया और राजा अपने राज्य की स्त्रियों को बचाकर ले आये। कहा जाता है कि उस सिर को लेकर स्त्रियां गांव में घूमी थीं।

गणगौर

गणगौर का त्यौहार राजस्थानी स्त्रियां बड़ी निष्ठा और श्रद्धा से मनाती है। राजस्थान में कुमारियों का ऐसा विश्वास है कि इस व्रत के करने पर उनको श्रेष्ठ पति मिलेगा। सधवा स्त्रियों का यह विश्वास रहता है कि उनका पति चिरायु होगा। लोक गीतों में तो यहां तक वर्णन मिलता है कि यदि तू रूठी हुई इस त्यौहार को मनायेगी तो तुझे रूठा पति मिलेगा। इस लिये बड़ी उमंग और उत्साह से यह त्यौहार उनके द्वारा मनाया जाता है।

इस त्यौहार से जुड़े हुए गीतों की संख्या राजस्थानी त्यौहारों में सबसे अधिक है। लगभग 35 की संख्या के गीत इसी त्यौहार से सम्बन्धित मिलते हैं।

होलिका दहन के बाद से ही गणगौर का त्यौहार प्रारम्भ हो जाता है। होली की राख के पिण्ड बांधे जाते हैं। सात दिनों तक उनकी पूजा होती है। आठवें दिन शीतला पूजने के बाद टीलों से बालू मिट्टी तथा कुम्हार के यहाँ से चिकनी मिट्टी लाकर गौरी की प्रतिमा बनाई जाती है। ईसरदास, कानीराम, रोवां, गोर और मालण की भी प्रतिमाएं निर्मित की जाती है। जौ बो दिये जाते हैं। इन्हें 'जवारा' कहते हैं। गौरी की पूजा १८ दिन तक की जाती है। गणगौर का त्यौहार चैत्र वदी 1 से शुरु होकर चैत्र शुक्ला तृतीया को समाप्त होता है। चैत्र शुक्ला 1 से 3 तक यह मेला समस्त राजस्थान में लगता है।

गणगौर के अवसर पर स्त्रियां घूमर नृत्य करती हैं। उदयपुर, बूंदी में ये घूमरें बहुत ही कलापूर्ण होती हैं।

सिरोही में गौरी की प्रतिमाएं शहर की गलियों में से निकाली जाती हैं। स्त्रियां गीत गाती हैं और गरबा-नृत्य करती हैं।

पौराणिक आधार पर यहां ऐसा विश्वास है कि पार्वती (शिव की स्त्री) के अपने पिता के घर वापिस लौटने के उपलक्ष में उसका स्वागत और मनोरंजन अपनी सखियों द्वारा हुआ था, तब से गणगौर का त्यौहार मनाया जाता है। गणगौर की सवारी जयपुर और बीकानेर में धूमधाम से निकलती है।

अक्षय-तृतीया

राजस्थान के जीवन में खेती का महत्त्व है ही। उत्तरी राजस्थान के भागों में तो एक फसल होती है और वह भी बीकानेर, जैसलमेर सरीखे इलाकों में बहुत

ही फल। अतएव यहां खेती लोगों के जीवन का प्राण है। अक्षय तृतीया के दिन शाम को लोग हवा का रुख देखकर शकुन लेते हैं।

बाजरा, गेहूं, चना, तिल, जौ आदि सात अन्नों की पूजा कर शीघ्र ही वर्षा होने की कामना की जाती है। कहीं-कहीं घरों के द्वार पर अनाज की बालों आदि के चित्र बनाये जाते हैं। स्त्रियां मंगलाचार के गीत गाती हैं और मनोविनोद की दृष्टि से स्वांग भी छोटे बच्चों के रचाये जाते हैं लड़कियां दूल्हा-दुलहिन का स्वांग भरती है। यह त्यौहार वैसाख मास की शुक्ल पक्ष की तीज को मनाया जाता है।

जिला नागौर मे इस दिन लोग अपने मित्रों और सम्बन्धियों को निमंत्रित करते हैं और भोज होता है। अपने अतिथियों की अफीम, गुड़ और अन्य मेंटों से मनुहार करते हैं।

सिरोही में इस दिन शकुन लेते हैं। लोगो का ऐसा विश्वास है कि इस दिन शकुन अच्छे हो जाते है तो सारा वर्ष आनन्द से बीतता है और इस दिन अपशकुन होने पर कष्ट ही पल्ले पड़ते हैं। यहां एक रीति यह है कि लोग सुबह ही जंगल में शिकार के लिये जाते हैं और जब तक शिकार नहीं हो जाता तब तक लौटते नहीं।

गणेश चतुर्थी

गणेश चतुर्थी का महत्त्व इस दृष्टि से सबसे अधिक है कि यह बालकों अथवा बच्चों का विशेष त्यौहार है।

गणेशजी का यह त्यौहार मुख्यतः पाठशालाओं द्वारा मनाया जाता है। गणेश चतुर्थी से दो दिन पूर्व बच्चों का 'सिजारा' किया जाता है। वे नये वस्त्र धारण करते हैं और उनके लिये घर पर पक्का भोजन भी बनाया जाता है। इस दिन बच्चो का विशेष सम्मान किया जाता है।

लगभग एक मास पूर्व से ही पाठशालाओं में चहल-पहल हो जाती है। बच्चे चेहरे बनाते हैं और प्रत्येक सहपाठी के घर जाते हैं। ब्राह्मण घरों मे प्रायः गुरुजी नारियल ही ग्रहण करते है। शेष घरों मे आमतौर से एक रुपया व नारियल लिया जाता है। शिष्य और गुरु एक-दूसरे के तिलक करते हैं। साथ मे बच्चे मनोविनोद के गीत भी गाते हैं। सरस्वती सम्बन्धी गीत भी गाये जाते हैं और गणेशजी संबंधी भी। ये चेहरे लयबद्ध उछलते-कूदते चलते हैं। इनमें बड़ा उल्लास रहता है। साथ मे गणेश जी व सरस्वती की मूर्ति भी रहती है।

यह त्यौहार भादवा सुदी चौथ को मनाया जाता है। जैनियों के लिये भी यह पवित्र दिन है। कुछ जैन सम्प्रदाय के लोग इसे पंचमी को भी मनाते हैं।

रामनवमी

रामनवमी भगवान श्री रामचन्द्र जी का जन्म-दिवस है। इस दिन मन्दिरों मे भजन होते हैं और रामायण की कथा पढ़ी जाती है। लोग पूरी कथा सुनकर घर

श्राम ह। कहीं-कहीं रामधुन भी गाना ।ता है। व्यापारियों के लिये भी यह विशेष दिन है।

तुलसी पूजन

कन्यायें एक महीने तक इसकी पूजा करती है। तुलसी पूजन मन्दिर में ही होता है ालिकाएं 15 दिन घृत दीपक जला कर अपने घर से ले जाती हैं और 15 दिन का ान का यह कार्तिक मास में सम्पन्न होता है। तुलसी श्री कृष्ण भगवान की पत्नी मानी ाती है। यह कार्य शाम के समय किया जाता है।

दशहरा

राजस्थान में दशहरे के त्यौहार को बड़े उत्साह से मनाते हैं। विशेष रुप से भरतपुर में दशहरे का त्यौहार बड़ी शान-शौकत से मनाया जाता है। इस अवसर र सारे राजस्थान में शमी वृक्ष (खेजडी) की पूजा की जाती है और लीलटांस पक्षी का दर्शन शुभ माना जाता है। इस दिन राजपूत लोग शास्त्रों की पूजा करते हैं। कई जगह पर मेले लगते हैं और हाथी-घोड़ों के साथ सवारियां निकलती हैं।

रक्षाबन्धन

दशहरे की भांति रक्षाबन्धन का त्यौहार भी राजस्थान में बड़ी धूम-धाम के साथ मनाया जाता है। इसी दिन बहिनें अपने भाइयों के हाथों पर राखी बांधती हैं। राखी बांधने का अर्थ ही यह है कि भाई अपनी बहन की रक्षा का उत्तरदायित्व अपने ऊपर ले लेता है। यह पर्व मनुष्य को धर्म एवं जाति के बन्धनों से ऊपर उठ कर अपने कर्तव्य-पालन का बोध कराता है। राजस्थान की रानी कर्णावती ने अपने राज्य पर आक्रमण होने पर हुमायूं को राखी भेज कर रक्षा करने का अनुरोध किया था और हुमायूं स्वयं विपत्ति ग्रस्त होते हुए भी उसकी सहायता के लिये दौड़ पड़ा था।

रंग-मंच और लोक-नृत्य

राजस्थान की रंगमंचीय प्रवृत्तियां नाना प्रकार से प्रकट हुई हैं। आजादी से पूर्व राजस्थान राजा-महाराजाओं का प्रदेश था। उसकी अनेक इकाईयों की अनेक विशेषतायें थीं। सारा दिन राजा-महाराजाओं के इर्द-गिर्द चलता था, राजा बहुत बड़ी हस्ती माना जाता था, उसकी शान में अनेक बातें होती थी। उस व्यवस्था में जन-कल्याणकारी कार्य भी होते थे, परन्तु उनसे कहीं अधिक राजा के हित की बातें ही हुआ करती थीं। उसके निजी मनोरंजन के अलावा उसकी शान-बान के लिये भी अनेक राग-रंगों की व्यवस्था होती थी। अच्छे-अच्छे गायक, नर्तक, कवि, नाट्यकार खेल-तमाशा करने वाले तथा वाद्य-कार उसके राज्य की शोभा बढाते थे। इन कलाकारों का जन-जीवन से सम्पर्क कम था। वे अधिकतर व्यक्तिगत साधना, प्रतिष्ठा तथा आर्थिक लाभ ही में लीन थे, परन्तु फिर भी उनके कारण कला को प्रोत्साहन अवश्य मिला। ये कलाकार और उनकी कलायें ऊंचे दर्जे को प्राप्त हुईं, उन्हें ऊंचे से ऊंचे पद अवश्य मिले परन्तु सार्वजनिक रंग-मंच की दृष्टि से उनकी देन नहीं के बराबर थी। रंग-मंच की प्रवृत्तियां यदि व्यक्ति विशेष या उससे संबधित समुदाय के लिये ही मर्यादित रहती हैं तो असल माने में रंगमंचीय प्रवृत्तियां नहीं कहलाती। इसके और वास्तविक रंगमच की दृष्टि से उनका सार्वजनिक स्वरूप होना अत्यन्त आवश्यक है। ऐसी ही प्रवृत्तियां नकल या आडम्बर के रूप मे छोटे-छोटे जागीरदारो, धनिक वर्गों तथा संपन्न घरानों के साथ भी जुड़ गई और मनोरंजन की दृष्टि से कलाकारों का एक ऐसा वर्ग बन गया, जिसका काम नाच-गा कर अपने निर्दिष्ट यजमानों अथवा आश्रयदाताओं को मनोरंजित करके अपनी आजीविका उपार्जन करना हो गया। यह स्थिति न केवल शहरों में बल्कि गावों मे भी प्रचलित हो गई और कलाकारों का एक विशेष वर्ग ही बन गया।

परन्तु इस स्थिति से ऊपर भी एक विशेष बात जन-जीवन में परिलक्षित हुई। विशेषकर गांवो मे और कुछ शहरों मे भी वहां की जनता की ललित-प्रवृत्तियां त्योहार, पर्व तथा सार्वजनिक समारोहों में नाना-प्रकार से अभिव्यक्त हुई है। इन प्रवृत्तियों में भी धार्मिक और सार्वजनिक दृष्टि से राजा, ठाकुर, जागीरदार तथा सम्पन्न वर्ग जुड़ा

हुआ था, परन्तु उनका कोई हानिकारक प्रभाव इन प्रवृत्तियों के साथ धर्म और परम्परा जुड़ जाने से नहीं हुआ, बल्कि कुछ हद तक उन्हें अत्यधिक रंग देने में लाभदायी ही सिद्ध हुआ। ये प्रवृत्तियां सभी राज्यों में गणगौर जैसे त्यौहारों के साथ जुड़े हुए सामूहिक गणगौर, लूहर तथा घूमर नृत्यों में दृष्टिगत हुईं। होली के साथ जुड़े हुए शेखावाटी की गींदड तथा अन्य राज्यों के 'गेर' जैसे सामूहिक नृत्यों में प्रकट हुईं, ये ही प्रवृत्तियां शेखावाटी के गणेश चतुर्थी पर होने वाले चौक चांदनी जैसे सामूहिक नृत्यों तथा रामदेवरा, रूणीचा, चारभुजा तथा अन्य अनेक मेलों में होने वाले सामूहिक नृत्यों गीतों और खेल-तमाशों में प्रकट हुईं। सार्वजनिक और लोक रंजक रंगमंचीय प्रवृत्तियों के नाना रूप गांवों और शहरों में जन-जीवन के साथ दूध-पानी की तरह मिल गये। इन प्रवृत्तियों में दर्शक और प्रदर्शक में लगभग कोई भेद नहीं रहा, कभी दर्शक ही प्रदर्शक बन जाता। इन प्रवृत्तियों के लिए किसी व्यवस्थित रंगमंच की आवश्यकता नहीं होती। मंदिर का अहाता, गांव तथा शहर का चौराहा या कोई भी सार्वजनिक स्थान या मेलों के विस्तृत मैदान ही इनके लिये सार्वजनिक रंगमंच बन जाते।

इन सार्वजनिक प्रवृत्तियों के अलावा राजस्थान में अनेक व्यावसायिक और गैर-व्यावसायिक रंगमंच प्रवृत्तियां भी विकसित हुईं, जिनमें हमारे अनेक पौराणिक और ऐतिहासिक कथानक नाट्य रूप में प्रदर्शित किये जाते थे। ये नाट्य खुले रंगमंच पर, जिनका कोई विशेष आकार-प्रकार नहीं था, प्रदर्शित किये जाते थे। गांव और नगर के शौकीन लोग अपने घरों से रंगमंचीय उपकरण जुटाते थे तथा तख्तों से बने हुए रंगमंच या ऊंचे चबूतरों पर रात-रात भर ये नाटक खेलते थे। इनका कथोपकथन गीतों में होता था और नृत्य-मुद्राओं से उनके प्रभाव को बढ़ाया जाता था। परम्पराओं से ये नाट्य जनता को कंठस्थ याद होते थे और हजारों लोग दूर-दूर से आकर इनका आनन्द लेते थे ये खेल अथवा 'ख्याल' राजस्थानी जनता के प्राण बन गए। थोड़े-थोड़े अन्तर के साथ ऐसे लोक नाट्यों की छः शैलियां राजस्थान में प्रचलित हुईं जैसे-कुचामणी ख्याल, तुर्रा कलंगी के खेल, चिड़ के ख्याल, मारवाड़ और मेवाड़ की रासधारिया, बीकानेर और जैसलमेर की रम्मतें और भवाइयों के खेल-तमाशे। ये सभी शैलियां अपने-अपने ढंग से निराली थीं और इनमें चन्द मिलागिरी, रिढमल, हरिश्चन्द्र, द्रौपदी स्वयवर, रुक्मणी मंगल, मूमल-महेंद्र, हीरा, अमरसिंह राठौड़, बीकाजी आदि अनेक खेल खेले जाते थे। इन खेल-तमाशों में रंगमंच की अनेक मर्यादायें बनी हुई थीं, जिनके अन्तर्गत वेशभूषा, पोशाक, अभिनय, दृश्य, स्थल, स्थितियां, गाने-नाचने का ढंग, साज-बाजों का प्रयोग आदि की अनेक परम्पराओं का बड़ी कड़ाई के साथ पालन किया जाता था, जिनसे इन विशिष्ट ख्याल के प्रकारों की विशेषतायें परिलक्षित होती थीं, जैसे-चिड़ावा के तथा शेखावाटी के ख्यालों में रंगमंच की सरलता परन्तु अभिनय नृत्य गीतों की करामातें अत्यन्त प्रबल थीं, कुचामणी ख्यालों में गीतों

की विविधताओं की विशेषता थी और राजस्थानी भाषा के ख्यालों के साथ लच्छीराम कृत तुर्रा शैली के ख्यालों की ओर झुकाव अधिक था, बीकानेर की रम्मतों में गीत और नृत्यों का प्राधान्य था। अभिनेता रंगमंच पर पीछे की ओर बैठे हुए नजर आते और बारी-बारी से अपनी जगह से उठकर अपना पार्ट अदा करते थे। इधर घोसुंडा और चित्तौड़ के तुर्राकलंगी के खेलों में रंगमंचीय उपकरणों की ओर अधिक ध्यान था। रंगमंच के दोनों ओर दो भव्य अट्टालिकायें बनाई जाती थीं, जिनमें से स्त्री और पुरुष पात्र गाते-नाचते हुए नीचे उतर कर मूल रंगमंच पर आते थे। इस रासधारियों और भवाइयों के खेल समतल भूमि पर ही खेले जाते थे। जनता चारों ओर बैठ इन्हें देखती थी। इन खेलों में गीत और नृत्य की बड़ी अद्वितीय छटा थी। इन खेलों की व्यावसायिक मंडलियां भी बनी जो गांव-गांव, नगर-नगर घूमकर अपनी आजीविका के लिए अपने खेल-तमाशे करती थी। इन सब खेलों को आधुनिक सिनेमा तथा अन्य मनोरंजनों के साधनों से बड़ी क्षति पहुची। पिछले 35 वर्षों में जनता सार्वजनिक रंगमच का महत्व भूलकर व्यावसायिक रंगमंच की ओर अधिक झुक रही है। रंगमंच पर खुद नही आकर दूसरों को रंगमच पर देखना अधिक पसन्द करती है और दर्शक की हैसियत को प्रदर्शक की हैसियत से ज्यादा अच्छा समझती है। इस मनोवृत्ति ने हमारी इन सामुदायिक नाट्य परम्पराओं को बड़ी क्षति पहुंचाई है। पहले ये लोक नाट्य इतने लोक-प्रिय और प्रचलित थे कि सारा जन-समुदाय इन्हें याद रखता था और किसी अभिनेता की आकस्मिक अनुपस्थिति के समय दर्शकों में से कोई भी व्यक्ति उठकर उस पार्ट को खूबी के साथ अदा कर लेता था। ये नाट्य हजारों के कंठों के शृंगार बने हुए थे, परन्तु अब यह स्थिति नही है।

शहरों मे तो यह हालत बिल्कुल ही बिगड़ गई है। राजा-महाराजाओं के समय जयपुर, झालावाड़, बीकानेर, अलवर आदि रियासतो मे इन राजाओं की अपनी स्वय की नाटक मण्डलियां थी जो उनके मनोरजन के लिए प्रदर्शन करती और यदाकदा जनता भी उनके दर्शन कर लेती थी। इन मण्डलियो मे प्रवीण कलाकार, नृत्यकार और सगीतकार काम करते थे और पारसी नाट्य शैली का उनमे अच्छा विकास हुआ था। परन्तु इनका उपयोग बहुत ही छोटे समुदाय मे होता था और राजस्थानी नाट्य-परम्परा का उनमें लेशमात्र भी अंश नही था। इन्ही नाटकों अथवा बाहर से आई हुई भ्रमणशील नाटक मण्डलियो के प्रभाव से राजस्थान के प्रमुख प्रमुख नगरो में शौकिया नाटक मण्डलिया स्थापित हुईं, जिनमे स्कूल तथा कालेजों के छात्र विशेष रूप से भाग लेते थे। ऐसी शौकिया मण्डलिया राजस्थान के लगभग सभी छोटे-बड़े नगरो में काफी बड़ी तादाद में बड़े पैमाने पर काम करने लगीं। उससे नाट्य-कला को प्रोत्साहन अवश्य मिला, परन्तु उनसे कोई बड़ा और चमत्कारिक प्रयोग आधुनिक रंगमंच की दृष्टि से नही हुआ। उन सब नाट्यों पर पारसी [illegible] कम्पनियों का बहुत प्रभाव था। इसी बीच सवाक चित्रपट का प्रादुर्भाव

होने से इस प्रयोग को भी बहुत क्षति पहुंची और जनता सिनेमा के इस चमत्कारिक प्रयोग की ओर आकृष्ट हो गई। राजस्थान के लगभग सभी छोटे और बड़े नगरों में नाट्य-गृह स्थापित होने के बजाय सिनेमा गृह बनने लगे और आज तो यह प्रवृत्ति अपनी चरम सीमा तक पहुंची हुई है। रंगमंचीय नाटकों पर इसका बहुत ही बुरा प्रभाव पडा, जो शौकिया किस्म के नाटक स्कूल-कालेज के तथा अन्य सार्वजनिक ढंग के होते थे, उनमे भी कमी नजर आई और जो भी नाटक बचे रहे उनसे फिल्मी ढंग के अभिनय, गीत और नृत्यों को प्रोत्साहन मिला।

हम पिछले कुछ वर्षों मे शौकियायी रंगमंच में एक विशेष प्रकार का परिवर्तन आया है। उस पर अब केवल नाटकों का ही विशेष स्थान नही है बल्कि नृत्य, गीत, वेश-विन्यास, एकांकी नाटक, रेडियो-नाटक, साज-संगीत आदि को विशेष महत्व मिलने लगता है। इन कार्यक्रमों में लोकनृत्य, लोकगीत भी एक प्रकार के शौक बन गये हैं। इनमें नकली, असली तथा मिलावटी सामग्री जाने-अनजाने पेश की जाती है। इनमें फिल्मी गीत व नृत्यों की बहार भी रहती है। शास्त्रीय तथा विशुद्ध लोक शैली के नाटक, गीत, नृत्य आदि की ओर विशेष अभिरुचि उनमें नजर नही आती। फिल्मो के इस युग मे अब व्यावसायिक प्रदर्शन-मण्डलियां लगभग बैठ ही गई हैं। कोई भी व्यक्ति अब व्यावसायिक स्तर पर नृत्य, गीत तथा नाटकों के प्रदर्शन देने की हिम्मत नही करता। इस दिशा मे राजस्थान के कठपुतली दलों का उल्लेख भी करना आवश्यक है, जिन्होंने अभी तक इस रंगमंच की बड़ी हिम्मत के साथ रक्षा की है। ये कठपुतली दल आज भी सैकडों की तादाद मे अपना एकमात्र कठपुतली खेल "अमरसिंह राठौड़" प्रदर्शित करते हैं ये राजस्थान की सीमा के बाहर भारतवर्ष के सूदूर क्षेत्रों में भी पहुंच जाते हैं। यद्यपि इनके खेल मे अब नाट्य की दृष्टि से अनेक विकृतिया आ गई हैं और इनमें नये प्राण फूंकने की आवश्यकता है फिर भी उनका यह प्रयत्न प्रशंसनीय है।

उदयपुर के भारतीय लोक कला मण्डल के प्रदर्शन दल ने रंगमंच की दृष्टि से एक नवीन एव प्रयोगधर्मी महत्वपूर्ण कार्य किया है। यह दल राजस्थानी लोक-नृत्यो तथा लोक नाट्यो को उनके मौलिक रूप मे आधुनिक रंगमंच के योग्य परिमार्जन के साथ सफलता पूर्वक प्रस्तुत करता है। उसने समस्त भारतवर्ष में राजस्थान का गौरव बढाया है। राजस्थानी लोक रंगमंच के अनेक स्वरूपों को विविध क्षेत्रों से ढूंढ निकालने तथा उन्हे प्रचारित करने में लोक कला मण्डल का कार्य बड़े पैमाने पर हुआ है। जयपुर मे रवीन्द्र-मंच के निर्माण तथा संगीत नाटक अकादमी की स्थापना के बाद रंगमंचीय प्रवृत्तियों के प्रसार की दिशा मे उल्लेखनीय कार्य हुआ है।

लोक-नृत्य

राजस्थानी रगमंच के प्रसंग में यहां के लोक-नृत्यों का उल्लेख भी अत्यन्त आवश्यक है। राजस्थानी लोक-कलाओं में यहां के लोक-नृत्यो का महत्वपूर्ण स्थान है।

राजस्थान के लोक-नृत्यों को स्थूल रूप से छः भागों में विभक्त किया जा सकता है। हर विभाग के अनेक उप-विभाग भी किये जा सकते हैं, पर इस विशाल प्रदेश के कोने-कोने में फैली हुई इन परम्पराओं की व्यापक जांच-पड़ताल किये बिना कोई साधिकार धारणा बना लेना उपयुक्त नहीं होगा।

इस क्रम मे सर्व प्रथम गृहस्थों में नाचे जाने वाले नृत्य आते हैं। छोटे-छोटे बालक-बालिकायें भी आनन्दमग्न होकर नाचते हैं। वर्षा के दिनों में मेघाछन्न आकाश के नीचे गांवो की 'गुवाड़' में बच्चे एकत्रित होकर नृत्य करते हैं और "मेहबाबा" से वर्षा की याचना करते हैं। युवतियां तीज और गणगौर के अवसर तथा विवाहादि उत्सवों पर आनन्द विभोर होकर नाचती हैं। युवक डफों पर होली के गींदड़ नृत्य में तथा चौकचानणी में गणेश चौथ के दिन विविध स्वांग भर कर उल्लास के साथ नाचते हैं। गृहस्थों के अधिकतर नृत्य उत्सवों, त्यौहारों तथा ऋतुओं से सम्बन्ध रखते हैं। सामान्य दिनो मे भी आमोद-प्रमोद के साथ नृत्य किये जाते हैं। विवाह के अवसर पर कुम्हार के घर चाक पूजते समय का नृत्य, बरात के विदा होने पर लड़के के घर की स्त्रियो द्वारा किये जाने वाला टूंटिया नृत्य, होली पर लड़कों और घूमर [illegible] सामने किया जाने वाला [illegible] यों के अपने-अपने [illegible] हैं। [illegible] बनाकर नाचना तथा नगाडे की ध्वनि के साथ एक दूसरे से डंडे भिड़ाकर घेरा बांधकर नाचना तथा नगाडे की ध्वनि के साथ एक दूसरे के साथ डंडे भिड़ाकर घेरा बांधकर नाचना और छारण्डी के दिन महरी का वेष बनाकर नाचना ये सब गृहस्थों के नृत्य हैं।

दूसरी श्रेणी मे धार्मिक सम्प्रदायो का नृत्य आता है। राजस्थान में जितने विभिन्न सम्प्रदाय हैं उतने शायद ही भारत के किसी अन्य भाग में हों। सन्त और साधु-सन्यासियो ने अपने विचरण के लिये इस भूमि को अधिक उपयुक्त समझा। प्राचीन नाथ सम्प्रदाय से लेकर आज तक के सभी छोटे बड़े मत-मतान्तरों के धार्मिक गुरु यहां मिलेंगे। लोक-जीवन के निकटतर होने के उद्देश्य से इन सम्प्रदायों में से अनेक ने नृत्य-गीत के माध्यम को अपनाया है।

गोगाजी, जिन्हें सांपों का देवता माना जाता है, राजस्थान की सभी जातियों द्वारा पूजे जाते हैं। इनके भोपा गोगाजी का निशान, मोर पंख, डमरू, कटोरा और लोहे की सांकल लिये भादों के दिनो में गांव-गांव में चक्कर लगाते हैं। एक भोपा, जिसे 'छाया' आई हुई समझी जाती है, झूमता हुआ नाचता है, तथा लोहे की बड़ी सी सम की ताल पर जोर-जोर से अपने सिर पर पटक कर मारता है। शरीर में अनेक घाटे लगे रहने पर भी उसे कोई चोट नही आती। सिद्ध सम्प्रदाय के लोग अग्नि-नृत्य करने में कुशल होते हैं। मनो लकड़ी को जला कर अंगारे बना लिये जाते

है और जलते हुए अंगारों के इस, एक हाथ ऊंचे, ढेर पर विचित्र लय में नाचते हुये ये सिद्ध एक छोर से दूसरे छोर तक चले जाते हैं, पर एक बाल भी नहीं जल पाता। इनके इस विचित्र नृत्य ने वैज्ञानिको तक को चकित कर दिया है।

भैरूजी के भोपे मसक की बीन बजाते हुए डमरू की ध्वनि और कमर मे लटकते हुए मोटे घुंघरुओं की आवाज के साथ मुख से भी विचित्र ध्वनि करते हुए नृत्य करते हैं। नाथपंथी कालबेलियों का पूंगी नृत्य, जिसमें एक-दूसरे पर मन्त्रोच्चार द्वारा कंकरी फेंक कर पूंगी बन्द करने की कला का प्रदर्शन किया जाता है, अपने ढंग का निराला ही नृत्य है। पाबूजी के अनुयायी 'थोरी' लोग भी अपने प्रिय वाद्य रावण-हत्था के साथ रात्रि के समय "फड़" फैला कर गीत के साथ नाचते हैं। थोरी की स्त्री भोपी ऊंचे स्वर में गीत की कड़ियों को गुंजाती हुई फड़ के सामने लपक-लपक कर नाचती है। दीपकों से संजोई थाली लेकर भी इस समय नाचा जाता है। इसी प्रकार जोगी और रामदेवजी के भक्त अपने नृत्य करते हैं।

तीसरी श्रेणी पेशेवर जातियों के नृत्य की है। इनका सम्बन्ध अधिकतर राज-दरबारों, सामन्तों, रईसों और सेठ-साहूकारों से है। जहां से प्राप्ति की आशा अधिक हो, वहीं ये अपना कौशल दिखाने में रुचि रखते हैं। इन का जीवन अपने आश्रयदाताओं की दिनचर्या के साथ एकाकार-सा ही हो गया है। पातुर, वेश्या, नट, ढोली, भवाई, भांड, खोजे, रासधारी और ख्याल मण्डलियों के लोग इसी श्रेणी में आते हैं। इस श्रेणी के लोगों का नृत्य लोकशैली से तनिक भिन्न होकर शास्त्रीय शैली में प्रविष्ट हो गया है पर मूलरूप मे इनके नृत्य भी लौकिक ही है और परिष्कृत रुचि के परिवारों मे इनका प्रचलन है।

पातुरें राजाओं और सामन्तों के रनिवासों में हुआ करती थी। एक पुरुष की कई स्त्रियां होने के कारण प्रत्येक की यह चेष्टा होती थी कि उसका पति उसकी ओर आकर्षित हो। इस उद्देश्य से सुन्दर युवतियों को गीत, नृत्य आदि कलाओं मे प्रवीण करा कर सुन्दर वस्त्रा-भूषणों से सजा कर पति के सामने नाच-गाना करवाने के लिये रखा जाता था।

जिस स्त्री के पास सुन्दर कलावन्त पातुर होती थी उसके पास पति के जाने की सम्भावना अधिक होती थी। इन पातुरों के नाम भी कलापूर्ण होते थे जैसे प्रवीणराय, रंगराय, स्नेहलता आदि। पातुरें अथवा पातरों का यह वर्ग प्रश्रय के अभाव में धीरे-धीरे अपने उद्देश्य से गिर गया और आजीविका के लिये हीन कर्म में भी प्रवृत्त होने लगा।

नर्तकियों के नाच भी प्रायः पातुरों के समानान्तर ही होते हैं। नर्तकियां प्रायः मुसलमान होने के कारण उनके कई नाच, राजस्थान के बाहर के दरबारों से सीखे हुए होने के कारण, विशुद्ध राजस्थानी नहीं कहे जा सकते। फिर भी कई नृत्य जैसे सपेरा नृत्य, चीरे का नृत्य आदि राजस्थानी नृत्य ही हैं।

नटों का नृत्य शारीरिक कलाबाजियों से अधिक सम्बन्ध रखता है। कहते हैं ये लोग तेल पीते हैं इसलिये इनके अंग-अंग में लचक और मरोड़ की अद्भुत क्षमता है। दो बांस के छोरों पर बंधे हुए रस्से पर ढोलकी बजाकर नाचता हुआ नट तथा चिड़िया की तरह फुदकती हुई नटनी दर्शकों को चकित कर देते हैं। नटनी का मोर नृत्य तो बहुत ही सुन्दर होता है। हरे रंग की सलवार और नीले रंग की लम्बी बांहों वाली कुरती पहन कर सर पर कलंगी बांधे दोनों पांवों को ऊपर लटका कर वह हाथों के बल आंगन पर पंख फैलाये मोर की भांति नृत्य करती है।

ढाली और दमामी अधिकतर सामन्तों के आश्रय में रह कर विविध नृत्यों से अच्छा मनोरंजन करते थे। ढोलक की ध्वनि के साथ सीत्री लम्बी तान में मग्न लेती हुई वृद्धा ढोली के सामने ही उसकी पुत्र वधु या पुत्री घूमर आदि का नृत्य करती हैं।

भांड लोग नकल करने में चतुर होते हैं। स्वांग के साथ-साथ नाचने में भी वे निपुण होते हैं पर इनका नाच निम्न स्तर का ही होता है। खोजे लोग पुत्र-जन्म के अवसर पर ढोलक बजा कर नाचते हैं। दो-तीन खोजे तालियां बजाते हैं और एक उनके मध्य में ढोलक और ताली की ताल पर जच्चा की विभिन्न मुद्राओं का अभिनय कर नृत्य करता है। गर्भ के नवें महीने में प्रसूता की विभिन्न अवस्थाओं तथा प्रसव के बाद की स्थिति का हास्यास्पद वर्णन नाट्य द्वारा बतला कर ये परिवार के व्यक्तियों का मनोरंजन करते हैं।

लोक-नर्तकों के वर्ग में भवाई का अपना विशेष स्थान है। जाति बहिष्कृत लोगों का यह सम्प्रदाय विविध नृत्यों की रचना में बड़ा निपुण है। यजमानों पर जीवन-यापन करते हुए भी ये लोग बड़े स्वाभिमानी होते हैं। इनके प्रमुख नृत्य नाट्यों में सूरदास, डोकरी, शंकरिया, बीकाजी आदि हैं। फुटकर नाचों में सात सौ गज की पगड़ियों का कमल बनाना, सात मटकों का नाच, जलती हुई बोतल का नाच तथा तलवारों का नाच है।

रासधारी और ख्याल मण्डलियों के नृत्य भी एक विशेष शैली के होते हैं। ख्याल मण्डलियों में बारहमासे का नृत्य और जवाब-सवाल के साथ-साथ तख्तों पर कूद-कूद कर यह नृत्य होता है।

भिखमंगों, खानाबदोशों और जंगली जातियों के नृत्य चौथी, पांचवी और छठी श्रेणी में आते हैं। सांसी और कंजर लोग कस्बों और गांवों में भीख मांगते समय दाता को रिझाने के लिए नृत्य करते हैं। खानाबदोशों में बावरी, सांसी, गवारिया और गाड़िया लुहार अपने निजी नृत्य करते हैं। जंगली जातियों में भील, मीणे, गिरासिया, रायत और मेरात लोग अपने विशेष नृत्य करते हैं। भीलों का गवरी नृत्य और युद्ध नृत्य अधिक प्रसिद्ध है।

इसके अतिरिक्त फुटकर नृत्यों में कच्छी घोड़ी का नृत्य, जालौर का ढोले-तमर नृत्य, डीडवाने का तेरातालो, चमारों का नेजा नृत्य, बनजारों का नृत्य, चित्तौड़ का तुर्राकलगी नृत्य आदि अनेक प्रसिद्ध नृत्य हैं।

नृत्यों की इन अनेक-भांतों में भी कतिपय नृत्य ऐसे हैं जिन्हें सहज ही इस सब के ऊपर देखा जा सकता है तथा जिनमें राजस्थानी संस्कृति की आत्मा के दर्शन हो सकते हैं। ऐसे नृत्य किसी भी देश में नहीं हुआ करते। जैसे गुजरात में गरबा है वैसे ही राजस्थान में घूमर नृत्य नृत्यों का 'सिरमौर' कहा जा सकता है। इसका सम्बन्ध लोक-जीवन और लोक-मानस से है। पेशेवर जातियों की कलाबाजियों तथा नपी-तुली शास्त्रीय परिपाटियों से दूर रह कर घूमर जन-जीवन की आत्मा में प्रविष्ट हो जाता है। तलवारों और बतार्शों का नाच, जल-भरे घड़े और दीपकों-भरी थाली का नाच, रस्से पर उछल-कूद करने वाला नाच चकित कर देने वाला अवश्य है, पर मोहित करने वाले नहीं। नृत्य-भावनाओं की प्रफुल्लता का यह बाह्य रूप मात्र है। वर्षा—कालीन सन्ध्या को घने काले मेघों का गर्जन सुन कर मोर पीहू-पीहू कर नाच उठता है, वृक्षों के सघन कुंज में बैठी कोयल कुहू-कुहू कर चहक उठती है और कन्हैया पक्षी आकाश में फुदक-फुदक कर झूम उठते हैं, तो मानव फिर अपनी उमड़ती हुई अभिलाषाओं को कैसे रोक ले ? ऐसे सुहाने समय में बाह्य प्रकृति की मस्ती को देख कर नृत्य भी उसका साथ देने लगता है और यही स्वाभाविक नृत्य की सृष्टि होती है।

राजस्थान का घूमर नृत्य भी ऐसे ही किसी अवसर पर खेतों की पाल पर थिरक-थिरक कर नाचने वाली किसी कन्या के अंग संचालन से उद्भूत हुआ होगा। मेलमेल के झीने तारों का घूंघट डाले, चीर को लहंगे की तह में भली प्रकार दाबे, कंचुकी के बन्धों को कस कर, पायल की रुनक-झुनक के साथ नीचे झुक-झुक कर अंगों को लचकाती हुई और दोनों हाथों से आल्हाद की मुद्रा को चुटकियों में व्यक्त करती हुई कोई तरुणी जब हमजोलियों की टोली में अपने अंग—सौष्ठव का प्रदर्शन करती हुई थिरकती है तो राजस्थानी घूमर का रूप प्रत्यक्ष हो उठता है। पूर्ण विकसित शत-दल की भांति अरसी कली का घाघरा जब फैल कर चन्द्राकार हो जाता है और फिर दूसरी मुद्रा में ही सिमट कर जांघों से चिपट जाता है, तो घूमर की उत्पत्ति का अर्थ सहज ही बोधगम्य हो जाता है।

घूमर का ही एक रूप 'मछली नृत्य' है, जिसमें अपने यौवन के अभिमान पर थिरकती हुई तरुणी पर जल-देवता मुग्ध हो जाता है पर मछली उसका अपमान कर देती है। अपमानित होने पर वह जल का वेग बढ़ा कर क्रोधित होता है। चारों ओर वृत्ताकार मे मछली के रूप में तरुणियां गाकर उसे मनाने का प्रयास करती हैं पर वह नहीं मानता। पानी के भंवर फैलते हैं और मछली एक भंवर में समा जाती

है। इतने में ही नायक उसकी रक्षार्थ भ्राता है पर उसके भ्राने के पहले ही वह मर जाती है और इस प्रकार इस दुःखान्त नृत्य की समाप्ति होती है। चांदनी रात में बनजारों की तरुणियां अपने खेमों में इस नृत्य का अभिनय करती हैं।

इसी प्रकार का दूसरा नृत्य पुरुषों का है, जिसे डाडिया नृत्य भी कहते हैं। बीकानेर, शेखावाटी और जोधपुर के क्षेत्र में इसका प्रचलन अधिक है। होली के दिनों मे फागुन की शीतल रातों में छिटकती चांदनी से दुग्ध-धवल मैदान में एक नगाड़ा लेकर वादक बैठ जाता है। उसके चारों ओर विभिन्न वेष-भूषा में हाथों में डंडे भिड़ाते हुए युवक घूमते हैं। घूमर की भांति उन्हें भी थोड़ा अंग-संचालन करना पड़ता है। पुरुषों की पोशाक में बागा तथा पगड़ी होती है। बागे का घेर घूमते समय फैल कर नृत्य की शोभा बढ़ाता है। कई पुरुष स्त्रियों का वेष बनाकर घूंघट काढ़े नाचते हैं जिससे प्रतीत होता है कि प्रारम्भ में यह स्त्री-पुरुषों का सम्मिलित नृत्य रहा होगा। पर आधुनिक सभ्यता से प्रभावित होकर पुरुषों ने स्त्रियों को इसमें सम्मिलित करना बन्द कर दिया और अब स्त्रियों का स्वांग भर रह गया। कुछ भी हो पर नृत्य अपने ढंग का एक है और राजस्थान का राष्ट्रीय नृत्य कहलाने योग्य है।

झूमर और झूमरा नृत्य भी अत्यन्त सुन्दर हैं। झूमरा पुरुषों का वीर रस प्रधान नृत्य है और झूमरा नामक वाद्य यन्त्र की गति के साथ नाच जाता है। पर झूमर श्रृंगारिक नृत्य है। इनमें कभी एक स्त्री व पुरुष नृत्य करते हैं, तो धार्मिक मेले आदि के अवसर पर देखा जा सकता है और कभी पृथक-पृथक बृत्ताकार बैठे गाते बजाते स्त्री-पुरुषों के झुण्ड में से उठ कर एक-एक स्त्री और एक एक पुरुष नृत्य करते हैं। कभी-कभी अकेली तरुणी ही यह नृत्य करती है।

मूलतः यह नृत्य गुर्जर जाति का है जो सिर पर हलका आभूषण, जिसे 'बोर' कहते हैं तथा भुजाओं पर बाजू-बन्ध की लूम की तरह फूलों का गुच्छा बांधे नृत्य करती थीं।

कोई नव-यौवना जब उद्दाम वेग से झूम कर नाचती है, तो चारों ओर उसकी सहेलियां गाती हैं-

छोरा मार दियारे थेई-थेई करके।

नायक तूने थेई-थेई करके मुझे मार दिया है। अर्थात् मेरे यौवन को तूने नृत्य ताल से जागृत कर दिया है। गूजर और अहीर जाति के परिवारों में यह नृत्य आज भी जीवित है।

राजस्थान के इन रंगीन नृत्यों की खोज और जांच पड़ताल अभी पर्याप्त रूप से नहीं की गई और न उन्हें उचित प्रोत्साहन ही मिला। नष्ट होती हुई इन सांस्कृतिक निधियों के पुनरुद्धार की जितनी आवश्यकता आज है, उतनी शायद पहले कभी नहीं थी।

———

8
ललित कलाएं

साहित्य के क्षेत्र में राजस्थान जितना सरनाम रहा है, ललित-कलाओं के क्षेत्र भी उसकी उपलब्धियां उतनी ही महत्त्वपूर्ण रही हैं। राजस्थानी चित्र शैलियों का भारत की चित्रकला के इतिहास में अद्वितीय स्थान है। भारतीय चित्रकला को जो समृद्धि प्राप्त हुई है, उसमें राजस्थान की चित्रकला का अमूल्य योगदान सभी कला-समीक्षकों ने एक स्वर से स्वीकार किया है।

चित्रकला की भांति यहां की मूर्तिकला भी अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति अर्जित कर चुकी है। जयपुर के मूर्तिकारों की छैनी का चमत्कार प्रान्त और देश की सीमाओं को लांघ कर सुदूर विदेशों तक विस्तार पा गया है।

संगीतकला के क्षेत्र में भी यहां के गायकों ने अपनी गौरव-पताका फहराई है। शास्त्रीय संगीत और लोक-संगीत दोनों में ही यहां के कलाकारों ने उन ऊंचाइयों का स्पर्श किया है, जो बहुत ही विरले साधकों का सौभाग्य होता है।

यहां संक्षेप में राजस्थान की इन तीनों ही ललित कलाओं के बारे में स्थूल जानकारी प्रस्तुत की जा रही है।

चित्रकला

भारतीय जनता की रसप्रधान कल्पना और अनुभूति का जो विस्तृत क्षेत्र है, उसका समग्र चित्रण राजस्थानी शैली में और कालान्तर में उसी से अनुप्राणित कांगड़ा चित्रशैली में प्राप्त होता है। जनता के काव्य, संगीत और नाट्य से भी इस कला का घनिष्ठ सम्बन्ध था। प्रेम इस कला का मूल मन्त्र है। कहा जा सकता है कि प्राकृतिक दृश्यों की लिखाई में जैसी उत्कृष्ट सफलता चीनी चित्रकारों को प्राप्त हुई थी कुछ वैसी ही सिद्धि, प्रेम के क्षेत्र में राजस्थानी चितेरों को प्राप्त थी। उनकी दृष्टि में प्रेम ही जीवन में विचित्रता लाने का मार्ग है। सोते हुए हृदय प्रेम के द्वारा नए लोक में प्रवेश करते हैं। मानवीय प्रेम ही हृदयों को पारस्परिक संयोग में बांधने का एकमात्र सूत्र है। प्रेम के बिना हृदय एक दूसरे से पृथक बने रहते हैं। राधा और कृष्ण के रूप में जगतीतल के स्त्री और पुरुष, प्रेम के लोक में अपने आपको मूर्तिमन्त देखते हैं। स्त्री-पुरुष का प्रेम व्यवहार राधा-कृष्ण की प्रेम लीला

की झांकी मात्र है। प्रेम की यह सरस, सुबोध और सुन्दर व्याख्या राजस्थानी चित्रकारी के हाथों में खूब फूली-फली, जिसके फलस्वरूप अनेक भावात्मक चित्रों की सृष्टि हुई। श्री कुमारस्वामी के शब्दों मे "राजस्थानी चित्रकला की सुन्दर कृतियों को देखते हुए हमारे मन में ऐसा भाव उत्पन्न होता है कि राधा-कृष्ण का पवित्र लीला लोक हमारे अपने जीवन की अनुभव भूमि है।" यदि हम अपने जीवन में ही सौन्दर्य के दर्शन नहीं कर पाते तो अपरिचित और पराई वस्तुओं में उसे कैसे पा सकते हैं? अपने गृह-मन्दिरों मे अपने जीवन की लीला मे जो हमे नही मिलता वह हमें कहीं भी प्राप्त नहीं हो सकता। ऐसी दृढ आस्था राजस्थानी चित्रो की मानसिक पृष्ठभूमि को आलोकित करती है। इसी कारण ये चित्र स्त्री-पुरुषो के नित्य के जाने-पहचाने जीवन के सजे-सजाये आलेखन प्रतीत होते हैं।

राजस्थानी चित्र शैली स्त्रियों की सुन्दरता की खान है। भारतीय नारी के आदर्श सौन्दर्य की उसमें पूरी छटा है। कमल की तरह उत्फुल्ल बड़े नेत्र, लहराते हुए केश, पुष्ट स्तन, क्षीण कटि और ललित अग-यष्टि और भारतीय स्त्री के हृदय जो प्रेम का अटूट भण्डार है, उसका प्रवाह मानों इन चित्रों में बह निकला है।

अनेक प्रकार के चटकीले रंगो का प्रयोग इन चित्रों की विशेषता है। भांति भांति के चटक रंगो को एक साथ सजाने का रहस्य इन चित्रकारों को विदित हो गया था। लाल, पीले, हरे, बैंगनी, किरमिची, काले सफेद और सुनहले रंगों की खुलाई चित्रों को अत्यन्त मनोहर बना देती है। कही-कही तो चतुर चित्रकार रंगों के साथ क्रीड़ा करते हुए जान पड़ते हैं।

राजस्थानी चित्रों के विषय बहुत विस्तृत हैं। राधा-कृष्ण की लीला, अनेक प्रकार की नायक-नायिकाएं, रामायण-महाभारत की कथाएं, ढोला-मारू, माधवानल काम-कंदला सदृश्य लोक कथाएं, स्त्री-पुरुषों के शृंगार भाव, ऋतुओं के चित्र और बारहमासा तथा राजाओ की प्रतिकृतियां या 'शबीह' इन चित्रों के विस्तृत विषय हैं, किन्तु काव्य और चित्र के साथ भी उनका सम्बन्ध है। प्रत्येक राग और रागिनी के पीछे जो मनोभाव है, उसको पहिचान कर उसकी चित्रात्मक लिखाई से ही राग-रागिनी के चित्रों का स्वरूप निष्पन्न हुआ है। उदाहरण के लिये टोडी रागिनी के चित्र में एक युवती वीणा बजाती हुई दिखाई जाती है, जिसके संगीत स्वर से आकर्षित होकर मृग चारों ओर से घेरते हुए दिखाए जाते हैं। राग का "टोडी" नाम दक्षिण भारत से लिया गया है, जहाँ मध्यकाल मे मलाबार प्रदेश "तोडी मण्डलम्" के नाम से प्रसिद्ध था। वीणा दक्षिण का प्रसिद्ध वाद्य है। चित्रगत राग का तात्पर्य स्पष्ट है। उससे यही ध्वनि निकलती है कि कोई युवती किशोरावस्था को पीछे छोड कर यौवन मे पदार्पण करती है। उसके सौन्दर्य संगीत से आकृष्ट होकर मृग-रूपी प्रेमी युवक उसके चारों ओर एकत्र हो रहे हैं। बिलावल के चित्र में यौवन-गर्विता नायिका दर्पण में अपना सौन्दर्य देख कर अपने ही

रूप पर रीझती हुई दिखाई जाती है। भैरवी रागिनी के चित्र अत्यन्त प्रसिद्ध और सुन्दर हैं। इनमें शिव की प्राप्ति के लिए शिव-पूजा में निरत स्त्री अंकित की गई है। वसन्त राग के चित्र भारतीय वसन्त ऋतु के मानसिक उल्लास और प्राकृतिक सौन्दर्य को प्रकट करते हैं। प्रायः मृदंग बजाती हुई सखियों के साथ नृत्य से थिरकते हुए कृष्ण इन चित्रों के विषय हैं। भैरवी, मालव, श्रीराग, वसन्त, दीपक और मेघ, इनका सम्बन्ध छः ऋतुओं से है और प्रत्येक राग का सम्बन्ध पांच या अधिक रागनियों से है। इन सबके चित्रांकन में चित्रकारों को भाव और सौन्दर्य का विस्तृत क्षेत्र प्राप्त हुआ और इस प्रकार राजस्थानी चित्र शैली भारतीय जीवन की व्यापकता के साथ मिल गई।

राजस्थान–गुजरात की सीमा के समीप इस शैली का पूर्वोदय हुआ होगा। अवश्य ही उदयपुर, मेवाड़ और मालवा में इसकी आरम्भिक लीला भूमि होनी चाहिए। उस सामग्री का सुव्यवस्थित अनुसंधान कर्त्तव्य शेष है। सोलहवीं सदी के निश्चित उदाहरण अभी तक उपन्यस्त नहीं किये जा सके हैं। किन्तु शैली के विकास की दृष्टि से यह माना जा सकता है कि जिस चित्रकला का मध्याह्न सत्रहवीं सदी में हुआ होगा उसका आरंभ लगभग एक सदी पूर्व तो हुआ ही होगा। डाक्टर आनन्द कुमार स्वामी अपनी पारखी आँख से कुछ राजस्थानी चित्रों की शैली सोलहवीं शती को स्वीकार करते हैं। इस विषय में अभी इस शैली के समुचित अध्ययन से और भी नई जानकारी मिलने की आशा है। शनैः शनैः राजस्थान के पूरे क्षेत्र में यह चित्र शैली व्याप्त हो गई और उदयपुर की भांति अनेक राज्यों में इसके रचना केन्द्र स्थापित हो गये। राज्याश्रय से बाहर भी अनेक चित्रकार बराबर चित्र लिख रहे थे। राजस्थान में शायद ही कोई ठिकाना ऐसा हो जहां इस शैली के चित्र न लिखे गये हों।

राजस्थानी चित्र शैली की श्वासवायु राज-दरबारों के अवरुद्ध वातावरण से नहीं, जनता के उच्छ्वासित वास्तविक जीवन से आई है। सत्रहवीं सदी में तो चित्रों के विषयों का सम्बन्ध राजकीय जीवन से नहीं के बराबर है उसमें जीवन का ही आलेखन हुआ है। लगभग तीन सदियों तक लोक मानस को रस की अभूतपूर्व अनुभूति से इस शैली ने आनन्दित किया है। वसन्त में क्रमशः आने वाले मलयानिल की भांति देश के एक कोने से उठ कर इस चित्र शैली ने विस्तृत भू-खण्ड को आच्छादित कर लिया। राजस्थानी चित्रों में भावों के अपूर्व मेघ-जल बरसे हैं। भाव और कल्पना की अनेक धाराएं इस चित्र शैली में लीन हो गईं। राजस्थानी चित्रकार रंगों के जादूगर थे। उनकी वर्णव्यञ्जना सचमुच किसी अभूतपूर्व नेत्र-कौमुदी का सुख देती है। उनके चित्र रस के अक्षय सोते हैं। सचित्र ग्रंथ और फुटकर चित्रावली के रूप में अनेक भावात्मक चित्रों का अंकन राजस्थानी शैली में हुआ। मनोभावों की चित्रात्मक अभिव्यक्ति [illegible]

मानवीय हृदय सदा रस का अभिलाषी होता है। राजस्थानी चित्र ... हैं। अतएव इन चित्रों की भाषा मानवीय हृदय के अति सन्निकट है। श्री कुमार स्वामी के शब्दों में "राजस्थानी चित्रकला विश्व की महान चित्र शैलियों में स्थान पाने योग्य है।"

यहा संक्षेप में राजस्थान की सभी प्रमुख चित्र शैलियों का परिचय प्रस्तुत किया जा रहा है।

जयपुर शैली

जयपुर की चित्रकला शैली का प्रारम्भ यूं तो भित्ति चित्रण के रूप में 17वीं सदी में महाराज मानसिंह के समय से ही प्रारम्भ हो चुका था किन्तु इसे व्यवस्थित रूप से विकसित होने का सुयोग जयपुर नगर के निर्माता और कलाप्रेमी शासक महाराज जयसिंह के शासन काल मे मिला।

मुगल सम्राट औरंगजेब का ललित कलाओ विशेषतः चित्रकला के प्रति असहिष्णुतापूर्ण व्यवहार सर्वविदित है। इसी कारण जब मुगल दरबार से संबद्ध कलाकार दिल्ली से पलायन करने लगे तभी उनमे से कई ख्यातनामा कलाकारो को महाराजा जयसिंह अपने साथ जयपुर ले आये। इस दौर के अन्य प्रसिद्ध कलाकार समीपवर्ती कांगड़ा, पजाब, उत्तरप्रदेश और मध्य भारत की ओर चले गये जबकि कुछ अन्य राजपूताने की अन्य देशी रियासतो तथा सामन्तो के यहां चले गये।

जयपुर शैली को समृद्ध बनाने में इन कलाकारों, तथा उनके वंशजो एवं उनकी शिष्य परम्परा में जुड़े चित्रकारो का विशिष्ट योगदान रहा है। जयपुर अंचल के शेखावाटी क्षेत्र की हवेलियों के भित्ति चित्रण तथा समीपवर्ती भरतपुर, धौलपुर, करौली व टौंक रियासतों की कलाकृतियों पर भी जयपुर कलम की चित्र शैली का ही प्रभाव है।

सवाई जयसिंह के उत्तराधिकारी सवाई ईश्वरीसिंह के समय में उनके दरबार के आश्रित रहे कलाकार साहिबराम ने स्वयं ईश्वरीसिंह का एक आदमकद पोर्ट्रेट (व्यक्ति चित्र) तैयार किया था जो आज भी पोर्ट्रेट शैली के चित्रांकन का एक बेहतरीन नमूना माना जाता है।

इसके पश्चात् महाराज प्रतापसिंह के शासन काल में जयपुर चित्रकला शैली ने एक नये युग में प्रवेश किया। इनके राज दरबार मे लगभग 50 दक्ष चित्रकार थे जिन्होंने व्यक्ति चित्रो (पोर्ट्रेट) के अलावा राग-रागनियो बारहमासा दुर्गापाठ तथा भागवत के प्रसंगों पर आधारित एक से एक सुन्दर चित्रों का निर्माण किया। इनमें से स्वयं महाराजा प्रतापसिंह का पोर्ट्रेट तथा राधाकृष्ण की रास-लीला का चित्र अपने कलात्मक सौंदर्य और चित्रांकन की बारीकी के कारण चित्र कला जगत में समादृत हुए हैं। ये तीनो ही चित्र साहिब राम द्वारा बनाये गये

थे। जयपुर के चित्रकार बड़े-बड़े कैनवास पर आदमकद पोर्ट्रेट बनाने में विशेष कुशल थे। लघुचित्र पद्धति से बनाये गये इन चित्रों में युद्ध के दृश्यों, पशु पक्षियों, राजसी सवारी के लवाजमों तथा फूल-पत्तियों का चित्रांकन अतीव सुन्दर बन पड़ा है।

जयपुर शैली के चित्रों में हाशिये प्रायः लाल रंग के हैं तथा इनमें काफी भड़कीलापन है। सफेद, लाल, नीला, पीला तथा हरा रंग चित्रकारों को विशेष प्रिय रहा है यद्यपि कहीं-कहीं चांदी व जस्ते के रंग का भी प्रयोग किया गया है। जयपुर शैली के चित्रों में पुरुष व महिला पात्रों का कद आनुपातिक रखा जाता है। पुरुष पात्रों के चित्रांकन मे बड़े उनींदे से नेत्र होते हैं जबकि अधर मोटे, चिबुक मासल तथा उठी हुई दर्शायी जाती हैं, चित्र में नायक का चेहरा कहीं साफ-सुथि क्करण दिखाया जाता है तो कहीं इन पर गहरे रंग की झलक होती है जयपुर शैली के पुरुष पात्रों मे मूंछें व केश राशि लम्बी और भरी-भरी रखी जाती है जबकि दाढ़ी प्रायः नही दिखाई जाती।

नारी पात्रों के चित्रो में मांसल सौंदर्य, बड़ी-बड़ी आंखें तथा सुदीर्घ केशराशि तथा भावाभिव्यक्ति पर विशेष जोर रखा जाता है। इन नारी पात्रों का चेहरा अण्डाकार, भौंह उठी हुई, सुडौल नासिका तथा पतले कोमल से अधर दर्शनीय होते है। केश राशि कहीं खुली दर्शायी जाती है तो कहीं जूड़ा बंधा होता है। हाथ-पांवों में मेहन्दी और ललाट पर बिन्दी अथवा चन्दन का लेप नारी पात्रों के सौंदर्य को और भी मनमोहक बना देता है। जहां तक पुरुष व महिला पात्रों की आभूषण सज्जा का प्रश्न है जयपुर शैली के पुरुष पात्रो मे सिर की पगड़ी पर कलंगी अथवा सेहरा, कानों में बाली या लौंग, गले मे माला या कण्ठी, हाथों मे कड़ा, भुजबन्ध तथा पैरों में भी कड़े पहिना कर दर्शाया जाता है। इससे नायक का स्वरूप और भी सुदर्शन हो जाता है। इसके विपरीत नारी पात्रों के चित्रांकन में आभूषण-सज्जा के अन्तर्गत मीनाकारी अथवा रत्नजड़ित आभूषणों यथा; टीका, टीकी, बाली, हार, सतलड़ी, हंसली, कण्ठा, बाजूबन्ध, चूड़ी, पायजेब, करधनी आदि सामान्यतः दर्शाये जाते हैं।

जयपुर के कलाकार उद्यान दृश्यों के चित्रण में भी अत्यन्त दक्ष थे। विविध किस्म के पेड़-पौधो व फूलों तथा पशु-पक्षियों का जयपुर शैली के चित्रों में प्राधान्य रहा है। पशुओं में जहां शेर, चीता, हाथी, रीछ, गिलहरी, भेड़, बकरी, कुत्ता, बिल्ली, हिरन व चिकारा तथा पक्षियों में तोता, मोर, कौआ, हंस व बतख आदि का चित्रांकन किया जाता है।

जयपुर शैली के चित्रो में तकनीकी संयोजन, रंग विधान, आकृतियां, वेश-भूषा देखते ही बनती है, यह शैली प्रौढ़, साधना सम्पन्न और परिश्रम साध्य है

है जिसमें मौलिक कल्पना से अधिक अनुकृतियां तैयार करने की परम्परा रही है।

अंग्रेजों से सम्पर्क की शुरूआत के साथ आये विदेशी प्रभाव के साथ ही जयपुर शैली के परम्परागत चित्रांकन का स्वरूप बिसरने लगा और नई पीढ़ी के कलाकार चाहकर भी विदेशी प्रभाव से मुक्त नहीं रह सके। महाराजा रामसिंह के शासनकाल के प्रारम्भ होने तक जयपुर शैली के परम्परागत स्वरूप का ह्रास हो गया। स्थानीय शैली से नितान्त भिन्न यथार्थवादी नई शैली के प्रभाव को हृदयगम करने के कारण ही महाराज रामसिंह द्वितीय ने लगभग 125 वर्ष पूर्व जयपुर में कलात्मक प्रवृत्तियों को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से महाराजाज स्कूल ऑफ आर्टस एण्ड क्राफ्टस की स्थापना की। इसके बावजूद 1900 ई. तक जयपुर सहित समूचे राजस्थान में परम्परागत चित्रकला की आंचलिक शैलियां एक-एक कर विदेशी चित्रांकन पद्धति की ड्रॉइंग व लीथोप्रिन्ट पद्धति के सामने अपने-आप को असहाय प्रतीत करने लगीं। यही हाल लघु चित्रांकन पद्धति का भी हो गया।

किशनगढ़ शैली

किशनगढ़ को जोधपुर राज्य के वंशजों ने बसाया है जो जयपुर और अजमेर के बीच में एक सुन्दर नगर के रूप में विद्यमान है। यहां के राजाओं से [illegible] को जो प्रोत्साहन मिला उससे राजस्थान की सांस्कृतिक और कलात्मक प्रगति के इतिहास में किशनगढ़ भी एक प्रमुख पृष्ठ बन गया।

राजस्थान चित्रकला की विभिन्न आंचलिक शैलियों में किशनगढ़ शैली का जो स्थान है वह कलात्मक दृष्टि से इतना माधुर्यपूर्ण है कि दर्शक यहां के बने चित्रों को देखकर सहज ही कल्पनालोक में खो जाता है।

किशनगढ़ शैली के चित्रों में रेखाओं की गति का इतना अधिकार है कि वे कम से कम संख्या में होने पर भी अपनी विषय-वस्तु को पूर्णतया स्पष्ट कर देती हैं। इसी विशेषता के कारण किशनगढ़ शैली ने कला प्रेमियों का ध्यान अपनी ओर खींचा है।

किशनगढ़ शैली का प्रवर्तक यहां 19वीं सदी में हुए राजा सावन्तसिंह को बताया जाता है। नागरीदास के उपनाम से चर्चित सावंतसिंह एक ऐसे शासक हुए थे जो कभी न राजनैतिक क्षेत्र में चर्चित रहे और न ही जिन्होंने राज्य के शासन में अपनी रुचि ली। एक असम्पृक्त योगी की भांति जीवन व्यतीत करने वाले किशनगढ़ के कलाप्रेमी शासक सावंतसिंह भावुक प्रकृति के शासक थे। किशनगढ़ राजवंश में वल्लभकुल सम्प्रदाय का प्रभाव अधिक होने के कारण कृष्ण भक्ति को माध्यम बनाकर राधा कृष्ण की प्रेम लीलाओं को ही किशनगढ़ शैली में प्रधानतः चित्रित किया गया है।

कवि नागरीदास कृष्ण भक्त, कवि, विचारक, सन्त तथा कला प्रेमी राजा थे

जिन्होंने अपनी प्रिया 'बणी-ठणी' के नख-शिख सौन्दर्य के चित्रांकन में भक्ति रस की ऐसी धारा बहाई जिससे राजस्थान में किशनगढ़ शैली की एक नई पहचान बनी।

किशनगढ़ शैली के चित्रों में पुरुष पात्रों के चित्रों में लम्बा छरहरा शरीर, जटा-जूट की भांति ऊपर की ओर उठी पगड़ियां, जिनमें मोतियों के झुमके और झालरें लटकी रहती हैं, दर्शाया जाता है। इसी प्रकार खुले केशों पर जो कभी कन्धे से नीचे तक झूले हुये रहते हैं, दुग्ध-धवल पगड़ियां, समुन्नत ललाट, दीर्घ और ऊंची उठी नासिका, पतले-रसीले अधर जो सिन्दूर की सुर्खी लगा कर हिंगलू की रेखा से खोले गये बनाये गये हैं, इस शैली के पुरुष पात्रों में दर्शाये जाते हैं।

नारी आकृतियों में नारी सुलभ लावण्य एवं कोमलता दीखती है। खंजन के समान सुन्दर कटीली आंखें, लम्बी केश राशि, सुदीर्घ नासिका, उन्नत ललाट, गुलाब की पंखुड़ियों से अधरों तथा अधः खुले से वक्षस्थल में नारी के काव्य कल्पित रूप सौंदर्य का मनमोहक चित्रण किशनगढ़ शैली की विशेषता है। नारी पात्रों के उन्नत ललाट शीशफूल या चन्दन के लेप से पीताभ रहता है, अत्यन्त क्षीण कटिबंध, आपाद लहंगा, कपोलों पर झूलती-बलखाती अलकें उरोजों तक पहुंची दिखाई जाती हैं जबकि अंगुठियों से सुसज्जित लम्बी और पतली अंगुलियां कमल नाल लिये चित्रित की जाती हैं।

नारी सुलभ सुकुमार लावण्यता, माधुर्य तथा कमल-कुसुम से भी मृदु आकृतियां नायिका सौंदर्य का एक ऐसा आदर्श रूप उपस्थित करती है, जो मानवीय कल्पना को एक ऐसे निराले ही लोक में ले जाती है। ये आकृतियां साधारण जनों की प्रतिकृतियां साधारण वैभव की द्योतक नहीं हैं बल्कि दैवी वैभव की प्रतीक लगती हैं। वैकुण्ठ सा वैभव और राधा का अनिंद्य रूप सौन्दर्य ही मानों चित्रकार की तूलिका का विषय रहा है।

यहां के चित्रों की विषय वस्तु में राग-रागनियां, वैभव-विलास तथा शृंगारिक भावनाएं प्रधान रही हैं जो 'गीत गोविन्द' और तत्कालीन रीति कवियों की परम्परा से अनुप्राणित लगती हैं।

यहां के चित्रों में केले का वृक्ष, कमल के फूल तथा नेत्रों की अन्जनाकृति अपनी विशेषता रखती है। भृकुटियों की अत्यधिक वक्रता तथा त्रिकोणाकृति बनाती हुई रेखाओं की गति भी दर्शनीय है।

किशनगढ़ शैली के चित्रकारों में निहालचन्द, सूरध्वज, अमीरचन्द, धन्ना और छोटू विशेष उल्लेखनीय कलाकार हुए हैं।

यहां की चित्रकला की उन्नति और विकास का श्रेय कवि नागरीदास को है जिनकी साहित्यिक अभिरुचि और कला-प्रेम ने न केवल हमारे सामने चित्रकला की

ऐसी विशिष्ट शैली प्रस्तुत की है जो संसार भर के चित्रकला पारखियों का पथ-प्रदर्शन करती रहेगी।

किशनगढ़ के चित्र रहस्यमय आकार में भी बने हैं। यहां के चित्र रहस्यमयी कल्पनाओं के मूर्त स्वप्न हैं यही कहना पर्याप्त होगा।

मारवाड़ (जोधपुर) शैली

पाली अंचल के रागमाला चित्रों में मारवाड़ की परंपरागत आंचलिक शैली का प्रभाव परिलक्षित होता है। कहीं-कहीं अपभ्रंश शैली के चित्र भी इस अंचल में पाये गये हैं जिनसे यह सिद्ध होता है कि मारवाड़ शैली का विकास शनैः शनैः कई चरणों में हुआ है। यह शैली मुगल प्रभाव से अछूती सी लगती है जिसका अपना मौलिक आंचलिक स्वरूप है। मारवाड़ शैली के चित्रों में ढोला-मारू के बहुचर्चित लोकाख्यान के अतिरिक्त पाबूजी, डूंगजी, जुंझारजी तथा मूमल व निहालदे जैसे लोक नायक नायिकाओं के कथानक भी चित्रों की प्रमुख विषय वस्तु रहे हैं। इसके अलावा अमरसिंह राठौड़ और वीरवर दुर्गादास की शबीहें (पोर्ट्रेट) तथा इनके शौर्य पूर्ण युद्ध कौशल का चित्रांकन भी मारवाड़ शैली के चित्रों में बहुलता से किया गया है।

इस शैली में प्रयुक्त प्रकृति चित्रण में घने काले मेघों, स्वर्ण-लता सी कौंधती विद्युत लहर और रक्ताभ कोंपल से युक्त आम की वृक्षावलियों का विशेष प्राधान्य रहता है। यह इस शैली की एक मौलिक अभिव्यंजना भी कही जा सकती है। मारवाड़ शैली के चित्रांकन में मोर के चित्र भी प्रचुरता से दर्शाये जाते हैं जो स्वयं में बड़े स्वाभाविक और लौकिक लगते हैं।

मारवाड़ शैली के चित्रों में प्रमुख पात्रों की कदकाठी भव्य और प्रभावशाली होती है। कान के नीचे तक जाती केशराशि और घनी दाढ़ी-मूछों के कारण इनमें एक पुरुषोचित तेज भी झलकता है। वेशभूषा की दृष्टि से पुरुष पात्रों की पोशाक में सफेद रंग का गोल अंगरखा, कमरबन्द और बड़े आकार का पायजामा होता है जिस पर कमर से धरती तक लटकती तलवार और हाथों में भाला होने से ये आकृतियां वीरोचित दर्प से लकदक लगने लगती हैं। कानों में मोती और सर पर शिखराकार पगड़ी का चित्रण किया जाता है।

स्त्री पात्रों के चित्रण में वस्त्राभूषण मुगल शैली के चित्रों के नारी पात्रों की तरह के होते हैं। उरोजों पर कसी हुई पारदर्शक कंचुकी, लाल-पीला केसरिया अथवा कसूमल रंग का ओढ़ना, लंहगा और कहीं-कहीं इसके स्थान पर चूड़ीदार पायजामे के साथ महीन दुपट्टा या जामा भी दिखाया जाता है। किसी-किसी चित्र में महिला पात्रों के सिर पर पगड़ी तथा टोपी और पैरों में मखमली सुनहरी काम की जूतियां भी दर्शायी गई हैं जो स्पष्टतः मुगल शैली के प्रभाव को दर्शाती हैं।

आभूषणों में मोतियों की माला के अलावा टीका, टोटी, वाली, वेसर, लूंग, नथ, आड़, टेवटा, गलसरी, कठी, हार, माला, लाकेट, भुजबन्ध इत्यादि सामान्यतः प्रयुक्त किये जाते हैं।

रंग विधान

जोधपुर शैली के चित्रों में प्रायः पीला रंग अधिक होता है। हाशिये लाल और उनकी सीमान्त रेखा, पीले रंग से खींची जाती है।

हाशियों पर कभी-कभी पक्षियों का चित्रण भी होता है पर बहुत कम। वृक्षों में अन्य वृक्षों की अपेक्षा आम के पेड़ अधिक दर्शाये गये हैं। पशु-पक्षियों में ऊंट, घोड़ा तथा कुत्ता अधिक चित्रित किया गया है। बादलों को अधिक घने तथा काले रंग में गोलाकार दिखाया गया है।

विषय

रामायण, महाभारत से लेकर जैन कथाएं, वीर गाथा, ग्राम्य दृश्य, राग-रागनियां तथा लोक नायक-नायिकाओं की कथाओं के चित्रण पर विशेष बल दिया गया है। जागीरदारों के व्यक्ति चित्र, उत्सवों और उनके भित्ति चित्रों की प्रधानता भी यहां की शैली में है।

प्रमुख चित्रकार

इस शैली के प्रमुख चित्रकार जिनके नाम उपलब्ध हैं इस प्रकार हैं— वीरजी (1623) नारायनदा (1700) भाटी अमरदास (1750) छज्जूभाटी, किशनदास (1800) भाटी शिवदास, देवदास, जीतमल (1825) कालारामू (1831) इत्यादि हैं।

अलवर शैली

इस शैली का प्रारम्भ सन् 1775 से माना जाता है जब राजा प्रताप सिंह ने अलवर राज्य की स्थापना की। दिल्ली साम्राज्य का पतन होने से कलाकार आजीविका की खोज में इधर-उधर बिखरने लगे थे और चूंकि दिल्ली से अलवर समीप था, इसी से अलवर के राजाओं ने दिल्ली की कलात्मक वस्तुओं को खरीद कर अपने यहां इकट्ठा कर लिया और अनेकों कलाकारों को भी अपने यहां आश्रय दिया।

डालचन्द और बलदेव अलवर शैली के प्रमुख कलाकार थे। डालचन्द ने राजपूत शैली और बलदेव ने मुगल शैली में चित्रांकन कार्य किया था। इनके अलावा गंगाविशन और किशन नाम के चित्रकार भी थे। महाराजा विनय सिंह अलवर के समस्त राजाओं में कला के प्रति विशेष रूझान रखते थे उनके समय में ही कला की अधिक उन्नति हुई।

दिल्ली से आये चित्रकारों में गुलाम अली नामक एक चित्रकार भी था, जो मुगल शैली के चित्रांकन में विशेष दक्ष था। राजा स्वयं चित्रकारी का शौक रखते थे। चित्रकार बलदेव राजा के कला गुरू थे।

महाराजा विनय सिंह ने कलाकारों को बड़ा सम्मान दिया । उन्होंने
सादी की "गुलिस्ता" की प्रतिलिपि अपने निरीक्षण में चित्रांकित कराई जो कि
गुलामअली और बलदव द्वारा चित्रित की गई थी ।

इनके समय में यद्यपि चित्रों की संख्या अधिक नहीं थी तब भी अपनी रच-
त्मक विशेषता प्रकट करने में ये पीछे नहीं रहे । चित्रों के विषय कल्पना को
ही नहीं भरते बल्कि इनमें आदर्शों की भी छाप है ।

सुन्दरी गणिकाओं, साधुओं, ग्रामीणों और जन-सामान्य के चित्र यहां
शैली में बनाये गये हैं ।

अलवर की बनी "वुसलियों" का व्यवसाय अभी कुछ साल पहले तक है
था-जिनको पुराने चित्रों पर लगाने से चित्रों की शोभा और बढ़ जाती थी ।
लियों के बेलबूटे, उन पर सोने का काम बड़ा सुन्दर तथा श्रेष्ठ मुगल चित्रों
तुलना में रखा जाने योग्य था ।

हाथी दांत की पटरियों पर चित्र बनाने की शैली भी उल्लेखनीय है
राजस्थान के किसी अन्य अचल में नहीं पाई जाती । अलवर के चित्रकारों
रामसहाय, शिवसहाय, राम प्रताप आदि इस प्रकार के सिद्धहस्त कलाकार थे ।

अलवर शैली के चित्रों की आकृति सर्वथा जयपुर के समान है, केवल स्त्रि-
को वेणी और पुरुषों की पगड़ियों में भिन्नता दिखाई देती है—यहां के चित्रों
मुगल चित्रों जैसा बारीक काम, परदादों की धुंआं के समान छाया तथा रेखाओं
सुघड़ता देखने लायक है । छोटी से छोटी आकृतियों में भी इतना परिश्रम किया ग-
है कि वे गहन साधना की प्रतीक लगती हैं ।

अलवर शैली में राधा कृष्ण के दर्शनीय चित्रों के अलावा वेश्याओं के चि-
तथा अंग्रेजी शैली से प्रभावित लोक जीवन संबंधी चित्र है । कुछ चित्र शि-
सम्बन्धी भी बने हैं–राजाओं के "शबीह" चित्र तथा प्रसिद्ध व्यक्तियों के चित्र
चित्रित किये गये हैं ।

अलवर के लघु चित्रों में हरे व नीले रंग का अधिकता से प्रयोग किया ग-
है । इसका कारण यह था कि ये दोनों रंग बाहर के देशों से बनकर आने लगे थे ।
चित्रों के हाशिये बनाने में प्रायः नीले और पीले रंग का प्रयोग किया गया है ।

अलवर शैली के प्राचीन चित्रों में पुरुष एवं महिला आकृतियों में आं-
मछली जैसी गोल और होंठ पतले-पतले तथा पान की पीक से रचे दिखाये गये ।

चित्रों में चिबुक तीखी तथा भवें कमान की तरह तथा मुख प्रायः गोलाकार
पाया जाता है । स्त्रियों की चोटी ऊपर चढ़कर नीचे लटकती हुई और
गई है—नाक में बड़ी सी नथ और कानों में बड़ी-बड़ी बालियां और पैर में
दर्शायी जाती है । तात्पर्य यह है कि इस शैली में स्त्रियों को अधिक से अधिक
पहने दिखाया गया है ।

वेश-भूषा में स्त्रियों को पजामा, कुर्ता और चोली पहने बताया है—लेकिन राधाकृष्ण के चित्रण में नारियों को लंहगा, चुनरी और कंचुकी पहने दिखाया है।

पुरुषों को गले मे रूमाल डाले कमर तक अंगरखी, जयपुर जैसी पगड़ी और कंधे पर दुपट्टा रखे दिखाया गया है। कहीं-कहीं टोपी या साफा पहने भी दिखाया है। किसान तथा साधारण कोटि के व्यक्ति को धोती और कन्धे पर अंगोछा रखे बताया गया है।

यद्यपि अलवर शैली का स्त्रोत मुख्यतः जयपुर ही था—परन्तु इसमे मथुरा शैली का तथा दिल्ली के निकट होने व वहां के कलाकारो के आ जाने से मुगल शैली का प्रभाव भी परिलक्षित होता है। यहां के लघु चित्र सहज ही पहचाने जा सकते हैं।

नाथद्वारा शैली

इस शैली की चित्रकला ने भक्ति भाव के वातावरण में आश्रय पाया है। मेवाड़ की राजधानी उदयपुर से तीस मील की दूरी पर कला व सस्कृति का केन्द्र नाथद्वारा स्थित है। जिसमे आकर्षण के केन्द्र बिन्दु वल्लभ सप्रदाय के आराध्य श्री नाथ जी रहे हैं।

यहा के चित्रों मे भगवान की मूर्ति का आलेखन ही प्रधान उद्देश्य रहा है जिनको सहस्त्रों मे आकृतियो व रूपो मे, कलाकार की अपनी भावनाओं के अनुरूप, चित्रांकित किया गया है।

यहां की चित्रकला मथुरा शैली के समान है फिर भी अपना पृथक अस्तित्व व पहचान रखे हुए है।

इस शैली में न राग है न रागनियां। केवल मात्र यहा गायें चराते कृष्ण, यशोदा की गोद में खेलते कृष्ण, घुटनों के बल चलते कन्हैया और माखन चुराते गोपाल कृष्ण की छवि को ही चित्रित किया गया है। गोपो की मण्डली, गोपियो की भीड़, भगवान के जन्मोत्सव पर हर्षोन्मत होती भीड़ के दृश्य दिखाए गए है।

चित्रकार कहते हैं कि बालकृष्ण ही उनके आराध्य हैं। बहुत से चित्र बाल लीला को लेकर बनाए गए हैं।

नाथ द्वारा के चित्रों में पुष्ट गायों का आलेखन बड़ी कुशलता से किया गया है चित्रों के रंग की प्रखर रेखायें गतिहीन और संयोजन सर्वथा अरूचिकर प्रतीत होते हैं।

आखें बड़ी, अधर किन्चित स्थूल, कलेवर छोटा, आकार में स्थूलता तथा भावो मे वात्सल्य ही प्रधान भाव रहता है। वस्त्रों में भी वही परम्परा है किन्तु ग्वालों के चित्र बड़े भाव प्रधान होते हैं, गायें, बछड़े और गोप बालक यहा के चित्रो मे बड़े सुन्दर चित्रित किये गये हैं।

कुछ चित्र जैसे ब्रह्मा के द्वारा बछड़ा चुराया जाना, शिवजी का दर्शनों के लिये नन्द द्वार पर जाना, बालकृष्ण को ताड़ना करती यशोदा, ऊखल से बंधे कृष्ण,

पूतना वध आदि बड़े ही मनमोहक हैं। यहां की चित्र शैली ग्राम्य कला के ओजस्वी और गति-शील अवश्य है किन्तु किसी प्रकार का उचित प्रोत्साहन न मिलने के कारण व्यापारिक बन गई है। नाथद्वारा शैली अपभ्रंश, मेवाड़, मारवाड़ एवं जयपुर की शैलियों का अनूठा संगम है। आगे कालक्रम में नाथद्वारा शैली उन्नत होती गई, उसने अपना पृथक एवं विशिष्ट स्थान बनाया इस शैली में मुखाकृतियां अन्य शैलियों से भिन्न हैं। आंखें फड़कती मछली के अनुरूप, पर किशनगढ़ शैली की आंखों से कम वक्रता लिये हैं।

यहां की शैली में कपड़ों की सलवट साफ नजर आती हुई बनाई गई है। कलाकार की अपनी कल्पना के आधार पर किये गये चित्रांकन के कारण दृश्य चित्रों में प्राचीन, पाश्चात्य एवं अर्वाचीन प्रभाव अधिक दीखते हैं। इस शैली ने भारतीय चित्र परम्परा और स्थानीय विशेषताओं एवं मान्यताओं को ओझल नहीं होने दिया है बल्कि नित नूतन परिवर्तनों की पृष्ठ भूमि के अनुरूप अपने अस्तित्व को प्रबल एवं पुष्ट ही किया है।

जैसलमेर शैली

राजस्थानी चित्रकला की चित्रांकन शैलियों में जैसलमेर चित्र शैली का भी विशिष्ट स्थान है।

यद्यपि उत्तरी राजस्थान में मारवाड़ की चित्रकला ही प्रधान और व्यापक है, तब भी जैसलमेर के चित्रकारों की तूलिका में जैसा लालित्य और दक्षता देखने को मिलती है वैसी राजस्थान के किसी अन्य अंचल की चित्रकला शैलियों में नहीं दिखाई देती।

जैसलमेर के इन चितेरों ने मुगलकलम का प्रभाव अपने पर नहीं आने दिया और न किसी के अनुकरण की चेष्टा की। यहां के कला प्रेमी शासकों का संरक्षण न रहने से न तो यहां किसी तरह का संग्रहालय ही बन सका और न ही चित्रकला मर्मज्ञों का विशेष आवागमन ही रहा। फलस्वरूप जैसलमेर शैली के चित्रों का एक स्थान पर व्यवस्थित संग्रह आज तक उपलब्ध नहीं हो सका है। थोड़े बहुत चित्र जो महलों, नगर के मोहल्लों की हवेलियों, और निजी लोगों के पास यत्र-तत्र उपलब्ध हैं उन्हीं के आधार पर जैसलमेर शैली के चित्रों का मूल्यांकन किया जाता रहा है।

जैसलमेर की चित्रकला पर यद्यपि कांगड़ा शैली का प्रभाव प्रत्यक्षतः दृष्टिगत नहीं होता, फिर भी यहां के चित्रों की भाव भंगिमा, रेखाएं तथा रंग संयोजना में कांगड़ा शैली का प्रभाव परिलक्षित होता है। इन चित्रों की विषयवस्तु राजस्थानी होते हुए भी उनके स्पष्टीकरण में बड़ी भिन्नता दीख पड़ती है। राजस्थान का चित्रकार मालकौंस राग को राजा के रूप में चित्रित करता है किन्तु जैसलमेर का चित्रकार इसी मालकौंस को शिकारी के रूप में देखता है।

जैसलमेर के चित्रों में रंगो की स्वच्छन्दता तथा स्वर्ण-रजत रंगों का उपयोग बड़ा ही नयनाभिराम दिखाई देता है।

इस शैली के चित्रों में पुरुषो की आकृति ओज और वीरता से परिपूर्ण दिखाई गई है । सिर पर बंधी पगड़ियां विशेष प्रकार से बधी हुई और पीछे की ओर अधिक झुकी हुई दिखाई देती हैं । शरीर तने हुए और शक्तिशाली चित्रित किये गये है जो यहां की वीर भावनाओ के परिचायक हैं ।

नारी चित्रों में मुख खिचे हुए, यौवन की दीप्ति से परिपूर्ण, सुन्दर और कलापूर्ण हैं । नेत्रों को अगों के अनुपात से चित्रित किया गया है न कि कल्पना के आधार पर । बनावट की दृष्टि से इन्हें हम तीखे एव रस-भरे कह सकते है । अंगुलियों की बनावट आकर्षक और विशिष्टता लिये हुए है ।

राग-रागनियो के चित्रो मे भी जैसलमेर शैली अपनी विशेषता रखती है ।

इस शैली मे रंगो का बाहुल्य न होकर कला-तत्व की छाप विशेष रूप से देखने को मिलती है । यहां के चित्रकारो ने कला के बाह्य पक्ष की ओर ध्यान न देकर आंतरिक पक्ष की ओर विशेष ध्यान दिया है । यही कारण है कि रगों के माध्यम से यहां के कलाकारों ने अपने चित्रो के स्वरूप को बड़ी ही सजीवता के साथ सजोया है जो आज भी अपनी अलग पहचान रखते हैं ।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जैसलमेर की चित्र शैली का राजस्थानी चित्रकला मे अपना विशिष्ट स्थान है ।

कोटा शैली

कोटा राज्य की स्थापना 1621 में माधोसिंह जी ने की थी । यह बूंदी के राव राजा रतन सिंह के द्वितीय पुत्र थे, इस नाते कोटा और बूंदी का राजवंश एक ही कहा जा सकता है ।

अठारहवी तथा उन्नीसवी शताब्दी के संधिकाल में कोटा की चित्रकला का विकास हुआ । यह विकास राजा रामसिंह के शासन काल में विशेष रूप से हुआ ।

कोटा शैली के चित्रांकन में बूंदी जैसी कल्पना व परिमार्जित शैली देखने को नही मिलती । यहां के चित्र बूंदी शैली के चित्रों की प्रतिलिपि मात्र हैं ।

भावों की गहनता और विशिष्टता, विषयानुकूल अंकन तथा चयन की सुघड़ता, सौन्दर्य एवं लास्य परियोजना तथा कला के विभिन्न अंगों जैसे सादृश्य, वर्णिका भंग, रूप भेद, प्रमाण आदि के परिप्रेक्ष्य में कोटा शैली के चित्र राजस्थान की चित्रकला शैलियो मे अपना एक अलग तथा विशिष्ट अस्तित्व रखते हैं ।

कोटा के चित्रों में कलाकार कल्पनालोक की गहराई तक प्रवेश करने के बावजूद चित्र निर्माण के प्रयोजन-सूत्रों, जीवन्त घटनाओं तथा ऐतिहासिक संदर्भों को नहीं भुला पाया है ।

इस शैली के कलाकारों ने राजाओ के आकृति अंकन 'पोर्ट्रेट' के अलावा धार्मिक आयोजनों और प्रसंगो पर भी चित्र बनाये हैं । कोटा शैली के चित्र निम्न

स्तरीय होते हुए भी अपेक्षाकृत अधिक संख्या में बनाये गये हैं। यही कारण है कि राजस्थानी चित्र शैलियों में इनकी विशिष्ट पहचान बनी है।

बूंदी शैली में दरबारी दृश्यों, जुलूसों, श्री कृष्ण की जीवन लीला से संबंधित चित्रों, राजाओं के पोर्ट्रेट आदि प्रमुख विषय रहे हैं। बारह मासा, राग-रागनियां तथा युद्ध आदि विषयों पर भी पर्याप्त चित्र बने हैं।

यहां के चित्रों की पुरुषाकृति में वृषभ स्कंध, उन्नत भाल, मोतियों की माला धारण किये मांसल देहयष्टि दिखाई देती है। मुख पर भरी-भरी दाढ़ी और मूंछें, तलवार-कटार आदि हथियारों से युक्त वेशभूषा तथा मोतियों से जड़े आभूषण पुरुष आकृतियों की छवि में चार-चांद लगाते से प्रतीत होते हैं।

नारी आकृतियां पुरुषाकृतियों से कहीं अधिक सुन्दर बनी हैं। पतले अधर, लम्बी नासिका तथा कटि क्षीण दिखाई गई है। खंजन या बादाम के समान बड़ी-बड़ी आंखें और नाक छोटी होती हैं। वक्ष अत्यन्त उभरा हुआ, कद अपेक्षाकृत छोटा तथा बदन भारीपन लिये दिखाया गया है।

कोटा शैली में नारी सौन्दर्य का प्राधान्य ही एक विशेषता है।

यहां चित्रकारों ने यूं तो अनेक रंगों का प्रयोग किया है किन्तु हल्के हरे, पीले एवं नीले रंग का प्रयोग अपेक्षाकृत अधिक हुआ है।

चित्रों की पृष्ठभूमि में विभिन्न आकार-प्रकार के भवन, वृक्ष, लता व पुष्प बनाये गये हैं। भवनों के ऊपर बन्दर तथा तोते, चकोर, हंस, बगुले आदि पक्षी एवं वृक्षों की शाखाओं मे अनेक प्रकार के पक्षी चित्रित किये गये है। चित्रों के हाशिये बड़े और बसलियां मोटी बनाई जाती हैं।

कोटा शैली के चित्रों की अधिक संख्या होने से उसकी एक पृथक शैली मानी पड़ती है चाहे वह उत्कृष्ट हो या निकृष्ट। राजस्थानी कला के विकास में इस शैली का पूर्ण योगदान रहा है।

मेवाड़ शैली

राजस्थानी चित्रकला के विकास में मेवाड़ का प्रारम्भ से ही महत्वपूर्ण योगदान रहा है। इतिहासकार श्री तारकनाथ ने भी 7 वी सदी मे मरुदेश के विख्यात चित्रकार श्री रंगधर द्वारा चित्रकला की स्थापना माना है किन्तु तत्कालीन चित्र उपलब्ध नहीं हैं।

अब तक की गई खोज के आधार पर मेवाड़ शैली के चित्रों का पहला संकलन "श्रावण प्रतिक्रमण चूर्णी" नामक सचित्र ग्रंथ मे मिलता है।

अठारहवीं सदी के प्रारम्भ से ही चित्रकला का प्रचार राजस्थान में चारों तरफ होने लगा था। प्रत्येक अंचल मे चित्रकला की उन्नति हुई और राजाओं ने इसमें स्वयं रूचि ली और इस विधा को प्रोत्साहन दिया। उदयपुर की चित्रकला ने इस दौर में अपना विकास किया। चित्र बनाने की परम्परा तो बहुत प्राचीन

काल से राजस्थान में थी, पर कुछ सरस हृदय और भक्तिमार्गी राजाओं के समय में इसे अधिक समृद्ध होने का सुयोग मिला।

महाराणा अमरसिंह, संग्राम सिंह, अरिसिंह, भीमसिंह आदि शासकों के समय में चित्रकला का अधिक प्रसार हुआ। चूंकि ये सभी राजा वल्लभ कुल संप्रदाय के अनुयायी थे अतः कृष्ण लीला पर आधारित चित्र ही अधिक बने। सूरदास द्वारा रचित पदावलियों पर भी कलाकारों ने ऐसे चित्र चित्रित किये जो मन की गहराईयों को छूने वाले हैं।

कृष्ण जन्म पर पुरस्कार वितरण करते नन्द बाबा, गायदान करते हुए, गायों की पूजा आदि विषयों पर आधारित चित्रांकन इस शैली के कलाकारों की स्वतन्त्र कल्पनाओं का प्रतीक है।

समय-समय पर विभिन्न शासकों की रूचि विशेष के अनुरूप चित्रकला में भी परिवर्तन आता गया और विभिन्न प्रकार के चित्र चित्रित होते गये। महाराणा जगत सिंह का समय मेवाड़ी चित्रकला तथा अन्य कलाओं के विकास की दृष्टि से स्वर्णयुग था। इनके समय में अनेक संस्कृत ग्रंथों और हिन्दी के भक्ति कालीन व रीति-कालीन ग्रंथों के विषयवस्तु का चित्रण काफी मात्रा में हुआ जो अलग-अलग संग्रहालयों तथा निजी संग्रहकर्ताओं के पास बिखरा पड़ा है। इनमें 'राधाकृष्ण की लीलाओं से संबंधित काव्यों का चित्रण विशेष उल्लेखनीय है।

मेवाड़ शैली के प्रारंभिक चित्रों में जैन और गुजरात शैली का मिश्रण दृष्टव्य है। साथ ही लोककला की रूक्षता, मोटापन, रेखाओं का भारीपन आदि भी इन चित्रों की विशेषता रही है फिर भी इस शैली की कुछ अपनी ऐसी विशेषताएं हैं जिनके कारण राजस्थान की अन्य शैलियां भी इस शैली से प्रभावित हुई है।

मेवाड़ शैली के चित्रों में पुरुषाकृति गठीली, मूंछों से युक्त भरे चेहरे, विशाल नयन, खुले हुए अधर, छोटी ग्रीवा, उदयपुरी पगड़ी, लम्बा जामा, कमर में दुपट्टा और पाजामा, कानों में मोती, गले में मणियों के हार तथा पगडी पर कलंगी आदि से अलंकृत देह इस शैली की विशेषता है। इसके विपरीत नारी आकृतियां सरलता लिये हैं, मीनाकृतियुक्त आंखें, सीधी लम्बी गोलाई लिये नाक, भरी हुई चिबुक से युक्त मुखाकृतियां सभी प्रभाव पूर्ण तथा विभिन्न मुद्राओं में होती हैं। उरोज अर्द्ध विकसित, कटि क्षीण, अगुलियां पतली होती हैं, गालों पर अलकें झूलती हुई चित्रित की गई हैं। कभी-कभी केश कानो से ऊपर से वेणी में बंधे रहते हैं। नाक में नथ जरा आगे निकली हुई व अधर खुले हुए होते हैं। वस्त्राभूषण-घाघरे घेरदार न होकर पावों से चिपके होते हैं जबकि ओढ़नी छोटी तथा घाघरे के चारों ओर लिपटी थोड़ी सी पारदर्शक होती है तथा वेणी, कमर से नीचे तक झूलती दिखाई जाती है।

मेवाड़ शैली राजस्थानी चित्रकला की अमर धरोहर है। राजस्थान के

धर्मप्रधान शान्तिपूर्ण जनजीवन का जीता जागता स्वरूप मेवाड़ शैली के चित्रों में विशेष रूप से दर्शनीय है।

बूंदी शैली

बूंदी शैली का उद्भव एवं विकास राजस्थान के दक्षिण पूर्वी कोटा से बीस मील दूर बूंदी की छोटी सी रियासत में हुआ, जो ऐतिहासिक महत्व का स्थान रहा है। यहां के राजाओं की वीरता, न्याय प्रियता तथा राष्ट्र प्रेम सदैव आदर की दृष्टि से देखा जाता है।

राजस्थान की अन्य शैलियों की भांति बूंदी शैली में मुगल चित्रों की नकल नहीं की गई वरन् मौलिक कल्पना शैली का आश्रय लिया।

बूंदी राज्य की स्थापना सन् 1938 में राव देवाजी ने की, जो बड़े ही वीर और पराक्रमी थे। इनके बाद के शासकों में एकाध को छोड़कर सभी वीरता और कला प्रेम की दृष्टि से अद्वितीय थे।

यहां के चित्रों में राजस्थानी संस्कृति का विकास पूर्ण रूप से दृष्टिगत होता है चित्रों के विषय राग-रागनियां, नायिका भेद, बारहमासा तथा कृष्ण लीला के प्रसंग रहे हैं। वर्षा ऋतु के चित्र में मस्त होते हाथी, आकाश में घहराते हुए बादलों के बीच थिरकती चंचल-चपल विद्युतलता, बगुलों की पंक्तियां, नाचते और कुहकते हुए मयूर चित्रित किये गये हैं।

वर्षा ऋतु के चित्रण में काला और नीला रंग अधिक काम में लाया गया है जबकि ग्रीष्म ऋतु के चित्रों में बीचों-बीच तपता सूर्य, वृक्षों की छाया में बैठे शिकारी, कुओं पर पानी पीते राहगीर आदि चित्रित किये गये हैं। सूखे सरोवर, झुलसी हुई भूमि और तपी हुई बालू पीले रंग से दिखाकर ग्रीष्म ऋतु के चित्रण को यथेष्ट प्रभावशाली बनाया गया है। इसी प्रकार शीत ऋतु के चित्रण में एक ही वस्त्र ओढ़े आलिंगनबद्ध नायक-नायिका तथा तृण कुटीरों में शीत से बचने के लिए आग जलाकर बैठे किसान चित्रित किए गए हैं।

नायक-नायिका भेद के चित्रों में चित्रकारों ने विशेष कुशलता दिखाई है। इन चित्रों में कल्पना को इतना विस्तार दिया गया है कि विषय के एक-एक अंग को स्पष्ट करके दिखाया है। रंगों और रेखाओं का ऐसा सुन्दर दिग्दर्शन दृष्टि के सामने आता है कि चित्र का आशय और अर्थ ही दर्शक भूल जाता है।

कृष्ण-राधा की प्रेमलीला के आधार पर ही नायिका भेद के चित्र बने हैं पर उनकी विशेषता साहित्यिक दृष्टि से बड़ी सरस बन पड़ी है।

यहां के चित्रों में पुरुष पात्रों की आकृति साधारणतः लम्बी, शरीर गठीला और स्फूर्ति से भरा चित्रित किया गया है।

स्त्रियों की मुखाकृति में अधरों की छटा विचित्र ही प्रकार का सौन्दर्य दिखाती है। अधर इतने लाल हैं कि एक काली पतली रेखा से विभाजित किये गये

है। अधरों के अन्त में सारी लालिमा घनीभूत हो जाती है। नेत्र अर्द्ध विकसित नीचे और ऊपर एक रेखा के गोलार्द्ध में घनी-कालिमा के साथ चित्रित किये गये हैं। नेत्रों मे भाव प्रायः एक जैसा तथा अधरों पर स्मित हास की छटा दिखाई गई है। नासिका प्रायः छोटी, मुख गोलाकृति और चिबुक पीछे की ओर झुकी छोटी होती है। ग्रीवा अधिक लम्बी न होकर छोटी और आभूषणों से सुशोभित रहती है। बाहें लम्बी तथा अंगुलियां मेहन्दी की लालिमा से रंगी चित्रित की गई है। वक्ष उन्नत तथा कंचुकी से कसा हुआ, कटि-क्षीण, उदर सुंता हुआ और पतला दर्शाया जाता है।

वस्त्रों में स्वर्ण रेखाओं का आलेखन इतना झीना एवं पारदर्शक होता है कि शरीर नग्न-सा दिखाई पड़ता है। काले रंग के लहगे, लाल चुनरी, सफेद कंचुकी अधिकतर चित्रों में देखने को मिलती है। वेणी आगे के भाग से नीचे तक झूलती है, जिसमे एक फुंदना लटकता रहता है। लटें कभी गालों पर और कभी कधों के नीचे तक आ जाती हैं। नारी पात्रों के आभूषणो मे हाथ मे हथफूल, ललाट तक नीचे लटकती जड़ाऊ बिन्दी, नाक में छोटे-छोटे मोती, गालो पर चिपके चित्रित किये गये हैं। स्फूर्ति से भरी भाव-भंगिमा, इठलाते यौवन की प्रदर्शित करते अंग-प्रत्यंग, सुन्दर मुखाकृति और सरलता भरे भाव मन को मोहने वाले होते हैं। अधिकतर यहां के चित्रकारो को नारी सौन्दर्य ही प्रिय रहा है।

पुरुषों की आकृतियों में नीचे की ओर झुकी पगड़ियां, घुटनों तक या उससे भी नीचे पहुंचते जामें, कमर में दुपट्टा तथा पांवों में चुस्त पाजामा रहता है। जामें पारदर्शक और वक्ष को ढकता एक झीना सा वस्त्र रहता है जो प्रायः पीला रहता है। कानों में मोती, कपोलों तक नीचे उतरती कलमें, भरा-भरा मुख, बड़ी-बड़ी मूछें तथा राजसी वेश-भूषा, ललाट कुछ गोलाकार तथा अधर स्त्रियों जैसे ही लाल या कभी-कभी हल्की लालिमा से युक्त होते हैं। नेत्रों के भाव प्रायः एक से दर्शाये जाते हैं जबकि फूलो की मालाएं, मोतियों के हार तथा जड़ाऊ अलंकार पुरुष आकृति को भव्यता प्रदान करते दिखाई देते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि जैसा सरस और भावयुक्त चित्रण यहां के चित्रकारों की कृतियों में हैं वह अपने आप में कल्पना की मधुरतम अभिव्यक्ति है।

राजस्थानी चित्रकला के इस प्रसंग में यहां की लोक चित्रकला के प्रतीक भित्ति-चित्रों की चर्चा करना अत्यन्त आवश्यक है।

भित्ति-चित्र

राजस्थान, जिसका कोई भवन चित्रों से खाली नहीं है, भित्ति-चित्रों की दृष्टि से बहुत समृद्ध प्रदेश है। बिना चित्रों के भवन भूतावास समझे जाते हैं। भवन के प्रमुख द्वार पर गणपति, द्वार के दोनों ओर नारी आकृतियां, अश्वारोही अथवा गजारूढ़ सामन्त चित्रित किये जाते हैं। लड़ते हुए हाथी, सेवक, दौड़ते हुए ऊंट,

रथ, घोड़े, गायों के झुंड, गोवत्स अथवा कदली पत्र लिखे जाते हैं। शंख, चक्र, पद्म और पताकायें भी चित्रित रहती हैं।

इस दिशा में जयपुर, कोटा, बूंदी, किशनगढ़, बीकानेर, उदयपुर सभी राजस्थान के प्रमुख नगर उल्लेखनीय हैं, किन्तु कोटा इस दिशा में अधिक सम्पन्न है। सबसे छोटा नगर होते हुए भी यहां के राज श्रीमन्तों ने इसे खूब सजाया है। जहां भी दृष्टिपात करिए, चित्रों के विविध रूप दिखलाई पड़ते हैं। दक्षिण के चित्रकारों ने भी कोटा में रहकर अपनी कला का गौरव प्रकट किया है। तंजौर शैली के अनेक चित्र कोटा के भवनों में चित्रित हैं। झालाजी की हवेली, रसिक बिहारी जी के मंदिर, मथुरानाथ जी के मंदिर में भित्ति-चित्रों की वह परम्परा अब तक देखी जा सकती है जब कोटा की चित्र शैली ने अपना एक अलग स्थान बनाया था। कोटा की चित्र शैली यद्यपि बूंदी से आई हुई है और बूंदी के चित्रकारों की ऋणी है, तब भी उसकी एक विशेषता है जो अपने पृथक अस्तित्व को प्रकाश में ला सकी है।

बूंदी के चित्र आलेखन की दृष्टि से बड़े श्रम सम्पन्न और विविध हैं। इनकी कल्पनामूलक अभिव्यक्तियां कृष्णलीला में शृंगारिक प्रसंगों पर आधारित और सौन्दर्य के विविध भेदों पर आश्रित है। भट्टजी की हवेली, राजमहल और मन्दिर के अनेक गृह भित्ति चित्रों से सुसज्जित है। ये आलेखन आकृति में बड़े शृंखलाबद्ध और प्रसंगों को क्रम से प्रकाश में लाने वाले हैं। इनके रंग आज भी चमकदार सुन्दर आलेखनों से सौंदर्य सम्पन्न तथा रेखाओं की गतिशील बारीकियों से युक्त हैं।

राजस्थान मे भित्ति-चित्रों को चिरकाल तक जीवित रखने के लिए विशेष लेखन पद्धति है जिसे 'आरायश' कहते हैं। आरायश पर चित्रों को स्याही की रेखाओं से सर्वप्रथम लिखकर रंग भरे जाते हैं। इसकी एक विशेष विधि है जिसे जयपुर के अस्सी प्रतिशत कलाकार जानते हैं। इस पद्धति का प्रचार सारे राजस्थान में है किंतु उसका जन्म जयपुर में ही हुआ प्रतीत होता है। यह भी सम्भव है कि वे परम्परागत हों। जयपुर में इसका विशेष प्रसार है। इसके अतिरिक्त यहां की आरायश अधिक सुन्दर और टिकाऊ होती है। जयपुर मे भित्ति चित्रों की परम्परा खूब विकसित हुई थी तथा यहां के चित्रकार अन्य नगरों मे जाकर अपना कौशल दिखलाया करते थे। जयपुर मे पुण्डरीकजी की हवेली, गलता, घाट, रावलजी के महल भित्ति चित्रों के लिए प्रसिद्ध है। अनेक भित्ति चित्र असावधानी के कारण नष्ट हो चुके हैं तथा अनेक हो रहे हैं। तब भी जो कुछ बच रहा है राजस्थान के चित्र वैभव को प्रदर्शित करने के लिए पर्याप्त है। किशनगढ़ के भित्ति चित्र अधिक प्राचीन नहीं हैं। न ये आरायश पद्धति के अनुसार बने हैं न उनके विषयों मे विविधता ही है। राधाकृष्ण के युगल रूप की झांकी ही सर्वत्र पाई जाती है। किशनगढ़ के भित्ति चित्र आकार में बहुत बड़े नहीं हैं और न ही संख्या में अधिक हैं। जोधपुर के चित्र दरबारी, व शिकार के कथा प्रसंगों के दृश्यों में सीमित हैं। यहां के चित्र उदात्त भाव

लिये वीर रस के प्रतीक और पीले रंग की अधिकता लिये हुये हैं। बीकानेर के राजमहलों के चित्रों में घुमड़ते हुए बादलों के दृश्य, चमकती हुई बिजलियों की प्रकाशधारा, उड़ते हुए पक्षी, विविध बेल-बूटे और सुवर्ण के आलेखन हैं। डाक्टर कुमारस्वामी ने बीकानेर के राजमहलों में चित्रित एक पक्षी युगल का चित्र अपनी पुस्तक में प्रकाशित किया है जो बड़ा ही सुन्दर और प्रभावी है। बीकानेर की अनेक प्राचीन हवेलियों में चित्र बने हुए हैं जो यहां के उस्ताद कहलाने वाले चित्रकारों ने बनाये हैं। ये उस्ताद जाति से मुसलमान है तब भी हिन्दू धर्म के देवी-देवताओं से परिचित और भारत की चित्र पद्धति के अनुयायी हैं।

उदयपुर के चित्र संख्या में अधिक हैं किंतु जयपुर के जैसा सौन्दर्य इन चित्रों में नहीं है। भित्ति चित्रों की पद्धति जयपुर, अलवर, कोटा, बूंदी में ही अधिक प्रस्फुटित हुई। इसका एक छोर बल्लभ सम्प्रदाय की सगुण उपासना है तो एक छोर मुगल घरानों के अनुकरण की परम्परा। कोटा, व बूंदी बल्लभीय उपासना के केन्द्र है और जयपुर व अलवर मुसलमान परम्परा के प्रतीक हैं।

राजस्थान ही नहीं, समस्त भारत की चित्रकला का प्रारम्भ भित्ति चित्रों से हुआ है। कारण कि कागज का अभाव था, काष्ठ फलक छोटे थे। वस्त्रों के नष्ट हो जाने का भय था, इसलिये भित्तियां ही ऐसा सुविधाजनक उपकरण थीं जिस पर अपने मनोभावों को विशद रूप से व्यक्त किया जा सकता था, बड़े से बड़े आलेखन भी सम्भव थे और छोटे से छोटा रूप भी अंकित किया जा सकता था। रंग वही प्रयोग में लाये जाते थे जो अधिक समय तक जीवित रह सकें। ये रंग थे प्रस्तर खण्डों के गर्भ से निकले अथवा पत्थरों को पीसकर बनाये। मृत्तिका से प्राप्त हुये राजस्थानी भित्ति चित्रों के रंगों में प्रधान रंग हैं, हरा पत्थर, हिरमिच पत्थर, रामरज, काजल और गोगोली। ये सभी रंग स्वाभाविक और न उड़ने वाले हैं। यद्यपि कई स्थानों पर लाल, गुलाबी, नीले रंग का भी प्रयोग है पर वह उन अन्तःपुरों में, जहां के चित्रों की धूप और पानी से रक्षा होती है। ऐसे विविध रंगों से बनाये चित्र अलवर के समीप राजगढ़ नामक ग्राम में हैं। ये चित्र किले की उन दीवारों पर बने हैं जहां इस नगर के राजाओं का अन्तःपुर है। चित्रों के विषय हैं, सुन्दर युवतियों की क्रमबद्ध पंक्तियां। इन आकृतियों में सुवर्ण और मूल्यवान विविध रंगों का प्रयोग किया गया है। समस्त राजस्थान में इन भित्ति चित्रों की जैसी श्रमसाध्यकला अन्यत्र देखने में नहीं आती। ये अधिक प्राचीन नहीं है, तब भी बड़े उत्कृष्ट है। जयपुर के चित्रों में एक मन्दिर में बने चित्र सुन्दर हैं पर वे नष्ट हो चुके हैं। जितना अंश बच रहा है उसी से उनकी विशेषता का परिचय मिलता है।

जैसलमेर तथा शेखावाटी के कतिपय गांवों में भित्ति चित्रों की अधिकता है, परन्तु वे लोक कला के अन्तर्गत माने जा सकते हैं। वे अधिक श्रमसाध्य और उत्कृष्ट नहीं हैं।

संगीत

सामान्यत: हिन्दुस्तानी संगीत की उत्पत्ति ध्रुपद गायन के प्रादुर्भाव से जोड़ी जाती है जब कि इसका वर्तमान स्वरूप ग्वालियर नरेश राजा मानसिंह की देन बताया जाता है। लेकिन ध्रुपद गायकी से संबद्ध डागर घराने के उस्ताद स्व. मोइनुद्दीन खां डागर के अनुसार अर्वाचीन ध्रुपद गायकी के प्रणेता राजस्थान के ही कोई बाबा गोपालदास थे। उनका दावा है कि उक्त बाबा उन्हीं के घराने के एक पूर्व पुरुष थे। आधुनिक ध्रुपद गायकी के प्रसिद्ध कलावंत स्व. उस्ताद बहरामखां, अली बन्देखां, जहीरुद्दीन खां तथा उनके अपने वालिद उस्ताद नसीरुद्दीन खां डागर इन्हीं बाबा गोपालदास की वंश परम्परा में हुए हैं जिन्हें जयपुर, अलवर और उदयपुर के महाराजाओं का आश्रय प्राप्त था।

ख्याल गायकी के क्षेत्र मे भी राजस्थान का विशिष्ट योगदान रहा है। ख्याल गायकी की विशिष्ट शैली विकसित करने वाले उस्ताद अल्लादिया खां स्वयं जयपुर अटरौली घराने के प्रवर्तक थे जिनका मूल स्थान राजस्थान में ही उनियारा गांव था।

मेवाती गायकी जिसके सबसे प्रख्यात कलाकार पंडित जसराज बताये जाते हैं, की उत्पत्ति भी राजस्थान मे ही हुई थी। आगरा घराने से सम्बद्ध तथा आफताब-ए-मौसिकी के नाम से जाने जाने वाले महान गायक उस्ताद फय्याज खां साहब के पिता सफार हुसैन तथा चाचा फिदा हुसैन इसी सदी के प्रारम्भिक वर्षों मे टोंक की रियासत के शासकों के अधीन संरक्षण प्राप्त कलाकार थे।

राजा-महाराजाओं के संरक्षण के अलावा राजस्थान में संगीत का प्रचार-प्रसार करने, प्रोत्साहन देने तथा संगीत के कतिपय अंगों का विकास कर संगीत के क्षेत्र में विशिष्टता प्राप्त केन्द्रों की स्थापना मे राजस्थान के वैष्णव सम्प्रदाय के मन्दिरों की भी महत्त्वपूर्ण भूमिका रही है। हवेली संगीत के नाम से वर्णित हिन्दुस्तानी संगीत की इस परम्परा का प्रमुख आश्रय स्थल नाथद्वारा स्थित श्रीनाथजी का मंदिर रहा है जहां वर्षभर भगवान की विविध झांकियों के दौरान समय विशेष के अनुरूप राग-रागनियों के आधार पर कीर्तन की परपरा रही है। कीर्तन के दौरान गाये जाने वाले ऐसे 3000 पदो का बाकायदा एक संकलन है जो वल्लभाचार्य द्वारा स्थापित वल्लभ संप्रदाय से संबद्ध आठ संत कवियो ने 'अष्टछाप' के नाम से रचे हैं। निर्धारित समय और ऋतु के अनुरूप किये जाने वाले इस कीर्तन गायन की राग-रागनियां भी प्रत्येक पद की भावभूमि के अनुसार निर्धारित हैं। यह एक आश्चर्य की बात लगती है कि हिन्दुस्तानी शास्त्रीय संगीत की सबसे लोकप्रिय राग भैरवी का गायन नाथद्वारा मे सर्वथा वर्जित है। इस वर्जना का कारण यह बताया जाता है कि तानसेन ने अष्टछाप के प्रमुख संतकवि एवं गायक कुंभनदास को अनुमति के बिना भैरवी राग मे गाये उनके पदों को सुना था। पूरिया धनाश्री, मियां की, बिलासखानी टोड़ी, जौनपुरी आदि अन्य राग-रागनियां, जो संप्रदाय में

बाहर के लोगों द्वारा तैयार की गई अथवा जिन पर बाहरी प्रभाव की छाया थी, वे भी इन कीर्तनों में वर्जित हैं। कीर्तन गायन की यह शैली दरबारी गायकी से भिन्न प्रकार की है। चूंकि कीर्तन गायन केवल भगवान के दर्शनों की झांकी के दौरान ही किया जाता है अतः कुछेक अपवादों को छोड़कर गायक के लिए 'आलाप' लेने की सुविधा नहीं रह पाती। हवेली संगीत के गायन मे प्रयुक्त तालो में चौताल आदिताल, झपताल, धमार, दीपचंदी और तीवरा आदि विशेष प्रचलित हैं। वैष्णव मंदिरों में वर्तमान हिन्दुस्तानी संगीत की राग-रागनियो के गायन की शैली का यह भेद शोध का विषय है।

उस्ताद अली अकबरखां और विलायतखां जैसे प्रसिद्ध वाद्यवादक जोधपुर महाराज के आश्रित रहे थे। स्व. दामोदर लाल काबरा तथा उनके छोटे भाई ब्रजमोहन काबरा को सरोद व गिटार वादन की शिक्षा अली अकबर खां ने ही दी थी।

संगीत समालोचक मोहन नादकर्णी के अनुसार "हिन्दुस्तानी संगीत में राजस्थान के योगदान की चर्चा संगीत शिक्षण के क्षेत्र में गोवर्धनलाल काबरा के उल्लेख के बिना अधूरी है। काबरा घराने की पिछली तीन पीढ़ियों का यह योगदान राजा महाराजाओं के प्रश्रय से किसी कदर कम नही कहा जा सकता।" राजस्थान के कई शासक स्वयं भी सगीत शास्त्र मे निष्णात थे। अपने दरबार मे कलाकारो तथा संगीतकारों को जुटाने के अलावा इनमें से कईयों ने स्वय भी सगीत के विभिन्न पहलुओं की अधिकारपूर्ण व्याख्या की है। उदयपुर के महाराणा कुंभा ने संगीत शास्त्र पर 'संगीतराज' नामक एक विशद ग्रंथ की रचना ही नही की अपितु 'गीत गोविन्द' पर भी अपनी टीका लिखी थी।

जयपुर जोधपुर और उदयपुर के शासकों के संरक्षण मे तैयार की गई 'रागमाला' के चित्रांकन से जो आज भी राजकीय सग्रहालयो तथा निजी संग्रहालयों में सुरक्षित हैं, राजस्थान में संगीत की विरासत के एक महत्त्वपूर्ण अंग का परिचय मिलता है। [illegible] नायकों—ढाढियों तथा मिरासियों—ने स्वयं [illegible] जिसे युद्ध के लिए प्रस्थान [illegible] था

राजस्थानी लोकगीतो मे, भले ही उनकी धुन शास्त्रीय संगीत की राग-रागनियों से अनुप्राणित नही रही हो अथवा निर्बाध रूप से गायी-बजाई जाती हों, शास्त्रीय संगीत का पुट अवश्य रहता है। इन लोकगीतों में कहरवा, काफी, देस, खमाच और पीलू राग विशुद्ध अथवा सम्मिश्रित रूप में प्रयुक्त की जाती हैं।

शास्त्रीय और लोक संगीत के सम्मिश्रण का एक विशिष्ट उदाहरण 'गोवन्द' लोकगीत को कहा जा सकता है। इसी प्रकार बहुचर्चित 'मांड' की स्वर रचना और गायन में शास्त्रीय संगीत का प्रभाव स्पष्ट रूप से महसूस किया

जा सकता है यद्यपि भारतीय संगीत जगत में इसे अभी तक स्थापित राग का दर्जा नही मिल पाया है। 'मांड' गायकी की विख्यात कलाकार बीकानेर की अल्ला जिलाईबाई ने अपनी सुरीली आवाज के जादू से कई संगीत महफिलों में श्रोताओं तथा संगीत मर्मज्ञों से भरपूर सराहना प्राप्त की है। अस्सी वर्ष की आयु में भी उनकी आवाज में लोच का जादू आज भी बरकरार है।

जहां तक राजस्थानी लोक संगीत के पेशेवर पहलू का प्रश्न है, मिरासियों, ढ़ाढ़ियों, लंगाओं, मांगणियारों तथा कलावन्तों के पेशेवर वर्ग के कलाकारों ने राजस्थानी लोकसंगीत के इस शास्त्रीय स्वरूप को लोकप्रिय बनाने मे निश्चय ही ठोस योगदान किया है।

मुगल काल मे पुराने आमेर और नये जयपुर राज्य में जो राजा बने, उनमें कोई योग्य सेनानायक और योद्धा थे तो कोई कूटनीतिज्ञ, कोई विद्वान थे तो कोई पण्डित और कला निपुण। इन्ही मे जयपुर के आधुनिक गुलाबी नगर के निर्माता ज्योतिर्विद सवाई जयसिंह भी थे, जिनके राज्य की सीमायें साभर झील से लेकर पूर्व मे यमुना तक और उत्तर मे शेखावाटी प्रान्त से लेकर दक्षिण में चम्बल और नर्मदा के मध्य तक जा पहुंची थी। उन्होने अश्वमेघ यज्ञ का अनुष्ठान कर तत्कालीन राजाओं में अपनी कीर्ति और प्रभुता की उद्घोषणा भी की थी। इस प्रकार अपने प्रदेश में शान्ति और समृद्धि के फलस्वरूप जयपुर के शासक संगीत व नृत्य जैसी ललित-कलाओं को भी प्रोत्साहन एवं संरक्षण देने तथा उन प्रतिभाओं का विकास करने में समर्थ हुये, जो उस मध्यकाल में उदार और कला पारखी नरेशों के दरबारों में ही पनप सकती थी।

औरंगजेब के प्रमुख सेनानायक, मिर्जा राजा जयसिंह का दरबार कवियों, कलाकारों और संगीत विशारदों के लिए उर्वरा भूमि थी, जिसमे बिहारी के बोये हुये बीजों से अंकुर फूटकर "सतसई" की विशाल और सुगन्धित लता फैल चुकी थी। इसी दरबार में 1620 के आस-पास "हस्ताक्षर रत्नावली" नामक विशद संगीत ग्रंथ लिखा गया। मीरां के 'पद' और दादू-पंथ के प्रवर्तक दादू दयाल के 'सबद' इस समय तक जनता के गीत बन चुके थे और आवश्यकता थी तो यह कि लोक जीवन में व्याप्त राग-रागनियों का शास्त्रीय आधार पर वर्गीकरण कर दिया जायें। महाकवि बिहारीलाल को उसकी "सतसई" के एक-एक दोहे पर स्वर्णमुद्रा प्रदान करने वाले इस मिर्जा राजा ने ऐसे प्रामाणिक संगीत ग्रन्थ की रचना करा कर भारत की इस पुरातन विद्या के शास्त्रीय अध्ययन को भी बड़ी प्रेरणा दी।

सवाई प्रतापसिंह, जो 1778 मे गद्दी पर बैठे थे, स्वयं एक काव्य मर्मज्ञ, कवि और संगीताचार्य थे। उनके दरबारी संगीतज्ञ, उस्ताद चांदखां ने, जिन्हें महाराज से "बुधप्रकाश" की उपाधि प्राप्त हुई थी, 'स्वर सागर' नामक एक उच्च कोटि के संगीत-ग्रन्थ की रचना की। उनके वंशज जो 'सेनिया' कहलाते है, अब भी अपने पूर्वजों की इन परम्पराओं का निर्वाह कर रहे हैं।

देवर्षि भट्ट द्वारकानाथ जयपुर के राजाओं की तीन पीढ़ियों के कृपा-भाजन थे और उन्हें महाराज माधोसिंह प्रथम से 'सुरमुति', महाराज पृथ्वीसिंह से 'भारती' और महाराज प्रतापसिंह से 'बानी' की उपाधियां प्राप्त हुई थी। इन्होंने 'रामचन्द्रिका' का प्रणयन किया। किन्तु, संगीत के एक अत्यन्त महत्वपूर्ण विशद् ग्रन्थ 'राधा-गोविन्द संगीत सार' के निर्माण का श्रेय उनके पुत्र देवर्षि-भट्ट ब्रजपाल को है, जिन्हें महाराज प्रतापसिंह ने बदरवास की जागीर प्रदान की। यह जागीर अब तक उनके वंशजों के पास है। सात खण्डों में लिखा गया यह विशाल ग्रन्थ आज भी शास्त्रीय संगीत का एक अपूर्व और प्रामाणिक ग्रन्थ माना जाता है। इसकी प्रकाशित प्रति जयपुर की महाराजा पब्लिक लाइब्रेरी में उपलब्ध है। "राधा-गोविन्द संगीत सार" के कुछ आगे पीछे कवि राधाकृष्ण ने "राग रत्नाकर" नामक एक और संगीत ग्रन्थ तैयार किया।

बहुत सम्भव है कि जयपुर का "गुणीजन खाना" जिसे उस काल की "साहित्य और ललित कला अकादमी" समझा जा सकता है, महाराजा प्रतापसिंह के संरक्षण में भली-भांति स्थापित हो चुका था। कहा जाता है कि महाराज विभिन्न विषयों के विशेषज्ञों की "बाईसी" रखते थे और उनके दरबार में 22 कवि, 22 ज्योतिषी, 22 संगीतज्ञ और इसी प्रकार अन्य विषयो के ज्ञाता और विद्वान थे। संगीतज्ञों में अली भगवान और सदारंग भी थे, जो अपने समय के प्रसिद्ध स्वरकार थे।

महाराज माधोसिंह प्रथम (1751-1767) के शासन-काल में दरबार में ब्रजलाल नामक एक सिद्धहस्त वीणावादक थे, जिन्हें जागीर प्राप्त हुई थी।

आधुनिक जयपुर के निर्माता महाराज रामसिंह द्वितीय के संरक्षण मे 'संगीत रत्नाकर' और 'संगीत राग कल्पद्रुम' नामक दो और प्रामाणिक संगीत ग्रन्थों की रचना की गई, जिनके प्रणेता हीरानन्द व्यास थे। पंडित मधुसूदन ओझा ने, जो एडवर्ड सप्तम के राज्याभिषेक के अवसर पर स्वर्गीय महाराजा माधोसिंह द्वितीय के साथ इंगलैंड गये थे और वहां वैदिक विज्ञान पर आक्सफोर्ड व कैम्ब्रिज में व्याख्यान भी दिये थे, विभिन्न शास्त्रीय राग रागनियों का एक सचित्र 'खरड़ा' तैयार किया, जिसका नाम 'राग रागिनी संग्रह' था। महाराज रामसिंह के समय मे ही जयपुर में रामप्रकाश थियेटर की, जो सम्भवतः राजस्थान की पहली सुनिर्मित नाट्यशाला थी, स्थापना हुई।

बंशीधर भट्ट को भी, जो अपने समय के एक श्रेष्ठ संगीतज्ञ थे, महाराज रामसिंह से एक गांव जागीर में प्राप्त हुआ। जयपुर के निकट गालवाश्रम के राजगुरु हरिवल्लभाचार्य को भी एक बड़ी जागीर प्रदान की गई। हरिवल्लभाचार्य संगीत के पंडित थे। सन् 1920 मे उनका देहान्त हुआ।

संगीत के अतिरिक्त जयपुर को नृत्य में भी उन्नता एवं विशेषता प्राप्त की

और यहां के कत्थकों ने विख्यात "जयपुर कत्थक" नृत्य शैली का विकास किया। यह शैली मुख्यतः भावात्मक है, जिसकी भाव-भंगिमा और मुद्रायें देखते ही बनती है।

1947 में भारत के स्वतंत्र हो जाने और फिर संयुक्त राजस्थान के निर्माण के पश्चात् गायकों और नृत्यकारों के लिए यह दरबारी संरक्षण उठ गया और 'गुणीजन खाने' का भी केवल नाम ही शेष रह गया है। जयपुर के कलाकार, जिनके पूर्वजों ने इस 'कच्चे जादू' को अनेक उच्च आदर्श और परम्पराओं की सौगातें दी थी, इस प्रकार आश्रय हीन हो गये। जिन्होंने उस्ताद करामत खां को 108 वर्ष की आयु में भी गाते हुए सुना है, वे उनकी मानसिक खिन्नता और दर्द को नहीं भुला सकते हैं। यह वयोवृद्ध संगीतज्ञ, जो 'ध्रुपद' का अद्वितीय गायक और 'बुद्धप्रकाश' का वंशज था, कहा करता था कि इस बुढ़ापे में भी 'मेरे गले में लोच है, क्योंकि मैं टके पाव मलाई खाई हैं।' ध्रुपद गायकी की यह शास्त्रीय परम्परा आज भी उस्ताद बहराम खां के वंशज डागर घराने की गायकी के रूप में जारी रखे हुए हैं। आज जब हमारे तरूण कलाकारों के लिए सम्मान पूर्ण जीवन निर्वाह भी कठिन हो रहा है तो क्या यह सोचने की बात नहीं कि वे उन उच्च परिपाटियों और परम्पराओं का, जो उन्हें विरासत में मिली है, किस प्रकार प्रतिनिधित्व कर पायेंगे ?

जयपुर के कुछ प्रमुख कलाकारों, गायकों व वादकों को कई वर्षों से "आकाशवाणी" का संरक्षण मिलता रहा है, किन्तु कहने की आवश्यकता नहीं, कि महीने में रेडियो पर एक दो कार्यक्रम हो जाना कलाकार के रूप में उनके जीवित रहने के लिए पर्याप्त नही हो सकता। आकाशवाणी की प्रसार-योजना के अंतर्गत जो नये ब्राडकास्टिंग स्टेशन खुले हैं, उनमे जयपुर भी है। स्थानीय कलाकारो के लिए यह आशा करना अधिक नहीं है कि रेडियो स्टेशन जैसे सामान्य धरातल पर वे संस्कृति और ललित-कलाओं की उन समृद्ध परम्पराओं की रक्षा तथा विकास करने में समर्थ होंगे, जिनके लिए जयपुर और राजस्थान अतीत काल से विख्यात रहे है।

मूर्ति-कला

जयपुर की मूर्ति कला की उच्चता और उसकी समृद्धि का अनुमान इसी बात से लगाया जा सकता है कि समूचे हिन्दू संसार मे प्रतिष्ठापित देवी-देवताओं की अधिकांश मूर्तियां यहीं के कलाकारो की बनाई हुई हैं। हिन्दू धर्म मे तैंतीस करोड़ देवी-देवता गिनाये गये हैं और पौराणिक काल से ही इस देश के श्रद्धालु बड़ भक्ति-भावना के साथ इन देवी-देवताओं की मूर्ति पूजा करते आये हैं। अतः भारतीय मूर्ति कला शताब्दियों के उत्थान-पतन में होकर जीवित रही और फली-फूली। जयपुर में यह कला आज भी एक लाभदायक उद्योग के रूप में विकसित हो रही है।

जयपुर की मूर्ति कला के क्रमिक विकास का सिंहावलोकन मुगल सम्राट के प्रधान सेनानायक राजा मानसिंह के समय से किया जा सकता है। उनके

समय में आमेर राज्य ने उत्तरी भारत में अपना एक विशिष्ट स्थान बना लिया था और आमेर का नगर इस राज्य की राजधानी के रूप में विकासोन्मुख था। राजा मानसिंह ने देश के अन्य भागों से जिन शिल्पिकों और कलाकारों को आमन्त्रित कर आमेर राज्य में पुनःस्थापित किया उनमें मूर्तिकार भी थे जो दक्षिण में माण्डू, उत्तर में नारनौल और पूर्व में मण्डावर तथा डीग के आस-पास के ग्रामों से आमेर आये थे। 1728 ईस्वी में जब सवाई जयसिंह द्वितीय ने जयपुर की नयी राजधानी में पदार्पण किया तो मूर्तिकार परिवार भी आमेर को छोड़ कर नये जयपुर अथवा जयनगर में स्थानान्तरित हुए। इस नये नगर में पूरा एक 'वार्ड' ऐसे ही लोगों के लिए सुरक्षित किया गया था जो अपने हाथ के हुनर से जीविकोपार्जन करते थे। फलतः शिल्पिक और कारीगर, चितेरे अथवा चित्रकार, हाथी दांत की नक्काशी करने वाले और दूसरे कलाकार नगर के इसी भाग में बसे। दो रास्ते तो मूर्तिकारों से ही भर गये और उन्हीं के कारण अब भी वहां 'सिलावटों का मोहल्ला' बना हुआ है।

मुगल शासन-काल में यद्यपि ऐसे अवसर भी आए थे, जब हिन्दू मंदिरों और उनकी पवित्र मूर्तियों का विनाश प्रायः निश्चित सा-हो गया था, किन्तु जयपुर औरंगजेब जैसे धर्मान्ध शासक के समय में भी सुरक्षित ही रहा। मुगलों की मैत्री और अपने व्यक्तित्व के कारण जयपुर के राजाओं ने आमेर और जयपुर को तब राजस्थान में एक महत्वपूर्ण व्यावसायिक केन्द्र के रूप में विकसित किया, जिससे अनेक प्रकार के कला-कौशल, दस्तकारियों और उद्योगों को प्रश्रय मिला। इस प्रकार देश के अन्य भागों में जब अनेक पावन मूर्तियों के नष्ट होने की आशंका थी, जयपुर के मूर्तिकार निरंतर पौराणिक कल्पनाओं को पाषाण में साकार बनाने और अन्य स्थानों की मूर्तियों मांग को पूरा करने में व्यस्त थे।

जयपुर की इन मूर्तियों में विभिन्न प्रकार के पाषाणों का उपयोग किया जाता है। सर्वश्रेष्ठ पाषाण तो संगमरमर है, जो जयपुर से 50 मील पश्चिम में सांभर झील के उस पार, मकराना की खानों से आता है। स्थायी रूप से शुभ्र, श्वेत रंग का यह पाषाण मुलायम होता है, जिस पर कलाकार की छेनी और हथौड़ी सुगमता से अपना कौशल दिखा सकती है। रंगीन और पालिश की मूर्तियों के लिये अलवर की सीमा स्थित रियालो का संगमरमर काम में लिया जाता है। इस पाषाण में हल्की नीली झांई होती है। रियालो, मकराना से पर्याप्त सस्ता होता है, और भी सस्ती मूर्तियं और खिलौने काले संगमरमर के बनते हैं जो खेतड़ी के निकट भैसलाना की खानों में निकलता है। इनके अतिरिक्त अलवर जिले के झीरी और बलदेवगढ़ का सफेद पत्थर तथा डूंगरपुर का काला पत्थर भी काम में लिया जाता है, किन्तु इन्हें संगमरमर बताना केवल व्यापारिक चाल ही है।

महंगी और सुन्दर कलात्मक मूर्तियों के लिए मकराना के संगमरमर, किफायती काम के लिये रिवालो और जैन तीर्थंकरों, विशेषतः शिव-लिंगम तथा शालिग्राम की मूर्तियों, हाथियों तथा अन्य खिलौनो के लिये भैंसलाना के काले संगमरमर की मांग बहुत रहती है। जयपुर के मूर्तिकार वर्ष भर अपने कारखानो में मूर्तियां तथा विविध वस्तुयें बनाते रहते हैं। नवम्बर-दिसम्बर मे गुजरात और बंगाल से व्यापारी यहां आते हैं और तैयार माल को खरीद ले जाते हैं।

मूर्ति निर्माण का कार्य पाषाण पर ही किया जाता है और मूर्तिकारों के औजार आज भी वही हैं जो तीन-सौ वर्ष पहले थे। छोटी-बड़ी, मोटी-पतली अनेक प्रकार की छैनियां और हथोड़े जिनकी सहायता से वे बड़ी से बड़ी पूरे आकार की मूर्तियां और छोटे-छोटे खिलौने तक बनाते हैं। कोयले अथवा पेन्सिल से पाषाण पर कृति की रूप-रेखा बनाने के साथ ही कलाकार की छैनी पर हथौडी आ जाती है और मूर्ति बनाई जाने लगती है। मूर्ति बन जाने पर एक विशेष प्रकार के पत्थर को उस पर घिसा जाता है जिससे वह सुचिक्कण होती है। यह कार्य महिलाएं करती हैं। इसके पश्चात् एक अन्य पत्थर की रगड से मूर्ति के अंगों को और निखारा जाता है, फिर पालिश की जाती है। जिन मूर्तियों के रंग की आवश्यकता होती है, उन्हें चितेरे के पास जाना होता है।

हिन्दू देवी-देवताओं की संख्या को देखते हुए मूर्तियों के विषय वस्तु का अत्यन्त व्यापक होना स्वभाविक ही है, फिर भी चतुर्भुज नारायण, जिनके हाथों में शंख, चक्र, गदा और पद्म हैं, शेषशायी-विष्णु और उनका पद-चम्पन करती हुई लक्ष्मी, सरस्वती, राम और सीता, राधा और कृष्ण, हनुमान, गरुड़ और ऋद्धि-सिद्धि के स्वामी गणेश आदि की मूर्तियों की सारे भारत से मांग होती है। जैन तीर्थंकरों महावीर, आदिनाथ, पार्श्वनाथ की मूर्तियों की भी मांग कुछ कम नहीं। श्री लंका, बर्मा, हिन्द-चीन, और सुदूर हांगकांग तक से भगवान बुद्ध की प्रतिमाओं के "आर्डर" आते हैं। इधर देश की स्वतन्त्रता के पश्चात् महात्मा गांधी, सुभाषचन्द्र बोस और अन्य राष्ट्रीय नेताओं की पूरे आकार की या आवक्ष-मूर्तियों की मांग बहुत है।

जयपुर की मूर्ति-कला को जीवित रखने और इसे वर्तमान व्यावसायिक रूप में विकसित करने का श्रेय यहां के स्कूल आफ आर्टस को है। 1866 में स्थापित यह स्कूल भारत का दूसरा प्राचीनतम कला-प्रशिक्षण संस्थान है। आरम्भ में यह व्यापारिक दृष्टिकोण से आरम्भ किया गया था और इस उद्देश्य में इसे पर्याप्त सफलता भी मिली। सारनाथ के नये बौद्ध-विहार में प्रतिष्ठापित बुद्ध की 7 फुट ऊंची प्रतिमा इसी स्कूल में बनायी गई थी। बनारस मे स्थापित महात्मा गांधी की मूर्ति भी यहीं की देन है, जिसकी सभी ने मुक्त कण्ठ से प्रशंसा की है। जयपुर की मूर्ति-कला का आधुनिक विकास नयी दिल्ली के प्रसिद्ध लक्ष्मी नारायण मन्दिर में दर्शनीय है, जहां की सभी मूर्तियां जयपुर के मूर्तिकारों की रचना हैं।

राजस्थान की कलात्मक विरासत प्रत्यक्षतः गुप्त काल के स्वर्णयुग की देन है। गुप्त साम्राज्य के विस्तार (चौथी से छठी शताब्दी) से लेकर लगभग 400 वर्ष तक चले कला एवं शिल्प के उत्कर्ष के दौरान ही राजपूतो की इस धरती में ये कला खूब फली-फूली। इस काल की कुछ सर्वोत्तम कृतियां मुसलमान आक्रान्ताओं के धर्मान्ध और मूर्ति पूजा विरोधी रवैये के कारण 11 वी सदी के मध्य में उनके द्वारा राजस्थान को विजित कर लेने तक व्यवस्थित रूप से नष्ठ की जाती रही। इस रचनात्मक दौर की अवशिष्ट रही कृतियां आज भी वास्तु शिल्प के क्षेत्र मे राजपूत काल की गौरव पूर्ण उपलब्धियों को पर्याप्त रूप से स्पष्ट करने मे सक्षम है। राजस्थान के राजाओं ने अपने राज्य की आक्रान्ताओं से रक्षा करने तथा पडोसी राजाओं से अपने झगड़ों के निपटारे के लिए आये दिन युद्धों में व्यस्त रहने के बावजूद उत्कृष्ट कलात्मक मंदिरों तथा स्मारकों के निर्माण को प्रोत्साहित किया। झालरापाटन के समीप ड़ामोर के शिला मंदिरो, बूंदी के शिव मंदिर तथा उदयपुर के समीप एकलिंग महादेव के मंदिर के शैल्पिक वैभव से इतिहासकार विस्मित होकर रह जाते हैं क्योंकि इस क्षेत्र की अर्थव्यवस्था परिवर्तनशील कृषि व्यवसाय पर ही निर्भर रहती आयी है। विख्यात इतिहासकार टाड स्वयं यही प्रश्न करते हैं और फिर खुद ही इसका उत्तर देने का प्रयास करते है। मेवाड़ के राजाओ का संदर्भ देते हुए वे कहते हैं :—

"इस घराने के शासक कलाओं, विशेषकर वास्तु शिल्प के महान सरक्षक थे और यह आश्चर्य का विषय है कि इस अंचल मे जहा राजस्व का मुख्य स्रोत भूमि तक सीमित रहा है, किस प्रकार से इन कलाकृतियों के निर्माण और सेनाओं के रखरखाव का जुगाड़ कर पाये।" यह टिप्पणी मध्यकाल में राजस्थान के प्रायः सभी शासकों पर समान रूप से लागू थी। टाड के मतानुसार संभवतः मेवाड़ राज्य की आय का स्रोत जावर की सीसे, जस्ते और तांबे की खानों, जिनका पता 14वी सदी में राणा लाखा के शासन काल के दौरान लग चुका था, मे इन खनिजों का प्रचुर उत्पादन रहा है। उनका कथन है कि जावर खानों से प्राप्त दौलत का ही सदुपयोग अलाउद्दीन खिल्जी द्वारा किये गये विध्वंस में नष्ट हुए मदिरो व महलों के पुनर्निर्माण के लिए हुआ हो।"

अजमेर स्थित अढाई दिन का झोंपड़ा तथा कोटा के निकट बारोली के शिव मंदिर-राजस्थानी वास्तुकारों के कौशल के अद्भुत प्रतीक हैं। इनके प्रस्तर स्तम्भों की पत्थर की खुदाई के काम मे लाजवाब खूबसूरती और बारीकी है। टाड़ के शब्दों मे "राजस्थानी वास्तुकला इतनी जटिल और वैविध्यपूर्ण है कि इसे शब्दों में वर्णन नही किया जा सकता। लगता है कि कला स्वयं यहां आकर शेष हो गई

हो। किन्तु वास्तुकला यह अप्रतिम शिल्प सौंदर्य किसी को भी विस्मय विमुग्ध सा कर देता है।

राणा कुंभा द्वारा चित्तोड़ में निर्मित मंदिरों जिनमें एक कृष्ण का और दूसरा शिव का है वास्तुशिल्प की दृष्टि से काफी सुन्दर व आकर्षक हैं। राजस्थान के जैन मंदिरों में आबू पर्वत पर देलवाड़ा के मंदिर जिनका समूचा निर्माण कार्य संगमरमर से हुआ है कलात्मक विधान की दृष्टि से अतुलनीय हैं। इसी प्रकार अजमेर स्थित ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की मजार भी कला कौशल का एक निराला स्मारक है।

मुसलमानों की बढ़ती शक्ति और प्रभाव के बावजूद राजस्थान में वास्तुकला का धर्म निरपेक्ष स्वरूप न केवल बरकरार रहा वरन् इसमें और भी निखार आया। इस दौर के निर्माताओं का ध्यान मुख्यतः महलों, किलों और गढ़ियों के निर्माण पर केन्द्रित था। इनके निर्माण में इस्लामी वास्तु विधान का प्रभाव भी स्पष्ट तया नजर आता है। चित्तौड़गढ़, रणथम्भौर, जालोर, कुंभलगढ़ और जोधपुर के किले राजपूती दुर्ग निर्माण कला के उत्कृष्ट प्रतीक हैं। इसी प्रकार महलों की श्रेणी में जयपुर नगर के बाहर आमेर, उदयपुर और बूंदी के राजमहल अपनी भव्यता और विशिष्ट वास्तु विधान के कारण अपनी विशिष्ट पहचान रखते हैं। जयपुर स्थित हवामहल तथा डीग के जल महल भी राजस्थानी वास्तु शिल्पियों की कला कौशल का एक अद्भुत चमत्कार कहे जा सकते हैं।

राजस्थानी वास्तु कला ने 16वीं से 18वीं सदी के बीच यदि मुगलों से कुछ लिया है तो बदले में उन्हें काफी कुछ दिया भी है। अजमेर, आगरा और फतेहपुर सीकरी स्थित इस्लामी भवनों पर राजपूत वास्तु कला का प्रभाव स्पष्टतः देखा जा सकता है। आधुनिक भारतीय वास्तुकला के बारे में भी सामान्यतः यह बात सही उतरती है जिसे दो वर्गों में विभाजित किया जा सकता है। पहले वर्ग में राजस्थान और पड़ौसी प्रदेशों मे बने वे भवन शामिल किए जा सकते हैं जिनका निर्माण विशुद्ध रूप से स्वदेशी तकनीक से किया गया है दूसरे वर्ग के निर्माण कार्य वे हैं जिनमें विदेशी वास्तु विधान की नकल झलकती है। हाल ही जहां भवनों के निर्माण मे भारतीय वास्तु पद्धति पुनः अपनाई जाने लगी है वहीं कहीं-कहीं पर दोनों शैलियों के समन्वय का भी प्रयास हुआ है।

राजस्थान में प्रस्तर से निर्माण की भी शानदार इतिहास रहा है। जयपुर से 50 मील दूर बैराठ में सम्राट अशोक द्वारा बनवाया गया एक शिलालेख मिला है जो तीसरी शताब्दी का बताया जाता है। जयपुर से दक्षिण की ओर नगर नामक स्थान पर की गई खुदाई मे जवाहरात के टुकड़े तथा खुदाई युक्त बर्तन मिले हैं। भरतपुर के निकट नूह में पाई गई यक्ष की मूर्ति भी सर्वाधिक प्राचीन बताई जाती है। इसी प्रकार रारह के निकट खुदाई से मिली शिरोवस्त्र पहने महिला का मस्तक

लालसोट में अलंकरण युक्त प्रस्तर स्तम्भ शुंगकाल का बताया जाता है। इसी प्रकार नूह में मिली बोधिसत्व मैत्रेय की मूर्ति कुषाण काल की है। आठवीं से 11वीं सदी के बीच भारतीय इतिहास के स्वर्ण युग के दौरान राजस्थान में भी कई मंदिरों का निर्माण हुआ। इस काल के मंदिरों का शैलिपक सौंदर्य का तक्षण-युक्त स्तम्भों, सभामंडियों, गर्भ गृहों, प्रदक्षिणाओं और इनके शिखरबन्दों, को देखकर, अनुमान लगाया जा सकता है।

जयपुर जिले में आभानेरी के मंदिर, नागदा में सास बहू, चित्तौड़ में कालिका माता, उदयपुर में एकलिंगजी, जगत में अंबिका माता, भीलवाड़ा में मैनाल और बिजोलिया 8वीं, 9वीं और 11वीं सदी के वास्तुशिल्प के उल्लेखनीय नमूने हैं। है। जोधपुर संग्रहालय में लाल पत्थर के स्तम्भ पर उत्कीर्ण कृष्ण लीला का अंकन राजस्थान में गुप्त काल के वास्तु शिल्प की कहानी आज भी कह रहे हैं। जोधपुर में ओसियां, माउन्ट आबू के देलवाड़ा तथा सीकर के हर्षनाथ के मंदिर परवर्ती मध्यकाल के हैं।

महाराणा कुंभा के काल में चित्तौड़गढ का कीर्ति स्तम्भ तथा मीरां मंदिर 12 वीं सदी की शिल्प कला के मुंह बोलते प्रतीक हैं। जोधपुर में मंडोर, जालोर जिले में जालोर, सिवाना और भीनमाल, सवाई माधोपुर मे रणथम्भौर के दुर्ग 12 और 13वीं सदी में निर्मित बताये जाते हैं। उदयपुर डिवीजन के मांडलगढ़ और कुंभलगढ़, जोधपुर में नागोर व मेड़ता तथा जयपुर डिवीजन मे अलवर के किले जो ऊंची पहाडियों अथवा झीलों के किनारे बने हैं वस्तुतः दुश्मन के हमलों से बचाव के उद्देश्य से निर्मित कराये गये थे। 15वीं सदी में महाराणा कुंभा द्वारा निर्मित चित्तौडगढ़ का प्रसिद्ध विजयस्तम्भ तत्कालीन युग के वास्तुशिल्प की एक अनुपम कृति है। पन्द्रह से सत्रहवीं सदी के बीच निर्मित राजसी अट्टालिकाओं और महलों के मुख्य उदाहरण के बतौर उदयपुर, आमेर (जयपुर), बीकानेर, जोधपुर, अलवर, जैसलमेर, बीकानेर और बूंदी के राजमहलो को गिनाया जा सकता है। इनमें से आमेर के राजमहल को राजस्थानी वास्तु कला का प्रसुप्त सौंदर्य कहा जा सकता है। जयपुर का हवामहल और डीग के जलमहल शिल्पकार की उत्कृष्ट कल्पना शीलता के विशिष्ट प्रतीक हैं। राजस्थान में दिवंगत राजा-महाराजाओं तथा उनकी रानियों की स्मृति में छत्रियां बनवाये जाने की भी परम्परा रही है। इस क्रम में अलवर में मूसी महारानी की छत्री, गेटौर में जयपुर के राजाओं की छत्रियां और जोधपुर में मारवाड के भूतपूर्व शासकों की छत्रियां संगमरमर पर तक्षण कार्य की लाजवाब कृतियां हैं।

संगमरमर पर बारीक खुदाई जयपुर की कलाकृतियों की एक विशेषता रही है। जयपुर के संगतराश तथा जैसलमेर के कलाकार दैनिक उपयोग की छोटी-छोटी वस्तुओं को कलात्मक रूप देने में माहिर हैं। जयपुर की इन कृतियों के निर्माण में

प्रयुक्त होने वाला संगमरमर का कच्चा माल प्रायः मकराना तथा भैंसलाना की पत्थर की खानों से आता है। परंतु उपयोग की अन्य कलापूर्ण वस्तुओं के निर्माण में करौली के लाल पत्थर का इस्तेमाल किया जाता है। अलवर जिले में रामगढ़ का संगमूसा (काला संगमरमर) भैंसलाना के काले पत्थर से मिलता जुलता है और इसे भी कलाकृतियों के निर्माण के लिए प्रयुक्त किया जाता है। अलवर जिले में ही भरतपुर का गुलाबी पत्थर कलात्मक कुराई के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

जयपुर मूल्यवान व अर्द्धमूल्यवान पत्थरों की कटाई के लिए भी प्रसिद्ध रहा है जिनकी उत्कृष्टता के कारण विश्व भर में इनकी मांग रहती है। जयपुर में संगमरमर की कृतियों में कलात्मकता का तत्व अब पहले जैसा नहीं रह गया। अब देखकर यहां के कलाकारों की प्रतिभा मंदिरों व घरों के लिए मूर्तियां तथा रिहायशी भवनों के भीत्ति कोष्टकों के लिए सजावटी कृतियां तैयार करने तक सीमित रह गई है।

———

9
हस्तशिल्प

ललित कलाओं की भांति राजस्थान हस्त-शिल्प के क्षेत्र में भी सरनाम रहा है।

राजस्थानी हस्त शिल्प और कला कौशल की कतिपय प्रसिद्ध वस्तुओं में जयपुर के मूल्यवान एवं अर्द्धमूल्यवान रत्नों अथवा सोने चांदी के कलात्मक आभूषण, पीतल पर खुदाई व मीनाकारी के बर्तन, लाख से बनी चूड़ियां व अन्य सजावटी वस्तुएं, संगमरमर की सुन्दर व कलापूर्ण मूर्तियां, हल्की-फुल्की सलमा सितारों की कारीगरी से युक्त जूतियां "मौजडियां" व नागरे, बल्यू पाटरी की कलात्मक सजावटी नानाविध वस्तुएं, सांगानेरी व बगरू प्रिन्ट के वस्त्र-परिधान, मिट्टी-कुट्टी के खिलौने चन्दन व हाथीदांत से बनी नायाब कलाकृतिया, संगमरमर की सुन्दर मूर्तियाँ, आकर्षक लहरिये व चूनडियां, बीकानेर व जयपुर के ऊनी गलीचे, जोधपूर के मशहूर बादले व बंधेज के काम की ओढनियां, ऊंट की खाल से बनी कलात्मक सजावटी वस्तुयें, जैसलमेर की लोइयां तथा कटावदार काम से युक्त पत्थर की मनोहारी जालियां तथा सवाईमाधोपुर व उदयपुर के लकड़ी के खिलौने तथा अन्य सजावटी वस्तुयें, तथा खस की शीतलदायी सौरभ से सुवासित पानदान, डिब्बियां व पखे, दीवारों की सजावट के लिए नाथद्वारा की पिछवाइयां तथा "फड़" पेन्टिंग्स की कलाकृतियां, सलमा सितारों व गोटे किनारी के काम से युक्त परिधान प्रमुख हैं। राजस्थानी हस्त शिल्प की ये कलाकृतियां स्वाधीनता के पश्चात् देश विदेश में आयोजित अन्तर्राष्ट्रीय मेलों तथा प्रदर्शनियों के कारण पिछले कुछ वर्षों मे न केवल काफी लोकप्रिय हुई हैं वरन देश-विदेश में इनकी बढ़ती मांग के कारण राज्य के हस्त शिल्प के कुशल कारीगर भी पर्याप्त प्रोत्साहित हुए है।

राजस्थान जैसे अतीत में शौर्य के धनी प्रदेश मे जहां के लोग निरंतर युद्ध जैसी विध्वंसतापूर्ण परिस्थितियों में अस्तित्व रक्षा के लिए सन्नद्ध रहते आये हों और भौगोलिक विषमताओं के बीच जीवन यापन के लिए संघर्षरत रहना जिनकी नियति रही हो, वहां आखिर ऐसी कलात्मक प्रवृत्तियां क्यो कर पनप सकीं, यह अपने आप मे एक आश्चर्य और शोध का विषय है।

जैसा कि सर्व विदित है राजस्थान का भौगोलिक परिवेश ही कुछ ऐसा है जहाँ दूर-दूर तक फैले मरुस्थल, दुर्गम पहाड़ी व पठारी भू-भाग, भूमि के कटाव से बने 'खादर' और नैसर्गिक सौन्दर्य तथा वन्यजीवों से युक्त वन-खण्ड सभी कुछ है। राजस्थान की यह विविधतापूर्ण भौगोलिक संरचना ही है जिसने इस प्रदेश के लोगों में स्वाभिमान से जीने का हौसला पैदा किया है। वहीं अपने इर्द-गिर्द के भौगोलिक परिवेश ने उन्हें एक ऐसी अपूर्व सौन्दर्य दृष्टि और समझ भी प्रदान की है जिससे प्रेरित होकर इस प्रदेश के विभिन्न अंचलों में नाना प्रकार के हस्तशिल्प के हुनरमंद कलाकार तैयार हुए हैं।

अहर्निश साधना और सामन्ती दौर में सुलभ हुए राजकीय संरक्षण का ही परिणाम है कि आज भी इन कलाकारों की पीढ़ियां राजस्थानी हस्तशिल्प की इस समृद्ध और सुप्रतिष्ठित परम्परा को निरंतर आगे तथा और आगे ले जाने को संकल्पबद्ध हैं। तो आइये ! लगे हाथ राजस्थानी हस्तशिल्प के कुछ चुनींदा उदाहरणों पर भी कुछ चर्चा हो जाये—

मीनाकारी

जयपुर की मीनाकारी आज देश-विदेश में अपने शिल्पगत वैभव के लिए काफी विख्यात है। प्रामाणिक जानकारी के अनुसार 16 वीं सदी में आमेर (जयपुर) के तत्कालीन शासक राजा मानसिंह, जो सम्राट अकबर के प्रधान सेनानायकों में से एक थे, लाहौर से मीनाकारी के कुछ कुशल कारीगरों को अपने साथ आमेर लाये थे। मानसिंह तथा उनके परवर्ती शासकों के निजी प्रश्रय और प्रोत्साहन से मीनाकारी की यह कला निरंतर विकसित होती चली गई। मीनाकारी अपने आप में काफी जटिल और श्रम साध्य कला-विद्या है। कई बार तो एक ही कलाकृति पर मीनाकारी करने में कलाकार को तीन-चार माह तक का समय लग जाता है। जयपुर के मीनाकारी करने वाले कतिपय कलाकार तो अपने इस फन के इतने प्रवीण कारीगर हैं जो रंगों के कुशल संयोजन और अपनी कल्पना की उड़ान से उसमें इन्द्रधनुष की सी छटा उत्पन्न कर देने में समर्थ हैं। मीनाकारी का यह कार्य मूल्यवान व अर्द्धमूल्यवान रत्नों अथवा सोने से निर्मित हल्के आभूषणों पर किया जाता है। कारीगरी का यह स्तर सैकड़ों वर्षों से अब तक बरकरार ही नहीं है बल्कि कला के ऐसे उच्च स्तरीय सोपान को छूने लगा है कि कभी कभी तो एक पुरानी तथा नई कृति में फर्क करना तक मुश्किल हो जाता है। मीनाकारी के कार्य की सर्वोत्कृष्ट कृतियां भले ही जयपुर में तैयार की जाती हैं तदपि प्रतापगढ़ की मीना या "थेवा" कला के तहत सोने के आभूषणों पर हरे रंग को आधार बनाकर किया जाने वाला मीनाकारी कार्य भी यथेष्ट सुन्दर होता है। इसी प्रकार नाथद्वारे में चांदी तथा अन्य धातुओं से निर्मित गहनों तथा अन्य अपेक्षाकृत कम मूल्यवान कलात्मक वस्तुओं पर भी मीनाकारी कार्य किया जाता है। जयपुर के मीनाकारी

र्य के एक प्रसिद्ध कलाकार (कुदरतसिंह) तो राष्ट्रीय स्तर पर पुरस्कृत किये जा के हैं। मीनाकारी कार्य के अतिरिक्त जयपुर में मूल्यवान व अर्द्धमूल्यवान पत्थरों ी सुघड़तापूर्ण कटाई से युक्त तथा नाना प्रकार के रूपाकारों से निर्मित आभूषण ी अपनी उत्कृष्ट जड़ाई और डिजायनों के कारण देश भर में प्रसिद्ध है। इनके लावा राजस्थान सिर, कानो, नाक, गले, कलाई व पावों के हल्के-फुल्के चादी के लात्मक आभूषणों के निर्माण के लिए भी प्रसिद्ध रहा है। राजस्थान के विभिन्न चलों में बनाये जाने वाले चांदी के आभूषणों की अपनी विशिष्ट पहचान है। लाई पर पहने जाने वाले आभूषणों की परम्परा मे "राखी" का अपना विशिष्ट हत्त्व और आकर्षण है। राजस्थानी शौर्य परम्परा मे "राखी", महिलाओं द्वारा अपने नपसन्द व्यक्ति को राखीबन्द भाई बनाकर उसे संकट की घड़ी मे अपनी रक्षा रने का दायित्वभाव सौंपने की भावभूमि से जुड़ी हुई है।

ाथीदांत

राजस्थान में राजपूत स्त्रियों तथा कई अन्य समुदायों की महिलाओं मे विवाह र हाथीदांत से बना "चूड़ा" पहनाये जाने की प्रथा है। सौभाग्य सूचक यह चूड़ा केन्हीं जातियों की महिलायें कलाई से लेकर कोहनी से भी ऊपर तक पहनती हैं। ोधपुर में हाथीदांत से बनी चुडियां, जिन पर काली, हरी या लाल धारियां होती हैं, लाई जाती हैं। इनके अलावा हाथीदात के मणिये, पहुंचियां, अगूठियां, कर्णाभूपण आदि ी बनाये जाते है। पिछले कुछ वर्षों मे पर्यटकों की बढ़ती आमद को दृष्टिगत रखते हुए र्या, पशु-पक्षी, हुक्केदानी, गिलास, पौराणिक ऐतिहासिक प्रसंगों, फूल पत्तियां व ीक जालीदार कटाई से युक्त कई अन्य प्रकार की कलात्मक चीजें भी हाथीदांत से ाई जाने लगी हैं। आजकल कई प्रकार के जानवरों की हड्डियों से भी कलात्मक तुयें बनाई जाने लगी हैं।

ाख व कांच

राजस्थान में लाख की चूड़ी पहनना विवाहित एवं सौभाग्यवती महिला होने का क है। बदलते वक्त और महिलाओं की रूचि के अनुसार लाख से बनाये जाने ली बहुरंगी चूडियों व चूडों पर काच के गोल, चोकौर तथा विविध आकार के ध-धवल रंग के "हीरे" चिपकाये जाते हैं जिससे इनका स्वरूप और भी निखर ाता है। लाख के स्थान पर कांच व प्लास्टिक की चूड़ियों के प्रति बढ़ते आकर्षण कारण विभिन्न प्रकार की कलात्मक चूड़ियां भी बनाई जाने लगी हैं। पिछले कुछ र्षों से जयपुर मे लाख से विभिन्न प्रकार की सजावटी चीजें यथा खिलौने, चाबियां गाने के झुमके, पेपर वेट, गुलदस्ते, ईयररिंग, गले का हार, अंगूठी व चिटकी आदि ी बनाई जाने लगी हैं।

ंदन

मैसूर के चन्दन के वनों से मंगाये गये चन्दन से नाना प्रकार की कलात्मक

कृतियां तैयार करने में जयपुर के सिद्धहस्त कलाकारों को कमाल हासिल है। विभिन्न प्रकार के देवी-देवताओं की छोटी-छोटी कलात्मक मूर्तियां, बारीक खुदाई के काम से युक्त बालपेन, कागज काटने के चाकू, आभूषण रखने के छोटे बेल-बूंटों से चित्रित बक्सों, चाबियों के गुच्छे तथा कई अन्य वस्तुएं पर्यटकों में काफी लोकप्रिय हो चली हैं।

पाषाण

संगमरमर अथवा काले पत्थर से धार्मिक व पौराणिक आख्यानों तथा देवी देवताओं की प्रतिमाओं, शिला-लेखों, शिवलिंगों, महापुरुषों, संत-महात्माओं और राजनेताओं की आदमकद अथवा आवक्ष (बस्ट) मूर्तियों तथा शिला, चौकी, विभिन्न आकार-प्रकार के ऊखल-मूसल, चकले आदि विभिन्न प्रकार की घरेलू उपयोग की चीजें तैयार करने में जयपुर के कारीगरों का देश-विदेश में काफी नाम है। बड़े-बड़े प्रस्तर खंडों की काट-छांट, घिसाई व चित्रांकन कर जयपुर के दक्ष मूर्तिकार इन्हें इतना सुन्दर और चित्ताकर्षक स्वरूप दे देते हैं कि वे मुंह बोलती सी लगने लगती हैं। जयपुर के मूर्तिकारों द्वारा निर्मित की जाने वाली इन मूर्तियों व अन्य कलात्मक कृतियों के निर्माण के लिए मुख्यतः मकराना का संगमरमर तथा भैंसलाना का काला पत्थर जिसे संगमूसा कहा जाता है, प्रयुक्त किया जाता है। पिछले कुछ वर्षों से मुलायम किस्म का गुलाबी व पीली आभा तथा तांबे के वर्ण के पत्थरों का भी प्रयोग किया जाने लगा है। जयपुर के अतिरिक्त अलवर के निकट किशोरी नामक छोटे से ग्राम में भी पत्थर से छोटी-छोटी मूर्तियां तथा घरेलू उपयोग की वस्तुयें तैयार की जाती हैं।

पीतल

जयपुर में पीतल की घिसाई तथा पालिश कर उससे नाना प्रकार की कलात्मक सजावटी चीजें तैयार करने की कला भी काफी विकसित है। विभिन्न प्रकार के छोटे-बड़े आकार के पशु-पक्षियों, जालीदार झाड-फानूस, कलात्मक फ्रेम, फलदान, गुलदस्ते, लैम्प स्टेण्ड, देवी-देवताओं के सिंहासन, दीपदान तथा विभिन्न प्रकार के खिलौने इत्यादि तैयार करने में जयपुर के कलाकार सिद्धहस्त हैं।

पीतल की खुदाई व मीनाकारी

पीतल की कटाई कर उस पर नाना प्रकार के बारीक काम से युक्त कला पूर्ण छवि अंकन करना जयपुर की हस्त-शिल्प विद्या का एक और विख्यात अंग है। पीतल के किसी विशाल थाल अथवा भारी भरकम फूलदान की आकृति वाले बर्तन पर लोहे की हल्की सी छेनी-हथौड़ी से पेड़-पौधों, बेल-बूंटों, पशु-पक्षियों से युक्त किसी बाग अथवा किसी राजा की नाचगान की महफिल को चित्रांकित कर देना यहां के दक्ष कलाकारों के लिए बांयें हाथ का खेल है। एक बार कलाकृति का मूल स्वरूप खोद देने के पश्चात् सधे हाथों से कलाकार विषय-वस्तु के डिजाइन को आकर्षक स्वरूप देने तथा इसके शिल्प सौन्दर्य को और अधिक उभारने के लिए इसमें

मीनाकारी कर इसे और भी रंगीन तथा चित्ताकर्षक बना देता है। चित्रांकन कार्य के लिए प्राय: रंगीन लाख की सलाइयों का प्रयोग किया जाता है। ये रंग इतने पक्के होते हैं कि कई वर्ष बीत जाने पर भी इनकी चमक ऐसी बनी रहती है कि मानो वे आज ही बनाये गये हैं।

तारकशी

जयपुर के हस्त शिल्पियों में कोई एक शताब्दी से हाथीदांत, पत्थर व लकड़ी से बनी चीजों मे पीतल के बारीक तार से नाना प्रकार के रूपाकार बनाने का शिल्प भी प्रचलित रहा है। "इनले-वर्क' के नाम से प्रख्यात हस्तशिल्प की इस विधा में कुर्सी की पीठ, मेज की ऊपरी सतह, जेवरात रखने के बक्सों, सिगरेट केस आदि वस्तुओं व आधारों पर पीतल या ताम्बे के बारीक तार को कुशलता से नाना डिजाइनों में इस प्रकार भरा जाता है कि बरसो तक इसका कलात्मक स्वरूप व डिजाइन ज्यों का त्यों बना रहता है।

लकड़ी पर रंगीन चित्रकारी

लकड़ी को कुचर व खोद कर उससे नाना प्रकार की उपयोगी वस्तुएं व खिलौने बनाकर नाना रूपाकारों से उसे चित्रांकित करने की कला के लिए उदयपुर व सवाईमाधोपुर के कलाकार विख्यात रहे है।

ब्ल्यू पोटरी

कांच, गोंद, मुल्तानी मिट्टी व सज्जी आदि के मिश्रण से बने जयपुर की ब्ल्यू पोटरी के सुन्दर चित्रांकन से युक्त कलात्मक सजावटी बर्तनों, फलदानों, एश ट्रे, सुराही आदि का निर्माण जयपुर की निजी विरासत है। लगभग 125 वर्ष से जयपुर में ब्ल्यू पोटरी को नीले, सफेद, हरे, काले रंग मे चित्रित वेलबूटों से युक्त वस्तुओं के निर्माण की परम्परा रही है। रियासती काल मे विशिष्ट मेहमानों को उपहारस्वरूप कलात्मक स्मृति चिन्ह के रूप में दी जाने वाली ये कलात्मक वस्तुयें देशी-विदेशी पर्यटकों में भी काफी लोकप्रिय हो चली है। ब्ल्यू पोटरी की वस्तुओ के निर्माण के प्रशिक्षण के लिए जयपुर की राजमाता गायत्री देवी ने अपने निवास स्थान के सामने के एक भवन मे एक प्रशिक्षण केन्द्र भी पिछले कुछ वर्षों से प्रारम्भ किया है, जहां नवयुवकों को ब्ल्यू पोटरी की वस्तुओं के निर्माण व चित्रांकन का प्रशिक्षण दिया जाता है। राजस्थान लघु उद्योग निगम द्वारा ब्ल्यू पोटरी के कारीगरों से इन कलात्मक वस्तुओं को बड़ी मात्रा मे खरीद कर इन्हें बेचने की व्यवस्था की जाती है।

टेरीकोटा की मूर्तियां

उपयोग की दृष्टि से भले ही टेरीकोटा पद्धति से बनी मिट्टी की मूर्तियां कोई महत्व न रखती हों परन्तु अपनी, कलात्मकता के लिहाज से उनका अपना सौंदर्य है। उदयपुर के निकट 'मोलेला' नामक गांव टेरीकोटा पद्धति से बनाई जाने

वाली मूर्तियों का प्रमुख केन्द्र है। यहां बनाई जाने वाली मूर्तियों में गणेश, मोगाजी तथा अन्य लोकनायकों व लोक देवी-देवताओं की मूर्तियां प्रधान हैं। मेवाड़ में दशहरे के त्यौहार पर इन मूर्तियों की पूजा करने की भी परम्परा है। हाल के वर्षों मे टेरीकोटा पद्धति की इन मूर्तियों का दीवारों व ताखों की साज-सज्जा में काफी इस्तेमाल किया जाने लगा है।

वस्त्रों में छपाई

राजस्थान मे प्रचलित एक कहावत के अनुसार इस प्रदेश मे हर बारह कोस पर महिलाओं मे अधोवस्त्र तथा पुरुषों की पगड़ियो के "पेच" का स्वरूप बदल जाता है। दूसरे शब्दों मे यह कहावत राजस्थान में छपे वस्त्रो में विविधता के आधिक्य का प्रतीक मानी जा सकती है।

बाड़मेर के रेतीले धोरों मे पनपी वस्त्रों की छपाई की विधा में ज्यामितिक आकार के 'अजरक' प्रिन्ट मे काली पृष्ठभूमि पर नीले व लाल रंग के सम्मिश्रण से तपते सूर्य को आभा का चित्रांकन होता है। इसी प्रकार, नाथद्वारा की साड़ियों, दुपट्टों, रुमालों व रजाइयों मे "पिछवाई" चित्रकला शैली का प्रभाव परिलक्षित होता है। यहां के वस्त्रों की सलवटो में चन्दन की लकड़ी से बनाये गये ब्लाकों के डिजाइनों मे चन्दन की भीनी-भीनी महक अपना अलग ही रग बिखेरती सी लगती है। चित्तौड़गढ के "जाजम" छपाई विधा से बने महिलाओं के वस्त्रो मे काले, लाल और हरे रंगों के प्रयोग से "मोजाइक" का सा प्रभाव उत्पन्न किया जाता है। जयपुर के निकट बगरू छपाई के वस्त्रों में वनस्पति व काले रंग से नाना प्रकार के आकर्षक बेलबूटों का चमकदार चित्रांकन किया जाता है। रियासती काल में जयपुर में वस्त्रों की कलात्मक छपाई की उत्कृष्ट विधा का विकास हुआ। नाना प्रकार के रूपाकारो में बनाये जाने वाले इन वस्त्रों के लिए जयपुर के निकट सांगानेर का कस्बा विशेष चर्चित रहा है जहां परम्परागत वस्त्र छपाई करने वाले छीपा जाति के कलाकारों ने छपाई में प्रयुक्त होने वाले नाना प्रकार के सुन्दर डिजाइनों तथा छपाई की एक विशिष्ट विधा विकसित करली है। "खारी" कला नाम से प्रसिद्ध सुनहरी आधार पर छपाई कार्य करने वाले छीपों द्वारा निर्मित सांगानेरी प्रिन्ट के वस्त्रों की आज विश्व भर मे काफी मांग होने लगी है। इसी प्रकार कोटा में बनी डोरिये की साड़ियां भी ग्रीष्म ऋतु का एक लोकप्रिय परिधान है।

बंधेज की चूंदड़ियां–

राजस्थानी महिलाओं के परिधान में सिर पर ओढ़ी जाने वाली बंधेज पद्धति से तैयार की जाने वाली ओढ़नियो का विशेष प्रचलन रहता आया है जिन्हें "चूनड़ियों" के नाम से भी जाना जाता है। बंधेज पद्धति की सबसे उत्कृष्ट ओढ़नियां या चूनड़ियां जोधपुर में तैयार की जाती हैं। बंधेज की साड़ियां तैयार करने

के अन्य प्रसिद्ध केन्द्र जयपुर, बीकानेर, बाड़मेर, पाली, उदयपुर व नाथद्वारा है। स्थानीय लोगों की पसन्द के मुताबिक हर अंचल की ओढ़नियों के रंग और डिजाइन की विभिन्नता होती है। राजस्थानी ओढनियों के प्रचलित डिजाइनों में पीले और लाल रंग के ऊंचे उठे हुए घूंघट की 'डूंगरशाही' ओढनियों का प्रचलन सबसे अधिक है। बंधेज बांधने की विविधतापूर्ण शैलियों के अनुरूप ही इनके भिन्न-भिन्न प्रकार के डिजाइन तैयार किए जाते हैं। इनमें सबसे अधिक प्रचलित शैली "बन्ध" के नाम से जानी जाती हैं जिसमें कपड़े पर गोलाकार गांठ पर बीच में काले रंग का एक बिन्दु बनाया जाता है। इसके इर्द-गिर्द बनाये जाने वाले रूपाकारों में कौडी, लड्डू, जलेबी, बहुरंगी चौखानों वाली चक्की बनाई जाती है। लहराकृति वाले रूपाकार की बंधेज के "लहरिये" भी राजस्थान की महिलाओं का पसन्दीदा परिधान है जो प्रायः सावन-भादों की वर्षाकालीन ऋतु अथवा गणगौर के पर्व पर विशेष रूप से पहना जाता है।

कशीदाकारी

भले ही राजस्थान में कशीदाकारी कला को राजकीय प्रश्रय न मिला हो किन्तु यहां के कलाप्रेमी जनमानस मे लोक कला के रूप में सदियो से यह कला इस प्रदेश मे प्रचलित रही है। राजस्थान का महिला समुदाय अपने घर आंगन को मांडणों से सजाने में जितना उत्सुक रहा है उतनी ही कुशलता से कशीदाकारी करने में भी उन्हें महारत हासिल रही है। कशीदाकारी का यह कार्य कपड़े पर नाना प्रकार के कम मूल्यवान मणियों सलमे-सितारे अथवा कांच के टुकड़ों को कलात्मक ढंग से टांक कर किया जाता है। इनके अतिरिक्त परिधान के वस्त्रो पर भी छवि अकन के रूप कशीदाकारी का कलात्मक कार्य किया जाता है जिसके उत्कृष्ट नमूने किसी भी शासकीय हस्तशिल्प के विक्रय केन्द्रों पर विक्री के लिए तैयार बने बनाये वस्त्रों, हैण्ड-बैगो और शोरूम की दीवारों पर अलकरण के लिए लगाई गई वस्तुओं में देखा जा सकता है।

लोक चित्रांकन

राजस्थानी हस्त शिल्प के अन्तर्गत लोक शैली में कपड़े अथवा दीवारों के अलंकरण के लिए इस्तेमाल की जाने वाली "फड" अथवा बातिक शैली की चित्रांकित कृतियों की अपनी पहचान रही है। एक लम्बे "खरीते" के रूप मे चित्रांकित की जाने वाली लोक कथाओं के नायक नायिकाओं व लोकगाथाओं के विषय-वस्तु को दिग्दर्शित करने वाली कलाकृतिया देशी-विदेशी पर्यटकों व कला-मर्मज्ञों के बीच समान रूप से लोकप्रिय हो चली है।

लोक शैली के हस्तशिल्प की इस चित्रांकन परंपरा में देव मूर्तियों के पृष्ठ भाग के अलंकरण के लिए प्रयुक्त की जाने वाली "पिछवाईयों" का विशिष्ट स्थान

है। राजस्थान में वल्लभ स प्रदाय के आराध्य श्रीनाथजी की प्रधान पीठ उदयपुर

[illegible]

[illegible]

वाले वन्य पशुओं का आधिक्य रहता है, चित्रित किया जाता है। हाथ से बुने हुए किस्म के सामान्य कपडे को काले रंग से रंगकर उस पर बालकृष्ण की लीलाओं का छवि अंकन किया जाता है। पिछवाइयों मे श्रीनाथजी का स्वरूप श्याम वर्ण का होता है तथा पृष्ठभूमि में सन्ध्याकालीन आकाश की नीलाभ छटा दर्शायी जाती है। नाथद्वारा तथा उदयपुर में तैयार की जानेवाली पिछवाइयाँ पहले केवल वल्लभपुर सम्प्रदाय के मंदिरों मे ही देवमूर्ति के पीछे लगाई जाती थी किन्तु अपने आराध्य की लीलाभूमि व्रज अंचल अथवा देश के अन्य दूरस्थ भागों से नाथद्वारा पहुंचने वाले श्रद्धालु यात्रियों द्वारा नाथद्वारा की यात्रा के स्मृति चिन्ह के रूप मे पिछवाइयों के लिये बढते आग्रह के कारण इनका निर्माण व्यावसायिक स्पर पर किया जाने लगा। वर्तमान मे नाथद्वारा तथा उदयपुर में पिछवाइयां तैयार करने वाले जितने कलाकार हैं उससे भी अधिक है इनके प्रशसक और कलाप्रेमी खरीददार।

राजस्थानी लोक चित्रांकन की एक और विशिष्ट देन मारवाड़ अंचल के लोकनायक, पाबूजी के जीवन एवं कृतित्व पर आधारित "फड" नाम से कपड़े पर किया जाने वाला चित्रांकन है। राजस्थान में पाबूजी का यशोगान करने वाली भोपा जाति के स्त्री-पुरुष विशिष्ट अवसरों पर "फड" को सामने रखकर पाबूजी से सम्बन्धित लोक गीतों का लोक वाद्यों के साथ गायन करते हैं तथा इन "फड़ों" के प्रति यथेष्ट सम्मान भाव रहते हैं। पाबूजी की फड़ के नाम से जानी जाने वाली इन फड़ों के चित्रांकन में लाल व हरे रंगों की प्रधानता रहती है और कुई बार तो आकार में इतनी लम्बी बनती है कि इन्हें एक बही की तरह लपेट कर साथ ले जाया जा सकता है। पाबूजी की फडों का चित्रांकन मुख्यतः भीलवाड़ा के निकट शाहपुरा कस्बे के जोशी जाति के लोगों द्वारा किया जाता है। छोटे आकार की फड़ों में जहां पाबूजी के जीवन के किसी विशिष्ट आख्यान का चित्रांकन किया जाता है वहां लम्बी फड़ में उनके जीवन से सम्बन्धित समूचे घटनाक्रम को दर्शाया जाता है। पिछले कुछ समय मे पाबूजी की फडों का व्यावसायिक स्तर पर भी चित्रांकन किया जाने लगा है। औद्योगिक प्रतिष्ठान, होटलों अथवा सरकारी व गैर सरकारी कार्यालयों के स्वागत कक्षों व अधिकारियों के कक्ष की साज सज्जा के लिए इनका प्रयोग किया जाने लगा है।

बातिक चित्रांकन

राजस्थान में कपड़े पर मोम की परत चढ़ाकर बातिक शैली के चित्रांकन की परम्परा काफी पुरानी है। बातिक शैली के ये चित्रांकित पर्दे निजी भवनों अथवा कार्यालयों की दीवारों की साज सज्जा के लिए प्रयुक्त किए जाते हैं।

विविध कथानकों व रूपाकारों के रूप में बातिक शैली का यह चित्रांकन राजस्थान के विभिन्न अंचलों में किया जाता है। पिछले कुछ वर्षों से विश्वविद्यालय स्तर पर चित्रांकन विधा के प्रशिक्षण में बातिक शैली के चित्रांकन का समावेश कर दिये जाने से जहां बातिक शैली के चित्रांकन के विधिवत प्रशिक्षण से कई नये कलाकार सामने आये हैं वहीं बातिक शैली के चित्रों का व्यावसायिक स्तर पर निर्माण किये जाने की परम्परा शुरू हुई हैं। शासकीय स्तर पर राजस्थान लघु उद्योग निगम बातिक शैली से निर्मित चित्रों की खरीद व विपणन की व्यवस्था कर रहा है जिससे इस शैली के चित्रांकन करने वाले कलाकारो के लिए आजीविका सुनिश्चित होना संभव हुआ है।

लघु चित्र

राजस्थानी हस्तकला की चित्रांकन विधा की चर्चा यहां के राजाओं और सामन्तों के संरक्षण व आश्रय मे पनपी लघु चित्रों की परपरा के बिना अधूरी है। राजपूत शैली में लघु चित्रांकन की यह विधा सामन्ती शासन के दौरान पर्याप्त फली-फूली है। गुजिस्ता जमाने मे लघु शैली के सरनाम चित्रकारों के वंशज व उनकी शिष्य परम्परा के परिवारों ने आज भी चित्रांकन की इस परम्परागत विधा को जीवित बनाये रखा है। जयपुर, जोधपुर, नाथद्वारा व किशनगढ़ मे लघुचित्रों का चित्रांकन करने वाले अनेक कुशल चितेरे आज भी मौजूद हैं जिनके बने चित्रों में कला और सजीवता का उत्कृष्ट स्तर परिलक्षित होता है। इन चित्रों में मुख्यत: शिकार, पशु-पक्षी, राजाओं के आमोद-प्रमोद व राग-रागनियों के चित्र बनाये जाते हैं।

कागज बनाने की कला

जयपुर के निकट बसा सागानेर नाम का छोटा सा कस्बा यहां के कुशल कारीगरों द्वारा निर्मित किए जाने वाले मजबूत व टिकाऊ कागज के लिए प्रसिद्ध रहा है। आमेर के शासक महाराज मानसिंह द्वारा 16 वीं सदी में उत्तर-पश्चिमी सीमाप्रान्त के सैनिक अभियान से लौटते समय अपने साथ लाये गये कागज निर्माण करने वाले कुशल कारीगरों के कुछ परिवारों को लाकर सांगानेर में बसाया गया था। इन्हीं परिवारों के वंशज आज भी सांगानेरी कागज के नाम से प्रसिद्ध मजबूत व टिकाऊ किस्म का कागज अपनी परम्परागत देशी पद्धति से तैयार करते हैं। रियासती काल मे महत्वपूर्ण दस्तावेजों के लेखन के लिए प्रयुक्त होने वाला सागानेरी कागज आज व्यापारियों की बहियों अथवा कोर्ट कचहरी के दस्तावेजों के लिए प्रयुक्त होने लगा है।

ऊनी कालीन, दरियां व चमड़े की वस्तुएं

जयपुर, बीकानेर व बाड़मेर सुन्दर व कलात्मक ऊनी कालीन के रूपाकारों लिए प्रसिद्ध रहे हैं। भारतीय व ईरानी पद्धति के लघु कोणो के विविध डिजायनों निर्माण के

तथा इन्डो-किर्मान पद्धति के अनुसार फूल पत्तियों व बेलबूंदों के बारीक कलात्मक काम से युक्त इन कालीनों की पृष्ठभूमि प्रायः हाथीदांत अथवा हल्के सफेद रंग की रखी जाती है। प्रतिवर्ग इंच में सोलह से तीस गांठे तक हाथ से बनाई जाती हैं जो विभिन्न रूपाकारों में इतने कलात्मक ढंग से सजाई जाती हैं कि दर्शक कलाकार के कौशल की दाद दिए बिना नही रह सकता। बीकानेर में "नमदा" कहे जाने वाले ऊन के चिथडों से बने साधारण कालीन भी सुन्दर रंग विधान, इसके रचयिता कलाकारों के कल्पनाशील रूपाकारों और उनके सधे हुए हाथों का स्पर्श पाकर एक उत्कृष्ट कृति के रूप में जिस सहजता से निखर उठते हैं उससे स्पष्ट होता है कि राजस्थानी कलाकारों में ऊनी कालीन तैयार करने की अद्‌भुत समझ ही नहीं है वरन् वे अपने फन के उस्ताद भी हैं। रियासती काल मे राजाओ के राजसी महलों और सभागृहों की शोभा बढाने वाले ये कालीन आज रईसों के रिहायशी बंगलो की की ही नही अपितु होटलों, सरकारी कार्यालयों व उच्चाधिकारियों के कक्षो की सजावट के एक महत्वपूर्ण अग बनते जा रहे हैं। अपने उत्कृष्ट रचना विधान और कलात्मक वैभव के कारण राजस्थानी कालीनों की विदेशो में भी काफी मांग बढी है और बड़ी मात्रा में इनसे विदेशी मुद्रा अर्जित की जाने लगी है। पिछले लगभग एक दशक से राज्य में ऊनी कालीन बनाने के परपरागत स्थानों के अलावा दूरदराज के ग्रामीण अंचलों में भी कालीन व गलीचों का निर्माण कुटीर उद्योग के रूप में प्रोत्साहित किया जाने लगा है। इससे न केवल ग्रामीण अंचलो के बेरोजगार युवक युवतियों को आजीविका कमाने का सुयोग मिला है अपितु ग्रामीण अचलों के युवक-युवतियों की कलात्मक प्रतिभा भी सामने आते लगी है।

चमडे पर हस्तशिल्प

राजस्थान पशुधन के लिहाज से देश का एक अग्रणी राज्य है। पशुधन की बहुलता के कारण हर साल राज्य में मरने वाले पशुओ की खाल उतारी जाती है जिससे यहां के चर्मकार व हस्तशिल्पी नाना प्रकार की कलात्मक एवं उपयोगी वस्तुएं तैयार करते हैं। चमड़े से निर्मित की जाने वाली इन कलात्मक वस्तुओं में जोधपुर व जयपुर में बनाई जाने वाली "मोजडियां" व "नागरे" अपनी कलात्मक, सलमे सितारे और कशीदाकारी के कार्य की कारीगरी व हल्केपन के कारण काफी प्रसिद्ध हैं। बदलते वक्त के अनुसार लोगों की परिवर्तित रूचि के अनुरूप इन दोनों नगरों के चर्मकारों ने जूतियों के नये-नये डिजाइन विकसित कर लिए हैं। इसी प्रकार चमड़े से बने परिधानों तथा महिलाओं व बच्चों के उपयोग के बस्ते व बटुए आदि भी विविध आकार-प्रकार और कलात्मक डिजायनों में तैयार किये जाने लगे हैं।

ऊंट की खाल को मुलायम बनाकर तैयार की जाने वाली तेल-घी रखने की कुप्पियां बोतलनुमा सुराहियां, कलात्मक चित्रांकन से युक्त लैम्पशेडों के निर्माण

का बीकानेर एक प्रमुख केन्द्र है। इनके निर्माण के लिए पहले मिट्टी के माडल तैयार किये जाते हैं तथा इन पर मुलायम बनाकर ऊंट की खाल को तदनुरूप मंढ़ दिया जाता है खाल के सूखकर कड़ा पड़ जाने पर मिट्टी का यह माडल धोकर साफ कर दिया जाता है। इसके बाद विविध आकार-प्रकार की इस सूखी हुई खाल को कलात्मक ढंग से चित्रांकित कर दिया जाता है। ऊंट की खाल से बनी इन कृतियों पर किया गया चित्रांकन कई बार इतना कलापूर्ण और मनोहर होता है कि सहसा किसी को यह विश्वास तक नहीं हो पाता कि ये ऊंट की खाल जैसी साधारण वस्तु से तैयार की गई हों।

खिलौने व कठपुतलियां

किसी भी कला परम्परा के निर्वाह के लिए बालकों की इनमें अभिरुचि होना एक महती आवश्यकता है। राजस्थान मे लकडी से तैयार की जाने वाली कलात्मक चित्रांकन से युक्त कठपुतलियां भी राजस्थान के परम्परागत हस्तशिल्प की एक ऐसी विशिष्ट सौगात है जो घर-घर और गांव-गांव के बच्चों से समान रूप से लोकप्रिय है। लोक कथाओ को आधार बनाकर सरस कथा शिल्पी कठपुतली का तमाशा दिखाने वाले कलाकारों के लिये ये कठपुतलियां ही आजीविका का आधार रही हैं। उभरे हुए नाक-नक्श और तीखे नयनों और परम्परागत राजस्थानी सूरमाओं और वीरांगनाओं को दृश्यमान स्वरूप देकर इन्हें अंगुली में बंधी डोरियों को कथानक के प्रवाह के साथ ऊपर नीचे, इधर-उधर हिलाकर न केवल नचाते हैं अपितु परदे के पीछे से मुंह मे रखी "पीपाड़ी" से नाना प्रकार के स्वर निकाल कर इन कठपुतलियों से अभिनय करा देने मे भी ये पारंगत हैं। कठपुतली नचाने वाले कलाकार की पत्नी या वयस्क पुत्री इस बीच ढोलक की थाप पर कठपुतली के तमाशे के कथानक को उच्च स्वर से सधी आवाज मे गाती रहती हैं। कठपुतली के ये तमाशे आबाल-वृद्ध-वनिता, चाहे वे शहर के हों या गांव के अथवा किसी महानगर के, सभी का भरपूर मनोरंजन करने में समर्थ होते हैं। धनिक वर्ग के लोगों में अपने कमरों के कोनो में सजावट के लिए आकर्षक राजस्थानी परिधान और साज-सज्जा से निर्मित इन कठपुतलियों को रखने का फैशन सा चल पड़ा है। उदयपुर स्थित लोक कला संस्थान के संस्थापक और "पद्मश्री" जैसे राष्ट्रीय अलंकरण से सम्मानित स्व. देवीलाल सामर के सद्प्रयासों से राजस्थान की कठपुतली कला को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर पहचाना जाने लगा है। पहले कठपुतली के तमाशों का एक बंधा-बंधाया कथानक अमरसिंह राठौर का जीवन चरित्र हुआ करता था किन्तु आजकल नित-नये विषय-वस्तु पर कथानक ही तैयार नही किए जाते वरन् कठपुतली प्रदर्शन की तकनीक में भी नित-नये प्रयोग होने लगे हैं।

कठपुतलियों के अलावा राजस्थान के जयपुर, उदयपुर व सवाईमाधोपुर नगरों में लकड़ी तथा कुट्टी-मिट्टी से तैयार खिलौने बनाने का हस्तशिल्प भी काफी

प्रसिद्ध रहा है। लकड़ी को परम्परागत औजारों से खोद-खरोंच कर इससे विविध आकार-प्रकार के कलात्मक खिलौने तैयार करने वाले कारीगरों को 'खरादी' कहा जाता है। पलंग के भारी-भरकम पायों से लेकर जमीन पर थिरक कर नाचने वाली नन्हीं सी फिरकी और बच्चों द्वारा डोर बांधकर नचाये जाने वाले लट्टू से लेकर नन्ही सी बालिकाओं की लकड़ी से बनी घर गृहस्थी के काम आने वाली रोजमर्रा की चीजों यथा, चाकी-चूल्हा, चकला-बेलन, गिलास-बाल्टी और प्लेटें तथा संगीत के विभिन्न वाद्यों और बैण्ड पार्टी तक के कलात्मक खिलौनें, कुट्टी-मिट्टी से बने रंगे बड़े नाना प्रकार के साग-सब्जी व फल-फूलों, पशु-पक्षियो और देवी-देवताओं के खिलौनों के सैट पर्यटकों का मन सहज ही मोह लेते हैं। चित्तौड़गढ़ जिले के बस्सी गांव की मोर के चित्रांकन से युक्त नाव के आकार-प्रकार की शृंगारदानियां जिनमें ईसर और गणगौर की प्रतिमायें रखी जाती हैं तथा नई नवेली दुल्हन को भेंट की जाने वाली सौन्दर्य प्रसाधन सामग्री रखने के कलात्मक छोटे से सन्दूक बच्चों के प्रिय खिलौने हैं। नागौर जिले के मेड़ता कस्बे के विभिन्न विषय वस्तु के मिट्टी के खिलौने जिनमे काठ के हवाई जहाज तक शामिल हैं बनाये जाते हैं। इसी प्रकार बच्चो के लिए खिलौनो के रूप मे समूची जन्तुशाला के पशु-पक्षियों के कुट्टी से बने खिलौनो के सेटों के अलावा जयपुर के हाथी-घोड़ा वालो द्वारा रंगीन कपड़े में चिथड़े या लकड़ी का बुरादा भरकर बनाये गये गोटे की कारीगरी से अलंकृत हाथी, घोड़े, ऊंट आदि खिलौने भी बच्चों मे काफी लोकप्रिय हैं। इनके अतिरिक्त पेपरमेसी कला से बने पंखदार पक्षियो तथा छोटे-छोटे पशुओ की भी पर्यटकों में बड़ी मांग रहती है।

इनके अतिरिक्त सवाईमाधोपुर में खस से सुवासित पानदानियां, पंखे तथा ऐसी अन्य उपयोगी कलात्मक चीजें भी बनाई जाती है।

राजस्थान मे हस्तकलाओ की नाना प्रकार की वस्तुओं के निर्माण की ऐसी समृद्ध परम्परा रही है कि हर प्रकार के कला कौशल के पीछे मानों आंचलिक कलात्मक सौन्दर्य बोध और कला को हुनर का रूप दिये जाने का एक लम्बा और सुव्यवस्थित इतिहास रहा हो। भले ही सड़क पर किसी कलाकृति को बेचने वाला आधुनिक रुचि के अनुरूप कृति को नया रूप देकर खरीददार को प्रभावित कर रहा है किन्तु वस्तुतः कृति के इस नूतन स्वरूप के पीछे भी कला साधना की एक युगों पुरानी परम्परा होती है। हस्तशिल्प की नाना विध कलाकृतियां इस मरु प्रदेश की एक ऐसी विरासत है जिस पर निश्चय ही गर्व किया जा सकता है। राजस्थानी हस्तशिल्प की कृतियों को नये जमाने के कला प्रेमियों की अभिरुचि के अनुरूप ढालने के साथ-साथ इनकी पारम्परिक कलात्मकता को अक्षुण्ण बनाये रखने, दस्तकारों द्वारा निर्मित कृतियों का समुचित मूल्य देकर उन्हें शोषण से बचाने और इनके

विका का नियमित स्रोत उपलब्ध कराने तथा राजस्थानी हस्तशिल्प की वस्तुओं को देश-विदेश में लोकप्रिय बनाकर उनका बाजार तलाशने की दिशा मे राजस्थान लघु उद्योग निगम की सार्थक भूमिका रही है। इसी का सुपरिणाम है कि प्रतिवर्ष निगम ा देश के विभिन्न अंचलों में ही नहीं वरन् अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के मेलों व प्रदर्शनियों क में राजस्थानी हस्तकलाओं के वैभव और शिल्पियों के हुनर की विशिष्ट पहचान नायी है और राजस्थान हस्तशिल्प की ये कृतियां करोड़ों रुपये की विदेशी मुद्रा ा अर्जन कर पा रही हैं।

साहित्य परम्परा

राजस्थान की साहित्य-परम्परा सदियों पुरानी है। परिमाण की विपु एवं गुणात्मकता दोनों ही की दृष्टि से इस प्रदेश में रचित साहित्य का भार साहित्य मे महत्त्वपूर्ण स्थान है।

राजस्थान की साहित्यिक सम्पदा का सबसे समृद्ध भाग वह है, जो राजस्था भाषा में रचा गया है। डिंगल, मारवाड़ी और मरु भाषा के नाम से जो भी साहि उपलब्ध है वह सब इसके अन्तर्गत आ जाता है। विक्रम की आठवी शताब्दी लेकर लगभग बारह सौ वर्ष की अवधि में इस भाषा में जो साहित्य सर्जना हुई वह न केवल राजस्थान के लिए अपितु सारे भारतवर्ष के लिए बड़े गौरव की है। इस साहित्य की ओजस्विता तथा भावनात्मक वैभव इतना असाधारण कोटि है कि रवीन्द्रनाथ ठाकुर और पं. मदन मोहन मालवीय जैसी विभूतियो ने इस प्रशंसा की है। रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने एक बार कलकत्ते में अपने मित्रो से राजस्थान कुछ वीर गीतों को सुनकर अपने उद्गार इस प्रकार व्यक्त किये थे:—

"कुछ समय पहले कलकत्ते में मेरे कुछ राजस्थानी मित्रों ने रण-सम्बन्धी कुछ राजस्थानी गीत सुनाये। मैं तो सुनकर मुग्ध हो गया। उन गीतों में जि सरसता, सहृदयता और भावुकता है। वे लोगों के स्वाभाविक उद्गार हैं। मैं उन्हें सन्त-साहित्य से भी उत्कृष्ट समझता हूं। वे गीत संसार के किसी भी साहित्य और भाषा का गौरव बढ़ा सकते हैं।"

एक अन्य स्थान पर तो उन्होने राजस्थानी साहित्य को सारे भारतवर्ष बेजोड़ बतलाया है—

"भक्ति-रस का काव्य तो भारतवर्ष के प्रत्येक साहित्य मे किसी न किसी कोटि का पाया जाता है, किन्तु राजस्थान ने अपने रक्त से जो साहित्य-निर्माण किया है, उसकी जोड़ का साहित्य और कही नहीं पाया जाता और उसका कारण यह कि राजस्थानी कवियों ने कठिन सत्य के बीच में रह कर युद्ध के नगारों के अपनी कविताओं का सृजन किया था। प्रकृति का तांडव रूप उनके सामने क्या आज कोई केवल अपनी भावुकता के बल पर फिर उस काव्य का निर्माण सकता है ? राजस्थानी भाषा के साहित्य में जो एक भाव है, जो एक उद्वेग है,

ेवल राजस्थान के लिए ही नहीं सारे भारतवर्ष के लिए बड़े गौरव की वस्तु है। मुझे क्षितिमोहन सेन महाशय से हिन्दी काव्य का आभास मिलता था, पर मैंने जो ाया है, वह बिल्कुल नवीन वस्तु है। आज मुझे साहित्य का एक नवीन मार्ग मिला है।"

हिन्दी साहित्य की श्रीवृद्धि में तो राजस्थान ने इतना योगदान दिया है कि दि साहित्य के इतिहास से वह सब निकाल दिया जाय, जिसकी रचना राजस्थान साहित्यकारों ने की थी, तो हिन्दी भाषा का साहित्य निश्चित ही बहुत विपन्न स्थिति को प्राप्त हो जाएगा। इसका कारण यह है कि हिन्दी का जितना भी आदि-कालीन साहित्य प्राप्त होता है वह सब तो राजस्थान की देन है ही किन्तु संयोगवश ध्ययुगीन साहित्य के भी अनेक महान सृष्टा इस प्रदेश में हुए हैं।

वीर-गाथा काल के बहुचर्चित एवं हिन्दी के सर्वप्रथम महाकाव्य "पृथ्वीराज ासो" की रचना राजस्थान में ही हुई। भक्तिकाल के अनेक प्रमुख कवियों, जैसे—ुन्दरदास, दादूदयाल और मीरां आदि ने अपनी साहित्य-साधना का फल राजस्थान ो ही दिया।

इसके अतिरिक्त वीर रस के प्रसिद्ध कवि सूदन और वृन्द सतसई के लेखक विवर वृन्द ने भी अपनी साहित्य सर्जना का केन्द्र राजस्थान को ही बनाया। र्वाचीन युग में द्विवेदी परम्परा के सुप्रसिद्ध साहित्यकार श्री गिरधर शर्मा 'नवरत्न' से व्यक्तियों ने राजस्थान के साहित्य भण्डार को भरा है। नई पीढ़ी के भारत ्रुत साहित्यकार डा. सुधीन्द्र और डा. रांगेय राघव, जिनका दुर्भाग्यवश अल्प आयु ही स्वर्गवास हो गया, राजस्थान के ही निवासी थे। वर्तमान समय में भी राजस्थान के बीसियों साहित्यकार हिन्दी की साहित्यिक सम्पदा की श्रीवृद्धि में पना महत्वपूर्ण योगदान दे रहे हैं। यहां मुख्यतः राजस्थानी साहित्य-परम्परा और सके विकास की एक झलक प्रस्तुत करना विषय के निर्वाह की दृष्टि से अभीष्ट ोगा।

ाचीन धारा—

यद्यपि 'राजस्थान' और 'राजस्थानी' शब्द अधिक प्राचीन नहीं हैं, परन्तु इन ामों से सुप्रसिद्ध जो अमर साहित्य हमारे पास है वह तो अत्यन्त प्राचीन है। ्रम की आठवीं सदी से लेकर एक हजार दो सौ वर्षों के इस दीर्घकाल में इस देश ने साहित्य की जो अमूल्य सेवायें की हैं वे संख्यातीत है। अपभ्रंश की इस र्वप्रथम सौन्दर्य-प्रसूति ने एक बार सम्पूर्ण उत्तरी और पश्चिमी भारत को अपनी ्प-माधुरी से मंत्र-मुग्ध कर लिया था। शताब्दियों तक राष्ट्रभाषा के गौरवान्वित द पर आसीन रहकर इसने यवनों के आक्रमणों से पदाक्रांत होते हुए, देश को ारम्बार अटूट प्रोत्साहन प्रदान किया था। इसकी उस ओजपूर्ण छटा ने आज तक ्जारों लेखकों और कवियों को जन्म दिया है, जिनकी काव्य-माधुरी के कलनाद से

एक बार सम्पूर्ण ग्रार्यावर्त गूंज उठा था तथा जिनकी ग्रोजस्वी रचनाग्रों से ग्राज है
राजस्थानी-साहित्य का कलेवर लदा पड़ा है। राजपुताना, गुजरात एवं मध्य-भारत
के इतने लम्बे दायरे में बोली जाने का गर्व मध्य-युग की ग्रन्य किसी भाषा को प्राप्त
नहीं था। प्राचीन पश्चिमी राजस्थानी के नाम से प्रसिद्ध यह भाषा ग्रभी सोलहवीं
शताब्दी तक समूचे गुजरात की जन-भाषा थी। इसके बाद पिछली तीन-चार
शताब्दियों तक इसने गृह-स्वामिनी बन कर राजस्थान को कृतकृत्य किया। जिस समय
मुगल सभ्यता के साथ-साथ फारसी भाषा ग्रौर लिपि ने भी भारतीय भाषाग्रों को प्रभावित
करना ग्रारम्भ कर लिया था उस समय राजस्थान ने ग्रपनी भाषा ग्रौर साहित्य को
ग्रौर भी ग्रधिक प्रोत्साहित किया। इसी कारण हमारी भाषा में जितने साहित्य की
रचना मुगल सत्ता की इन दो-तीन शताब्दियों मे हुई उतनी ग्रौर कभी नहीं। परन्तु
यह खेद का विषय है कि पिछले 50-60 वर्षों से इस भाषा में साहित्य सृजन की
इति-श्री सी हो गई है। जबकि बंगाल, गुजरात, महाराष्ट्र इत्यादि प्रदेश ग्रपनी
ग्रपनी भाषाग्रों के पुनर्निर्माण मे जुटे हुए हैं, उस समय राजस्थान ग्रपनी पूर्व समृद्ध
भाषा की सुधि विस्मृत कर निश्चेष्ट बैठा हुग्रा है, यह ग्रत्यन्त शोचनीय है।

मारू भाषा, डिंगल, मारवाड़ी ग्रौर राजस्थानी के नाम से जितना भी
साहित्य उपलब्ध है वह सब इसी पुरातन भाषा की देन है। देववाणी संस्कृत
छोड़कर सम्भवतः ग्रन्य किसी भी भारतीय भाषा का साहित्य-भंडार इतना सुसम्पन्न
नहीं। लगभग 1200 वर्षों से जिस शृंखलाबद्ध साहित्य की रचना राजस्थान में हुई
है वह केवल राजस्थान के लिए ही नही किन्तु सम्पूर्ण भारतवर्ष के लिए गौरव की
वस्तु है।

जैसा कि प्रत्येक भाषा मे होता है, राजस्थानी में भी मौखिक एवं लिखित
दोनों प्रकार का ही साहित्य मिलता है। मौखिक साहित्य भी उतने ही परिमाण में
उपलब्ध है जितना कि लिखित। प्राचीन हस्तलिखित राजस्थानी साहित्य प्रधानतः
निम्नलिखित चार रूपो में विभाजित किया जा सकता है—

(1) चारणी-साहित्य (2) ब्राह्मणी-साहित्य
(3) जैन-साहित्य (4) संत-साहित्य

चारणी साहित्य

इसे हम ग्रपनी भाषा का प्रधान साहित्य कह सकते हैं। यह मुख्यतया वीर
रसात्मक है पर शृंगार ग्रौर शान्त-रसादि की रचनाएं भी कम नहीं हैं। इस
साहित्य के कारण राजस्थानी साहित्य की इतनी ग्रधिक सराहना देशी एवं विदेशी
विद्वानों ने की है। विशेषकर चारण कवियों ग्रौर लेखकों की रचनाएं ही इस श्रेणी
के ग्रन्तर्गत ग्राती हैं, ग्रतः उन्हीं के नाम पर इसका नामकरण कर दिया गया।
ग्रन्यथा ढाढ़ी, डूम, ढोली, भाट इत्यादि जातियों की रचनाएं भी इसी श्रेणी में हैं।

श्रौर इसी वर्ग में सम्मिलित हैं। कुछ राजपूतों ने भी इस कोटि की रचनाएं की हैं।

यह साहित्य निम्नलिखित रूपों में उपलब्ध है:—

(1) प्रबन्ध काव्यों के रूप मे

(2) गीतों के रूप में

(3) दोहों, सोरठों, कुण्डलियों, छप्पयों, कवित्तों, त्रोटकों, झूलणो, सवैयों इत्यादि विभिन्न स्फुट छन्दों के रूप मे।

(1) प्रबन्ध-काव्यों के रूप में रासो परम्परा के अनेकों ग्रन्थों की खोज की जा चुकी है।

(2) 'गीत' छन्द में मिलने वाली ऐतिहासिक कृतियाँ तो संख्यातीत कही जा सकती हैं, एक-एक गुटके में ऐसे हजारों गीत मिलते हैं श्रौर न जाने कितने ऐसे गुटके गांव-गांव श्रौर घर-घर के कोने-कोने मे मटकों, श्रालों श्रौर खड्डो मे पड़े सर्वनाश की प्रतीक्षा कर रहे हैं। राजस्थान के सच्चे इतिहास का पुष्ट प्रमाण देने वाली जितनी सामग्री इन गीतों में मिल सकती हैं, उतनी श्रन्यत्र कहीं भी नहीं। हमारी प्राचीन संस्कृति श्रौर सभ्यता का वास्तविक श्रध्ययन इन गीतों से ही हो सकता है। गीत प्रायः प्रत्येक ऐतिहासिक व्यक्ति के विषय मे मिलते हैं। सच्ची घटनाश्रो के चित्रांकन के साथ-साथ इन गीतो मे श्राश्रयदाताश्रों का श्रत्यधिक गुणगान श्रवश्य मिलता है जो कि कभी-कभी इतिहासकार को भ्रम में डाल देता है, पर श्रधिकतर वह इतना स्पष्ट है कि एक श्रच्छे श्रालोचक की दृष्टि से बच नहीं सकता। प्रायः प्रत्येक कवि एवं लेखक ने ये गीत लिखे हैं, जिसमे कहीं निष्पक्ष भाव से किसी राष्ट्रीय नेता का व्यक्तित्व वर्णन है, कहीं उसके जीवन की किसी सुप्रसिद्ध घटना का चित्र है, कही किसी वीर के उत्तेजनात्मक युद्ध की प्रशंसा है तो कही किसी स्वामिभक्त का युद्धभूमि मे प्राणदान, कहीं किसी कवि के श्राश्रयदाता की दानशीलता, वीरता श्रादि सद्गुणों का यशगान है, कहीं किसी संत एवं देवता के महान् कार्यों की वन्दना है श्रौर कहीं किसी स्त्री के मुख से उसके पति की व्याजस्तुति श्रलंकारान्तर्गत सराहना। इस प्रकार जन्म से लेकर मृत्यु तक, जीव की प्रत्येक वर्णनीय घटना को इन रचनाश्रों में स्थान मिल गया है।

(3) दोहों, सोरठों, कुण्डलियों श्रादि के रूप मे मिलने वाला साहित्य गीत साहित्य से भी श्रधिक विस्तृत एवं श्रसीमित है। दोहा, छन्द राजस्थानी साहित्य का सबसे प्राचीन प्रकार है, जिसके उदाहरण विक्रम की दूसरी एवं तीसरी शताब्दी की रचनाश्रों तक मे भी मिलते हैं। प्राचीन होने के साथ-साथ यह श्रत्यधिक प्रचलित भी है। जनसाधारण की मौखिक रचनायें भी जितनी दोहा-छन्द मे हैं उतनी श्रन्य किसी छन्द में नहीं। सारांश यह है कि राजस्थानी साहित्य का एक बहुत बड़ा श्रंश दोहों के रूप में है। विद्वानों का श्रनुमान है कि यदि उचित श्रनुसंधान किया जाये तो

दोहों का संग्रह एक लाख से भी ऊपर तक किया जा सकता है, जो सत्य ही है राजस्थान की बहुत सी रचनाएं ही एकमात्र दोहा-छंद में हैं।

इसके अतिरिक्त हमारे गद्य साहित्य का सारा श्रेय भी लगभग उक्त वर्ग के लेखकों को ही है। ख्यात, वात, विगत, पीढ़ी, पट्टावलि, पिरियावली, वंशावली, हाल, हकीकत, वृत्तान्त, इतिहास, कथा, कहानी, दराजी, दतावेत इत्यादि नामों से वर्णित राजस्थानी गद्य का भण्डार अथाह है। इसके अतिरिक्त ब्राह्मणी साहित्य के कथा संग्रहों एवं ज्योतिष, वैद्यक, संगीतादि के स्फुट ग्रन्थों को छोड़ कर हमारे गद्य साहित्य में और सिढायच दयालदास की "राठोड़ां री ख्यात" राजस्थानी गद्य-साहित्य की दो महान् कृतियां हैं। यदि ये दो रचनाएं और प्रसिद्ध चारण विद्वान सूर्यमल्ल के वंशभास्कर का गद्य भाग हमारे भण्डार में से निकाल लिए जावें तो नैणसी की ख्यात के अतिरिक्त और रह ही क्या जाता है। बांकीदास और दयालदास चारणी गद्य-साहित्य के दो अमर कलाकार हैं। आज उन्हीं की कृतियों के बल पर हम अपने गद्य-साहित्य की सराहना करने जा रहे हैं। बांकीदास, दयालदास और सूर्यमल्ल की कृतियां राजस्थानी के सरस गद्यांशों की अमूल्य निधियां ही नहीं राजस्थान के इतिहास की अत्यधिक प्रामाणिक रचनायें भी है।

राजस्थान के राजपूत राज्यों में चारण का स्थान बहुत उच्च था। चारण ही इतिहासकार, चारण ही राजकवि और चारण ही मन्त्री भी हुआ करते थे। अतः राजपूत राजाओं के आश्रय में रह कर चारण ने जितना लिखा उतना जैन यतियों के अतिरिक्त और किसी ने नहीं। राजा के जन्म की बधाई गाई तो चारण ने, राज्याभिषेक का गीत गाया तो चारण ने, सौन्दर्य की, कायरता की, वीरता की और दानशीलता की आलोचना की तो चारण ने। राजपूत के जीवन में चारण प्राण बनकर समाया हुआ था। मध्य युग में तो राजपूत और चारण इतने घुल-मिल गये थे कि इन दो शब्दों में अत्यधिक साम्य ही नहीं, एक-दूसरे का बोध भी स्वतः ही होने लग गया था। इसी घनिष्ठ सम्बन्ध के कारण राजपूत के राज्य का सम्पूर्ण विवरण लिखना भी चारण ही का कार्य बन गया था। इसी कारण प्रायः सभी राजपूत राज्यों के इतिहास चारणों के ही द्वारा लिखे गए हैं।

जैन साहित्य

भगवान महावीर के इन उपासकों ने भारतीय साहित्य की जो अमूल्य सेवायें की हैं उनके मूल्य का प्रतिदान नहीं चुकाया जा सकता। जैन आचार्यों, यतियों, मुनियों एवं श्रावकों ने भारत के कोने-कोने में संस्कृत, प्राकृत तथा अपभ्रंश भाषाओं के साहित्य को लिपिबद्ध कर उसे अपने भण्डारों में सुरक्षित भी किया है। लोक भाषा के साहित्य को जितना प्रोत्साहन जैन धर्मावलम्बियों के द्वारा मिला उतना अन्य किसी वर्ग के द्वारा नहीं। एक राजस्थान ही नहीं सभी प्रान्तों में यहां जैन

धर्म का प्रचार प्राचीनकाल से ही चला आ रहा है, जैनियो ने वहां की भाषा के भण्डार को अपनी रचनाओं द्वारा अवश्य भरा है। राजस्थानी और हिन्दी के तो प्राचीनतम उदाहरण ही जैन ग्रन्थो मे मिलते हैं और जब तक जैन भण्डारों का सम्यक् पर्यवेक्षण नहीं होगा तब तक हिन्दी और राजस्थानी भाषाओं का पूरा इतिहास तैयार नही हो सकता। गुजरात के विद्वानो ने इन्ही भण्डारो में से अपनी भाषा का इतिहास खोज निकाला है।

आधुनिक जैन समाज धार्मिक श्रद्धा-भक्ति में सर्वोपरि है। अत. जैन यतियो के विद्याव्यसनी होने का इस समाज पर बहुत अधिक प्रभाव पड़ा है। इसी के फल-स्वरूप इस समाज ने भारतीय साहित्य को उच्च कोटि के साहित्यकार दिए हैं। हमने सैकड़ों की संख्या मे ऐसे ग्रन्थ देखे हैं जिनकी रचना तथा लिपि जैनों के संरक्षकत्व में हुई। इतना ही नहीं जैन यति और उनके शिष्य अब भी, मुद्रणालयों के इस युग में, प्राचीन पुस्तकों की प्रतिलिपियां करते और करवाते रहते हैं। उनका इस दिशा में इतना अच्छा अभ्यास हो गया है कि सुन्दर से सुन्दर लिपि में वे सुबह से लेकर सायंकाल तक लगभग 500 श्लोक लिख लेते हैं। जितने प्राचीन ग्रन्थ मिलते हैं उनमें भी सुन्दर प्रतियां जैनियो की ही लिखी हुई होंगी। जैनियों मे मेथन जाति के लोग बहुत अच्छे लिपिकार होते हैं। इन्ही कारणों के आधार पर हम कह सकते हैं कि प्राचीन भारतीय साहित्य की सुरक्षा का जितना श्रेय जैन धर्मावलम्बियो को है, उतना और किसी वर्ग विशेष को नही। जैनियों के उपाश्रय और भण्डार हमारे देश के जादू भरे पिटारे है। कितने ही अज्ञात लेखको की कलाकृतियां दिन के उजाले में अपनी मर्ममरी कथाएं सुनाने को उद्यत हो उठती हैं।

राजस्थान के लोक-साहित्य को लिपिबद्ध करने का भी अधिकाश श्रेय जैनियों को ही है। लोक-साहित्य के दूहे, कथाएं और गीत इन भण्डारों में ही मिलते हैं अन्यत्र नही। जैन साहित्य में प्रबन्ध–काव्य, कथाएं, रास, फाग, सझाय और गीत ही प्रमुख विषय हैं। इनके अतिरिक्त धर्म सम्बन्धी रचनायें तथा विभिन्न सूत्रों के भावार्थ एवं टीकाएं भी प्रचुर परिमाण मे उपलब्ध है। यदि जैन भण्डारो का उचित पर्यवेक्षण किया जाये तो हजारो की संख्या में ऐसे गीत मिल सकते हैं जो हिन्दी संसार में सूरसागर और रामचरितमानस के मधुर से मधुर पदों की समानता का दावा कर सकते हैं। इन गीतों में पाई जाने वाली भक्ति, संयोग और वियोग की कल्पनाएं भारतीय साहित्य की चिरकल्पित निधियां होकर भी मौलिकता से ओत-प्रोत हैं। राजस्थानी भाषा के गीतों का सर्वस्व ही नवीन है, सरस है और आल्हादकारी है।

ब्राह्मणी साहित्य

ब्राह्मणी साहित्य में वेताल पच्चीसी, सिंघासण बत्तीसी, सूआ बहोतरी, हितोपदेश, पचाख्यान आदि कथाओं, भागवत पुराण, नाचिकेत पुराण, मार्कण्डेय

पुराण, सूरज पुराण तथा पद्म पुराण आदि पुराणों एवं भागवद्‌गीता, रस तरंगिनी, बिल्हण पांशिका, रसरत्नाकर, रामायण और महाभारत आदि ग्रन्थों के अनुवाद ही प्रधान हैं। वैद्यक, ज्योतिष, संगीत एवं मन्त्र शास्त्र के स्फुट ग्रंथ भी ब्राह्मणों के द्वारा लिखे गए थे। ब्राह्मणों का स्थान सदैव से ही धर्म गुरुओं का रहा है और इसीलिए धर्मशास्त्र से ही इनका विशेष सम्बंध रहा है और इसीलिये धर्म-विषयक जितने ग्रंथ है, उनमे अधिकांश ब्राह्मणों के ही लिखे हुए हैं। ब्राह्मणों की प्रधान भाषा संस्कृत रही है, अतः संस्कृत के साथ इनका अविच्छिन्न सम्बन्ध रहा है। संस्कृत के परिपोषकों के रूप मे भारतीय साहित्य इनका चिर-ऋणी रहेगी। विदेशी विद्वान तो सम्पूर्ण संस्कृत-साहित्य को ही ब्राह्मणी-साहित्य के नाम से पुकारते हैं।

भारतीय इतिहास के उत्तर काल में ब्राह्मण युग की प्रधानता, का अवसान होते ही भारतीय समाज में ब्राह्मण की स्थिति का भी पतन हो गया। चारणों को राजपूत राजाओं का आश्रय मिल रहा था और जैन यतियों को धनिकों का। परन्तु ब्राह्मण को उसकी पूजा-पाठ और धार्मिक विश्वास के अतिरिक्त और किसी का आश्रय न था। अतः साहित्य से उनका नाता प्राचीन संस्कृत काव्य, दर्शन ग्रन्थ और रामायण, महाभारत आदि के पठन-पाठन तक ही सीमित रह गया था। मृतक के सम्बन्धियों को गरुड पुराण सुनाना, नव-जात बालक की जन्मपत्री बनाना, विवाह कराना और व्रत कथाएं सुनाना, यही क्रियाएं ब्राह्मण की आजीविका के साधन थे अतः ब्राह्मण को साहित्य सेवा का अवकाश न था। लिपिकार ब्राह्मण अवश्य थे, जो प्रतिलिपि कर अपना पेट पालते थे। राजस्थान में ब्राह्मण की सामाजिक स्थिति का जितना अध. पतन मुगल काल में हुआ, उतना और कभी नहीं। हिन्दी के साहित्य सेवी ब्राह्मणों का उल्लेख हम यहां नही कर रहे हैं। कहने का आशय यह है कि उपरि निर्दिष्ट विषयों के अतिरिक्त ब्राह्मणों की मौलिक रचनाएं हमारे साहित्य में नही के बराबर हैं।

संत–साहित्य

सन्त-साहित्य का जितना अच्छा संग्रह राजस्थान में है उतना अन्य कहीं भी नही। इसके कई कारण हैं। पहला तो यह है कि राजस्थान हिन्दू नरेशों के अधीन रहने के कारण यहां हिन्दू धर्म को सदैव वांछित प्रोत्साहन मिलता रहा है। मुगलों की यातनाओं से त्रस्त सन्त समाज जब राजस्थान के भ्रमण के लिए आया तो यहां की शान्तिप्रिय जनता और प्रशान्त वातावरण को देख कर उसका हृदय पिघर गया। फलतः उन्होंने यहां बहुत काल तक निवास किया। गोरख, दादू, कबीर और रैदास आदि महात्माओं ने इस भूमि पर विचरण किया है और अपनी वाणियों से राजस्थानी समाज को जागरित किया है। गिरिधर की दीवानी मीरां, ब्रह्मज्ञानी सुन्दरदास और महात्मा जसनाथ इत्यादि की जन्मभूमि होने के कारण भारतीय सन्तों के लिए राजस्थान एक तीर्थस्थल सा बन गया है। सन्तों की पवित्र स्मृति में उनके

वाले कई मेले अब तक चले आ रहे हैं जिनमें दूर-दूर से हजारों की संख्या में साधु लोग आते हैं। राजस्थान के इस सम्बन्ध के कारण अन्यान्य भारतीय सन्तों की वाणी मे भी राजस्थानी भाषा का यथेष्ट पुट विद्यमान है। कबीर की साखियों और पदो में राजस्थानी के सैकड़ों मुहावरे, कहावतें और शब्द घुल-मिल गए हैं। मीरां की अमर वाणी समूचे भारत की गौरवमयी ध्वनि बनकर गूंज रही है। राजस्थान में सन्त समाज का अब भी अत्यधिक प्रचार है नाथपंथी और दादूपंथी साधु जोधपुर और जयपुर राज्यों के आश्रय में पलते आ रहे हैं। इसके अतिरिक्त रामसनेही, निरंजनी आदि अन्य सम्प्रदायों के लोग भी यहां निवास करते हैं। सन्त साहित्य में दादू, कबीर, गोरख, मीरां, रैदास, जसनाथ, सुन्दरदास, सौढ़ीनाथी, वाजीन्द, महमद, नरसी आदि की वाणियो के अतिरिक्त महाराजा प्रतापसिंह, प्रतापकुंवरि बालकदास इत्यादि लेखकों की पौराणिक चरित्र-गाथाएं भी बहुत हैं। राजस्थान का सन्त साहित्य भरा-पूरा है। इस साहित्य की बहुत सी सामग्री विचरते हुए एवं गृहस्थी साधु सन्यासियो के तबूरों, सितारो और खड़तालों पर भी सुनी जा सकती है। इस मौखिक साहित्य को लिपिबद्ध करना और इस विषय के प्राचीन साहित्य का अनुसन्धान करना अत्यन्त महान एवं उपकार की वस्तु होगी। राजस्थान अपने चारण साहित्य और सन्त साहित्य के बल पर ही गर्वभरी वाणी मे गर्जना कर रहा है।

राजस्थानी का गद्य-साहित्य भारतीय इतिहास की अमर निधि के रूप मे चिरस्मरणीय रहेगा। देशी एव विदेशी विद्वानो ने अत्यन्त सराहना भरे शब्दों में इसकी प्रशंसा की है। नैणसी की ख्यात, दयालदास की ख्यात, बांकीदास की ऐतिहासिक बातें, वंशभास्कर के गद्यांश तथा आइने अकबरी, तवारीख-ए-फरिश्ता, अखलाक मोहसनी, भागवतपुराण (दशमस्कन्ध) और रामचरितमानस आदि ग्रन्थों के अनुवाद राजस्थानी गद्य की महानता का ढिंढोरा पीट रहे हैं। आज से सैंकड़ों वर्ष पहले इस भाषा का गद्य भण्डार इतना भरापूरा था। राजस्थानी का बात-साहित्य भी अपनी एक निराली विशिष्टता लिए हुए है जिसकी टक्कर मे किसी दूसरी भाषा क प्राचीन कथा-साहित्य नहीं ठहर सकता।*

अर्वाचीन धारा

राजस्थान में स्वाधीनता से पूर्व हिन्दी तथा राजस्थानी साहित्य की चरित्रगत विशेषतायें अन्य भारतीय भाषाओं जैसी ही रही है। स्वाधीनता संग्राम के हंगामी दौर में इस मरु प्रदेश में हिन्दी व राजस्थानी साहित्य सृजन ने इस सदी के दूसरे व चौथे दशक मे क्रांतिकारी मोड़ लिया और उसमे एक नई चेतना का सचार हुआ। इस दौर में कई कवियों और लेखकों ने ब्रिटिश राज के खिलाफ लोगों के दिलों में

* श्री रावत सारस्वत के सौजन्य से।

भड़की भावनाओं को अपनी लेखनी से अभिव्यक्ति के स्वर दिये। यहाँ तक कि विरुद गायन तक सीमित रहे पुरानी परम्परा के कवियों ने भी अपने स्वर बदल डाले। आलस्य, विलासिता और निकम्मेपन मे ग्रस्त तथा निराशा एवं आत्मघाती मोहनिद्रा के गर्त मे पड़े राजपूत राजाओं की इन कवियों ने न केवल जबरदस्त भर्त्सना की अपितु अपने लेखन से उन्हे आसन्न स्थितियों के प्रति सचेत भी किया। चारण परम्परा के अन्तिम साहित्यकार सूर्यमल्ल मिश्रण के अतिरिक्त गिरवरदान, भोपालदास तथा प्रसिद्ध क्रांतिधर्मी चारण कवि केसरी सिंह बारहट ने जन सामान्य मे तत्कालीन शासन व्यवस्था के प्रति व्याप्त छटपटाहट और उनकी आकांक्षाओं को पुरजोर अभिव्यक्ति प्रदान की। पुरानी परम्परा के कवि उदयराज उज्जवल ने अपने ओजस्वी काव्य से न केवल लोगो मे देश भक्ति की भावना का सचार किया वरन् राजस्थानी आन्दोलन को भी नये आयाम दिये। उनकी लिखी पंक्ति–"दीपै वांरो देस जिणरो साहित जगमगे।" हर राजस्थानी लेखक की जुबान पर चढा हुआ है। इसी प्रकार राजनैतिक क्षेत्र के कुछ नेताओं व कार्यकर्ताओं ने भी जो संयोगवश काफी अच्छे कवि भी थे, राजस्थान की साहित्य परम्परा में अपना सार्थक योगदान दिया है। स्व. विजयसिंह पथिक, माणिक्यलाल वर्मा, जयनारायण व्यास, हीरालाल शास्त्री, सागरमल गोपा, गणेशीलाल व्यास 'उस्ताद' और भैरूंलाल कालाबादल इस श्रेणी के तेजस्वी नक्षत्र थे। स्वाधीनता सग्राम के इन कवियो मे काव्य के स्वरूप और तत्व दोनों ही दृष्टि से स्व. उस्ताद सर्वोपरि थे। भाषा की सरलता, विषय वस्तु के निर्वाह तथा लोक जीवन से जुड़े आंचलिक भाषा के शब्दों, मुहावरों व लोकोक्तियों के सहज प्रयोग के कारण उनकी तुलना काज़ी नजरुल इस्लाम से की जा सकती है।

राष्ट्रवादी धारा के इन कवियो के अतिरिक्त विविध प्रकार की भावभूमि पर लिखने वाले और भी कई लोग थे। सन् 1940 में चन्द्रसिंह ने अपनी कृति "बादली" के रूप मे अपना विशिष्ट योगदान किया। दूहा शैली में लिखी गई यह कृति अपने मौलिक स्वरूप तथा विषय वस्तु की दृष्टि से राजस्थानी भाषा की प्रचलित काव्य धारा से हटकर है। प्रकृति प्रेमी इस कवि की अन्य दो प्रसिद्ध रचनाएं 'लू' तथा 'डाफर' हैं जिन्हें काफी प्रशंसा से सराहा गया है।

इस काल के हिन्दी कवियों में राष्ट्रीय भावना तथा देशभक्ति पूर्ण कृतियों 'शंखनाद' और 'प्रलय वीणा' के साथ उभरे सुधीन्द्र प्रमुख थे। इसी शृंखला के अन्य कवियो में जनार्दनराय नागर और रामनाथ सुमन भी थे। 'त्याग भूमि', 'राजस्थान' और 'आगीबाण', आदि प्रख्यात पत्रों के स्वनामधन्य प्रकाशकों और सम्पादकों ने विभिन्न कालखंडो में राष्ट्रीयता परक साहित्य का प्रकाशन किया।

स्वातन्त्र्योत्तर काल की शुरूआत के साथ राजस्थान के साहित्यिक क्षेत्र में एक और महत्त्वपूर्ण परिवर्तन आया। अब तक स्वाधीनता संघर्ष से जुड़े रचनाकारों कथाकारों और कवियों के स्वर आश्चर्यजनक रीति से मानो रातों-रात बदल

गये हों। विभाजन के परिणामस्वरूप असंख्य लोगों द्वारा भोगी गई दारुण पीड़ा तथा मानवीय तकलीफें मानों उनके लिए सांस्कृतिक बदलाव न होकर एक राजनीतिक घटना मात्र होकर रह गई। स्वाधीनता के रूप मे मिली चैन की सांस ने मानों सभी को उत्फुल्ल मनःस्थिति में ला पटका। इसके परिणामस्वरूप गीतकारों का एक नया वर्ग उभरा। सुधीन्द्र, नन्द चतुर्वेदी, कुलिश, कमलाकर, प्रकाश आतुर और ज्ञान भारिल्ल आदि इन सभी की भावात्मक अभिव्यञ्जनाओं का स्वरूप प्रेम और प्रणय तक सीमित होकर रह गया। प्रोफेसर विष्णु अम्बालाल जोशी की प्रस्तावना के साथ प्रकाशित कविता संग्रह "सप्तकिरण" इस दौर में राजस्थान मे लिखे जा रहे रोमांटिक गीतों की प्रतिनिधि कृति है। इसके बाद मदनगोपाल शर्मा, मनोहर प्रभाकर, ताराप्रकाश जोशी, मूलचन्द पाठक तथा कई अन्य कवियों का एक और वर्ग उभरा।

राजस्थानी साहित्य के रचनाकारों मे कन्हैयालाल सेठिया, नारायणसिंह भाटी, सत्यप्रकाश जोशी, मेघराज मुकुल, गजानन वर्मा, विश्वनाथ विमलेश और किशोर कल्पनाकांत ने अपने नवीन कल्पना बोध, प्रतीकों और प्रयोगों से राजस्थानी कविता को एक नया आयाम दिया और ऊंचाइयों तक पहुचाया। नारायणसिंह भाटी की "साँझ" और "दुर्गादास" कृतियों ने राजस्थानी कविता को एक नया सौरभ प्रदान किया। प्रदेश में हिन्दी और राजस्थानी दोनों ही भाषाओं मे कतिपय अपवादों को छोड़कर वर्तमान अवधारणा के अनुरूप उपन्यास, नाटक, निबन्ध और आलोचना का लगभग अकाल रहा है। केवल पांचवें दशक के प्रारम्भिक दौर में राजस्थान के लेखकों मे गद्य लेखन के प्रति झुकाव के दर्शन होते हैं। अपने सशक्त उपन्यासों—'घरौंदे' और 'मुर्दों का टीला' के साथ डा. रांगेय राघव एक समर्थ हिन्दी उपन्यासकार के रूप में उभरे। डा. रांगेय राघव एक सिद्धहस्त लेखक थे जिन्होंने चालीस से अधिक उपन्यास लिखे। 'कब तक पुकारूं' तथा 'आखिरी-आवाज' नाम से उनके बहुचर्चित उपन्यासों के कई अन्य क्षेत्रीय तथा विदेशी भाषाओं तक में अनुवाद प्रकाशित हो चुके हैं। स्व. परदेसी की कृति "भगवान बुद्ध की आत्मकथा" हिन्दी उपन्यास जगत की एक विशिष्ट सम्मान्य उपलब्धि है। राजस्थान के समकालीन उपन्यासकारों में सबसे चर्चित हस्ताक्षर के रूप में यादवेन्द्र शर्मा 'चन्द्र' सर्वोपरि हैं जिन्होने राजस्थान की सामंती पृष्ठभूमि पर बीसियों उपन्यास लिखे हैं। उनके उपन्यास 'खम्मा अन्नदाता' 'मिट्टी का कलंक' और 'जनानी ड्योढ़ी' में सामन्ती प्रथा के पोषक राजाओं और जागीरदारों के अन्तरंग के खोखलेपन, षड्यंत्रों और कुंठाओं पर जमकर प्रहार किया गया है। राजनैतिक पृष्ठभूमि पर आधारित उनके हाल ही प्रकाशित उपन्यास 'एक और मुख्यमंत्री' और 'हजार घोड़ों का सवार' समाज के एक विशिष्ट वर्ग की मानसिकता को उजागर करने का एक सशक्त प्रयास है जो येन-केन-प्रकारेण स्वाधीनता के सुफल को बटोरने में जुटा हुआ

है। विश्वम्भरनाथ उपाध्याय की 'रौद्र' और 'पक्षधर' प्रगतिशील विचारधारा
के उपन्यास लेखन की प्रतिनिधि कृतियां हैं। आज के स्थापित लघु कथा लेखकों में
मणि मधुकर, स्वयं प्रकाश, आलमशाह खान और अशोक आत्रेय प्रमुख हैं जिन्होंने
अपनी कहानियों में मानव समुद्र मे खोये आम आदमी की पहचान और उसके
व्यक्तित्व मे आई टूटन और बिखराव, उसके कुण्ठाजनित तनाव और अन्तर्द्वन्द्व की
मन्त्रणा को मुखरित किया है। नाटककारों में हमीदुल्ला ने अपने नाटक "दरिंदे"
तथा मणि मधुकर ने "रसगंधर्व" के जरिये प्रदेश मे नाट्य विधा के लेखन को
पहचान और बुलन्दी प्रदान करने के अतिरिक्त मंचीय विधा मे कई अभिनव प्र
करने मे भी सफलता प्राप्त की है। जहां तक निबन्ध लेखन का प्रश्न है, राजस्थ
इस क्षेत्र में आज भी विपन्न ही है। प्रोफेसर त्रिभुवन चतुर्वेदी ने इस दिशा में
सराहनीय प्रयास अवश्य किया है। उनके दो सकलन 'क्षमा कीजिए' और 'ब्रह्मा
का उपमान' अपनी चुटीली भाषा और अभिव्यक्ति की सलिप्तता के कारण उल्ले
नीय है। डाक्टरेट पाने के लिए तैयार किये जाने वाले शोध प्रबन्धो को छोड़ दें
राजस्थान मे आलोचनापरक लेखन की भी कोई विशिष्ट उपलब्धि राजस्थान
रचित साहित्य के मूल्यांकन के सन्दर्भ मे नजर नहीं आती।

डा. नवलकिशोर ने अवश्य इस दिशा मे कुछ नई जमीन तोड़ने का प्र
किया है। हिन्दी उपन्यासों में मानवतावाद विषयक उनकी कृति प्रोफेसरी परम्
की लीक से हटकर हिन्दी आलोचना विधा की एक ऐसी कृति सिद्ध हुई है जि
एक नई ताजगी और उद्देश्यपरक दृष्टिकोण उजागर हुआ है।

राजस्थानी भाषा में उपन्यास लेखन अभी भी शैशवावस्था में ही है। राज
स्थानी भाषा प्रचार सभा द्वारा प्रकाशित चन्द्र की 'हूं गोरी किण पीव री' तथ
छत्रपतिसिंह की 'त्रिशंकु' बस ले-देकर ये दो ही कृतियां उल्लेखनीय कही ज
सकती हैं।

राजस्थान में साहित्य लेखन के वर्तमान रेखा पटल तथा वैविध्यपूर्ण रंगों का
दृष्टिपात करने पर स्पष्ट होता है कि जहां इस प्रदेश मे गद्य लेखन अभी भी विरान
शील अवस्था में है वहां हिन्दी और राजस्थानी दोनों ही भाषाओं मे काव्य-रचना
करने वाले दर्जनों साहित्यकार हैं। इनमें वे रचनाधर्मी साहित्यकार भी सम्मिलित
हैं जो अपने मनोभावों की अभिव्यक्ति गीतों, गजलों अथवा रूबाइयो के माध्यम से
सरसधुनों और प्रतीकों से करते हैं और वे भी जो किसी वाद विशेष से असम्पृक्त
हैं। प्रथम वर्ग के ऐसे सशक्त कृतिकारो में डा. ओमप्रकाश माथुर, ताराप्रकाश जोशी
मनोहर प्रभाकर, वीर सक्सेना, हरिराम आचार्य, पद्माकर शर्मा, तारादत्त निर्विरोध
और सावित्री परमार के नाम गिनाये जा सकते हैं। काव्य-धर्मिता को अपने यु
बोध से नई दिशा देने वाले कवियों में प्रोफेसर नंद चतुर्वेदी, रणजीत, भागीरथ
भार्गव, जयसिंह नीरज, जुगमन्दिर तायल और सुधा गुप्ता तथा हेमन्त शेष के न

उल्लेखनीय कहे जा सकते हैं। अतुकान्त शैली में लिखी गई इन कवियों की कविताओं मे जहां वर्तमान सामाजिक विसंगतियो के प्रति घृणा और भर्त्सना के स्वर उभरते हैं वहां समकालीन व्यवस्था और इससे निपजी निष्ठुरतापूर्ण मानसिकता से प्रभावित उनकी कुण्ठाजनित निराशा उनकी कविताओं में सशक्त रूप से अभिव्यक्त हुई है। इन सभी कवियों ने मानवताविहीन होती जा रही सामाजिक व्यवस्था में आम आदमी के चरित्र में आई विसंगतियों के प्रति चेतना उत्पन्न करने के साथ सत्य सामाजिक बोध के प्रति बुद्धिजीवियो की जड़ता को झकझोरने का भी प्रयास किया है।

राजस्थानी भाषा के नई पीढ़ी के लेखकों मे तेजसिंह जोधा, नंद भारद्वाज और गोवर्धनसिंह शेखावत कुछ ऐसे समर्थ हस्ताक्षर हैं जिन्होंने अपनी विशिष्ट पहचान बनाई है। राजस्थानी भाषा के नारायणसिंह भाटी तथा सत्यप्रकाश जोशी प्रभृति पुरानी पीढ़ी के कवियों ने पुराने विषय-वस्तु से हटकर अपनी कविताओं मे नया चिन्तन लाने की उत्सुकता दिखाई है। भाटी की "मीरा" और जोशी की "बोल भारमली" ऐसे ही स्तुत्य प्रयास हैं जिनमे सामन्ती परिवेश से जुडी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि को आधुनिक बाना पहिनाने का प्रयास किया गया है। अकादमी पुरस्कार विजेता कृति "बोल भारमली" में राजस्थानी इतिहास के दो चर्चित महिला चरित्रों की यौन-मानसिकता को एक सर्वथा नई अवधारणा के साथ चित्रित किया गया है। भाटी की मीरां मे तो जैसे राजस्थान के समूचे सांस्कृतिक परिवेश को एक समग्र अभिव्यक्ति मिली है।

जहां तक साहित्यिक पत्रकारिता का प्रश्न है, राजस्थान मे इसकी स्थिति निराशाजनक कही जा सकती है। इस ओर यद्यपि कुछ प्रयास हुए हैं, किन्तु वांछित संरक्षण और धन के अभाव मे सभी निष्फल होकर रह गये हैं। फिर भी, लहर, वातायन, बिन्दु, सप्रेषण, तटस्थ, कविता आदि कुछ ऐसी पत्रिकायें हैं जिन्होंने अनेकानेक बाधाओं के बावजूद राजस्थान मे सृजनात्मक साहित्य के विकास मे महत्त्वपूर्ण योगदान दिया है। राजस्थान साहित्य अकादमी द्वारा प्रकाशित 'मधुमति' मासिक राजस्थानी लेखकों की रचनात्मक प्रवृत्ति को पोषित करने और साहित्य चर्चा का मंच प्रदान करने वाली एकमात्र साहित्यिक पत्रिका है।

राजस्थानी भाषा मे वर्षों तक नियमित रूप से प्रकाशित होती रही एक पत्रिका 'मरुवाणी' है। सन् 1953 में कवि चन्द्रसिंह द्वारा संस्थापित इस साहित्यिक पत्रिका का संपादन राजस्थानी के प्रसिद्ध विद्वान और भाषाविद् रावत सारस्वत द्वारा किया जा रहा था किन्तु कुछ वर्षों पूर्व इसका प्रकाशन भी स्थगित कर दिया गया। श्री सारस्वत को यह श्रेय दिया जाना चाहिये कि इस पत्रिका के माध्यम से मिले प्रोत्साहन के फलस्वरूप राजस्थानी भाषा के अनेक प्रतिभाशाली कवि और लेखक प्रकाश में आ सके। राजस्थानी भाषा की अन्य नामचीन पत्रि-

काश्रों में सत्यप्रकाश जोशी द्वारा संपादित 'हरावल' तथा कल्पनाकांत द्वारा प्रका
'ओलमो' उल्लेखनीय हैं। स्थानाभाव के कारण राजस्थान मे साहित्य-सृजन क
इतिवृत्त बहुत विस्तार के साथ प्रस्तुत किया जाना सभव नहीं है, तथापि यहां इसकी
एक झांकी मात्र प्रस्तुत करने का प्रयत्न किया गया है।

यह विवरण राजस्थान के कुछ विशिष्ट साहित्य कर्मियों यथा—श्री वेदव्यास
मंगल सक्सेना तथा रणवीरसिंह के नामो के उल्लेख के बिना सार्थक नहीं होगा, जो
राज्य में रचनाधर्मी लोगों को एक मंच पर संगठित करने, उनके हितों और कृति
कारों के लिये संघर्ष करने तथा उनके कृतित्व को समूचे भारतीय साहित्य की पृ
के सदर्भ में रूपायित और रेखांकित करने का वह भागीरथ कार्य कर रहे हैं, जो अन्य
के लिये असंभव है। जिन कवियों और लोगो का ऊपर उल्लेख किया गया है, वह
अपने आप में पूर्ण नही है। राजस्थान में आज बड़े परिमाण मे उत्कृष्ट साहित्य की
रचना हो रही है और अनेक नई प्रतिभायें इसे समृद्धि के नये शिखरो पर पहुंचा
रही है।

11
पर्यटन

पर्यटन महत्व के स्थलों की दृष्टि से राजस्थान देश का एक अग्रणी राज्य है। इस प्रदेश का मोहक एवं वैविध्यपूर्ण भौगोलिक परिवेश, शौर्य और बलिदान की गौरव गाथाओं से समृद्ध ऐतिहासिक अतीत, मध्यकालीन सामन्ती युग की शानो-शौकत और वैभव विलास के प्रतीक भव्य राजसी प्रासाद और धन-कुबेरों के ऐश्वर्य को दर्शाती कलात्मक गगनचुम्बी अट्टालिकायें, वास्तुशिल्प की उत्कृष्ट कारीगरी से युक्त देवालय व गाँव-गांव में यत्र-तत्र बिखरे लोक देवी-देवताओं के 'थान' व 'देवरे' हस्तशिल्प की कलात्मक विरासत और सबसे बढ़कर यहां के मेलों और त्यौंहारों में इन्द्रधनुषी परिधान में सजे-संवरे युवक-युवतियों व प्रौढ़ो के मानस में समाये उल्लास और जीवन्तता की एक अपूर्व चेतना सहज ही किसी भी पर्यटक को विस्मय-विमुग्ध सा कर देते हैं। पिछले कुछ वर्षों से पर्यटन क्षेत्र में राजस्थान की उपलब्धियों के कारण मरु प्रदेश समझे जाने वाले इस राज्य को 'पर्यटकों के स्वर्ग' की संज्ञा दी जाने लगी है।

मात्र तीन दशक पूर्व तक राजस्थान के पर्यटन वैभव के उपरोक्त सभी उपादान इस प्रदेश मे मौजूद थे। इसके बावजूद पर्यटन जगत में राजस्थान लगभग अजाना अनचीन्हा सा था। इसका प्रमुख कारण था सामन्ती शासन के दौरान पर्यटन संभावनाओं के प्रति बरती गई उपेक्षा और बुनियादी सुख-सुविधाओं का नितान्त अभाव। राजस्थान के निर्माण के पश्चात् राज्य के सुनियोजित विकास की प्रक्रिया के बहुआयामी अनुष्ठान के तहत पर्यटन को प्रोत्साहित करने के प्रयास भी शुरू हुए। इन प्रयासों के अन्तर्गत जहां एक ओर पर्यटन महत्व के नित नये स्थलों की तलास की जाने लगी वहीं पर्यटन महत्व के पुराने स्थापित स्थलों के समुचित रख रखाव और पर्यटकों को आकर्षित करने और उनके सुख-सुविधापूर्ण प्रवास के उपाय भी अपनाये जाने लगे। इन प्रयासो का ही सुपरिणाम है कि राजस्थान मे आज हर वर्ष लाखों की तादाद मे देश-विदेश के पर्यटकों का ताता सा लगा रहता है और विश्व के पर्यटन मानचित्र पर राजस्थान की विशिष्ट पहचान बन सकी है।

राजस्थान दर्शन पर निकले किसी भी पर्यटक के लिए सर्वाधिक आकर्षण का केन्द्र है इस प्रदेश का वैविध्यपूर्ण भौगोलिक परिवेश। वीरों और वीरांगनाओं की शौर्य-भूमि कहे जाने वाले इस ऐतिहासिक प्रदेश के हर अंचल में रह बसे किसी भी ऊंची उठी पहाड़ी पर नजर डालते ही इसके शीश पर मुकुट की तरह सुशोभित मध्ययुगीन सामरिक संरचना का प्रतीक कोई गढ़ या गढ़ी जहां बरबस ही पर्यटक का ध्यान आकर्षित कर लेती है वही सड़क के किनारे ही आपको शिखर बन्ध देवालय अथवा किसी लोक देवी देवता का 'थान' या 'देवरा नजर' आना सामान्य बात है। बड़े-बड़े विशाल दुर्गों अथवा भव्य राजसी प्रासादों से लेकर विशाल नयनाभिराम झीलें अथवा पानी से लबालब खाइयां, उत्कृष्ट वास्तुशिल्प से युक्त हिन्दू और जैन मंदिरों तथा सामन्ती दौर के वैभवपूर्ण लवाजमों का दर्शनीय स्वरूप राहगीरों की विविधरूपा पगड़ियों और रूप गर्विता महिलाओं के चटकीले रंग की ओढ़नियो, लहंगों और जूतियों की छटा बस देखते ही बनती है।

अतीत मे महिमामयी राजधानी के रूप में प्रतिष्ठित रही बैराठ, आमेर, मंडोर और अहाड़ की प्राचीन नगरियां आज भी इतिहासकारो तथा पुरातत्वविदों के लिये आकर्षण का केन्द्र हैं दूसरी ओर कला प्रेमी पर्यटक के लिए इस प्रदेश मे परम्परागत उद्योगों तथा लोक कलाओं का अकूत भण्डार है। इस प्रदेश में यत्र-तत्र छितरी नयनाभिराम प्राकृतिक झीलें और वर्षा ऋतु के जल के संग्रह के लिये निर्मित मनोहारी नैसर्गिक सौंदर्य और हरीतिमा से परिवेष्ठित तथा वन्य जीवों के कलरव से गुंजित वनखण्ड किसी भी प्रकृति प्रेमी पर्यटक का मन मोह लेने में समर्थ हैं। शिकार के शौकीनो के लिए यहां के सुविस्तृत जंगलों मे नाना प्रकार के छोटे-बड़े 'शिकार' भी प्रचुरता से उपलब्ध हैं।

अरावली पर्वतमाला के उतुंग शिखर की भीमकाय चट्टानों पर निर्मित चित्तौड़गढ़ का प्रसिद्ध किला अपनी सामरिक महत्त्व की संरचना के अलावा गगनचुम्बी कीर्तिस्तम्भों, देवालयों और प्राचीन राजप्रासादों के ध्वंसावशेषों और शौर्य-गाथाओं से परिपूर्ण अतीत के लिए पर्यटकों के लिए विशिष्ट आकर्षण रखता है। प्राचीन दुर्गों की इस शृंखला मे जयपुर के निकट आमेर की पहाड़ियों पर अवस्थित जयगढ़, अजमेर का तारागढ़, सवाई माधोपुर के निकट स्थित रणथम्भोर और उदयपुर जिले में कुंभलगढ के दुर्गम्य और विशाल दुर्ग अपनी सुदृढ़ता के कारण पर्यटकों के आकर्षण के केन्द्र हैं।

सामन्ती युग की शान शौकत और कलात्मक वैभव को दिग्दर्शित करने वाले भव्य राजप्रासादों मे आमेर के प्राचीन महल सर्वोत्कृष्ट कहे जा सकते हैं। इन महलों का एक विशिष्ट कक्ष, जिसे कांच के टुकड़ों की कलात्मक जड़ाई के कारण शीशमहल कह कर सम्बोधित किया जाता है, को देखकर अभिभूत हुए प्रिन्स हम्मले को विवश होकर कहना पड़ा कि "आमेर का यह शीशमहल पालेरमो के निकट बघेरिया के प्रसिद्ध शीशमहल से कहीं अधिक सुन्दर और कलात्मक है।"

आये दिन के युद्धों और पारस्परिक विवादों से जब भी इस प्रदेश के शासकों को कुछ राहत नसीब हो पाई, इस प्रदेश में राजपूत वास्तुविधान से निर्मित मन्दिरों और स्मारकों के रूप में सृजन का सर्वोत्कृष्ट स्वरूप निखर उठा। उदयपुर का जगदीश मन्दिर, कैलाशपुरी में एकलिंग महादेव का देवालय, माउन्ट आबू के निकट देलवाड़ा के विश्व-विख्यात जैन मन्दिर, चित्तौड़गढ के किले में अवस्थित कुंभ श्याम मन्दिर, आमेर में जगत शिरोमणि तथा शिला माता का मन्दिर, मध्यकालीन युग में इस प्रदेश में पनपी और परवान चढ़ी स्थापत्य कला के उत्कृष्ट प्रतीक हैं। देलवाड़ा के जैन मंदिर में संगमरमर पर तक्षण कला को सर्वोत्तम कृतियां माना जाता है। इस क्रम में बूंदी के महल और उदयपुर में पिछोला झील के किनारे खड़े महाराणा के महल भी अपनी भव्यता के कारण दर्शनीय हैं। पिछोला झील की नीलाभ जलराशि के बीचोंबीच अवस्थित जग मन्दिर और जग निवास नाम के दो अन्य महल भी शिल्प सौंदर्य के लिहाज से अनुपम हैं। इन्हीं में से एक महल में कभी मुगल शाहजादा खुर्रम (बाद में शाहजहां) को अपने पिता सम्राट जहांगीर से बगावत करने पर मेवाड के महाराणा ने शरण प्रदान की थी। इसी प्रकार जयपुर का प्रसिद्ध हवामहल और भरतपुर के निकट डीग के विख्यात जलमहलों का गोपाल भवन भी अपने विशिष्ट शिल्प-विधान के कारण परीलोक की कल्पना का आभास देते हैं।

राजस्थान जैसे वर्षा की अनिश्चितता तथा आये दिन अकाल की विभीषिका से ग्रस्त प्रदेश में बरसात के पानी को लम्बे समय तक संग्रहित कर रखने की अपरिहार्यता को दृष्टिगत रखते हुए यहाँ के कुशल वास्तुशिल्पियों ने जलसंग्रह की नानाविध तकनीक विकसित की है। उदयपुर के निकट जयसमन्द झील मानव निर्मित विश्व की सबसे बड़ी झील है जबकि राजसमन्द नामक एक अन्य झील अपने परिवेश और संगमरमरी बांध तथा तोरणों के कारण समूचे देश में सबसे दर्शनीय मानी जाती है। प्रदेश की अन्य उल्लेखनीय झीलों में जोधपुर की बालसमन्द और कैलाना, बूंदी की फूलसागर, कोटा में किशोर सागर, अजमेर की आनासागर और जयपुर के निकट रामगढ़ झील प्रमुख हैं।

राजपूती गौरव के प्रतीक स्मारकों में चित्तौड़गढ़ के ऐतिहासिक किले में महाराणा कुम्भा द्वारा 1464 ईस्वी में मालवा विजय की स्मृति में बनवाया गया विजय स्तम्भ सबसे उल्लेखनीय है। प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता फर्ग्यूसन के अनुसार रोम में ट्रोजन के स्मारक से यह निश्चय ही अधिक सुन्दर है। इसी प्रकार अजमेर स्थित अढ़ाई दिन का झोंपड़ा को कर्नल टाड ने हिन्दू वास्तु-शैली का एक परिपूर्ण कलात्मक स्मारक बताते हुए इसे पुरातत्ववेत्ताओं, इतिहासकारों और प्राच्यविदों के लिए समान रूप से विशिष्ट महत्त्व का माना है। प्रसिद्ध पुरातत्ववेत्ता जनरल कनिंघम के अनुसार यह स्मारक विश्व के सर्वश्रेष्ठ कलापूर्ण भवनों की तुलना में रखा जा सकता है।

राजस्थान में धर्म और आस्था के कई एक ऐसे स्थल हैं जिनसे धार्मिक उपासना और तीर्थ यात्रा दोनों ही दृष्टि से महत्त्वपूर्ण कहा जा सकता है। अजमेर के निकट पुष्कर सरोवर सभी हिन्दू तीर्थ स्थलों का गुरु कहा जाता है। हिन्दू देवी-देवताओं की त्रिमूर्ति (ब्रह्मा, विष्णु और महेश) के एक प्रधान देवता ब्रह्मा जिन्हें सृष्टि का सर्जक माना जाता है, ने इसी स्थल पर अपना यज्ञ संपन्न किया था। पुष्कर स्थित ब्रह्मा जी का यह मन्दिर देश भर में अपने प्रकार का एक मात्र मंदिर है। अजमेर में ही विश्व भर के मुसलमानों के श्रद्धास्पद एवं प्रसिद्ध सूफी सन्त ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह है। इसी प्रकार उदयपुर के निकट नाथद्वारा में वैष्णव मत के वल्लभ संप्रदाय के उपास्य श्रीनाथ जी तथा जैन मतावलम्बियों के आराध्य रिखबदेव जी का मंदिर भी महत्त्वपूर्ण धार्मिक स्थल हैं। धार्मिक महत्व के अन्य स्थलों में बीकानेर जिले में कोलायत जी तथा गोगामेडी, सवाई माधोपुर के निकट महावीर जी, भरतपुर के निकट कामां अथवा कामवन, जयपुर के निकट नरैना ग्राम में दादूपंथियों के आराध्य संत दादू दयाल की निर्वाण स्थली तथा अजमेर में प्रसिद्ध सुधारक एवं आर्य समाज के संस्थापक स्वामी दयानन्द सरस्वती द्वारा स्थापित परोपकारिणी सभा उल्लेखनीय हैं।

यद्यपि राजस्थान के अधिकांश भू-भाग में थार मरुस्थल का विस्तार है इसके बावजूद भरतपुर जिले का ब्रज क्षेत्र तथा उदयपुर, अलवर, अजमेर और जयपुर जिलों के समतल क्षेत्र में घने जंगलों से ढकी पहाड़ियां नैसर्गिक सौंदर्य के लिहाज से दर्शनीय हैं। वैसे मरुस्थल का अपना भी एक आकर्षण होता है। जैसलमेर जिसे 'रेगिस्तान के गुलाब' की संज्ञा दी जाती है पिछले कुछ वर्षों से विदेशी पर्यटकों के बीच काफी लोकप्रिय हो चला है। रेगिस्तानी अंचल की प्राचीन संस्कृति और यहां के वास्तुकारों की पत्थर पर उत्कृष्ट तक्षण कला से युक्त भव्य हवेलियां ही प्रदेश के इस मरु प्रधान अंचल के प्रति पर्यटकों की हाल ही पनपी उत्सुकता का मूल कारण है। भारतीय मरुस्थल का 'बेदाग शहर' कहे जाने वाले जोधपुर नगर के समीप एक ऊंचे चट्टानी भू-भाग पर अवस्थित दुर्ग मेहरानगढ़ अपने चारों ओर दूर-दूर तक फैले मरुस्थल के बीच भव्य प्रतीत होता है। मरुस्थलीय भू-भाग में ही अवस्थित बीकानेर भी ऐसा ही नगर है जिसके भवनों के उत्कृष्ट शिल्प विन्यास पर राजस्थान गर्व कर सकता है। इन रेगिस्तानी को बरसात के मौसम देखना अपने आप में एक स्फूर्तिदायक अनुभव होता है। राजस्थान के हृदय प्रदेश में नगीने के समान जड़ा अजमेर वर्षभर सुहावने मौसम के लिए विख्यात रहा है।

पर्यटन के मुख्य आकर्षण

जयपुर–राजस्थान की प्रथम नगरी जयपुर भारत का सम्भवतः पहला पूर्व योजित रीति से बसाया गया नगर है। यूरोप में नगर नियोजन की पद्धति वैज्ञानिक आधार पर विकसित होने से पूर्व हिन्दू 'शिल्प शास्त्र' के शास्त्रीय विधान के

रूप बसाया गया जयपुर नगर आज भी नगर नियोजकों के बीच आकर्षण का केन्द्र बना हुआ है।

खगोल, गणित, विज्ञान और इतिहास के ज्ञाता तथा कला व साहित्य के अनुरागी शासक राजा जयसिंह ने सन् 1728 में जयपुर नगर का निर्माण अपने विश्वस्त इंजीनियर विद्याधर भट्टाचार्य के सहयोग से कराया था। इतिहास का अंधकारपूर्ण युग कहे जाने वाले ऐसे दौर में जयपुर जैसे भव्य नगर का निर्माण जयसिंह के व्यक्तित्व को कहीं भी और किसी भी समय एक विशिष्ट व्यक्ति के रूप में प्रतिस्थापित कर देता है। टाड के अनुसार 'अपनी वैज्ञानिक प्रतिभा के कारण ही जयसिंह अपने समकालीन शासकों में एक सम्मान्य शासक रहा होगा।'

जयपुर की मुख्य सड़क पूर्व से पश्चिम की ओर 111 फुट चौड़ी और कोई 2½ मील लम्बी सीधी चली गई हैं। इस सड़क के दोनों ओर योजनाबद्ध तरीके से बनी दुकानें और उन पर गुलाबी रंग से पुते भवनों और देवमंदिरों का सूर्यास्त के समय जादुई के नजारे का सादृश्य उपस्थित करता प्रतीत होता है। इस शहर का यह आकर्षक स्वरूप ही मानों इसका प्रधान आकर्षण है।

महाराजा का नगर-प्रासाद सिटी पैलेस का, जो चहारदीवारी के भीतर बसे नगर के सातवें भाग को समेटे हुये है, प्रमुख आकर्षण चन्द्रमहल है। राजपूत वास्तुविधान के अनुसार निर्मित इस सातखंडीय महल में रियासती काल में यहां के शासकों द्वारा संग्रहीत सुन्दर चित्रांकनों, फूलों की सजावट और आदमकद शीशों को देखकर पर्यटक ठगे से रह जाते हैं। यह भवन इतने आनुपातिक तरीके से बना है कि सरसरी तौर पर इसके आकार का अनुमान नहीं किया जा सकता। इस महल के सामने उत्तर की ओर गोविन्ददेवजी का प्रसिद्ध मन्दिर है जिसमें भगवान कृष्ण की प्रतिमा राधा सहित विराजमान है।

जयपुर के शासकों का निजी पुस्तकालय जिसे 'पोथीखाना' कहा जाता है, प्राचीन पांडुलिपियों का एक दुर्लभ आगार है। संस्कृत व फारसी के ग्रन्थों तथा दुर्लभ चित्रांकनों के इस संग्रह में मुगल-सम्राट अकबर के दरबारी नवरत्नों में से एक अबुल फजल द्वारा फारसी भाषा में अनुवादित 'महाभारत' की प्रति विशेष रूप से दृष्टव्य है। इसी प्रकार श्रीमद् भागवत गीता और लिंग पुराण के संक्षिप्त गुटके, मध्ययुगीन सुलेखन कला के नायाब नमूने और जयपुर के राजाओं के आदमकद व्यक्ति चित्र, जिन्हें हिन्दू चित्रांकन विधा की अनुपम निधि कहा जा सकता है, राधा और कृष्ण के साथ गोकुल के गोप-गोपियों की रासलीला के समूह चित्र तथा महल के शस्त्रागार 'सिलहखाने' में रखे हजारों की संख्या में विविध प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों में कई एक हथियार उत्कृष्ट कारीगरी के नमूने हैं। चन्द्रमहल से पूर्व की ओर जाए तो आगे बढ़ते ही नजर आती है सवाई जयसिंह द्वारा निर्मित खगोल वेधशाला। पत्थर के फलक पर वैज्ञानिक आधार पर की गई ज्यामितीय गणना का यह एक जीता-जागता

'चमत्कार' ही है । राजस्थान के सामन्ती परिवेश में बनी वेधशाला एक सुखद आ-
चर्य है । सम्राट यंत्र, जयप्रकाश यंत्र और राम यंत्र इस वेधशाला के प्रमुख आकर्षण
हैं । खगोल मण्डल के अध्ययन से सम्बन्धित ये तीनों यंत्र स्वयं जयसिंह की देन है
जिससे खगोल विद्या के अध्ययन में जयसिंह की अभिरुचि और अनुसंधान के आधार
पर निष्कर्षों की पूर्ण सत्यता के प्रति जयसिंह के विशेष आग्रह की पुष्टि होती है।

जयपुर नगर के एक प्रमुख राजमार्ग पर बीचों-बीच अवस्थित हवामहल
अर्थात हवा का महल एडविन आर्नोल्ड के शब्दों में 'वास्तुकार की कल्पना के जादुई
स्पर्श से बनी एक सुन्दर कृति है जिसमें होकर शीतल हवा के भर-पूर झोंकों का
आनन्द लिया जा सकता है ।'

महाराजा प्रतापसिंह (1778-1803) द्वारा सन 1799 मे बनवाये गये इस
पंचमंजिले सानुपातिक आकार के गुलाबी रंग में पुते तथा असंख्य जालियो से युक्त
झूलते झरोखों वाला यह भवन वास्तुशिल्प की अनूठी कल्पना का एक बेमिसाल
प्रतीक है ।

नगर की चहारदीवारी की ओर बने अजमेरी व सांगानेरी दरवाजे के ठीक
सामने की ओर रामनिवास बाग नामक एक प्रसिद्ध उद्यान है जिसमे अल्बर्ट हाल
अथवा म्यूजियम तथा इसके सामने की सड़क के दोनों ओर के लम्बे-चौड़े मखमली घा
के दालान से सटी जन्तुशाला है । स्थापत्य शिल्प की सुघड़ता के लिए प्रसिद्ध इस
म्यूजियम अथवा संग्रहालय में नायाब वस्तुओं का अच्छा संग्रह है । इण्डो-सारसेनिक
पद्धति से निर्मित इस भव्य भवन का दर्शनीय स्वरूप, खुले-खुले से दालान और कुं
भवन के दोनों ओर बने फव्वारे को देखकर ग्रेनाड़ा के 'मूर' शासकों के मनभावन
महलो की याद हो आती है । इस भवन का अलंकरण ही कुछ ऐसा है जो
स्वत: ही इसे म्यूजियम का स्वरूप दे देता है । भवन के अन्दर पत्थर, हाथीदांत और
लकड़ी पर खुदाई, जयपुर शैली के चित्रांकन से अंकित ढालें, मिट्टी के नाना प्रकार के
मॉडल तथा प्राचीन, मध्ययुगीन और आधुनिक किस्म की कई दर्शनीय कृतियां यहां
संग्रहीत हैं । भवन के केन्द्रीय हॉल में विश्व प्रसिद्ध ईरानी कालीनो के कुछ नायाब
नमूने संग्रहीत हैं जिन्हें महाराजा मानसिंह काबुल से लौटते समय जीत के 'ट्रॉफी'
के बतौर अपने साथ लाये थे ।

जयपुर के अन्य दर्शनीय स्थानों में महाहाजाज स्कूल ऑफ आर्टस एण्ड क्रा-
फ्ट्स, है जिसने जयपुर की परम्परागत कला विधाओं को सुरक्षित रखने तथा प्रोत्साहन
करने की दिशा मे उल्लेखनीय योगदान दिया है, इसके अतिरिक्त शहर मे यत्र-तत्र
बने अनेकानेक छोटे-बड़े मन्दिर भी हैं । जयपुर से कोई 7 मील दक्षिण की ओर
स्थित सांगानेर कस्बे में 11वीं सदी में निर्मित जैन मंदिरों में संगमरमर पर खुदाई
का कार्य इतना उत्कृष्ट है कि इसे देलवाड़ा के मंदिरों की तुलना में दूसरे
स्थान पर रखा जा सकता है । जयपुर से दक्षिण पूर्व की ओर पहाड़ों के बीच हुमा
लगभग एक मील लम्बे दर्रानुमा मार्ग पर स्थित पुराना घाट के मन्दिरों की अन्दर

छतरियां और सीढ़ीनुमा उद्यान भी दर्शनीय हैं। नाहरगढ़ दुर्ग की तलहटी में गैटोर नामक स्थल पर बनी जयपुर के भूतपूर्व शासकों के स्मारक (छत्रियां) भी अपनी कलात्मकता के कारण पर्यटकों का एक और आकर्षण हैं।

भूतपूर्व नगर से कोई 6 मील उत्तर की ओर आमेर है। जयपुर रियासत की इस प्राचीन राजधानी आमेर में, जो अब लगभग उजड़-सी गई है, जयगढ़ का सुदृढ़ दुर्ग तथा इसके पार्श्व में मानसिंह और मिर्जा राजा जयसिंह द्वारा 17वीं व 18वी सदी में बनवाये गये महल के स्थापत्य वैभव का अनुमान नीचे मावटा के नीलाभ स्थिर जल में पड़ती उनकी छवि को देखकर सहज ही लग आता है।

आमेर के राजमहल को मध्ययुगीन राजपूत वास्तु-शिल्पकला का उत्कृष्ट उदाहरण कहा जा सकता है। एक विशाल दरवाजे, जिस पर विघ्नविनाशक देव गणपति की बड़ी-सी प्रतिमा स्थापित है, से होकर इस महल में प्रवेश करना पड़ता है। महल के अंदरूनी भाग में दीवान-ए-खास और जय मन्दिर में दीवारों के प्लास्टर पर जड़ाई तथा बेलबूंटों का कार्य काफी सुन्दर और कलात्मक है। इसके पृष्ठ भाग में प्रहरी के रूप में अवस्थित जयगढ़ का ऐतिहासिक दुर्ग है जो लगभग 500 फुट ऊंची पहाड़ी पर बनाया गया। हेजर का कथन है कि अपने वैविध्यपूर्ण दर्शनीय प्रभाव, तक्षण कला की बारीकी, सुन्दर परिवेश तथा महल के विभिन्न कक्षों से जुड़े एकान्तिक प्रेम-प्रसंगों के संदर्भ मे आमेर के इन महलो की कही कोई तुलना नहीं की जा सकती।

महल के बाहर प्रवेश द्वार के ठीक दाहिनी ओर जयपुर राज-परिवार की आराध्या शिलादेवी का मंदिर है जो सम्पूर्णतः संगमरमर से निर्मित है। आमेर नगरी यद्यपि आज खण्डहर के ढ़ेर में परिणित हो चली है तथापि जगत शिरोमणिजी के मंदिर का दुग्ध-धवल संगमरमर से निर्मित 'तोरण' और कलात्मक खुदाई से युक्त विष्णुवाहन गरुड़ की प्रतिमा आज भी वास्तुशिल्प की नायाब कृति जानी जाती है।

गलता–जयपुर के पूर्वी छोर पर पहाडियों के बीच बनी एक सुन्दर घाटी से होकर गलता की चढाई के दौरान ऊपर से नीचे पहुंचने तक मार्ग के दोनो ओर बने तालाबों, मंदिरों और यात्रियों के ठहरने के लिए बनाये गये खुले दालानों से होकर गुजरना एक आल्हादकारी अनुभव है। यह एक पवित्र तीर्थ-स्थल है जहां निरंतर प्रवाहित झरनों से बहकर आता जल 'गोमुख' से होकर स्नान कुण्डों तक पहुंचता है। गलता में काले व लाल मुंह के बन्दरो की भरमार है जिन्हें आस-पास की पहाड़ियों पर कूदते-फांदते तथा कौतुक क्रीड़ा करते देखा जा सकता है।

उदयपुर :

फ्रांसीसी यात्री पियरे लोट्टी के शब्दों में उदयपुर, जिसे 'सूर्योदय का नगर' और 'पूर्व के वेनिस' की संज्ञा दी जाती है, एक 'सुरम्य विश्राम स्थल' है। मुगल सम्राट अकबर द्वारा चित्तौड़गढ़ पर अधिकार कर लिए जाने पर यशस्वी महाराणा

प्रताप के पिता महाराणा उदयसिंह ने सन् 1568 में इस शहर को बसाया था। चारों ओर ऊंची-ऊंची प्राचीरों से घिरे इस नगर में पांच मुख्य प्रवेश द्वार हैं जिनमें सूरजपोल द्वार मुख्य है।

उदयपुर के दर्शनीय स्थलों में पिछोला झील के पार्श्व में खड़े महाराणा के भव्य-महल सबसे प्रमुख हैं। लगभग 2000 फुट लम्बे तथा 600 से 800 फुट चौड़े भू-भाग में फैले ये महल विभिन्न शासकों के काल में विभिन्न शैली के वास्तु शिल्प से बनाये गये हैं। इसमें प्रीतम निवास, माणक महल, शिव निवास, सूरज चौपाड़ तथा अन्य विशाल महल जिनमें दीवारों पर इन्द्रधनुषी रंगों में निर्मित मयूर, द पर आकर्षक डिजाइनों की टाइलें तथा सीढ़ीनुमा उद्यान दर्शनीय हैं।

पिछोला झील के सुविस्तृत नीलाभ जल के बीच नगीनों की भांति द दो द्वीप-प्रासादों में से जगमन्दिर का निर्माण 17वीं सदी के मध्य में किया गया था इस तिमंजिले भवन का ऊपरी भाग गुम्बदाकार है। यही पर अपने पि जहांगीर से बगावत करने पर शाहजादा खुर्रम को उदयपुर के महाराणा ने शर प्रदान की थी। जग निवास महल जो लगभग एक सदी बाद बनवाया गया द सुन्दर वृक्षों, खुले दालानों और मनोरम उद्यानों से युक्त महल है।

पिछोला झील के किनारे बने अनेक घाटों में गणगौर घाट सबसे प्रमुख। रियासती काल में इसी घाट से गणगौर की सवारी शानदार लवाजमे और शान शौकत से शुरू की जाती थी। राजमहल के बाहरी प्रवेश द्वार के समीप ही महाराणा जगतसिंह प्रथम द्वारा निर्मित जगदीश जी का मन्दिर है जो अपने उत्कृष्ट शिल्प तथा पत्थर पर खुदाई के कार्य के लिए विख्यात है।

उदयपुर के अन्य दर्शनीय स्थलों में 18 वी सदी के मध्य में महाराणा संग्रामसिंह द्वितीय द्वारा सुरम्य उद्यान 'सहेलियों की बाड़ी', जो निस्सन्देह भारत के सबसे सुन्दर उद्यानों में से एक है, का निर्माण कराया था। बाहरी दीवार से घिरे इस उद्यान में अनेकों फव्वारे हैं जबकि इसके भीतरी अहाते में कमल के फूलों का एक तालाब है। इस तालाब के चारों कोनों पर एक ही पत्थर को तराशकर बनाये गये दो-दो हाथियों का जोड़ा है जिनकी सूंड से प्रवाहित जलधारा नीचे तालाब में खिले कमलदल पर पड़ती है।

इसके अतिरिक्त उदयपुर के महाराणाओं द्वारा प्रयुक्त अस्त्र-शस्त्रों का संग्रहालय-राजकीय शस्त्रागार, जन्तुशाला, म्यूजियम और पुस्तकालय तथा बड़ी पोल, त्रिपोलिया से युक्त सज्जन निवास-जहां कभी महाराणा को उनके जन्मोत्सव पर सोने से तोला जाता था, मोती मगरी जहां बैठकर महाराणा सूअर का शिकार करते थे तथा सज्जनगढ़ उदयपुर के अन्य दर्शनीय स्थल हैं।

चित्तौड़गढ़ :

"गढ़ तो चित्तौड़गढ़ और सब गढ़ैया" राजस्थान के लोकजीवन में प्रचलित

यह कहावत चित्तौड़गढ़ के ऐतिहासिक किले की सुदृढ़ता और दुर्जेयता को परिभाषित करती है। उदयपुर से 69 मील पूर्व की ओर अवस्थित चित्तौड़गढ़ का दुर्ग न केवल मध्यकाल में अपने सामरिक महत्त्व अपितु इससे जुड़े ऐतिहासिक संदर्भों, परम्परागत पुरातात्विक महत्व और स्थापत्य के लिए और राजपूत वीरो और वीरांगनाओं के शौर्य एवं बलिदान की गौरव गाथाओं के कारण भी प्रसिद्ध रहा है। मुगल सम्राट अकबर द्वारा सन् 1568 में चित्तौड़गढ़ को अपने अधिकार मे लेने से पूर्व सन् 1303 में अलाउद्दीन खिल्जी ने तथा सन् 1523 में गुजरात के शासक बहादुरशाह ने भी इस ऐतिहासिक दुर्ग पर अपनी विजय पताका फहराई थी। इन तीनो ही अवसरों पर दुर्ग की रक्षा के लिए इसके एक-एक रक्षक राजपूत वीर ने केसरिया बाना पहिन कर दुश्मन से लड़ते-लड़ते वीरगति पाई थी, वही राजपूत रमणियो ने जौहर की धधकती ज्वालाओं में कूदकर आत्मोत्सर्ग किया था। लगभग 500 फुट ऊंची एक दुर्गम पहाड़ी पर बना चित्तौड़गढ़ का दुर्ग उत्तर से दक्षिण की ओर लगभग तीन मील की परिधि में फैला हुआ है। दूसरे से देखने पर यह दुर्ग इतना भव्य नजर नही किन्तु दुर्ग पर पहुंचने पर ऊंचे-ऊंचे भवनों, मन्दिरो और दूर-दूर तक फैले मैदानों का दृश्य बड़ा चित्ताकर्षक प्रतीत होता है। यद्यपि दुर्ग के भीतर के कई महल अब खंडहर हो चले हैं किन्तु इसमे खड़े गगनचुम्बी स्तम्भ–विजय स्तम्भ और कीर्ति स्तम्भ आज भी उसी निराली शान से खड़े है। अपने मूलाधार से लेकर चोटी तक इन स्तम्भों के पत्थर पर खुदाई का कार्य बड़ा उत्कृष्ट है।

जय स्तम्भ या विजय स्तम्भ का निर्माण महाराणा कुम्भा द्वारा मालवा के सुल्तान पर हुई विजय की स्मृति को चिरस्थायी बनाने के उद्देश्य से कराया गया था। 47 फुट ऊंचे आसार पर 122 फुट ऊंचे तथा 30 फुट चौड़े इस स्तम्भ के बाहरी और भीतरी भाग पर हिन्दू देवी-देवताओं की सुन्दर प्रतिमायें उत्कीर्ण हैं जो विभिन्न ऋतुओं के मूर्तमान स्वरूप को अभिव्यक्त करती हैं। इसकी तीसरी और आठवी मंजिल पर खुदा 'अल्लाह' शब्द अन्य धर्मों के प्रति सहिष्णुता के भाव को दर्शाता है। इसकी सबसे ऊपर की नवी मंजिल में मूलतः चार खंभों में से दो खंभों पर हमीर प्रथम से लेकर कुंभा तक चित्तौड़ के महाराणाओं की वंशावलि उत्कीर्ण है। प्रसिद्ध इतिहासकार फर्ग्यूसन ने पुरातात्विक महत्त्व की दृष्टि से विजय स्तम्भ को रोम के ट्रोजन स्तम्भ से इक्कीस ही माना है भले ही स्थापत्य वैभव के लिहाज से यह उतना भव्य नहीं है जबकि कर्नल टाड के अनुसार दिल्ली की कुतुब-मीनार भले ही इससे ऊंचाई मे अधिक है किन्तु स्थापत्य की दृष्टि से विजय स्तम्भ उससे कही अधिक आकर्षक और भव्य है।

दुर्ग में स्थित एक स्तम्भ, जो जैन धर्म के प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ को समर्पित है, का निर्माण 12वीं सदी में एक जैन व्यवसायी ने कराया था। कोई 75

फुट ऊंचे इस स्तम्भ पर जिसका आधार 35 फुट है जैन मत से संबंधित देवी देवताओं की मूर्तियां बनी हुई हैं।

चित्तौड़गढ़ दुर्ग के ध्वंसावशेषों का [illegible] (1433-68 ईस्वी) का महल है जिसका निर्माण विशुद्ध हिन्दू स्थापत्य शैली से किया गया है। इसी महल की एक सुरंग उस स्थान विशेष तक जाती है जहां महारानी पद्मिनी ने सर्व प्रथम सैकड़ों अन्य राजपूत रमणियों के साथ जौहर किया था। इससे कुछ ही दूर आगे की ओर एक तालाब के किनारे पद्मिनी का महल है जहां लगे एक शीशे में महारानी का रूप सौंदर्य देखकर विमोहित हुआ अलाउद्दीन खिल्जी अपनी सुध-बुध खो बैठा था।

दुर्ग के देवालयों में कुंभश्याम—जो वस्तुतः विष्णु के वराह अवतार का स्वरूप है—का मन्दिर सबसे प्राचीन बताया जाता है। मन्दिर की परिक्रमा में चारों कोनों पर बने दालानों पर खुली छतरियां और मंडप निर्माण की दृष्टि से अनूठा है। दुर्ग के अन्य देवालयों तथा दर्शनीय स्थलों में मीरां मन्दिर, सुमिधेश्वर महादेव मन्दिर, कालिका माता का मन्दिर, शृंगार चौरी और भण्डार प्रमुख हैं। 1535–40 के बीच चित्तौड़गढ़ की गद्दी पर बलात अधिकार जमाने वाले बनवीर द्वारा बनवाई गई किले की अधूरी भीतरी दीवार, चित्रांग मोरी और राणा रतन के राजसी आवास उल्लेखनीय हैं। दुर्ग के सात प्रवेश द्वारों में से एक हनुमान पोल वह स्थल है जहां अकबर के आक्रमण के दौरान जयमल और पत्ता दुर्ग की रक्षा करते हुए वीरगति को प्राप्त हुये थे।

नाथद्वारा

उयपुर से कोई 30 मील उत्तर पश्चिम में नाथद्वारा वल्लभ मतावलम्बियों के आराध्य श्रीनाथजी (बालकृष्ण) का तीर्थ स्थल है। इस छोटे से कस्बे की समूची आबादी की गतिविधियां मुख्यतः श्रीनाथजी के शृंगार, भोग, आरती और इस प्रकार की दैनिक पूजा-अर्चना के साथ जुड़ी हुई हैं। तीर्थ यात्रियों के प्रवास के लिए नाथद्वारा में कई विश्राम गृह तथा धर्मशालायें हैं जहां विशेष उत्सवों पर हजारों की संख्या में यात्रीगण आकर ठहरते हैं। देश के सबसे सम्पन्न मन्दिरों में गिने जाने वाले श्रीनाथजी के मन्दिर की पूजा-अर्चना की व्यवस्था और भेंट चढ़ावों के हिसाब किताब के लिए पृथक से एक ट्रस्ट गठित कर दिया गया है।

कांकरोली

नाथद्वारा के पश्चात् भगवान श्री कृष्ण की उपासना से संबद्ध मेवाड़ का दूसरा प्रमुख केन्द्र कांकरोली है जो नाथद्वारा से केवल 6 मील पश्चिम में है। द्वारकाधीश को समर्पित कांकरोली का मुख्य मंदिर औरंगजेब के शासन के दौरान मेवाड़ के महाराणा राजसिंह द्वारा निर्मित कराई गई राजसमन्द झील

किनारे पर बना हुआ है जहां प्रतिदिन भगवान की सातो भांकियां श्रद्धालुओं के लिए आयोजित की जाती हैं।

एकलिंगजी

उदयपुर-नाथद्वारा-कांकरोली मार्ग पर उदयपुर से कोई 14 मील उत्तर की ओर कैलाशपुरी नामक ग्राम में स्थित एकलिंगजी मेवाड़ के राजवंश के प्रधान आराध्य हैं। इस मंदिर का निर्माण आठवीं सदी में बप्पारावल ने कराया था।

नागदा

एकलिंगजी के मन्दिर से कुछ ही दूरी पर स्थित नागदा मेवाड़ के सबसे प्राचीन स्थानों में से एक है। यहां का 11 वीं सदी में निर्मित सास-बहू का मन्दिर अपने सुन्दर एवं कलात्मक स्थापत्य के कारण पर्यटकों का विशिष्ट आकर्षण रहा है। अनेक मुसलमान आक्रान्ताओं ने इस मन्दिर का स्वरूप उजाड़ने के प्रयास किये थे।

झीलें

मेवाड़ अंचल अपनी झीलों के लिए भी काफी प्रसिद्ध है। ये झीलें इनके निर्माताओं की कलात्मक अभिरुचि और सृजनधर्मिता के उत्साह को दर्शाती हैं। इनमें सर्वाधिक सुन्दर कांकरोली के निकट राजसमन्द झील है। इसकी 200 गज लम्बी पक्की पाल जिसे नौचोकी कहा जाता है पूर्णतः स्थानीय संगमरमर से बनाई गई है। पाल की सीढ़ियों से ऊपर पत्थर की कलात्मक खुदाई से युक्त सुन्दर तोरण बने हुए हैं। इस पाल पर बने 25 खम्भों पर 'राज प्रशस्ति' शीर्षक से एक काव्य संस्कृत लिपि में उत्कीर्ण है जो भारत में पाये गये संस्कृत लिपि के शिलालेखों में सबसे लम्बा बताया जाता है।

उदयपुर से 32 मील दक्षिण पूर्व में स्थित जयसमन्द झील जो लगभग 30 मील के घेरे में फैली हुई है, विश्व की सबसे बड़ी मानव निर्मित कृत्रिम झील है। झील के बीचों बीच बने टापुओं में आदिम जाति के भील तथा मीणे बसे हैं जिन्हें आस-पास ही प्रचुरता से अपने शिकार मिल जाते हैं। उदयपुर नगर तथा इसके आस-पास फतेहसागर, उदयसागर, अमरसागर आदि और भी कुछ सुन्दर झीलें हैं।

जोधपुर

थार मरुस्थल का प्रमुख नगर जोधपुर सन् 1459 में राजा जोधा द्वारा बसाया गया था। बलुआ पत्थर की पहाड़ी पर घोड़े की नाल के समान बनाई गई एक सुदृढ़ दीवार के रूप में बसाये गये इस शहर की प्राचीर की लम्बाई 6 मील, चौड़ाई 37 से 9 फुट तथा ऊंचाई 20 फुट है। नगर के सात प्रवेश द्वार हैं जिनमें से मेड़तिया दरवाजा, नागौरी दरवाजा और सोजती दरवाजा प्रमुख हैं। राजस्थान में सबसे सुन्दर कहा जाने वाला जोधपुर का किला एक उपेक्षित सी चट्टान पर खड़ा है। समीपवर्ती मैदानी भाग से लगभग 400 फुट की ऊंचाई पर स्थित इस किले की प्राचीरें 20 से

120 फुट ऊंची, 12 से 20 फुट मोटी तथा 200 से 250 गज चौड़ाई की है। से किले का यह दृश्य बड़ा लुभावना नजर आता है। किले के भीतर दो प्रवेश द्वार जयपोल और फतेहपोल हैं। एक घुमावदार सड़क के जरिये इन प्रवेश द्वारों तक पहुंचा जा सकता है। किले की प्राचीरों के बीच स्थित महलों में पुराने जमाने के अस्त्र-शस्त्र तथा प्राचीन पांडुलिपियां और चित्र हैं। अतीत में युद्धों का स्थल रहे इस किले के इर्द-गिर्द ही शहर बसा हुआ है। के महल को कलात्मक खुदाई से युक्त पेनलों तथा लाल पत्थर की करीने से गई पट्टियों से अलंकृत किया गया है। किले के समीप ही श्वेत संगमरमर से जसवन्त मेमोरियल है।

नगर में कई एक सुन्दर मन्दिर हैं। इनमें सबसे सुन्दर कुंजबिहारी का है। अहाते से घिरे महामन्दिर क्षेत्र में भी एक सुन्दर मन्दिर है जिसकी सौ खम्भों पर टिकी है। इसका आंतरिक भाग काफी सज्जापूर्ण है। नगर के दर्शनीय स्थानों में सरदार बाजार, घंटाघर, सार्वजनिक उद्यान और जन्तुशाला, कालय और म्यूजियम हैं। आधुनिक वास्तुशिल्प से पीले पत्थर से निर्मित उम्मेद महल भारत के सर्वाधिक सुन्दर भवनों में से एक है।

जोधपुर नगर तथा इसके इर्द-गिर्द कई सुन्दर जलाशय हैं जिनमें कैलाना सबसे बड़ी है। जोधपुर से कोई अढ़ाई मील दूर मारवाड़ की प्राचीन राजधानी की ओर जाती सड़क के निकट बालसमन्द नाम की एक अन्य सुन्दर झील है। पाल पर बलुआ पत्थर से 19वीं सदी में निर्मित एक महल है जिससे सटा विस्तृत एव सुनियोजित उद्यान भी है। राव जोधा द्वारा जोधपुर बसाये जाने तक मंडोर ही मारवाड़ की राजधानी था। जोधपुर के प्राचीन शासकों की यहीं हैं। इनमें महाराजा अजीतसिंह की छत्री जोधपुरी स्थापत्य का सुन्दर नमूना यहीं एक अन्य महल में राजपूत योद्धाओं की 16 विशाल मूर्तियां हैं जो तराश कर बनाई गई हैं। जोधपुर अपनी बंधेज की चूनड़ियों, लकड़ी से बनी कशीदाकारी, ऊंट की खाल से बने बर्तनों तथा संगमरमर तथा हाथीदांत वस्तुओं के लिए भी प्रसिद्ध है।

बीकानेर

राठोड़ खांप के ही राव बीकाजी द्वारा सन् 1488 में बीकानेर नगर बसाया गया था। राजस्थान के अन्य नगरों की तरह बीकानेर भी लगभर मील लम्बी गोलाकार दीवार से घिरा शहर है जिसमें पांच दरवाजों से प्रवेश जा सकता है। इनमें विशाल दरवाजा कोटगेट है। बीकानेर में भी कई सुन्दर रते हैं। आज भी भवन निर्माण की यह परम्परा बरकरार है। बीकानेर के धनीमानी व्यवसायी की हवेली इतनी कलात्मक है कि इसके सामने यहां के के महल भी नहीं ठहरते।

बीकानेर का किला, जिसके चारों ओर एक चौड़ी खाई बनी हुई है, सन् 1588 से 1593 के बीच राजा रायसिंह द्वारा बनवाया गया था। किले की प्राचीरों को कई बुर्ज बनाकर सुदृढ़ किया गया है। इसकी चहारदीवारी के भीतर कुछ पुराने महल हैं जिनकी दीवारों को रंगीन प्लास्टर से अलंकृत किया गया है। किले में संस्कृत तथा फारसी लिपि की कई पांडुलिपियां तथा अस्त्र-शस्त्रों के संग्रहालय के अलावा पीतल की मूर्तियां, मिट्टी के बर्तन तथा खिलौने भी संग्रहीत हैं।

गंगा निवास एक विस्तृत और अपेक्षाकृत आधुनिक भवन है। इसकी भीतरी लाल पत्थर की दीवारों पर कलात्मक खुदाई की गई है। नगर के बाहर की ओर अवस्थित लालगढ़ पैलेस लाल पत्थर पर कलात्मक छवि अंकन का एक बेहतरीन [illegible]ना है। बीकानेर के अन्य उल्लेखनीय भवनों में जैन मुनियों के उपासरे (मठ) [illegible]ा मंदिर हैं। शहर के बाहर शिव बाड़ी नामक एक शिव मंदिर भी दर्शनीय है। [illegible]कानेर के ऊनी कालीन तथा लोइयां प्रसिद्ध हैं। बीकानेर से 30 मील दक्षिण [illegible]श्चम की ओर कोलायत का पवित्र सरोवर है। जनश्रुति के अनुसार कभी यह स्थल [illegible]पिल मुनि की तपोभूमि रहा है। विशिष्ट पर्वों पर हजारों लोग इस सरोवर में पर्व-[illegible]ान के लिए आते हैं।

[illegible]जमेर

राजस्थान के हृदय स्थल में अवस्थित अजमेर नगर का अतीत बड़ा गौरव-[illegible]ूर्ण रहा है। चारों ओर पहाड़ियों से घिरा अजमेर एक ऊंचे पठारी भू-भाग पर [illegible]सा नगर है जो समूचे उत्तर भारत में सबसे ऊंचा समतली क्षेत्र माना जाता है। [illegible]हर के चारों ओर सुन्दर परिवेश और सूखी तथा आल्हादकारी जलवायु की चर्चा [illegible]रते हुए एम. कली मैन्स्वयू नामक एक विदेशी पर्यटक ने जो अपनी पत्नी के साथ [illegible]ागरा के ताजमहल को देखकर हाल ही के वर्षों में कुछ दिन तक अजमेर रहा था, कहा है कि 'अजमेर उसे इतना सुन्दर लगा है कि अजमेर ही उसकी पसन्दीदा [illegible]गह है जहां वह मरना चाहेगा।' अजमेर वस्तुतः अजय मेरु शब्द का ही विकृत रूप [illegible] जिसका अर्थ होता है अजेय घोड़ा। इस नगर को चौहान वंशीय शासक अजयपाल [illegible]7 वीं सदी में बसाया था। कोई छः सदी तक चले इस हिन्दू राजवंश का [illegible]न्तिम शासक पृथ्वीराज चौहान था जो 1192 ई. में तराइन के युद्ध में शहाबुद्दीन [illegible]ोरी से पराजित होकर बंदी बना लिया गया था।

अजमेर स्थित तारागढ़ का सुदृढ़ दुर्ग जिसे अपने सामरिक महत्व के कारण [illegible]ाजस्थान का जिब्राल्टर कहा जाता है, अजयदेव द्वारा बनवाया गया था। समुद्रतल [illegible] 2855 फुट ऊंची एक पहाड़ी की चोटी पर स्थित इस दुर्ग ने भारत के इतिहास में [illegible]हम भूमिका निभाई है। यह दुर्ग अब प्रायः खण्डहर के रूप में रह गया है। जिसमें [illegible]क मात्र दर्शनीय स्थल तारागढ़ के पहले मुसलमान प्रशासक मीरनसैय्यद हुसैन [illegible]ुड़सवार की कब्रगाह है। इस मुस्लिम गवर्नर को राजपूतों द्वारा 1202 ई. में रात्रि

में किये गए एक आकस्मिक हमले में मौत के घाट उतार दिया गया था। पृथ्वीराज के पितामह अरणोराज अथवा अनाजी का नाम उनके द्वारा बनाये गये अनासागर (1135–1150) के कारण आज भी अमर है। डा. फिशर के अनुसार 'भारत के प्राचीन नगरों में नैसर्गिक सौन्दर्य के कारण अजमेर का नाम सर्वोपरि है।' अर्णोराज के परवर्ती शासक विग्रह राज चतुर्थ एक विद्वान और कवि शासक थे जिन्होंने अजमेर में एक संस्कृत कालेज की स्थापना की थी। टाड के अनुसार 'हिन्दू वास्तु-कला का यह एक प्राचीनतम एवं सर्वोत्कृष्ट स्मारक है।' शहाबुद्दीन गोरी द्वारा अजमेर के विध्वंस के दौरान इस संस्कृत महाविद्यालय को मस्जिद में तब्दील करने का हुक्म दिया गया। तदनुसार उसके सिपहसालार कुतुबुद्दीन ऐबक तथा सुल्तान इल्तुतमिश ने महाविद्यालय के मुख्य भवन की सामने की दीवार पर मेहराबें बनवा कर उसे मस्जिद का रूप दे दिया गया। वर्तमान में इसका प्रचलित नाम अढ़ाई दिन का झोंपड़ा है। यह नामकरण अठारहवीं सदी में पंजाब शाह नाम के एक मुसलमान संत के यहां किये गये अढ़ाई दिन के प्रवास पर आधारित है। इसका प्राचीन नाम अब विस्मृत सा हो चला है। मूलतः लगभग 770 फुट के इस चतुर्भुजाकार भवन का आकार अब मात्र 164 फुट का रह गया है। लेकिन इसके स्तम्भों तथा अन्दर की ओर की छतें, जगह-जगह इन पर बनी मूर्तियों के अपरूप कर दिये जाने के बावजूद, इसके प्राचीन कलात्मक सौन्दर्य का आभास करा देती हैं। सात मेहराबों से युक्त इसका बाहरी भाग दिल्ली की कुतबी मस्जिद, जो तत्कालीन मुस्लिम वास्तु का एक उत्कृष्ट उदाहरण माना जाता है—के मुकाबले स्थापत्य सौन्दर्य के लिहाज से उन्नीस नहीं पड़ता। अन्य तीन मेहराबें, जिन पर अरबी और तुर्की भाषा में आयतें खुदी हुई है, कलात्मकता के लिहाज से काफी सुन्दर हैं। इनके 'सतही अलंकरण से प्रभावित होकर फर्गुसन ने कहा कि 'काहिरा (मिश्र) अथवा ईरान से लेकर स्पेन से लेकर सीरिया तक कहीं भी उसने ऐसा इतना सुन्दर छवि अंकन नहीं देखा।'

मुगल सम्राट अकबर ने जो प्रायः अजमेर आता रहता था, सन् 1571-72 में अपने प्रवास के लिए यहां एक किलेनुमा महल बनवाया था। वर्तमान में इस किले में राजपूताना म्यूजियम अवस्थित है। आगरा व फतेहपुर सीकरी में अकबर द्वारा बनवाये गये महलों के समान ही अजमेर के किले में भी हिन्दू-मुस्लिम स्थापत्य शैलियों का सम्मिश्रण किया गया है, जो अब तक अच्छी हालत में है। विख्यात ख्वाजा मुइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह मे अवस्थित अकबरी मस्जिद और 'झालरा' नामक जलाशय उसी काल के निर्माण हैं। अपने पिता अकबर और पुत्र शाहजहां के समान महान निर्माणकर्ता न होने के बावजूद प्रकृति प्रेमी जहांगीर का भी अजमेर से काफी लगाव था। अजमेर स्थित अकबर के किले में ही जहांगीर ने इंग्लैंड के बादशाह जेम्स प्रथम के राजदूत सर टामस रो से मुलाकात की थी। तारागढ़ पहाड़ी की घाटी से प्रवाहित होने वाले एक सोते का नामकरण भी उनने इसके

पर नूर-चश्म किया था। उसने अपने आमोद-प्रमोद के लिए एक मकान, उद्यान तथा एक हौज भी बनवाया था जिसमें 10 से 12 गज की ऊंचाई तक जाने वाला फव्वारा निर्मित था।

आना सागर के सौंदर्य को निखारने के लिए 1240 फुट लम्बी संगमरमर की पाल तथा इस पर पांच सुन्दर बारहदरियों का निर्माण शाहजहां द्वारा कराया गया था।

दरगाह

वर्तमान में अजमेर का सबसे बड़ा आकर्षण ख्वाजा मोइनुद्दीन चिश्ती की दरगाह है जो भारत में मुसलमानों का सबसे पवित्र तीर्थधाम है। यहां पर ख्वाजा साहब की मजार के अतिरिक्त दो मस्जिदें, एक समागृह (महफिल खाना) और बुलन्द दरवाजा नाम का एक विशाल प्रवेश द्वार दर्शनीय है।

पुष्कर

अजमेर से सात मील उत्तर-पश्चिम की ओर बसा पुष्कर हिन्दुओं का एक तीर्थस्थान है। पुष्कर झील नाम के यहां के प्रमुख जलाशय के निर्माण की कथा बड़ी रोचक है। पद्म पुराण के अनुसार हिन्दू धर्म के प्रमुख तीन देवताओं में से सृष्टिकर्ता कहे जाने वाले ब्रह्मा ने एक बार यज्ञ करने के लिए उपयुक्त स्थान की तलाश में अपने हाथ के कमल को धरती पर फेंक दिया जो तीन स्थानों पर गिरा और इसके साथ ही वहां पानी का जलाशय बन गया। इन तीन स्थानों में पुष्कर वह स्थल था जहां सर्वप्रथम उपरोक्त कमल गिरा था।

एक तीर्थ स्थल के रूप में पुष्कर की प्राचीनता विभिन्न पुराणों, रामायण और महाभारत में आये संदर्भों से सिद्ध होती है। एक किंवदन्ती के अनुसार पांडवों ने अपने अज्ञातवास के कुछ वर्ष पुष्कर की निकटवर्ती पहाड़ियों में व्यतीत किए थे। इन पहाड़ियों में बनी अनेकों गुफायें प्राचीन ऋषियों की तपःस्थली बताई जाती है। लोगों की मान्यता है कि पुष्कर में कार्तिक पूर्णिमा के पर्व पर स्नान करने से मनुष्य के पापों की निवृत्ति हो जाती है। मन्दिरों की नगरी कहे जाने वाले पुष्कर तीर्थ में ही ब्रह्मा का मंदिर है जो समूचे देश में अपने प्रकार का एकमात्र मन्दिर बताया जाता है। पुष्कर झील के दोनों ओर की ऊंची पहाड़ियों पर ब्रह्मा की पत्नियों सावित्री व गायत्री के मन्दिर हैं। इनके अतिरिक्त दक्षिण भारतीय शैली के 'गोपुरम' से युक्त भगवान वेंकटेश्वर अथवा रंगजी का मन्दिर भी अपने विशिष्ट स्थापत्य शिल्प के कारण दर्शनीय हैं। कुछ वर्ष पूर्व रंगजी के प्राचीन मन्दिर से जरा हटकर रंगजी का एक नया और भव्य मंदिर भी बन गया हैं।

अलवर

दिल्ली-जयपुर सड़क व रेलमार्ग के बीचों बीच अवस्थित अलवर भी एक सुन्दर नगर है। एक ऊंची पहाड़ी के उठे हुए छोर पर बने अलवर के किले के ठीक

नीचे एक जलाशय है जिसके तीन ओर सुदृढ़ पाल बनी है जबकि इसकी चौथी ओर हरी-भरी पहाड़ियों की प्राकृतिक रक्षा-पंक्ति है। यहां से पांच दरवाजों को पार कर नगर के मुख्य भाग में प्रवेश किया जा सकता है। किले के दर्शनीय स्थलों में निकुंभ महल, शाहजादा सलीम द्वारा निर्मित सलीम सागर सूरज कुण्ड और सूरजमहल प्रमुख है। किले के नीचे स्थित जलाशय (सागर) के किनारे पर बने महल में संस्कृत व फारसी भाषा के ग्रन्थों का एक विशाल पुस्तकालय, चित्रदीर्घा तथा एक सिलह खाना (अस्त्र शस्त्रों का संग्रहालय) भी है जिसमें मध्ययुगीन अस्त्र-शस्त्रों के कुछेक सुन्दर नमूने आज भी देखे जा सकते हैं।

अलवर के महाराजा बख्तावरसिंह द्वारा अपनी प्रेमिका मूसी महारानी की स्मृति में निर्मित छत्री पुरातत्व एवं स्थापत्य की दृष्टि से विशिष्ट महत्त्व की है। इसका मुख्य भाग संगमरमर पर काली धारियों से बनाया गया है जबकि इसकी छत व आसन का दालान लाल पत्थर से निर्मित है। नगर के अन्य दर्शनीय स्थलों में महाराजा का नया महल विजय मन्दिर पैलेस तथा कई मस्जिदें व देवालय हैं। अलवर से कुछ दूरी पर घने जंगलों के बीच स्थित नलदेश्वर, सरिस्का, नारायणी, सीलीसेढ़ और भर्तृहरि नामक दर्शनीय स्थल हैं जहां प्राकृतिक सुषमा के साथ-साथ शेर और बघेरे जैसे हिंसक जन्तु भी उपलब्ध हैं।

भरतपुर

आगरा से 36 मील पश्चिम तथा मथुरा से 20 मील की दूरी पर स्थित भरतपुर नगर को राजस्थान का पूर्वी द्वार कहा जा सकता है। सिनसिनवार गोत्र के जाट राजाओं की राजधानी के रूप में विख्यात यह नगर अपने ऐतिहासिक महत्त्व के किले के लिए काफी प्रसिद्ध रहा है। मिट्टी की ऊंची दीवारों की दोहरी सुरक्षा पंक्ति के कारण जिनमें तोपों के गोले प्रभावहीन हो जाते थे, यह दुर्ग अजेय समझा जाता था। यही कारण था कि काफी अर्से तक यह दुर्ग अंग्रेजों के हमलों को विफल करता रहा। अंग्रेज सेनापति लार्ड लेक चार बार इस किले की घेराबन्दी करने के बावजूद बड़ी कठिनाई से पांचवें प्रयास में इसे 1804 में सर कर सका था। किले के चारों ओर एक गहरी खाई है जिसे पूर्व काल में मोती झील के पानी से भरा जाता था। किले के भीतरी भाग में महाराजा का दीवाने खास, सिलहखाना, मोतीमहल और जवाहर बुर्ज व फतेहबुर्ज दर्शनीय हैं। ये दोनों बुर्जें महाराजा जवाहर सिंह ने दिल्ली विजय तथा अंग्रेजों को परास्त करने की स्मृति में बनवाई गई थी। भरतपुर से कोई तीन किलोमीटर दक्षिण पूर्व की ओर विश्व-प्रसिद्ध पक्षी अभयारण्य केवलादेव घना है। रियासती काल में प्रवासी पक्षियों विशेषकर बतखों के शिकार के लिए यह एक प्रसिद्ध स्थल था। भरतपुर के राजवंश के पुरुषों का दाह संस्कार भरतपुर से 29 मील दूर गोवर्धन में किया जाता था। यहां बनी भरतपुर के राजाओं की छत्रियों में महाराजा बलवन्त सिंह की छतरी काफी सुन्दर है जो भरतपुर के निकट बारेठा के पीले बलुआ पत्थर से बनाई गई है।

डीग

भरतपुर से 21 मील उत्तर की ओर रियासत की पुरानी राजधानी डीग एक पक्की सड़क द्वारा भरतपुर से जुड़ी हुई है। यहां के उद्यान महल गोपाल भवन का निर्माण भरतपुर के प्रतापी नरेश सूरजमल ने कराया था। मुगलकालीन वास्तुशिल्प के अन्तिम दौर की यह एक ऐसी बेहतरीन कृति है जिसमें उद्यान, जल प्रणाली और भवन निर्माण कला एकाकार हो गई है। डीग के महलों के उद्यान विशुद्ध रूप से मुगल शैली के हैं। महल के पूर्व की ओर स्थित डीग का किला मध्ययुग में कई लोमहर्षक युद्धों का साक्षी रहा है। किले में पुराने महलों तथा अन्य भवनों के खंडहर आज भी विद्यमान हैं।

बयाना

मध्यकालीन भारत के इतिहास में बयाना जो भरतपुर से 36 मील दक्षिण में स्थित है काफी चर्चित स्थान रहा है। प्राचीनता के लिहाज से बयाना को गुप्तकाल से संबद्ध किया जाता है जिसकी पुष्टि बयाना के सुदृढ एवं विशाल दुर्ग में पाये गये समुद्र गुप्त के काल में निर्मित एक विजय स्तम्भ से होती है। विक्रम संवत 428 में वारिक विष्णुवर्धन पुंडरीक द्वारा इस किले पर किये गये यज्ञ के स्मृति चिन्ह के रूप में भीमलाट नामक एक विशाल स्तम्भ का निर्माण कराये जाने का उल्लेख है। इसी प्रकार उषा का मन्दिर भी इसी युग में सन् 1028 में बनवाया गया था। इनके अतिरिक्त लोदी मीनार, सराय सादुल्ला, अकबर की छत्री और जहांगीर द्वारा बनवाया गया दरवाजा भी इस किले के कुछ प्राचीन स्थल हैं। बयाना के निकट ही खानवा का वह ऐतिहासिक मैदान है जहां भारत में मुगल साम्राज्य के संस्थापक बाबर और मेवाड़ के राणा सांगा के बीच निर्णायक युद्ध हुआ था।

कोटा :

राजस्थान की एकमात्र बारहमासी नदी चम्बल के पूर्वी कगार पर स्थित कोटा एक सुदृढ प्राचीर से घिरा हुआ नगर है। इसमें एक प्राचीन महल तथा सरस्वती भण्डार नामक प्राचीन पांडुलिपियों का एक विशाल संग्रहालय है। कोटा में कई विस्तृत उद्यान हैं जिनकी सिंचाई कोटा बैराज से लाई नहर के पानी से की जाती है।

कोटा बैराज के निर्माण के पश्चात कोटा नगर का महत्व काफी बढ़ चला है, बहुउद्देशीय चम्बल घाटी विकास योजना का अंग होने से इस अंचल में तीन बांधों, विद्युत उत्पादक परियोजनाओं, ट्रांसमिशन लाइनों तथा सिंचाई के लिए निकाली गई नहरों के कारण अब यह राजस्थान का एक प्रमुख औद्योगिक नगर के रूप में विकसित हो गया है। श्री राम रेयन्स, श्रीराम फर्टीलाइजर्स, इन्स्ट्रूमेन्टेशन फैक्ट्री आदि कई छोटे-बड़े औद्योगिक संस्थानों ने इस शहर की मानों कायापलट ही कर दी है। अटरू, शेरगढ और झालरापाटन इस अंचल के प्रमुख ऐतिहासिक तथा

पुरातत्व महत्त्व के स्थल हैं। कोटा के 30 मील दूर बाड़ोली में सात प्राचीन मंदिरों के ध्वंसावशेष है जो 8वी सदी के बताये जाते हैं। हिन्दू धार्मिक स्थापत्य के अध्ययन की दृष्टि से इन ध्वंसावशेषों का विशेष महत्त्व है।

बूंदी :

कोटा से 20 मील पश्चिम की ओर स्थित बूंदी पहाड़ी घाटी में बसा नगर है। सन् 1342 मे राव देवा द्वारा बसाया गया यह नगर हाड़ा जाति के राजपूतों की प्रधान पीठ है। पहाड़ी के सहारे बसाया गया बूंदी का राजमहल टाड के अनुसार राजस्थान में सबसे विशाल है। इस महल मे बूंदी शैली की राजपूत चित्रांकन विधा के भित्ति चित्र काफी मनोहारी हैं। किले के नीचे फूलसागर और जैतसागर नाम के दो सुन्दर जलाशयों के अलावा नगर मे यत्र-तत्र कई एक सीढ़ीदार कलात्मक बावड़ियां भी दर्शनीय हैं। केसरबाग मे बूंदी के भूतपूर्व राजाओं की 66 छतरियां हैं जिनमे पत्थर पर नक्काशी का कार्य काफी मनमोहक है।

माउन्ट आबू :

माउन्ट आबू राजस्थान का एक मात्र ग्रीष्मकालीन प्रवास स्थल है। मैदानी भागों की तपन से राहत पाने के इच्छुक सैलानियों के लिए माउन्ट आबू प्राकृतिक व मानव निर्मित सौंदर्य स्थलों मे एक चहेता स्थल है। अरावली पर्वत मालाओं से घिरा आबू पर्वत जयपुर से 275 मील दक्षिण पश्चिम में तथा बम्बई से 442 मील उत्तर की ओर समुद्रतल से 3800 फुट ऊंची सतह पर बसा एक रमणीक स्थान है। यहां की जलवायु शीतल है। यहां वार्षिक तापमान 30^0 फॉरेनहाइट के आसपास रहता है। जून के मध्य से अक्टूबर के मध्य तक इस अंचल में बरसात होती है। यहां जाने का सर्वोत्तम समय 15 मार्च से 15 जून के बीच होता है।

माउन्ट आबू के समीप ही देलवाड़ा के विश्व प्रसिद्ध जैन मंदिरों ने आबू का आकर्षण और भी बढा दिया है। पाच जैन मंदिरों का देलवाड़ा मंदिरों का समूह भारतीय वास्तु विधान एवं पत्थर पर खुदाई का अन्यतम प्रतीक है। ग्यारहवी तथा 12वीं सदी मे निर्मित इन भवनों का शैल्पिक वैभव आज भी ज्यों का त्यों बना हुआ है। इनमे से पहला मंदिर जो विमलशाह विमलावसाही द्वारा 1032 ईस्वी में बनवाया गया था प्रथम तीर्थंकर आदिनाथ को समर्पित है। वास्तुपाल और तेजपाल नामक दो भाईयों द्वारा 1231 ईस्वी में निर्मित दूसरा मंदिर 22वें तीर्थंकर नेमिनाथ को समर्पित है। ये दोनों ही मन्दिर जो दुग्धधवल संगमरमर से निर्मित हैं इतने कलात्मक खुदाई के कार्य से अलंकृत हैं कि इन्हें देखकर दर्शक विस्मय-विमुग्ध होकर रह जाता है।

देलवाड़ा के जैन मंदिरों मे भी प्राचीन अचलेश्वर महादेव का मंदिर है। प्रचलित दन्तकथा के अनुसार भगवान शिव ने काशी स्थित अपने निवास स्थान

में पांव के अंगूठे से सुराख बना दिया था जो नैसर्गिक वैभव के इस क्षेत्र में जमीन के नीचे एक शिवलिंग के रूप मे उभर आया। इस मंदिर की ही एक ऊंची पहाड़ी पर 10वीं सदी में निर्मित एक और विशाल जैन मदिर है जहां से आबू पर्वतमाला की सर्वोच्च चोटी गुरूशिखर को देखा जा सकता है। स्थापत्य सौंदर्य के इन दर्शनीय मंदिरो के अतिरिक्त आबूपर्वत का नैसर्गिक सौंदर्य भी काफी मनोहारी है।

राजस्थान के रियासती शासकों के महलों के बीच छोटे-छोटे द्वीपों से युक्त नक्की झील जिसका उद्गम देवताओं के नाखूनों से खोदे गये गढ्ढे से जोड़ा जाता है, एक सुन्दर झील है। इसी झील से छोटी-छोटी झीलों, तालाबों तथा जंगली क्षेत्र से होकर गुजरती एक पगडण्डी से सूर्यास्त बिन्दु नामक एक अन्य स्थल तक पहुंचा जा सकता है जहां से सूर्यास्त का दृश्य अत्यन्त सुन्दर नजर आता है। आबूपर्वत के अन्य दर्शनीय स्थलों में संगमरमर से बनी गाय के मुंह-गोमुख से प्रवाहित जलस्रोत और अग्निकुंड भी दर्शनीय हैं जहां वशिष्ठ ऋषि द्वारा सपन्न किये गये यज्ञ से राजपूतों के चार आदि पुरुष उत्पन्न हुए थे। अचलगढ़ परमार वंशीय राजपूत शासकों द्वारा बनवाया गया एक दुर्गम दुर्ग है जिस पर जनश्रुति के अनुसार देवगण स्नान करने आते थे।

अन्य दर्शनीय स्थल :

राजस्थान के दर्शनीय महत्त्व के अन्य स्थलों में रणकपुर (जिला पाली) के जैन मंदिर प्रमुख हैं। भगवान ऋषभदेव अथवा आदिनाथ को समर्पित ये मंदिर सन 1439 में बनवाये गये थे। एक ऊंचे आधार पर निर्मित इस मंदिर का मुख्य आकर्षण इसमे विद्यमान स्तम्भों का समूह है जिनका डिजाइन और इन पर की गई कलात्मक खुदाई उत्कृष्ट कोटि की है। दिल्ली-बम्बई बड़ी रेल लाईन पर हिन्डौन स्टेशन के निकट श्री महावीर जी का मंदिर भी जैन मतावलम्बियों का एक प्रमुख तीर्थस्थल है। यहा हर वर्ष आयोजित रथ यात्रा के मेले मे देश के विभिन्न भागों से हजारों की संख्या में जैन श्रृद्धालु लोग भाग लेने आते हैं। थार रेगिस्तान के सुदूर एकान्त कोने मे अवस्थित जैसलमेर, जोधपुर से कोई 100 मील पश्चिम उत्तर मे स्थित है।

यहा का किला उत्कृष्ट तक्षण कार्य से युक्त जैन मंदिरों में संग्रहीत प्राचीन ताड़पत्रों पर हस्तलिखित पांडुलिपियां तथा उत्कृष्ट वास्तुशिल्प से अलंकृत विशाल हवेलियां इस उपेक्षित रेगिस्तानी अचल के कलात्मक परिवेश के प्रति पर्यटकों को सहज ही आकृष्ट करते हैं।

दिल्ली-बम्बई रेलमार्ग पर ही सवाई माधोपुर स्टेशन के समीप रणथम्भोर का विशाल दुर्ग भी, जो कभी चौहान वंशीय राजपूतों का प्रमुख केन्द्र था, अपने ऐतिहासिक एवं गौरवपूर्ण अतीत के कारण पर्यटकों के आकर्षण का केन्द्र रहा है। किले के भीतर आज भी कई ध्वस्त महल, मंदिर, छत्रियां और जलाशय मौजूद हैं जो अतीत मे इसके वैभव के मूक साक्षी हैं। नैसर्गिक सौंदर्य से सम्पन्न इस किले के इर्द-गिर्द जगली जानवर भी बहुतायत से पाये जाते हैं।

12

राजस्थान की विकास-यात्रा

राजस्थान देश का वह राज्य है जहां की जनता आजादी से पूर्व वर्षों राजा-महाराजाओं और जागीरदारों की तिहरी गुलामी का भार ढोती रही है। इस सामन्तवाद के प्रबल शिकंजे मे जनता सदैव उपेक्षित और पीड़ित रही है। जो लोग उस सामन्ती युग में जीये हैं, उनसे आज यदि पूछा जाये तो पता चलेगा कि सामान्य जन को कितना उत्पीड़न सहना पड़ता था। सामान्य जनता अशिक्षा और अज्ञान के अन्धकार में डूबी हुई थी। बार-बार पड़ने वाले अकाल और अभाव उनकी अर्थ-व्यवस्था को छिन्न-भिन्न कर देते थे। जन सुविधाओं के नाम पर सर्वत्र अभाव ही अभाव दिखाई देता था। किसी भी राज्य मे औद्योगिक और व्यवसायिक ढांचा नहीं बना था। गरीब और कमजोर वर्ग शोषण के शिकार थे, उनकी न कोई आवाज थी और न कोई अस्तित्व। यदि एक शब्द में कहा जाये तो 'राजस्थान को विरासत में पिछड़ापन, अभाव, अज्ञान, अशिक्षा ही मिली थी।

रियासतो के एकीकरण के बाद राजस्थान को अनेक ऐसी समस्याओं का सामना करना पड़ा जो देश के अन्य राज्यों में नहीं थीं। कल्पना कीजिये कि सन् 1950–51 में राज्य में कुल तेरह मेगावाट बिजली पैदा की जा रही थी तथा राजस्थान मे 42 बस्तियों में ही बिजली पहुंची थी। एक भी सार्वजनिक कुंए पर बिजली नहीं थी। केवल 5 नगर ऐसे थे जहां पेयजल योजनायें बनाई गई थीं किन्तु एक भी गांव में पेयजल की कोई योजना नहीं बनी थी। पूरे राज्य में कुल मिलाकर लगभग 4 हजार प्राथमिक विद्यालय खुले हुए थे। कालेज शिक्षा के लिए छात्रों को राज्य के बाहर जाना पड़ता था। उस समय साक्षरता का प्रतिशत लगभग 8 था। सड़कें नहीं के बराबर थीं तथा ऐलोपैथिक चिकित्सालय और औषधालय पूरे राज्य में मिलाकर लगभग 390 थे।

सामन्तवाद की इस सामाजिक एवं आर्थिक पिछड़ेपन की विरासत को लेकर आजादी के बाद लोकतन्त्री सरकार ने शासन की बागडोर सम्भाली। सबसे बड़ी समस्या अब जनता को जागीरदारी से मुक्त करना और किसान को उसकी भूमि का

अधिकार दिलाने की थी। जागीरदारी उन्मूलन का यह कार्य कांग्रेस सरकार ने बड़ी मुस्तैदी से किया। दुनियां के इतिहास में ऐसी कोई मिसाल नहीं मिलती, जहां बिना खून-खराबे के जागीरदारी समाप्त कर दी गई हो और किसान को अपनी भूमि को जोतने के अधिकार दिला दिये गये हों। महात्मा गांधी के अहिंसा के सिद्धान्तों पर चलकर राज्य मे जागीरदारी उन्मूलन का यह क्रान्तिकारी कार्य कांग्रेस सरकार ने जिस दृढ़ता, सूझबूझ और शान्ति से किया, वह अपने आप मे एक ऐतिहासिक उपलब्धि थी।

अलग-अलग रियासती प्रशासनों की विकृतियों को समाप्त कर पूरे राज्य में एक-सा प्रशासन कायम करना दूसरी बड़ी महत्त्वपूर्ण उपलब्धि थी। सेवाओं का एकीकरण तथा भिन्न-भिन्न शासन प्रणालियों को मिलाकर नये नियमों और कानूनों का निर्माण एक दुस्साध्य कार्य था जिसे पूरा किये बिना एकीकृत राजस्थान की कल्पना ही सम्भव नही थी।

राज्य के इस बुनियादी ढांचे को तैयार करने मे राजस्थान को काफी समय लगा। जब अन्य राज्य योजनाबद्ध विकास के दौर में आगे बढ़ रहे थे तब राजस्थान इन आधारभूत कठिनाईयों को सुलझाने मे लगा था। इसकी अर्थव्यवस्था छिन्न-भिन्न थी। इसके पश्चिमी भू-भाग में सैंकड़ों मील में फैला विशाल मरुस्थल अर्थ-व्यवस्था पर मृतभार की तरह पड़ा हुआ था। राज्य में बिजली और पानी का अभाव था। उद्योगों के लिये भाव-भूमि नहीं थी। सड़कों का शोचनीय अभाव था और गांव अशिक्षा, अज्ञान और रूढ़िवादिता के अंधकार में डूबे थे। जब पहली पंचवर्षीय योजना प्रारम्भ की गई तो आशा की एक किरण उत्पन्न हुई किन्तु राज्य में इस योजनाकाल में वांछनीय प्रगति नहीं हो सकी। साधन सीमित और समस्यायें असीमित किन्तु कांग्रेस दल के शासन ने हिम्मत नहीं हारी और दूसरी तथा तीसरी पंचवर्षीय योजनाओं के माध्यम से राज्य मे प्रगति की गति को निरंतर आगे बढ़ाया। चौथी और पांचवीं योजनाओं के आते-आते राज्य का स्वरूप तेजी से बदलता चला गया।

राजस्थान को अपनी विकास यात्रा में एक लम्बी जद्दोजहद करनी पड़ी है। आज छठी पंचवर्षीय योजना काल की समाप्ति पर यदि हम चारों तरफ नजर घुमाकर देखें तो राजस्थान की तस्वीर बदलती हुई नजर आयेगी। आज विकास के नित्य नये आयाम कायम होते जा रहे हैं। अतीत के अभावों की कल्पना आज तो दिवा-स्वप्न सी लगती है। अजगर से फैले रेगिस्तान मे आज इन्दिरा गांधी नहर की जल-धारायें खुशहाली के गीत सुना रही हैं। आर्थिक, सामाजिक, औद्योगिक, वैज्ञानिक, और शैक्षणिक क्षेत्रों मे तरक्की की नई दिशायें दिखाई दे रही हैं। उपलब्धियों और सफलताओं के नित्य नये मार्ग खुलते जा रहे हैं।

कल्पना कीजिये कि सन् 1951 मे राज्य मे मात्र 29 लाख टन खाद्यान्न

उत्पादन होता था, वहां अब राज्य में एक करोड़ टन से भी अधिक कृषि उत्पादन होने लगा है। यह कोई साधारण उपलब्धि नहीं है। इसका श्रेय राज्य में सिंचाई की क्षमता बढ़ाने, रासायनिक उर्वरकों का अधिकाधिक उपयोग तथा भूमि सुधार के कार्यक्रमों का जाल बिछाने के लम्बे और दुस्तर प्रयोग को है। अनेक सिंचाई योजनायें पूरी की गई और कुओं पर बिजली पहुंचाई गई है।

राज्य में जहां 1951-52 मे मात्र 13 मेगावाट बिजली का उत्पादन होता था, वहां अब 1713 मेगावाट विद्युत का उत्पादन होने लगा है। कोटा में ताप बिजलीघर के प्रथम चरण की इकाइयों में उत्पादन आरम्भ किया जा चुका है। अन्तर्राज्यीय विद्युत परियोजनाओं के तहत राजस्थान के हिस्से की बिजली प्राप्त की जा रही है। बिजली उत्पादन को और बढ़ाया जा रहा है। राज्य के निर्माण के समय पूरे राज्य मे केवल 42 बस्तियों मे बिजली सुविधा उपलब्ध थी, वहां अब लगभग 20 हजार से अधिक गांव विद्युत प्रकाश से आलोकित हो गये हैं। जहां एक भी सार्वजनिक कुंए पर बिजली नही थी, वहां पर 2.60 लाख से भी अधिक कुओं पर बिजली पहुंचाई जा चुकी है। बिजली के इस विकास ने राज्य में उद्योगों को पनपाने में महत्त्वपूर्ण भूमिका अदा की है। उद्योगों के लिए आधारभूत ढांचा तैयार कर लिया गया है और राज्य में औद्योगिक क्षेत्रों का विकास किया जा रहा है। राज्य में इस वक्त 148 औद्योगिक क्षेत्र हैं, जहां पर सड़क, बिजली, पानी, बैंक, पोस्ट आफिस, औषधालय, यातायात, गोदाम और जलपान गृह की सुविधायें सुलभ कराई गई हैं। इसके अतिरिक्त 17 हजार एकड़ भूमि में औद्योगिक सम्पर्वतन विकसित किये जा रहे हैं और 12 हजार एकड़ भूमि में औद्योगिक क्षेत्रों का और भी विकास किया जा रहा है। उद्योगों को अनेक प्रकार की सुविधायें और रियायतें एक ही स्थान से उपलब्ध कराई जा रही हैं।

आज राजस्थान में उद्योग लगाने वाले उपक्रमी सुदूर क्षेत्रों से आने लगे हैं और राज्य में उपलब्ध सुविधाओं का लाभ उठाने लगे हैं। देश के किसी बड़े औद्योगिक केन्द्र में जो सुविधायें सुलभ हैं वे सभी राजस्थान में आज मिलने लगी हैं। यदि कांग्रेस शासन को राज्य की जनता से इसी प्रकार सहयोग मिलता रहा तो आने वाले दशक में राजस्थान औद्योगिक दृष्टि से देश का महत्त्वपूर्ण राज्य बन जायेगा क्योंकि यहां की वसुन्धरा रत्नगर्भा है। राज्य में महत्त्वपूर्ण रासायनिक और अन्य प्रकार के खनिज उपलब्ध हैं। प्रशासन ने इन खनिज सम्पत्तियों के दोहन के वैज्ञानिक प्रयत्न किये हैं। गत वर्ष राज्य में 180 करोड़ रुपये के मूल्य के खनिजों का उत्पादन किया गया। राज्य में पलाना के पास उपलब्ध लिग्नाइट भंडारों के आधार पर विद्युत उत्पादन की एक महत्त्वपूर्ण योजना पर कार्य किया जा रहा है। लिग्नाइट के विशाल भंडार मेड़ता रोड तथा बाड़मेर जिले के कपुरडी क्षेत्र में भी

मिले हैं। इन पर आधारित बिजलीघरों के निर्माण की योजनायें बनाई गई हैं। राजस्थान देश में सीमेन्ट उत्पादन के क्षेत्र में एक महत्वपूर्ण राज्य बन गया है।

राजस्थान का नाम लेते ही अन्य राज्यों के लोगों के मन मे यह तस्वीर बनती है कि यहां रेगिस्तान है और पानी का अभाव है। किन्तु राजस्थान में 1985 मे आने वाले यात्री के अनुभव निश्चित रुप से चमत्कारी होंगे। राज्य में पेयजल की समस्या से ग्रस्त 24 हजार गांवों मे से आज 21,118 से भी अधिक गांवों में किसी न किसी स्रोत से पेयजल उपलब्ध कराया जा चुका है। वर्तमान सरकार ने पेयजल समस्या पर बहुत अधिक प्राथमिकता से कार्य किया है। राज्य में बार-बार पडने वाले अकाल के कारण यह समस्या विशेषकर राज्य के पश्चिम जिलो में बहुत गंभीर आकार ग्रहण कर लेती है। इन क्षेत्रों में कुंए बहुत गहरे हैं और पानी 50 से लेकर 200 मीटर तक की गहराई में मिलता है। अनेक क्षेत्रों में खारा पानी मिलता है। इसके अतिरिक्त जो पर्वतीय और अर्द्ध-पर्वतीय क्षेत्र हैं वहां भी भूमिगत जल बहुत ही सीमित मात्रा में उपलब्ध होता है। इस समस्या का समाधान करने के लिए युद्धस्तर पर हैण्डपम्प लगाने का कार्य किया गया है। आज राज्य में 37 हजार से अधिक हैण्डपम्प स्थापित किये गये हैं जिनसे शुद्ध पेयजल की समस्या के समाधान में बहुत अधिक मदद मिली है।

शासन ने अनुसूचित जातियों और जन जातियो तथा आर्थिक दृष्टि से पिछड़े वर्गों को पेयजल उपलब्ध कराने के लिये विशेष योजना बनाकर कार्य किया है। राज्य की 8 हजार अनुसूचित जाति की बस्तियों मे देहातों मे हैण्डपम्प कार्य करने लगे हैं तथा 3 हजार गांवों को जनजाति क्षेत्र में शुद्ध पेयजल उपलब्ध कराया गया है। यदि यह गति जारी रही तो ऐसी आशा है कि छठी योजना के समाप्त होने तक राज्य में पेयजल समस्या पूरी तरह हल कर दी जायेगी। चालू वर्ष में एक हजार हरिजन बस्तियों में पीने के पानी की सुविधा और 2000 बस्तियों मे बिजली उपलब्ध कराने का लक्ष्य है।

राजस्थान के निर्माण के समय वर्ष 1950-51 में राज्य मे कुल 11.71 लाख हैक्टेयर में सिंचाई होती थी किन्तु आज राज्य का कुल सिंचित क्षेत्र 38.28 लाख हैक्टेयर तक पहुंच चुका है। राज्य सरकार ने पिछले 4 वर्षों में सिंचाई कार्यों पर 885 करोड़ रुपये से भी अधिक राशि व्यय की है ताकि निर्माणाधीन सिंचाई परियोजनाओं को शीघ्र पूरा किया जा सके।

जिस थार मरुस्थल में मीलों तक पानी की बूंद नहीं थी और जहां रेत के टीले आंधियां बनकर एक स्थान से दूसरे स्थान पर जमा हो जाते थे, उस भूभाग मे आज मरुभूमि के वक्ष को चीरती हुई इन्दिरा गांधी नहर सिंचाई और पेयजल की सुविधा देती जैसलमेर तक पहुंच रही है। इसका पानी जैसलमेर तक पहुंच चुका है और वहां सिंचाई भी होने लगी है। लगभग 649 किलोमीटर लम्बी इस नहर

का निर्माण अनेक चरणों में पूरा किया जा रहा है। इस नहर के निर्माण के द्वितीय चरण में अक्टूबर 1984 तक 590 किलोमीटर लम्बी मुख्य नहर बन चुकी है, 3,235 किलोमीटर लम्बी वितरिका बनकर तैयार हो चुकी है, जिनसे 6 लाख 81 हजार हैक्टेयर भूमि में सिंचाई क्षमता प्राप्त हो चुकी है। राज्य सरकार ने इन्दिरा गांधी नहर के पानी को एक ओर बाड़मेर जिले के गड़रा रोड तक ले जाने का निश्चय किया है तो दूसरी ओर चूरू जिले के बंजर क्षेत्रों में भी यह पानी जलोत्थान सिंचाई योजना के माध्यम से पहुंचाया जा रहा है।

इन्दिरा गांधी नहर के अतिरिक्त राज्य मे पहली पंचवर्षीय योजना से सात पंचवर्षीय योजना तक 2 बहुउद्देश्यीय, 50 मध्यम तथा 634 लघु सिंचाई योजना पूरी की गई जिनसे 38.28 लाख हैक्टेयर क्षेत्र मे सिंचाई की क्षमता प्राप्त हुई।

वर्तमान में जाखम, गुड़गांव नहर, ओखला बैराज, नर्मदा माही-बजाज सागर व्यास परियोजना, नोहर फीडर और चम्बल परियोजना के द्वितीय चरण का कार्य चल रहा है। यह सभी वृहद परियोजनायें हैं। इनके अतिरिक्त कुछ महत्त्वपूर्ण मध्यम परियोजनाओं पर कार्य हो रहा है, जिनमे थीन बाध, सिद्धमुख नहर, मेजाफीडर भीमसागर, हरिश्चन्द्र सागर, सोमकागदर, सोमकमलाअम्बा, पाचना, बागनडार वर्शन, वस्सी, कोठारी, विलास, छापा, परवन जलोत्थान योजना और सावन, भादे की मध्यम परियोजनाएं हैं जिन पर कार्य चल रहा है। इनके साथ ही राज्य में 111 लघु सिंचाई परियोजनाओं पर कार्य किया जा रहा है। इससे कृषि उत्पादन बढ़ाने मे महत्त्वपूर्ण मदद मिलेगी और राजस्थान का किसान देश का पिछड़ा किसान नहीं रह जायेगा।

राजस्थान में जल का अपना कोई स्रोत नही है। जो भी स्रोत हैं वे राज्य के बाहर हैं। राज्य तो सतलज, रावी, व्यास, चम्बल, माही, यमुना तथा नर्मदा नदियो के पानी में अन्य राज्यो के साथ भागीदारी करके ही अपनी सिंचाई क्षमता बढाने में लगा हुआ है। अधिकतर पानी सतलज, रावी व व्यास नदियो से प्राप्त होता है जिसका उपयोग इन्दिरा गांधी नहर, बीकानेर नहर और भाखड़ा नहर के माध्यम से किया जाता है। चम्बल का पानी कोटा मे बैराज बनाकर सिंचाई के उपयोग मे लिया जा रहा है। वर्तमान मे भाखड़ा नहर प्रणाली से 3 लाख हैक्टेयर, चम्बल से 2 लाख हैक्टेयर तथा इन्दिरा गांधी नहर से 6.81 लाख हैक्टेयर में सिंचाई हो रही है।

राजस्थान की अर्थव्यवस्था का एक बहुत बड़ा भाग पशुपालन पर आधारित रहा है। राज्य में 4.95 करोड़ पशुधन है जिसके संरक्षण की अनेक योजनायें बनाई गई हैं। कृषि क्षेत्र मे हरित क्रांति के बाद दूध पर आधारित श्वेत क्रान्ति

राजस्थान में किसानों के आर्थिक जीवन में क्रांतिकारी परिवर्तन ला दिया है। राज्य सरकार ने राज्य में सहकारी डेयरी फेडरेशन कायम किया है और दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों एवं संग्रहण केन्द्रों का निर्माण किया है। इन सहकारी समितियों मे दुग्ध उत्पादन करने वाले लगभग 1 लाख 68 हजार सदस्य हैं जो प्रतिदिन औसतन 4·25 लाख लीटर दूध का संकलन करते हैं। राज्य में 6 डेयरी संयन्त्र आधुनिक तकनीक अपनाकर दूध और उससे बनने वाली वस्तुओं का उत्पादन करने मे लगे हुये हैं। राज्य में 18 अवशीतन केन्द्र हैं जहां गाँवों से दूध लाकर एकत्र किया जाता है। इसके अतिरिक्त पशुओं को पौष्टिक आहार उपलब्ध कराने के लिये 5 पशु आहार संयन्त्र कार्य कर रहे हैं।

पशुओं की देखभाल और चिकित्सा के लिये 782 चिकित्सा इकाइयां कार्य कर रही हैं जिनमें से 120 पशु स्वास्थ्य केन्द्र रेगिस्तानी क्षेत्रों में है तथा 10 पशु चल चिकित्सा इकाईयां भी इन क्षेत्रों में कार्यरत हैं। दुग्ध उत्पादन के अतिरिक्त मछली उत्पादन और कुक्कुट पालन आदि की दिशा में भी राज्य ने महत्त्वपूर्ण उपलब्धियां अर्जित की हैं। इनके आधार पर आज राजस्थान का किसान केवल खेती पर निर्भर नहीं रहा है। उसने पशुपालन और दुग्ध-व्यवसाय के माध्यम से अपनी आमदनी के नये जरिये कायम किये हैं और उसकी माली हालत में महत्त्वपूर्ण सुधार हुआ है। यही कारण है कि आज राज्य के देहातो मे रहने वाले किसान अपने ही क्षेत्र में कृषि उत्पादनो पर आधारित छोटे-छोटे कुटीर उद्योग भी चलाने लगे हैं। यह बदलाव कांग्रेस प्रशासन की उस नीति की क्रियान्विति से आया है, जिसमे यह संकल्प किया गया था कि कांग्रेस शासन न केवल किसान को अपनी जोती हुई भूमि का मालिक बनायेगा बल्कि भूमि सुधारो के माध्यम से और अन्य परियोजनाओ द्वारा उसकी माली हालत मे सुधार करेगा।

राज्य सरकार ने राजस्थान के निवासी उन सभी अनुसूचित जाति, जनजाति, भूमिहीन व्यक्तियों, ग्रामीण शिल्पियों, छोटे किसानों और सीमान्त किसानो को निःशुल्क भूखण्ड आवंटन करने का कार्यक्रम बनाया है जिनके अपने नाम पर या परिवार के सदस्य के नाम पर राज्य मे कही भी कोई मकान या भूखण्ड नही है।

गरीबों को आवंटित भूखण्डों पर मकान बनाने के लिए विभिन्न योजनाओं के तहत अनुदान व ऋण उपलब्ध कराया जाता है। पिछले 4 वर्षों में अनुदान योजना के तहत 66 हजार 632 मकान बनाये गये। मकान बनाने का यह कार्य जीवन बीमा व सामान्य बीमा योजना के तहत भी किया जाता है तथा हुडको के माध्यम से भी मकानों का निर्माण किया जाता है। इस वर्ष 16 जिलो में हुडको के माध्यम से 19 हजार 994 मकानों के लिए लगभग 6 करोड़ रु. राजस्थान गृह निर्माण वित्त सहकारी समिति द्वारा खर्च किये जायेंगे। वर्ष 1981-82 के बाढ़ ग्रस्त

योजना के तहत पिछले वर्ष 8 हजार 321 मकान बनाये गये थे और इस वर्ष अब तक लगभग 3 हजार मकान बनाये गये हैं। शेष 19 हजार मकान निर्माणाधीन हैं। व्यावसायिक बैंक ऋण योजना के तहत गत वर्ष 4 हजार 977 मकान बनाये गये थे और इस वर्ष 5 हजार मकान और बनाये जायेंगे। व्यवसायिक बैंकों से मकान बनाने की योजना के तहत अनुसूचित जाति/जनजाति के लोगों को 4 प्रतिशत ब्याज की दर पर 3 हजार रु. का ऋण दिया जाता है। राज्य की यह एक महत्वपूर्ण उपलब्धि है कि राज्य मे अब तक गरीबो के लिये 1 लाख से अधिक मकान बनाये जा चुके हैं।

राजस्थान मे वर्ष 1970 में आवासन मण्डल का गठन किया गया था। इस मण्डल ने जयपुर, जोधपुर, अजमेर, कोटा और बीकानेर जैसे बड़े शहरों में इस निर्माण की अनेक योजनायें पूरी की हैं। इनके अतिरिक्त अलवर, भरतपुर, श्री गंगानगर तथा हनुमानगढ, धौलपुर, भीलवाड़ा, चित्तौड़गढ़ और सूरतगढ़ जैसे स्थानों पर भी आवासीय भूखण्डों की नई बस्तियों का निर्माण किया गया है। मण्डल ने अब तक 54 हजार से भी अधिक मकान बनाकर आवंटित कर दिये हैं ताकि शहरों में आवासीय समस्या को हल किया जा सके। राज्य की राजधानी मे जयपुर विकास प्राधिकरण का गठन कर लिया गया है जिसने शहर की आवासीय समस्याओं के समाधान के लिये विद्याधर नगर, मुरलीपुरा, वैशाली, त्रिवेणी, अयोध्या, एवं मानसरोवर आवासीय योजनाओं का निर्माण किया है।

राजस्थान में 1950-51 मे 17,339 किलोमीटर की लम्बाई मे सड़कें बनी हुई थी। किन्तु आज राज्य में 48 हजार किलोमीटर से भी अधिक लम्बाई में सड़कों का जाल बिछा हुआ है। सड़को के विकास पर विशेष ध्यान दिया गया है क्योंकि अब सड़कों के साथ-साथ सभ्यता, संस्कृति और आधुनिकता का विकास हुआ है। पिछले चार वर्षों में सार्वजनिक निर्माण विभाग द्वारा 90 करोड़ रु की लागत से लगभग 5,300 किलोमीटर लम्बी पक्की सडको का निर्माण करवाया गया। आज हमारे देहातो मे भी सड़कों का जालसा बिछ गया है। राज्य मे कृषि उपज मंडियों ने किसानों के आर्थिक जीवन को एक नया सम्बल दिया है। इन मंडियों के लिये पिछले 4 वर्षों मे 14.76 करोड़ रु. की लागत से 1230 किलोमीटर के सम्पर्क सड़कों का निर्माण किया है। इस वर्ष 10 करोड़ रु. की सम्पर्क सड़कें बनाई जा रही हैं। यह सड़कें गांव-गांव से चलकर किसानो की उपज को वर्तमान मे कार्यरत 133 कृषि उपज मण्डी समितियों और 232 उपमण्डियों तक पहुंचाती हैं। वर्तमान में 40.80 करोड़ रु. की लागत से 79 मण्डियों में मण्डी प्रांगण बनाये जा रहे हैं। किसानो के लिये एक ओर कृषि उपज मण्डी सम्पर्क सड़कें बना रही हैं तो दूसरी ओर दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों . . मे भी दुग्ध मार्गों के रूप में सड़को का निर्माण किया जा रहा है।

सड़कें राज्य के देहाती इलाकों में नयी जागृति ला रही हैं। सरकार ने सड़कों और पुलों के निर्माण के लिए एक निगम कायम किया है। यह निगम गम्भीरी, लूनी वाणगगा, बांड़ी आदि नदियों पर लगभग 20 महत्त्वपूर्ण पुलों का निर्माण कर रहा है। चम्बल और बनास नदियों पर भी पुल बन रहे हैं और राजस्थान से मध्यप्रदेश को जोड़ने वाली माही नदी पर भी महत्त्वपूर्ण पुल का निर्माण किया जा रहा है।

सहकारिता को राज्य में एक जीवन पद्धति के रूप मे स्वीकार किया गया है। सहकारी सस्थाओ के चुनाव कराकर उनमें नवजीवन का संचार किया गया है। राज्य के 90 प्रतिशत गांव सहकारिता के अन्तर्गत लाये जा चुके है। किसानों को ाज्य के सहकारी बैंकों ने लगभग 310 करोड़ रु. के ऋण प्रदान किये हैं।

वर्ष 1950-51 में शिक्षा की जो स्थिति थी उसमे आज क्रांतिकारी परिवर्तन ा गया है। राज्य मे आज पांच विश्वविद्यालय कार्य कर रहे है। 26,854 ाथमिक विद्यालय, 7.9-1 उच्च प्राथमिक विद्यालय, 1760 माध्यमिक विद्यालय ौर 149 महाविद्यालय अज्ञान के अधकार को दूर करने मे लगे हुए हैं। साक्षरता ा प्रतिशत जो वर्ष 1950-51 में आठ था अब बढ़कर 14.38 तक पहुंच ाया है।

राज्य में 300 से अधिक आबादी वाली हर बस्ती मे प्राथमिक शाला खोल ी जायेगी। इसी वर्ष ग्रामीण क्षेत्रो मे 2,142 प्राथमिक शालायें खोली गयी हैं। च्चो और महिलाओ की शिक्षा पर विशेष ध्यान दिया गया है। राज्य सरकार अनौपचारिक शिक्षा केन्द्र भी खोल रही है जहां उन बच्चों को शिक्षा दी जायेगी जो सामाजिक या आर्थिक कारणों से स्कूल नहीं जा पाते हैं। इसी प्रकार प्रौढ़ शिक्षा विस्तार के भी विशेष प्रयत्न किये गये है। राज्य में 10,000 प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र कार्य कर रहे हैं जिनसे 3 लाख ग्रामीण लाभान्वित हो रहे हैं। राज्य में पहली बार बच्चो के विकास के लिए मुख्यमन्त्री बाल विकास कोष की स्थापना की गई है।

उर्दू भाषा के विकास के लिए राज्य में विशेष योजनाएं प्रारम्भ की गई हैं। उर्दू अकादमी की स्थापना के अतिरिक्त राज्य मे प्रत्येक उर्दू पढ़ने वाली स्नातक छात्रा को 100 रु. की वृत्ति तथा स्नातकोत्तर कक्षाओं मे पढ़ने वाले छात्रों को 150 रु. प्रतिमाह देने की व्यवस्था है। जिन स्कूलों में आगे की कक्षाओं में उर्दू विषय नहीं था वहां उर्दू विषय खोला गया है और उर्दू के अध्यापक नियुक्त किये गये हैं।

राज्य सरकार शिक्षा के साथ-साथ साहित्य व संस्कृति के संरक्षण और प्रोत्साहन के प्रति भी अपने दायित्व-बोध से पूर्णतया अवगत है। राज्य में संगीत नाटक अकादमी, साहित्य अकादमी, ललित कला अकादमी के अतिरिक्त सिंधी

भाषा, संस्कृत भाषा और राजस्थानी भाषा, साहित्य और संस्कृत अकादमियों की स्थापना की गई है। इसके साथ ही राजस्थान विश्वविद्यालय में प्रेमचन्द व सुब्रह्मण्यम भारती पीठों की भी स्थापना गयी है। राजस्थान के इतिहास में पहली बार राज्य में सांस्कृतिक गतिविधियों को आगे बढ़ाने के लिए संस्कृति का पृथक मन्त्रालय कायम किया गया है। कांग्रेस प्रशासन की यह बहुमुखी विकास की नीति का ही अंग है जिसे व्यापक रूप से राज्य में क्रियान्वित किया गया है।

प्रशासन ने स्वास्थ्य सेवाओं और चिकित्सा सुविधाओं का अपने लम्बे शासनकाल में निरन्तर विकास किया है। वर्ष 1950-51 में राज्य में कुल मिलाकर 390 ऐलोपैथिक चिकित्सालय थे जबकि आज 1,028 चिकित्सालय कार्य कर रहे हैं। इनके अतिरिक्त 3,000 आयुर्वेदिक अस्पताल तथा एक आयुर्वेद चल चिकित्सालय इकाई भी कार्य कर रही है। इस वर्ष 200 नये आयुर्वेदिक औषधालय खोले गये हैं।

राज्य की स्वास्थ्य नीति का मुख्य केन्द्र बिन्दु मातृ एवं शिशु कल्याण रहा है। पिछले 3 वर्षों में 400 दाइयों को प्रशिक्षित किया गया है। गांवों में प्रति एक हजार की आबादी पर हैल्थ गाइड लगाये गये। राज्य में 14 हजार से भी अधिक हैल्थ गाइड काम कर रहे हैं। प्रत्येक 5 हजार की आबादी पर एक उप-स्वास्थ्य केन्द्र कार्य कर रहा है और एक लाख की आबादी पर एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र कार्य कर रहा है। राज्य में लगभग 21 रैफरल अस्पताल बनाये गये हैं।

राजस्थान ने अपनी विकास यात्रा 'कुछ नहीं' से शुरू की थी। इसे विरासत में अशिक्षा और सभी क्षेत्रों में पिछड़ापन मिला था। सामन्तवाद के शोषण से कांग्रेस प्रशासन ने न केवल जनता को मुक्त किया बल्कि शिक्षा के माध्यम से उनमें व्याप्त रूढ़िवादिता और सामन्ती मनोवृत्ति को भी समाप्त करने का क्रान्तिकारी कार्य किया है। राजस्थान में आज जो तस्वीर दिखाई दे रही है, उसमें औद्योगिक विकास के लिए आधारभूत ढांचा बना हुआ है, सड़कें, बिजली और पानी की सुविधाओं का व्यापक विस्तार हुआ है। राज्य में तकनीकी शिक्षा के कारण कुशल कारीगर और शिल्पी पनपे हैं। राज्य की परम्परागत हस्तकलायें और उद्योग धन्धे न केवल विकसित हुए हैं बल्कि अपनी ख्याति अन्य राज्यों और अन्तर्राष्ट्रीय क्षेत्र तक पहुंचाने में सफल हुए हैं। राजस्थान का रेगिस्तान धीरे-धीरे किन्तु मुस्तैदी के साथ हरे-भरे क्षेत्र में बदलता जा रहा है। राजस्थान का किसान अब कमजोर, निराश और शोषण व उत्पीड़न का शिकार नहीं रहा। अब बिचौलिये समाप्त हो गये, किसान अपनी उपज का स्वयं निर्माता और नियामक है। राजस्थान के औद्योगिक मानचित्र में आज बहुत हल-चल है। औद्योगिक श्रमिकों की सुरक्षा और अधिकारों के संरक्षण के लिए अनेक संस्थायें कार्यरत हैं। कुशल श्रमिकों के निर्माण में प्रशिक्षण देने वाली संस्थायें भी कार्य कर रही हैं। राजस्थान के पढ़े-लिखे युवकों के

अपना उद्योग धन्धा लगाने के लिए विशेष सहायता उपलब्ध कराई जा रही है। राज्य मे महिला शिक्षा का प्रतिशत बड़ा है। गरीब और पिछड़े तबकों को हर प्रकार से आर्थिक स्वावलम्बन के साधन पहुंचाये गये हैं। नई बस्तियां बसाकर आवासीय समस्या को हल किया गया है। राजस्थान बदला है, बदलता जा रहा है और आने वाले दशक में देश के अग्रगामी और प्रगतिशील राज्यों की श्रेणी में गौरवपूर्ण स्थान प्राप्त करेगा। आगे के पृष्ठों में राजस्थान में गत साढ़े तीन दशकों में हुए बहुआयामी विकास का संक्षिप्त इतिवृत्त प्रस्तुत किया जा रहा है।

राजस्थान राज्य का देश के अन्य विकसित राज्यों से आर्थिक स्तर मे विषमता को कम करने के लिये राज्य सरकार ने सप्तम पंचवर्षीय योजना का प्रारूप बनाया है। इस राष्ट्रीय योजना के मुख्य उद्देश्य भोजन, रोजगार व उत्पादकता के साथ प्रति व्यक्ति आय मे वृद्धि, सामाजिक सेवाओं का विस्तार व आधारभूत सुविधाओं में विद्यमान राज्य एव राष्ट्रीय औसत के अन्तर को कम करने का प्रयास, अपूर्ण योजनाओं को प्राथमिकता से पूर्ण करना और गरीबी उन्मूलन, आदि हैं।

योजना आयोग ने राजस्थान की विशिष्ट समस्याओ पर सहानुभूतिपूर्वक विचार करने के बाद यह आश्वासन दिया है कि विकास के कार्यक्रम को पर्वतीय क्षेत्रों के विकास के अनुरूप माने जाने का मसला नीतिगत है और इस पर शीघ्रातिशीघ्र सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण रखते हुए अंतिम निर्णय करवाया जायेगा। योजना आयोग ने इन विशिष्ट समस्याओं को ध्यान में रखते हुए तदर्थ रूप से इन्दिरा गाधी नहर परियोजना हेतु 200 करोड़ रुपये एवं मरू विकास कार्यक्रम के लिए 75 करोड़ रुपये की विशेष केन्द्रीय सहायता देना स्वीकार किया है। पलाना लिग्नाइट विद्युत घर की स्थापना के बारे विदेशों से सहायता प्राप्त करने हेतु समर्थन देगा जिसमे लगभग 168 करोड़ रुपये बाह्य सहायता प्राप्त हो सकेगी।

राज्य की पंचवर्षीय योजना का आकार 3000 करोड़ रुपये व वार्षिक योजना 1985–86 का आकार 430 करोड रुपये निर्धारित किया गया है।

सातवी पंचवर्षीय योजना काल मे सिंचाई एवं विद्युत सुविधाओं को बढाने के साथ-साथ गरीबी उन्मूलन कार्यक्रम जैसे, एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारंटी कार्यक्रम आदि को वांछित प्राथमिकता दी जायेगी। सामाजिक सेवाओं का भी यथासंभव विस्तार किया जावेगा। राज्य सरकार का यह भी प्रयास होगा कि रेल्वे नेटवर्क का भी विस्तार किया जाये। इसके अन्तर्गत दिल्ली-अहमदाबाद, सवाईमाधोपुर-जयपुर-कोटा लाइन मे परिवर्तन, कोटा-चित्तोडगढ़-नीमच व भीलवाड़ा लाईन के निर्माण का कार्यक्रम इत्यादि सम्मिलित हैं। इसके साथ-साथ सवाईमाधोपुर मे गैस पर आधारित विद्युत परियोजना, सलादीपुर के पायराइट्स पर आधारित इकाई, एरोनोटिक्स

इकाई, सुरक्षा उत्पादन पर आधारित इकाइयाँ भी केन्द्रीय सरकार द्वारा स्थापित कराये जाने का प्रयास किया जावेगा। डकैतीग्रस्त क्षेत्र विकास कार्यक्रम, राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र विकास योजना एवं अरावली श्रेणी के इकोडवलपमेंट का भी केन्द्रीय सरकार द्वारा संचालित करवाये जाने का भी यथासंभव प्रयास किया जावेगा।

आगे के अध्यायों में राज्य के बहुआयामी विकास के विभिन्न पहलुओं पर विस्तार से विवरण प्रस्तुत किया जा रहा है।

13
ग्राम–कल्याण के विविध क्षितिज

राजस्थान मे नये बीस सूत्री कार्यक्रम ने ग्रामीण विकास कार्यक्रम को नई दिशा प्रदान की है। इन बीस सूत्रो मे से सत्रह सूत्र प्रत्यक्ष रूप से ग्रामीण जीवन से सम्बद्ध एवं उसे प्रगति तथा समृद्धि की ओर ले जाने को सक्षम हैं। ग्रामीण क्षेत्र के निर्धनतम एवं कमजोर वर्ग के लोगों के उत्थान के लिये यह एक महत्त्वपूर्ण कदम है। इसकी सफल क्रियान्विति न केवल उन्हें सुखी एवं बेहतर जीवनयापन प्रदान करेगी, बल्कि ग्रामीण अर्थव्यवस्था को इतना सुदृढ़ कर देगी कि हमारे गांव प्रगति एवं समृद्धि के प्रतीक होंगे।

यद्यपि पिछले सैंतीस वर्षों में ग्रामीण क्षेत्रों के विकास के लिए विभिन्न प्रयत्न किये गये हैं एवं सभी पंचवर्षीय योजनाओं में गांवों के विकास कार्यक्रम को पर्याप्त महत्त्व दिया गया है तथा इससे स्थिति में पर्याप्त सुधार हुआ है, परन्तु जिस प्रकार के सक्रिय प्रयत्न छठी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत किये गये हैं और सातवीं योजना में किये जाने को हैं, उनसे यह विश्वास उत्पन्न होता है कि इससे गांवो का स्वरुप ही बदल जायेगा। ग्राम–कल्याण के कुछ प्रमुख कार्यक्रम इस प्रकार हैं :—

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम ✓ IRDP

'नये बीस सूत्री कार्यक्रम' में ग्रामीण क्षेत्र में गरीबी को दूर करने हेतु विशेष महत्त्व दिया गया है। इस उद्देश्य की प्राप्ति हेतु 2 अक्टूबर, 1980 से एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम देश के सभी विकास-खण्डों मे चलाया जा रहा है।

इस कार्यक्रम का मूल उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्र के गरीब लघु कृषक, सीमान्त कृषक, कृषक मजदूर एवं ग्रामीण दस्तकार इत्यादि के परिवारों को कृषि, लघु सिंचाई, पशुपालन, यातायात, उद्योग सेवायें व व्यापार क्षेत्र में आर्थिक इकाइयां उपलब्ध करा उनकी आर्थिक दशा सुधारना व उनके जीवन स्तर में वृद्धि करना है।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत प्रतिवर्ष प्रत्येक विकास खण्ड में से लगभग 600 परिवारों को लाभान्वित किया जाता है। इन्हे आर्थिक इकाइयां दिलाने हेतु सरकार द्वारा अनुदान व बैंकों द्वारा ऋण दिलाया जाता है। लघु कृषक परिवारों को 25 प्रतिशत, सीमान्त कृषक को 33-1/3 प्रतिशत और अनुसूचित जनजाति परिवार को 50 प्रतिशत की दर से अनुदान दिया जाता है। अनुदान की अधिकतम

सीमा गैर सूखा सम्भाव्य क्षेत्रो में 3,000/- रुपये, सूखा सम्भाव्य क्षेत्र में 4,000/- रुपये एव अनुसूचित जनजाति परिवारों को 50 प्रतिशत की दर से अनुदान उपलब्ध कराया जाता है। इसकी अधिकतम सीमा 5,000/- रुपये है।

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 'ट्राईसम योजना' को भी सम्मिलित किया गया है इसके तहत ग्रामीण युवकों को विभिन्न व्यवसायों में प्रशिक्षित कर स्वरोजगार के लिये प्रोत्साहित किया जाता है। प्रशिक्षण काल में चयनित युवकों को वृत्तिका देने के साथ-साथ समस्त प्रशिक्षण व्यय सरकार द्वारा वहन किया जाता है एव प्रशिक्षण के पश्चात् स्व-रोजगार स्थापित करने के लिये अनुदान व ऋण भी उपलब्ध कराया जाता है।

राजस्थान में यह कार्यक्रम 2 अक्टूबर, 80 से सभी 236 विकास खण्डों में क्रियान्वित किया जा रहा है। प्रति वर्ष 1.42 लाख परिवारो को लाभान्वित करने का लक्ष्य रखा जाता है। इस कार्यक्रम की प्रगति अखिल भारतीय स्तर पर काफी अच्छी आकी गई है। राजस्थान में इस कार्यक्रम की कुछ विशेषताये रही है जो निम्न प्रकार से है—

(i) **गरीब परिवारों का चयन प्रक्रिया :**

गरीब परिवारों के चयन हेतु उनकी आय का अनुमान लगाना आवश्यक है। अत: आय के अनुमान लगाने हेतु नोर्मस् बनाये हैं। उनके आधार पर पटवारी व ग्राम सेवक परिवारो की प्रारम्भिक सूची बनाते हैं जिन्हें विशेष अभियान अन्तर्गत ग्राम सभा की बैठक मे रखा जाता है व इनमे गरीब परिवारों का अन्तिम रूप से चयन उनकी सामर्थ्य व इच्छा को ध्यान में रखते हुए किया जाता है।

(ii) **अनुदान व ऋण प्रार्थना पत्रों के लिए ऋण कैम्पों का आयोजन**

ऋण कैम्पो मे चयनित परिवारो के लिये अनुदान व ऋण राशि के लिये आवेदन पत्र तैयार करवाये जाते है, जिनमें रेवन्यू विभाग, पचायत समिति, जिला ग्रामीण विकास अभिकरण एवं बैंको के प्रतिनिधि उपस्थित रहते हैं व मौके पर ही सभी प्रमाण-पत्र पूर्ण करवा लिये जाते हैं व कैम्पो में ही अनुदान व ऋण के प्रपत्रो को अन्तिम रूप दिया जाता है।

(iii) **आर्थिक इकाई और पशुधन का खण्ड स्तर की क्रय समिति द्वारा क्रय करवाना**

लाभान्वित परिवार को अनुदान व ऋण राशि नगद नही दी जाती है सम्पत्ति/पशुधन खण्ड स्तर पर बनी क्रय समिति के माध्यम से क्रय की जाती है। उपलब्ध कराये गये पशुओ का बीमा भी किया जाता है व उनका चिन्हीकरण भी किया जाता है।

ड्वाकरा परियोजना : (महिला ...)

'ड्वाकरा' योजना एकीकृत ग्रामीण विकास का ही एक अंग है जिसके द्वारा गरीबी की रेखा से नीचे जीवनयापन कर रहे परिवारों की महिलाओं के आर्थिक उत्थान के लिये उनका चयन करना व आर्थिक गतिविधियों का प्रशिक्षण प्रदान करने हेतु ...

उनमें दक्षता हासिल कर लेने पर उन्हें ऋण व अनुदान उपलब्ध कराना है जिससे कि वे अपने दैनिक जीवन का स्तर उठा सकें।

यह परियोजना राज्य के चार जिलों—अलवर, भीलवाड़ा, बांसवाड़ा एवं पाली में परीक्षण के तौर पर संचालित की जा रही है। इसके अन्तर्गत महिलाओं के 15–15 समूह प्रत्येक जिले में बनाकर उन्हें आर्थिक कार्यक्रम प्रदान कर प्रशिक्षित किया जाता है।

मरु विकास कार्यक्रम : (11 जिलों के 85 विकास खंड)
D D P

मरु विकास कार्यक्रम भारत सरकार द्वारा वर्ष 1977–78 से प्रारम्भ किया गया और यह कार्यक्रम केन्द्र प्रवर्तित योजना के रूप में चलाया गया। इस कार्यक्रम का उद्देश्य मरुस्थल के प्रसार को रोकना, इस क्षेत्र का आर्थिक विकास तथा रोजगार की सुविधायें उपलब्ध कराना है। यह राज्य के 11 मरुस्थलीय जिलों में क्रियान्वित किया जा रहा है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 61 विकास खण्ड ऐसे थे जिनमें सूखा सम्भावित क्षेत्र कार्यक्रम भी चल रहा था अतः वर्ष 1980 में गठित कार्यकारी दल की सिफारिशों के अनुसार वर्ष 1982-83 से मरुस्थलीय 11 जिलों के 85 विकास खण्डों में केवल मरु विकास कार्यक्रम ही चल रहा है।

सूखा सम्भावित क्षेत्र कार्यक्रम : (बांसवाड़ा, डूंगरपुर के 18 विकास खंडों में)
D P A P

इस कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराना, आय के स्तर में वृद्धि करना है जिससे कि सूखे के प्रभाव को कम किया जा सके। वर्ष 1974-75 में यह कार्यक्रम केन्द्र प्रवर्तित योजना के रूप में प्रारम्भ किया गया। प्रारम्भ में यह केवल पश्चिमी राजस्थान के 8 जिलों तथा बांसवाड़ा, डूंगरपुर के पहाड़ी क्षेत्रों में प्रारम्भ किया गया परन्तु शनैः शनैः इसे 13 जिलों के 79 विकास खण्डों में लागू किया गया। वर्ष 80 में भारत सरकार द्वारा गठित कार्यकारी दल की सिफारिशों के अनुसार वर्ष 82-83 से मरुस्थलीय 11 जिलों के 85 विकास खण्डों में केवल मरु विकास कार्यक्रम तथा पहाड़ी क्षेत्र के 18 विकास खण्डों में सूखा सम्भावित क्षेत्र कार्यक्रम चलाया जा रहा है।

वर्ष 1981-82 से 1983-84 तक इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 6.92 करोड़ रुपये का विनियोजन किया गया। इस विनियोजन से 4,344 हैक्टेयर क्षेत्र में भू-संरक्षण कार्य, 1,045 मध्यम क्षमता एवं लघु क्षमता के नलकूप लगाये गये, 18 लघु सिंचाई कार्य पूर्ण किये गये जिनकी सिंचाई क्षमता 1095 हैक्टेयर थी। डेयरी विकास के अन्तर्गत एक अवशीतन सयन्त्र लगाया गया। वन विभाग के अन्तर्गत 7,359 हैक्टेयर क्षेत्र में वृक्षारोपण का कार्य किया गया। अनुसूचित जातियों के लिये विशिष्ट योजना संगठन हेतु इस कार्यक्रम के अन्तर्गत इस समयावधि में लगभग 75 लाख रुपये व्यय किये गये जिससे लगभग 1,182 परिवार लाभान्वित हुये।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम 1 अक्टूबर, 1980 से लागू किया गया है। इस कार्यक्रम का उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में बेरोजगार तथा अल्प रोजगार वाले व्यक्तियों के लिये अतिरिक्त रोजगार का सृजन तथा ग्रामीण क्षेत्रों में इस प्रकार की सामुदायिक परिसम्पत्तियों का सृजन किया जाना है जिससे कि ग्रामीण क्षेत्रों में आर्थिक स्थिति में सुधार हो सके एवं ग्रामवासियों के आय-स्रोतों में भी धीरे-धीरे वृद्धि हो। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये इस कार्यक्रम के अन्तर्गत राजस्थान में उल्लेखनीय कार्य हुआ है एवं विशेषतः पिछले 3 वर्षों में काफी प्रगति हुई है। इसमें ग्रामवासियों एवं पंचायतीराज संस्थाओं का पूरा सहयोग लिया गया है। इसमें ग्रामीण स्तर पर 'शैल्फ ऑफ' प्रोजेक्ट तैयार किये गये एवं उनमें से प्राथमिकता के आधार पर ऐसे कार्यों का चयन किया गया जिनको करवाने में ग्रामवासी रुचि रखते हों एवं जिससे अधिक से अधिक रोजगार सुलभ हो सके। इस कार्यक्रम की क्रियान्विति जिला ग्रामीण विकास अभिकरणों के माध्यम से करवायी जाती है जो निर्माण कार्यों के लिये आवश्यक धनराशि ग्राम पंचायतों को उपलब्ध करवाते हैं तथा इन पंच अपनी देख-रेख में निर्माण कार्य करवाते हैं। सामाजिक-वानिकी कार्यक्रम के अन्तर्गत वन विभाग अपने स्तर पर कार्य करवाता है जिसमें कि मुख्य कार्य सामुदायिक भूमि पर पौध लगाना, नर्सरियों में पौध तैयार करना एवं इन पौधों का इनमें वितरण किया जाना है।

पिछले तीन वर्षों में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 33 करोड़ रूपये की धनराशि व्यय हुई है। कार्यक्रम में मजदूरों को मजदूरी के रूप में न्यूनतम मजदूरी दी जाती है जो कि अकुशल मजदूरों के लिये नौ रूपये प्रतिदिन निर्धारित है। इस मजदूरी का भुगतान नगद एवं खाद्यान्न दोनों रूप में किया जाता है। खाद्यान्न के रूप में 1 किलो गेहूं प्रत्येक श्रमिक को (गेहूं 1–1/2 (डेढ) रूपये प्रति किलो की दर से) दिया जा रहा है। इस प्रकार ग्रामवासियों को सस्ती दर पर अनाज भी इस कार्यक्रम के अन्तर्गत सुलभ हो रहा है। इस कार्यक्रम की विशेष उपलब्धि यह है कि कई स्थानों पर निर्माण कार्यों के लिये भारी मात्रा में जन सहयोग प्राप्त हुआ है जो इस बात का द्योतक है कि इस कार्यक्रम की क्रियान्विति में जन साधारण की विशेष अभिरुचि है।

ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम RLEGP

ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारन्टी कार्यक्रम सितम्बर, 1983 से लागू किया गया है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार के अवसरों का इस रूप में विस्तार करना है कि प्रत्येक भूमिहीन परिवार के एक सदस्य को वर्ष में 100 दिनों के लिये रोजगार के अवसर सुलभ हो जाए तथा साथ ही ग्रामीण

र्थव्यवस्था में सुधार लाने के लिये स्थायी सम्पत्ति का सृजन भी हो। इस कार्यक्रम हेतु संपूर्ण राशि भारत सरकार द्वारा उपलब्ध करायी जाती है। वर्ष 1983-84 के लिये 2 करोड़ 40 लाख रुपये उपलब्ध कराये गये हैं। वर्ष 1984-85 में 12 करोड रूपये मिलने सम्भावित हैं। वर्ष 1984–85 में 4 करोड़ 79 लाख रूपये की न राशि भारत सरकार द्वारा स्वीकृत की जा चुकी है। राज्य सरकार ने इन कार्यों की क्रियान्विति के लिये 31 करोड रुपये की परियोजनाएं बनाकर भारत सरकार को प्रेषित की थी, जिसमें से 18 करोड़ रूपये की परियोजनाओं को स्वीकृति प्राप्त हो चुकी है। इन परियोजनाओं में मुख्य कार्य ग्रामीण सडकों का निर्माण, सामाजिक वानिकी कार्य, भू-संरक्षण कार्य एवं लघु सिंचाई तथा जल-संरक्षण कार्य हैं। सड़क निर्माण कार्य के अन्तर्गत 1,100 कि.मी. सड़कों का निर्माण 985 लाख रुपये के व्यय से करवाया जायेगा। सामाजिक वानिकी कार्यों मे 562 लाख रुपये के व्यय से नंगी पहाड़ियों पर वृक्ष लगाये जाने तथा सामुदायिक भूमि पर पौधे लगाये जाने का कार्य करवाया जायेगा। भू-संरक्षण योजना में मरुस्थलीय क्षेत्रों में खडीन एवं पहाड़ी क्षेत्रों मे एनीकट्स का कार्य किया जा रहा है जिस पर 65 लाख रुपये व्यय होंगे।

बायो गैस कार्यक्रम

यद्यपि राज्य में पिछले 15 वर्षों से बायोगैस सयन्त्र स्थापित करने का कार्य खादी एव ग्रामोद्योग द्वारा किया जाता रहा है तथा इस दौरान उन्होंने राज्य में 400 बायोगैस संयन्त्रो की स्थापना की। राज्य के पशुधन को देखते हुए यह प्रगति नगण्य थी। इस कार्यक्रम को गति प्रदान करने के लिए इसका सचालन राज्य सरकार द्वारा वर्ष 1981 से प्रारम्भ किया गया। अब तक हजारों की संख्या में बायो गैस संयन्त्र स्थापित किये जा चुके हैं और इसकी लोकप्रियता बराबर बढ़ रही है।

संस्थागत व सामुदायिक बायो गैस परियोजनाएँ

इस योजना के अन्तर्गत किसी संस्था या गाव मे एक बड़ा बायो गैस संयन्त्र स्थापित कर समस्त घरो को ईंधन के रूप मे गैस तथा बिजली व पानी आदि की सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। इन सयन्त्रों को चलाने हेतु समस्त लाभान्वित होने वाले कृषक गोबर उपलब्ध कराते हैं।

विशेष कार्यक्रम

यह कार्यक्रम भारत सरकार द्वारा पिछले वर्ष से ही राजस्थान मे चलाया जा रहा है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लघु एवं सीमान्त कृषको को जिनकी गैर कृषि स्रोतों से आय 200.00 रुपये प्रति माह से अधिक नहीं है, कृषि उत्पादन हेतु ऋण एवं अनुदान दिया जाता है।

लघु सिंचाई

कृषकों को नये कुंए खोदने, पुराने कुओं को गहरा करने, ट्यूब वैल्स, पुराने

कुओं की मरम्मत, रहट, पम्पसैट, इलेक्ट्रिक मोटर, डीजल, इंजिन, टैंकों, कुओं एवं तालाबों को गहरा करने व तालाब बनाने के लिए सहायता दी जाती है। इसके अन्तर्गत सामुदायिक सिंचाई कार्य के लिये अनुदान दिया जाता है।

वृक्षारोपण

इस कार्यक्रम के अन्तर्गत फलदार वृक्ष तथा ईंधन के उपयोग के लिये मकानों के वृक्ष लगाने हेतु अनुदान दिये जाते हैं। इसके अन्तर्गत खेतों की मेड, नालों के किनारे तथा खेतों के उन भागों में जहां खेती नहीं हो सकती है, वृक्षारोपण के लिये अनुदान दिया जाता है।

भूमि विकास

भूमि विकास कार्य जो लघु एवं सीमान्त कृषक के खेत पर स्थानीय व तक-नीकी परिधि मे आर्थिक रूप से उपयुक्त है, ऋण व अनुदान की सुविधा मुहैया करा कर इस प्रकार के कृषको को लाभान्वित करना है।

मिनिकिट्स

बीज एवं खाद के मिनिकिट्स लघु एवं सीमान्त कृषको को बांटे जाते जिससे उनके खेतों में अधिक उपज हो सके।

इस कार्यक्रम मे लघु कृषकों को 25 प्रतिशत, सीमान्त कृषको को 33 प्रतिशत एवं अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को 50 प्रतिशत अनुदान दिया जाता है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत इस वर्ष 9.80 लाख रुपये अनुदान के रूप मे खर्च किये जायेंगे एवं 25 करोड़ रुपये का ऋण दिया जायेगा।

14

अनुसूचित जाति-जनजाति कल्याण की योजनाएं

राजस्थान में गरीबी आर्थिक ही नही सामाजिक भी है। परम्परा से चले आ रहे धार्मिक अंधविश्वासों, आर्थिक विषमताओं, जातिगत भेदभावो और सामाजिक कुरीतियों का सीधा दुष्परिणाम जनसंख्या के उस भाग को अधिक भोगना पड़ा है जिसको अनुसूचित जाति और अनुसूचित जनजाति के नाम से सम्बोधित किया जाता है। ये लोग सदियों से पिछड़े रहे है। जनसख्या का यह भाग सदैव से आर्थिक शोषण और सामाजिक उत्पीड़न का शिकार रहा है। इनके परिवार सामान्यत: गरीबी की रेखा से नीचे ही रहे हैं।

1981 की जनगणना के अनुसार राज्य की कुल जन संख्या 342.62 लाख है। जिसमें से 58.36 लाख व्यक्ति अनुसूचित जाति के है। यह राज्य की कुल जनसंख्या का 17.04 प्रतिशत है। इनमे से 82.05 प्रतिशत व्यक्ति ग्रामीण क्षेत्र मे एवं 17.95 प्रतिशत व्यक्ति नगरीय क्षेत्र में निवास करते है। वर्ष 1981 की जनसंख्या के आधार पर राज्य की जिलेवार जनसंख्या का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि कुल 27 जिलो में से 9 जिले ऐसे हैं जहां अनुसूचित जाति के व्यक्ति अधिक संख्या में निवास करते हैं जो राज्य की कुल अनुसूचित जाति की जनसंख्या का 52 प्रतिशत हैं।

यद्यपि अनुसूचित जाति की जनसंख्या कुल राज्य की जनसंख्या का लगभग छठा भाग है किन्तु गरीबी की रेखा के नीचे जीवनयापन करने वालों में इनकी संख्या बहुत अधिक है और ये लोग ज्यादातर ऐसे व्यक्ति हैं जो गरीबतम तबके में आते हैं। इन जातियों के अधिकांश व्यक्ति चर्म उद्योग, बुनाई का कार्य, कृषि एवं कृषि मजदूरी तथा अन्य कम आमदनी वाले पारम्परिक व्यवसायों पर आश्रित हैं। मैला ढोने का कार्य तथा सफाई का कार्य पूर्णतया अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के द्वारा ही किया जाता है। इसी प्रकार शहरी क्षेत्र में ठेला चलाने वाले, रिक्शा चलाने वाले और बैलगाड़ी चलाने वाले तथा हड्डियों का कार्य करने वाले भी अधिकतर

.त क । य लोग ऐसे व्यवसायों पर आश्रित हैं जिनकी आमदनी कुओं की मरम्मत से बहुत कम है, जो उनके जीवन-यापन के लिये पर्याप्त नहीं है। तालाबों इन जातियों के व्यक्तियों को यह भी असुविधा है कि इनकी साक्षरता दर अन्तर्राष्ट्रीय नीची है और अनपढ़ होने के कारण इन्हें व्यवसाय/सरकारी नौकरी प्राप्त करने में कठिनाई आती है। 1981 की जनगणना के अनुसार सामान्य साक्षरता दर 24.38 के मुकाबले अनुसूचित जाति के व्यक्तियों में साक्षरता केवल 14.04 प्रतिशत ही है। इन जातियों की महिलाओं में तो यह दर और भी नीची है जो केवल 2.69 प्रतिशत है, जबकि सामान्य महिला साक्षरता दर 11.44 प्रतिशत है।

अनुमान लगाया गया है कि राज्य में अनुसूचित जातियों के लगभग 11 लाख परिवार है। इनमें से करीब 10 लाख परिवार गरीबी की सीमा रेखा से नीचे का जीवन-यापन कर रहे हैं। इन परिवारों को गरीबी की सीमा रेखा से ऊपर उठाने हेतु एक समयबद्ध कार्यक्रम तैयार किया गया और यह तय किया गया कि 5 लाख परिवारों को छठी पंचवर्षीय योजना के दौरान लाभ पहुंचाया जावे।

अतः लोक कल्याणकारी राज्य में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जनजाति के लोगों की आर्थिक स्थिति को ऊंचा उठाने, उनका शैक्षणिक विकास करने और उनमे सामाजिक नवचेतना लाने के उद्देश्य से राजस्थान में तीनों मोर्चों पर अनेक महत्त्वपूर्ण योजनाएं और कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं। राज्य में गत तीन वर्षों में इन लोगों के लिए विकास के अपरिमित अवसर और साधन उपलब्ध कराये गये हैं। अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के आर्थिक पिछड़ेपन को दूर करने के लिए विशिष्ट संघटक योजना और विशेष केन्द्रीय सहायता के तहत तथा राजस्थान अनुसूचित जाति विकास सहकारी निगम द्वारा संचालित योजनाएं और राज्य के समाज कल्याण विभाग द्वारा संचालित छात्रावास और छात्रवृत्ति प्रमुख कार्य हैं।

राज्य सरकार अनुसूचित जातियों की खुशहाली, उनके विकास और कल्याण के लिए प्राथमिकता के आधार पर प्रयत्न और कार्य कर रही है। योजना प्रक्रिया में भागीदारी के फलस्वरूप इनमें एक नवीन सामाजिक दृष्टिकोण और चेतना जाग्रत हुई है।

आर्थिक नियोजन

राज्य योजना के अन्तर्गत व्यय की जाने वाली राशि में से एक निश्चित भाग केवल अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के कल्याण के लिए व्यय करने हेतु निर्धारित कर दिया जाता है ताकि इसका प्रत्यक्ष लाभ इन्हीं व्यक्तियों को प्राप्त हो। इसके अन्तर्गत इनको शिक्षा, पेयजल, बिजली की न्यूनतम आवश्यकताओं की पूर्ति, पारिवारिक आर्थिक विकास, भूमि सुधार, ऋण सुविधायें दिलवाना, गृह एवं ग्रामीण उद्योगों में उत्पादन एवं विपणन की सुविधायें प्रदान करना और अनुसूचित जाति के शिक्षित बेरोजगारों को लाभकारी रोजगार दिलाने के अधिक अवसर प्रदान करना

इस योजना के मुख्य कार्य हैं। उपरोक्त उद्देश्यों की पूर्ति के लिए राज्य सरकार द्वारा विभिन्न विभागों की योजनाओं में से अनुसूचित जाति विशिष्ट संघटक योजना हेतु धनराशि निर्धारित कर निश्चित किया गया है कि विशेष संघटक योजना के लिए निर्धारित वित्तीय प्रावधान केवल अनुसूचित जाति के लिए ही खर्च किया जावे और इसका अन्य कहीं उपयोग नहीं हो। छठी पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत विशिष्ट संघटक योजना पर 227.36 करोड़ रुपया व्यय किया जाना प्रस्तावित है। योजना के प्रथम वर्ष 1980-81 में इस पर केवल 29.55 करोड़ रुपये व्यय किए गए जबकि वर्ष 1981-82 में 37.78 करोड़ रुपये, वर्ष 1982-83 में 40.12 करोड़ रुपये एवं वर्ष 1983-84 में 42.12 करोड़ रुपये व्यय किए जा चुके है। वर्ष 1984 85 में 48.54 करोड़ रुपये व्यय किए गये है।

विशेष केन्द्रीय सहायता

अनुसूचित जाति के विकास में रही कमी को पूरा करने व विभिन्न योजनाओं का पूरा लाभ दिलाने की दृष्टि से भारत सरकार द्वारा विशेष केन्द्रीय सहायता के रूप में भी धन आवंटित किया जाता है। भारत सरकार से राजस्थान के लिए वर्ष 1980-81 में 528.00 लाख, वर्ष 1981-82 मे 503.79 लाख, वर्ष 1982-83 में 634.98 लाख तथा वर्ष 1983-84 मे 744.21 लाख रुपया प्राप्त हुआ।

इस राशि का व्यय राजस्थान अनुसूचित जाति विकास सहकारी निगम लि० के माध्यम से अनुसूचित जाति के परिवारों की आय में बढ़ोतरी के आर्थिक कार्यक्रम बनाकर किया गया है। इन कार्यक्रमों से लगभग पाँच लाख परिवारों को लाभ पहुंचाया जायेगा।

विकास निगम के कार्य-कलाप

राजस्थान अनुसूचित जाति विकास सहकारी निगम की स्थापना मार्च 1980 में इस उद्देश्य की पूर्ति हेतु की गई कि निगम के माध्यम से अनुसूचित जाति के परिवारो का आर्थिक उत्थान त्वरित गति से किया जा सके। इस उद्देश्य की पूर्ति में निगम सफल रहा है। निगम के माध्यम से अनुसूचित जातियों के व्यक्तियों हेतु निम्नांकित कल्याणकारी कार्यक्रम चलाये जा रहे है।

अनुसूचित जाति के सदस्यों को प्राथमिक कृषक ऋण दात्री सहकारी समिति के सदस्य बनाने हेतु 250/–रुपये तक का ऋण केन्द्रीय सहकारी बैंकों से उपलब्ध कराया जाता है। इस पर केवल 4 प्रतिशत ब्याज लिया जाता है तथा इससे खेती के कार्य हेतु बैंक द्वारा अल्प/मध्यकालीन ऋण प्राप्त किया जा सकता है अब अनुसूचित जाति के व्यक्ति बिना कोई स्वयं की राशि लगाये बैंक से ऋण प्राप्त कर सकता है।

प्राथमिक सहकारी भूमि विकास बैंक के सदस्य बनाने हेतु निगम द्वारा

500/-रुपये तक का हिस्सा राशि ऋण दिया जाता है। इस ऋण पर भी 4 प्रति-शत ब्याज लिया जाता है तथा कृषि के उद्देश्यों की पूर्ति हेतु बिना कोई [illegible] की पूंजी लगाये अनुसूचित जाति के व्यक्ति इससे 10,000/-रुपये तक का ऋण प्राप्त कर सकता है।

निगम द्वारा राष्ट्रीयकृत बैंकों के माध्यम से अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को मार्जिन मनी ऋण उपलब्ध कराने की योजना प्रारम्भ की जा रही है। इस योजना के अन्तर्गत 25,000/- रुपये तक की लागत के ऐसे धन्धे, जिनसे उनकी आय में वृद्धि हो, 20 प्रतिशत तथा अधिकतम 5,000/- रुपये की राशि तक मार्जिन मनी ऋण 4 प्रतिशत ब्याज पर उपलब्ध कराया जाता है। शेष 80 प्रतिशत ऋण राशि बैंकों द्वारा सामान्य ब्याज पर उपलब्ध कराई जाती है। यह योजना बैंक आफ बड़ोदा द्वारा अजमेर में प्रारम्भ की गई है।

अनुसूचित जाति के परिवारों को अधिक सस्ता वित्त दिलाने के उद्देश्य से एकीकृत ग्रामीण विकास योजना के साथ समन्वय करके निगम अनुसूचित जाति के परिवारों को 50 प्रतिशत तक की राशि अनुदान के रूप में उपलब्ध कराता है। शेष राशि ऋण के रूप में प्राप्त होती है। यह राशि छोटे एवम् सीमान्त कृषकों एवं भूमिहीन मजदूरों को ही देय है तथा अधिकतम 50 प्रतिशत अथवा 5,000/- रुपये की सीमा तक दी जा सकती है। एकीकृत ग्रामीण विकास के अन्तर्गत अनुदान व 50 प्रतिशत का अन्तर निगम द्वारा वहन किया जाता है।

शहरी क्षेत्र में अनुसूचित जाति के उन परिवारों को, जिनकी आय [illegible] स्रोतों से 6,000/- रुपये वार्षिक से कम है, आय बढ़ाने वाले सभी लघु [illegible] उद्योग-धन्धों, व्यवसायों, पशु-पालन आदि पर 50 प्रतिशत अनुदान के रूप में, अधि-कतम 5,000/-रुपये तक दिये जाते है। यह अनुदान अनुसूचित जाति वि[illegible] सहकारी निगम द्वारा जिला ग्रामीण विकास अभिकरण के माध्यम से वितरित कि[illegible] जाता है।

अनुसूचित जाति के गरीब व्यक्तियों को प्राथमिकता के आधार पर 30[illegible] ऑटो-रिक्शा उपलब्ध कराये जाने की योजना प्रारम्भ की गई है। राजस्थान [illegible] विभिन्न जिलों में प्राथमिकता के आधार पर ऑटो-रिक्शा उपलब्ध कराये जा रहे हैं। कार्यक्रम के अन्तर्गत कुल लागत में से 5000/- रुपये अनुदान के रूप में व शेष बैंक ऋण के रूप में उपलब्ध कराये जाते हैं।

अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को विभिन्न सहकारी समितियों के हिस्से [illegible] करने हेतु 500/- रुपये तक अनुदान दिया जाता है। अनुदान उन सभी को देय है जिनके पास 8 से कम हिस्से है तथा अनुदान प्राप्त करने के पश्चात् उनके पास हु[illegible] हिस्से आठ से अधिक नहीं हों।

राजस्थान विद्युत मण्डल द्वारा अनुसूचित जाति के लघु एवं सीमान्त कृषक

को अतिरिक्त खम्भे लगाने हेतु 3,000/– रुपये तक का अनुदान देय है। इसके अतिरिक्त 25 हार्स पावर की क्षमता तक पावर कनेक्शन के लिए सिर्फ 10/– रुपये की राशि जमा कराने पर शेष खर्चा राशि निगम द्वारा वहन की जाती है।

निगम की वृक्ष विकास-योजना के अन्तर्गत अनुसूचित जाति के लघु एवं सीमान्त कृषकों को पेड़ लगाने के कार्य को बढ़ावा देने के उद्देश्य से यह योजना तैयार की गई है। इसके अन्तर्गत प्रत्येक जीवित वृक्ष के लिए पहले, दूसरे व तीसरे वर्ष में क्रमशः 5, 3 व 2 रुपये का अनुदान दिया जाता है। इसके अतिरिक्त प्रत्येक पौधे की ढलाई के उद्देश्य से 25 पैसा भी दिया जाता है।

राज्य के विभिन्न कस्बों एवं शहरों में अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को दुकानें उपलब्ध होना एक कठिन कार्य है। निगम द्वारा इन व्यक्तियों के स्थायी आर्थिक विकास की योजना प्रारम्भ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत अनुसूचित-जाति के व्यक्तियों को 10,000/– रुपये की लागत तक की दुकान उपलब्ध कराई जाती है। इसमें से 5,000/–रुपये की राशि निगम द्वारा अनुदान के रूप में तथा शेष राशि ऋण के रूप में व्यावसायिक बैंकों से उपलब्ध कराई जाती है।

हाथ करघा प्रशिक्षण एवं कॉमन फैसिलिटी सेन्टर

निगम द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को सामान्य सुविधा एवं तकनीकी प्रशिक्षण देने के उद्देश्य से 7 केन्द्र स्थापित करने की योजना है। इनमें से भीलवाड़ा, मथानिया, जयपुर, बयाना व अमरसर के केन्द्र प्रारम्भ हो गये हैं।

मानपुर–मचेड़ी एवं भीनमाल योजना

चर्म उद्योग में लगे हुए अनुसूचित जाति के परिवारों के आर्थिक उत्थान हेतु मानपुर-मचेड़ी में एक केन्द्र स्थापित करना प्रस्तावित है, जिसमें वहां के अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को अपने बनाये माल के विक्रय एवं जूते आदि बनाने की सुविधा प्राप्त हो सकेगी। योजना की अनुमानित लागत 16.95 लाख रुपये की है। साथ ही भीनमाल में चर्म प्रशिक्षण एवं कॉमन फैसिलिटी सेन्टर स्थापित करना प्रस्तावित है जिनके द्वारा इन उद्योगों में लगे हुए व्यक्तियों को तकनीकी प्रशिक्षण एवं उत्पादन सुविधा उपलब्ध कराकर उनकी कार्य पद्धति में सुधार लाया जावेगा ताकि उनकी आर्थिक स्थिति सुधर सके।

निगम द्वारा कुंए गहरे करने, सहकारी समितियों की स्थापना, राजस्थान ग्रामीण औद्योगिक विपणन संस्थाओं की स्थापना, अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को जाल एवं मछली पकड़ने के उपकरण वितरण करने की योजना, अनुसूचित जाति के बुनकरों को शेड उपलब्ध कराने की योजना तथा कृषि सम्बन्धी सिंचाई की नई योजनाएं भी बनाई गई हैं।

स्वरोजगार का प्रशिक्षण

शहरी क्षेत्र में अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को स्वरोजगार हेतु प्रशिक्षण

दिया जाता है जिसमें प्रशिक्षार्थी को 50 रु. माहवार वृत्तिका दी जाती है। साथ ही प्रशिक्षण देने वाले को तथा कच्चे माल हेतु 50–50 रुपये अनुदान भी दिया जाता है। प्रशिक्षण अवधि सामान्यतया 6 माह की होती है। प्रशिक्षण की समाप्ति पर प्रशिक्षणार्थी को एक औजारों का किट दिया जाता है।

शार्टहैण्ड एवं टाईपिंग में प्रशिक्षण

रोजगार एवं स्वरोजगार के लिए टाईपिंग तथा शार्टहैण्ड लेखन का ज्ञान बहुत उपयोगी है। यह प्रशिक्षण निगम द्वारा चलाया जाता है जिसके अन्तर्गत प्रशिक्षणार्थी को वृत्तिका दी जाती है एवं फीस आदि का समस्त खर्चा भी वहन किया जाता है।

औद्योगिक प्रशिक्षण

औद्योगिक प्रशिक्षण के बाद विभिन्न कारखानों में रोजगार मिलने के अच्छे अवसर रहते हैं। निगम द्वारा राज्य के 9 औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में छात्र छात्रों को दो वर्ष का प्रशिक्षण दिया जा रहा है। प्रशिक्षण निःशुल्क दिया जाता है तथा प्रत्येक प्रशिक्षणार्थी को 125 रुपये माहवार वृत्तिका भी दी जाती है।

फूड-क्राफ्ट प्रशिक्षण

फूड-क्राफ्ट प्रशिक्षण संस्थान, जयपुर में यह प्रशिक्षण चलाया जा रहा है तथा अनुसूचित जाति के प्रशिक्षणार्थियों को होटल रिसेप्शन, बेकरी, कुकरी आदि में निःशुल्क प्रशिक्षण दिया जा रहा है। प्रशिक्षण काल के दौरान 125 रुपये माहवार की वृत्तिका व वस्त्र आदि के लिए अनुदान भी दिया जाता है।

बी. एड. प्रशिक्षण

अनुसूचित जाति के स्नातक एवं स्नातकोत्तर योग्यता रखने वाले छात्र छात्राओं को यह प्रशिक्षण पूर्व में राजस्थान के जोधपुर, उदयपुर, सरदार शहर एवं जयपुर स्थित चार महाविद्यालयों में दिया जाता था। वर्ष 1983–84 में कोटा, अजमेर, हिण्डौन तथा श्रीगंगानगर के महाविद्यालयों में भी यह सुविधा उपलब्ध करा दी गई है।

ए. एन. एम. नर्स प्रशिक्षण

राज्य में 18 स्थानों पर अनुसूचित जाति की महिलाओं को $1\frac{1}{2}$ से 2 वर्ष की अवधि का निःशुल्क प्रशिक्षण उपलब्ध कराया जा रहा है। चिकित्सा विभाग द्वारा देय वृत्तिका के अतिरिक्त 50 रुपये माहवार वृत्तिका एवं पोशाक तथा पुस्तकें आदि के लिए 400 रुपया अनुदान निगम द्वारा भी उपलब्ध कराया जाता है।

उद्योग धन्धों में प्रशिक्षण एवं रोजगार

सार्वजनिक, संयुक्त व निजी उद्योगों में अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को प्रशिक्षण दिलवाने की योजना चलाई जा रही है। प्रशिक्षण अवधि एक वर्ष की तथा प्रशिक्षण के पश्चात् उनको उसी उद्योग धन्धे में रोजगार दिये जाने का प्रावधान है। प्रशिक्षणार्थियों को 125 से 250 रुपये माहवार तक वृत्तिका दी जाती है।

वकीलों को प्रशिक्षण

अनुसूचित जाति के पंजीकृत वकीलों को प्रशिक्षण दिया जा रहा है। इस प्रशिक्षण में पुस्तकों एवं फर्नीचर के लिए अनुदान देय है। साथ ही 200 से 400 रुपये माहवार तक की वृत्तिका भी दी जाती है। प्रशिक्षण की अवधि एक से दो वर्ष है।

ड्राईविंग प्रशिक्षण

तकनीकी विकास के कारण सामानों की ढुलाई एवं समाज के विभिन्न तबकों द्वारा यात्रा आदि में हल्के तथा भारी वाहनों का बहुत अधिक उपयोग किया जाता है। आटो रिक्शा, टैक्सी अथवा अन्य कोई भारी वाहन चलाने वाले लोग अच्छी आय प्राप्त कर लेते हैं इसी दृष्टि से निगम द्वारा अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को ड्राईविंग प्रशिक्षण दिलाने की योजना प्रारम्भ की गई है। इस योजना के अन्तर्गत अनुसूचित जाति के व्यक्तियों द्वारा सामान्य ड्राईविंग सीखने हेतु फीस आदि का खर्चा निगम द्वारा वहन किया जाता है। साथ ही दक्षता हासिल करने तक वाहन पर अभ्यास करने का अवसर प्राप्त होने के लिए 6 माह की अवधि तक स्टाईपेण्ड भी दिया जाता है। निगम यह व्यवस्था भी करता है कि प्रशिक्षणार्थी को अभ्यास करने के लिए वाहन मिल पाए।

एस. टी. सी. प्रशिक्षण

निगम द्वारा अध्यापकों के पदों पर अनुसूचित जाति का अतिरिक्त कोटा पूरा करने के उद्देश्य से 720 अनुसूचित जाति के छात्र/छात्राओं को एस. टी. सी. प्रशिक्षण उपलब्ध कराया जा रहा है। इस प्रशिक्षण में प्रशिक्षणार्थियों को छात्रावास की सुविधा उपलब्ध कराई जा रही है तथा फीस आदि के समस्त व्यय के पुनर्भरण के अलावा 125 रुपये माहवार की दर से वृत्तिका भी दी जाती है।

निगम द्वारा पुस्तकालय विज्ञान, पंपऑपरेटर प्रशिक्षण तथा कम्प्यूटर कार्यक्रम, टेलीफोन ऑपरेटर प्रशिक्षण, स्टाक मैन प्रशिक्षण, सेनेटरी इन्सपेक्टर प्रशिक्षण, बैंकों, रेल, डाक तार विभाग तथा संघ लोक सेवा आयोग की भर्ती की परीक्षाओं की तैयारी कराने की योजना भी प्रस्तावित है जिसे शीघ्र ही प्रारम्भ कर दिया जावेगा।

ईंट भट्टा योजना

अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को आर्थिक लाभ पहुंचाने के उद्देश्य से निगम ने शहरी क्षेत्रों में ईंट भट्टा की 30 इकाइयां स्थापित करने की योजना बनाई है। ईंट भट्टा की प्रत्येक इकाई की लागत अनुमानतः 7.65 लाख रुपया होगी तथा प्रत्येक ऐसी सहकारी समिति के सदस्यों की न्यूनतम संख्या 20 होगी।

जनता सिनेमा योजना

अनुसूचित जाति के व्यक्तियों के आर्थिक विकास के लिए निगम ने वर्ष

84-85 में 27 जनता सिनेमा स्थापित करने का निर्णय लिया है। ऐसे एक सिने घर की लागत अनुमानतः 7 65 लाख रुपया तथा सहकारी समिति की सदस्य संख्या 18–20 के लगभग होगी।

धागा बैंक की स्थापना

निगम द्वारा राज्य में धागा बैंक की स्थापना 20.00 लाख रुपये की लागत से की गई है। जिसमें अनुसूचित जाति के बुनकर परिवारों के व्यक्तियों को धागा उपलब्ध कराया जाता है। इस योजना का लाभ बुनकर जाति के व्यक्ति उठाते हैं।

कृषि भूमि का आवंटन

ग्रामीण क्षेत्रों में रहने वाले अनुसूचित जाति के परिवारों के पास कृषि हेतु पर्याप्त भूमि उपलब्ध नहीं होने के कारण ये लोग अधिकतर कृषि मजदूरी पर निर्भर हैं। अतः इनकी आर्थिक दशा सुधारने में कृषि भूमि का आवंटन एक महत्वपूर्ण कार्य है। इसी बात को ध्यान में रखते हुए राज्य सरकार ने उपलब्ध भूमि को इन व्यक्तियों में आवंटित करने का कार्य हाथ में लिया। ऐसे नियम बनाये गये हैं कि इन व्यक्तियों की भूमि को अन्य (सवर्ण) व्यक्ति बेचान नहीं करवा सकते, रहन या किसी अन्य प्रकार से प्राप्त नहीं कर सकते।

आवासीय भू-खण्डों का आवंटन

इन जातियों के अधिकांश व्यक्तियों के पास आवासीय भूखण्ड उपलब्ध नहीं थे। यह अनुभव किया गया कि जब तक इन व्यक्तियों को गांव के आबादी क्षेत्र में भू-खण्डों का आवंटन नहीं किया जायगा तब तक ये व्यक्ति गांव के अन्य व्यक्तियों के साथ मिलजुल कर नहीं रह सकते व इनको समाज में बराबरी का दर्जा हासिल नहीं हो सकता। अतः राज्य सरकार ने ग्राम पंचायतों को यह निर्देश दिये कि इन व्यक्तियों को मुफ्त आवासीय भू-खण्डों का आवंटन किया जावे।

पंचायत एवं ग्रामीण विकास विभाग द्वारा इन व्यक्तियों को भू-खण्ड हेतु 750/-रूपये का अनुदान भी स्वीकृत किया जाता है।

भवन निर्माण के लिये गठित की गयी समितियों द्वारा अनुसूचित जाति के सदस्यों को राजस्थान राज्य गृह निर्माण वित्तीय सहकारी समिति लि० जयपुर द्वारा ऋण प्रदान किया जाता है। इस ऋण पर ब्याज का पुनर्भरण समाज कल्याण विभाग द्वारा किया जाता है।

आवासीय सुविधा

अनुसूचित जाति के व्यक्तियों को 10,000 रुपये तक की लागत के मकान क्रय करने के लिए विभाग द्वारा अनुदान दिया जाता है। राजस्थान आवासन मण्डल योजना के अन्तर्गत अनुदान यदि प्रार्थी भवन किराया पद्धति के अनुसार क्रय करना चाहता है तो भी प्रार्थी को समाज कल्याण विभाग 750 रुपये की सहायता अनुदान स्वरूप प्रदान करता है। यदि प्रार्थी किसी सरकारी, अर्द्ध सरकारी अथवा ...

ऋण प्राप्त कर अपना निजी मकान बनाना चाहता है तो समाज कल्याण विभाग ऋण दाता, सरकारी या अर्द्धसरकारी संस्था अथवा बैंक को ऋण के पेटे 750 रुपये का भुगतान करता है।

राजस्थान आवासन मण्डल द्वारा 14 प्रतिशत मकान अनुसूचित जाति/जनजाति के आवेदकों के लिए आरक्षित किए जाते हैं।

बस्ती-सुधार कार्यक्रम

प्रायः देखा गया है कि अनुसूचित जाति के व्यक्ति गांव से अलग अपनी बस्तियों में रहते हैं जहां ग्राम में उपलब्ध सुविधायें उनकी बस्तियों में नही होती। राज्य सरकार ने इनके रहन-सहन के स्तर को सुधारने हेतु विशेष प्रयास किए हैं। अनुसूचित जाति विशिष्ट संघटक योजना के अन्तर्गत इनकी बस्तियों में बिजली, पीने का पानी, चिकित्सा आदि सुविधायें उपलब्ध कराने व पर्यावरण सुधार के कार्यक्रम हाथ मे लिए गए हैं ताकि अन्य क्षेत्रों मे उपलब्ध सुविधाओ के समान इन्हे भी बराबर सुविधायें प्राप्त हो सकें। सरकार ने इस ओर विशेष प्रयत्न किए हैं।

इस प्रकार राज्य मे अब तक लगभग 14 हजार हरिजन बस्तियो मे पीने के पानी की सुविधा एवं सात हजार से अधिक हरिजन बस्तियो मे बिजली की सुविधा उपलब्ध कराई गई है।

उक्त सुविधाओं के अतिरिक्त छात्र-छात्राओं को स्कॉलरशिप दिये जाने, विभिन्न तकनीकी और उच्चतर अध्ययन के पाठ्यक्रमो मे प्रवेश के लिए आरक्षण देने और बेरोजगारी भत्ता देने आदि की अनेक योजनाएं क्रियान्वित की जा रही हैं।

जन-जाति कल्याणकारी योजनाएं

राजस्थान भारत के पांच जनजाति-बहुल राज्यों में से एक है। यहा मुख्यतः भील, मीणा, गरासिया, सहरिया, डामोर, कथोड़ी आदि जनजातियां निवास करती हैं। प्रदेश का दक्षिणी भू-भाग जो अरावली पर्वत श्रृंखला की गोद में स्थित है, जनजाति समुदायों का सदियों से परम्परागत आश्रय स्थल रहा है। इस भू-भाग में स्थित बांसवाड़ा, डूंगरपुर, चित्तौडगढ, सिरोही एवं उदयपुर जिलों में बहुत अधिक संख्या में जनजाति परिवार निवास करते हैं। इन पांच जिलो की 23 पंचायत समितियों को मिलाकर सन् 1974 में जनजाति उपयोजना क्षेत्र घोषित किया गया। 19 हजार 571 वर्ग कि. मी. क्षेत्र के विस्तृत जनजाति उपयोजना क्षेत्र में कुल 4409 आबाद गांव हैं। 1981 की जनगणना के अनुसार प्रदेश की कुल जनजाति जनसंख्या 48.13 लाख है जिसमे से 44.03 लाख जनजाति जनसंख्या उपयोजना क्षेत्र की इन 23 पंचायत समितियों में निवास करती है। जनजाति उपयोजना क्षेत्र की कुल जनसंख्या 27.57 लाख में से जनजाति जनसंख्या 66.40 प्रतिशत है, जबकि यह सम्पूर्ण भू-भाग प्रदेश के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 6 प्रतिशत ही है।

इस जनजाति बहुल भू-भाग में साक्षरता का प्रतिशत 1981 की जनगणना के अनुसार 16.38 है। इस भू-भाग मे सर्वाधिक साक्षरता दर 20.97 प्रतिशत

प्रतापगढ़ क्षेत्र में है जबकि सबसे कम 10.03 प्रतिशत आबू रोड क्षेत्र की है। कुल जनसंख्या में से 28.38 प्रतिशत कार्यशील है व 71.62 प्रतिशत आर्थिक क्रियाओं में अपनी सक्रिय भूमिका अदा नहीं करती है। कार्यशील जन संख्या में महिलाओं की तुलना में पुरुषों का सापेक्षिक प्रतिशत अधिक है जो इस तथ्य से स्पष्ट है कि क्षेत्र की कुल पुरुष जनसंख्या का 49.82 प्रतिशत और महिला जनसंख्या का 6.85 प्रतिशत ही कार्यशील जनसंख्या की श्रेणी में आता है।

जनजाति उपयोजना क्षेत्र में जनसंख्या का औसत घनत्व 143 व्यक्ति प्रति वर्ग किलोमीटर है। क्षेत्र की जनजातियों का जीवन बहुत ही संघर्ष का रहा है और अधिकांश परिवार सामान्य से भी निम्न जीवन स्तर बिताने को मजबूर हैं। सम्पूर्ण क्षेत्र पहाड़ी भू-भाग होने के कारण कृषि योग्य भूमि कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का मात्र 24.90 प्रतिशत ही है जबकि सम्पूर्ण राजस्थान में कृषि योग्य क्षेत्र राज्य के कुल भौगोलिक क्षेत्रफल का 43 प्रतिशत है। क्षेत्र का 24.88 प्रतिशत भू-भाग वन भूमि के अन्तर्गत आता है। जनजाति उपयोजना क्षेत्र का विशुद्ध कृषिजन्य क्षेत्र 6.24 लाख हैक्टेयर है जिसमें से 29.65 प्रतिशत 1.85 लाख हैक्टयर भूमि द्वि-फसलीय क्षेत्र के अन्तर्गत आती है। मक्का, चना, गेहूं, जौ और दलहन इस क्षेत्र की प्रमुख फसलें है जो कुल कृषि योग्य भूमि के 80 प्रतिशत भू-भाग पर बोयी जाती है।

कृषि जोत का आकार अत्यन्त छोटा होने तथा खेतों के पहाड़ी ढलानों पर अवस्थित होने के कारण, यन्त्रीकृत कृषि का अभाव होने, परम्परागत उद्योग धन्धों अथवा दस्तकारी की अनुपलब्धता, जटिल यातायात परिस्थितियां, सिंचाई व पेयजल का अभाव, अशिक्षा, कुपोषण, सामाजिक कुरीतियां, अन्धविश्वास, आर्थिक शोषण, पहाड़ी-निर्जन क्षेत्रों में आवास, जंगलों की कटाई के फलस्वरूप वनों का घटता आकार आदि इस क्षेत्र की मूलभूत समस्याएं रही हैं। इन परिस्थितियों के कारण इस क्षेत्र का मानवीय संसाधन उत्पादन की दृष्टि से कुशल एवं अर्द्ध कुशल श्रमिकों की श्रेणी में नहीं आ पाया है और वैकल्पिक उत्पादन सम्भावनाओं को विकसित नहीं कर पाया है।

द्वितीय पंचवर्षीय योजना काल से ही जनजातियों के आर्थिक उत्थान के लिए विभिन्न कल्याण कार्यक्रम इस क्षेत्र में चलाये जा रहे हैं। द्वितीय, तृतीय एवं चतुर्थ पंच वर्षीय योजना अवधि में जनजाति उत्थान कार्यक्रमों पर क्रमशः 553.90 लाख रुपये, 932.50 लाख रुपये तथा 1064.18 लाख रुपये व्यय किये गये। इस अवधि के दौरान राज्य के जनजाति समुदायों के आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक स्तर में सुधार लाने के लिए जनजाति बहुल क्षेत्रों में विशेष बहुद्देशीय प्रखण्ड विकास खण्डों की स्थापना की गयी तथा क्षेत्रीय विकास एवं व्यक्तिगत लाभ के कार्यक्रमों को प्रारम्भ कराया गया।

देश की पाँचवी पंचवर्षीय योजना के निर्माण के समय विभिन्न अध्ययन दलों ने यह राय व्यक्त की कि द्वितीय पंचवर्षीय योजना से चतुर्थ पंचवर्षीय योजना तक की अवधि में जनजाति उत्थान कार्यक्रम की उपलब्धियाँ आशानुरूप नहीं रहीं क्योंकि इन योजनाओं की अवधि में इतनी राशि उपलब्ध नहीं करवायी जा सकी जिससे इन पिछड़े हुए क्षेत्रों को विकास के एक न्यूनतम स्तर तक लाया जा सके। अतः पाँचवी पंचवर्षीय योजना अवधि में एक नयी व्यूह रचना तैयार की गयी जिसके अन्तर्गत प्रदेश में 1974-75 में जनजाति उपयोजना क्षेत्र, 1978-79 में परिवर्तित क्षेत्रीय विकास उपागमन (माडा) क्षेत्रों का निर्माण और 1977-78 में सहरिया विकास परियोजना क्षेत्र बनाये गये।

संरक्षणात्मक कानून एवं सुविधाएं

भारतीय संविधान की पाँचवी अनुसूचि में यह स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है कि सरकार अनुसूचित जनजातियों और अनुसूचित जातियों के हितों की रक्षा करने और उन्हें उन्नति के लिए अवसर प्रदान करने के उद्देश्य से विशेष संरक्षणात्मक कानून एवं अधिनियम पारित करेगी। इन संवैधानिक व्यवस्था के अन्तर्गत राजस्थान सरकार ने समय-समय पर जो अधिनियम पारित किये उनका विवरण निम्नानुसार है.—

राजस्थान काश्तकारी अधिनियम, 1955

इस अधिनियम की धारा 42 के अन्तर्गत जनजाति कृषकों से गैर जनजाति व्यक्तियों को भेंट, विक्रय आदि तरीकों से भूमि के हस्तांतरण पर रोक लगाकर जनजाति कृषकों को भू-स्वामित्व का संरक्षण प्रदान किया गया है। अधिनियम की धारा 46 (ए) जनजाति कृषक की भूमि आंशिक रूप से या पूर्ण रूप से किराये पर गैर जनजाति व्यक्ति के पास रखने तथा धारा 49 के अन्तर्गत जनजाति काश्तकार की भूमि गैर जनजाति काश्तकार की भूमि से विनिमय पर भी रोक लगा दी गयी है।

भू-राजस्व नियम, 1970

राजस्थान भू-राजस्व (कृषि के लिए भू-आवंटन) नियम, 1970 के अन्तर्गत भूमिहीन लोगों को भू-आवंटन करने की प्रक्रिया में अनुसूचित जाति/जनजाति के भूमिहीन परिवारों को विशेष वरीयता प्रदान करने का प्रावधान किया गया है।

ऋण ग्रस्तता से मुक्ति संबंधी अधिनियम

राज्य सरकार ने 1957 में राजस्थान रिलीफ ऑफ इनडेटेड एक्ट पारित किया है जिसके अन्तर्गत अनुसूचित जातियों एवं जनजातियों को कर्जों से सुरक्षा प्रदान करने का प्रावधान किया गया है। राजस्थान अनुसूचित ऋणी अधिनियम, 1976 की धारा 4 के अन्तर्गत 2400 रुपये प्रति वर्ष से कम आय वाले जनजातियों के सभी ऋणी व्यक्तियों को ऋण एवं ब्याज की पूर्ण राशि से मुक्त करने का

प्रावधान किया गया है। राजस्थान रिलीफ ऑफ इनडेटेड एक्ट, 1957 में संशोधन कर राज्य सरकार ने ऋण मुक्ति की सुविधा अनुसूचित जाति और जनजाति के समस्त परिवारों को प्रदान की है।

आबकारी नीति

जनजाति परिवारों को शराब के निजी ठेकेदारों के शोषण से बचाने के लिए राज्य सरकार ने एक विशेष आबकारी नीति की घोषणा की है जिसमे जनजाति [illegible] ...जातियों को ठेके [illegible] ...सुपद, [illegible] ...बिक्री [illegible] दुकानो से ही की जा सकेगी।

न्यूनतम मजदूरी अधिनियम

जनजाति क्षेत्रों मे अधिकांश परिवार वर्ष के 4 या 6 माह तक अपने जीवन-यापन के लिए मजदूरी पर निर्भर हैं। यहाँ तक कि प्रति वर्ष राज्य सरकार द्वारा चलाये जाने वाले राहत कार्यों पर हजारों की संख्या में जनजाति श्रमिकों को काम पर लगाया जाता है। राज्य के वर्तमान मुख्यमंत्री ने एक क्रांतिकारी निर्णय लेकर राहत कार्यों पर लगे श्रमिकों को भी न्यूनतम मजदूरी भुगतान करने का कानून पारित किया है जिससे जनजाति परिवारों को लाभ पहुंचा है।

वन नीति

आदिवासी समुदाय और वन सदियों से एक दूसरे से अभिन्न रूप से जुड़े हुए हैं और कुछ वर्षो पूर्व तक जनजाति परिवारों का सम्पूर्ण आर्थिक जीवन वनों पर ही आधारित था। जनजाति परविारों की आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए राज्य सरकार ने यह व्यवस्था की है कि स्व-उपयोग के लिए प्रत्येक जनजाति परिवार को वनों से 15 घन फुट लकडी और प्रति तीन वर्ष में आवास गृह निर्माण के लिए 168 घन फुट इमारती लकडी, ईंधन के लिए जलाऊ लकड़ी और मवेशियों के लिए घास निःशुल्क ले जाने की सुविधा उपलब्ध हो सके।

राजकीय सेवाओं में आरक्षण

राज्य सरकार के सभी विभागो और राजकीय उपक्रमों तथा स्वायत्तशासी संस्थाओं मे प्रत्येक सवर्ग मे 12 प्रतिशत स्थान जनजाति आशार्थियों के लिए आरक्षित हैं। यह भी व्यवस्था की गयी है कि किसी वर्ष विशेष मे इन आरक्षित पदों पर जनजाति आशार्थी उपलब्ध न हो तो रिक्त पदों को अगले वर्षों मे भरा जायेगा। संविधान के अनुच्छेद 15 (4) के अन्तर्गत विभिन्न तकनीकी एवं व्यवसायिक शिक्षण संस्थाओं मे कम से कम 5 प्रतिशत स्थान जनजाति आशार्थियो के लिए आरक्षित रखे गये हैं।

जनजाति उपयोजना क्षेत्र का विकास

जनजाति उपयोजना क्षेत्र में विकास कार्यक्रमों के सुचारु रूप से संचालन मे प्रभाव पूर्ण समन्वय स्थापित करने के उद्देश्य से 1975 में जनजाति क्षेत्रीय विकास विभाग की अलग से स्थापना की गयी है और 1977 मे विभाग का मुख्यालय उदयपुर मे स्थानान्तरित कर दिया गया है ताकि विभिन्न विकास कार्यक्रमो के क्रियान्वयन, समन्वय और प्रगति की समीक्षा को गति प्रदान की जा सके।

परिवर्तित क्षेत्र विकास उपागमन (माडा) क्षेत्र

प्रदेश मे ऐसे क्षेत्र मे जहां जनजाति के लोगों की संख्या अधिक है परन्तु वे उपयोजना क्षेत्र के अन्तर्गत नही आते हैं, उसके लिए 'माडा' योजना के अन्तर्गत विकास कार्य किये जा रहे है। राज्य के 13 जिलो—अलवर, धौलपुर, भीलवाड़ा, बूंदी, चित्तौड़गढ़, उदयपुर, झालावाड, कोटा, पाली, सवाईमाधोपुर, सिरोही, टोंक व जयपुर के 38 लघु खण्डों मे यह योजना चलाई जा रही है। इन लघु खण्डों मे ऐसे गावों का समूह है जिसकी आबादी 10,000 या इससे अधिक है तथा जहां 50 प्रतिशत से अधिक जनजाति के लोग रहते है। इन लघु खण्डों के अन्तर्गत 2939 गांव हैं तथा 1981 की जनगणना के अनुसार जनसंख्या 15.02 लाख है। इसमे से 8.36 लाख जनसख्या जनजाति के लोगो की है।

सहरिया आदिम जाति क्षेत्र :

1981 की जन संख्या के आधार पर 435 गांवों मे फैले सहरिया आदिम क्षेत्र मे 48,000 सहरिया आदिम जाति के लोग रहते है। राज्य की एक मात्र आदिम जाति का यह क्षेत्र शाहबाद व किशनगज तहसीलों में पड़ता है। ये तहसीलें कोटा जिले के अन्तर्गत हैं।

जनजाति क्षेत्रीय विकास योजना के तहत निम्नलिखित कार्य किये जा रहे हैं :—

(1) कृषि, पशुपालन एवं मत्स्य विकास।

(2) एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम तथा राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम।

(3) अनुसूचित जनजाति के सदस्यों को उत्पादन, उपभोग एवं सामाजिक कार्यों की पूर्ति हेतु साख सुविधा का प्रबन्ध।

(4) वन का उपयोग एवं विकास।

(5) माध्यमिक स्तर तक की शिक्षा के कार्यक्रम।

(6) समाज कल्याण के विभिन्न कार्यक्रम (पोषाहार, महिला विकास तथा बाल विकास कार्यक्रमों सहित)।

(7) लघु, कुटीर और खादी एवं ग्रामोद्योग का विकास तथा खनिज का खनन एवं उपभोग।

(8) क्षेत्र में पेयजल व्यवस्था।

(9) ग्रामीण आवासन।

(10) जन जाति व्यक्तियों को साहूकारों के शोषण तथा भूमि के हस्तान्तरण की सुरक्षा हेतु कानूनी व्यवस्था।

जन जाति उपयोजना क्षेत्र :

राज्य के 5 एकीकृत जन जाति विकास प्रोजेक्ट हैं जिनका क्षेत्र 19693 वर्ग किलोमीटर तथा इसके अन्तर्गत 4409 ग्राम हैं। इस उपयोजना क्षेत्र के अन्तर्गत 19 तहसीलें है तथा यह योजना 1974-75 से क्रियान्वित की जा रही है।

माडा योजना :

राज्य के 13 जिलो मे 38 माड़ा खण्डों के 2939 गावों मे माड़ा योजना चलाई जा रही है। माडा के अन्तर्गत मीणा जाति के लोगो का बाहुल्य क्षेत्र है। यह योजना 1978-79 से क्रियान्वित की जा रही है।

सहरिया आदिम जाति विकास कार्यक्रम

1977-78 से लागू इस योजना से 2898 वर्ग किलोमीटर क्षेत्र के 435 गावो मे आवास कर रही 48,000 की सख्या मे रह रहे आदिम सहरिया लोगों के उत्थान के कार्यक्रम चलाये जा रहे हैं।

छठी योजना अवधि मे जन जाति उपयोजना क्षेत्र मे 225 करोड़ रुपये से अधिक धन-राशि व्यय की गई है।

पशुपालन

जनजाति उपयोजना क्षेत्र मे 89 दुग्ध सहकारी समितियों का गठन किया गया है जिनका दूध उदयपुर डेयरी सयंत्र तथा डूंगरपुर एवं बांसवाड़ा जिलों के अवशीतन केन्द्रों मे उपयोग में लिया जा रहा है।

मछली पालन :

जयसमन्द, लडाना एवं महा बजाज सगर के तीन जलाशयों व अन्य छोटे तालाबो में मछलियां पकडने के लिए 18 मत्स्य सहकारी समितियों का गठन किया गया है जिससे कि आदिवासी लोगों को आजीविका साधन मिलते रहें।

और भी अनेक विकासोन्मुख कार्यक्रम इस योजना के तहत चल रहे हैं, जिनमें वन विकास, विद्युत व पेयजल, शिक्षा व चिकित्सा, रेशम के कीड़े पालने, रतनजोत की खेती तथा मुर्गी पालन भी सम्मिलित है।

15
सिंचाई-स्त्रोत

राज्य सरकार द्वारा उपलब्ध साधनों को ध्यान मे रखते हुए सिंचाई सुविधा बढाने पर विशेष जोर दिया गया है। वर्ष 1979-80 तक राज्य में वृहद्, मध्यम एवं लघु सिंचाई की योजनाओं द्वारा 17.73 लाख हैक्टेयर भूमि में प्रवाहीय सिंचाई क्षमता प्राप्त कर ली थी।

छठी पंचवर्षीय योजनाकाल में (1980-81 से 1984-85 तक) 419 करोड़ रुपये व्यय करके 3.61 लाख हैक्टेयर अतिरिक्त सिंचाई लक्ष्य प्राप्त कर लिया जायेगा और इस तरह 2133.61 हजार (21.34 लाख) हैक्टेयर सिंचाई क्षमता उपलब्ध हो जायेगी, जिसका विवरण निम्न प्रकार है :—

परियोजनाएं	सिंचाई क्षमता (हजार हैक्टेयर में)
1. इन्दिरा गांधी नहर परियोजना	716.00
2. माही परियोजना	45.00
3. अन्य वृहद् एवं मध्यम परियोजनाएं	1090.03
4. लघु सिंचाई योजनाएं	282.58
कुल योग	2133.61

लघु सिंचाई की परियोजनाओं पर विशेष ध्यान दिया जा रहा है। छठी पंचवर्षीय योजना के प्रारम्भ में 204 लघु सिंचाई परियोजनाओं पर कार्य चल रहा था व 88 नयी परियोजनाओं को लिया गया। इनमें से 242 परियोजनाएं पूर्ण हो जावेंगी। वर्ष 1984-85 में 1667 लघु सिंचाई परियोजनाओं का एक मास्टर प्लान अनुमोदित किया गया है, जिसमें से 928 परियोजनाएं विभिन्न कार्यक्रमों के अन्तर्गत स्वीकृत की गई हैं व इन पर निर्माण कार्य जारी है। प्रवाहीय सिंचाई सुविधा में वृद्धि के साथ-साथ भू-जल का उपयोग भी आवश्यक है एवं जलोत्थान की अधिक से अधिक योजनाएं लेना भी बहुत जरूरी है, जिसके लिए विशिष्ट ... ...कृत

ग्रामीण विकास एवं नल-कूप निगम को यह दिशा-निर्देश दिये गये हैं कि वे मिल कर सभी जिलों में पानी की क्षमता का पता लगावें एवं जलोत्थान की जो योजनाएं ली जा सकती हैं, उनका एक मास्टर प्लान बना कर योजनाबद्ध तरीके से तुरन्त कार्य प्रारम्भ करें।

भू-जल कार्यक्रम के अन्तर्गत वर्ष 1984-85 में 300 नलकूप व 327 नये कुओं का निर्माण हुआ, 1,108 कुओं को गहरा कराया गया तथा 14,045 विद्युत के पम्प सेट लगवाये गये। भू-जल के विदोहन के लिए साबी, बनास नदी बेसिन के तहत अलवर में 4 नदी बेसिन तथा भीलवाड़ा के 5 नदी बेसिन क्षेत्रों में विस्तृत भू-जल सर्वेक्षण का कार्य चल रहा है व मरू-विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत जैसलमेर, सीकर, झुंझुनूं जिलों में विस्तृत भू-जल सर्वेक्षण का कार्य पूरा किया गया है एवं बीकानेर व गंगानगर जिलो मे सर्वेक्षण कार्य प्रारम्भ किया जा रहा है।

वर्ष 1982-83 में राज्य में कुल अनुमानित सिंचित क्षेत्र 38.28 लाख हैक्टेयर था जो कुल बोये गये क्षेत्रफल का 23 प्रतिशत है जबकि 1960-61 में कुल सिंचित क्षेत्र 17.52 लाख हैक्टेयर था, जो कुल बोये गये क्षेत्रफल का 13 प्रतिशत था।

सिंचाई विभाग के कर्मचारियों, कृषि प्रसार अधिकारियों एवं कृषकों को उपलब्ध पानी के अधिकाधिक उपयोग करने हेतु कोटा मे स्थित सिंचाई प्रबन्ध एवं प्रशिक्षण केन्द्र में प्रशिक्षण दिलाया जा रहा है।

सभी वृहद् एवं मध्यम सिंचाई की योजनाओं के विशेष पर्यवेक्षण की व्यवस्था की गई है। मुख्यमंत्री महोदय अपने स्तर पर प्रत्येक चालू वृहद् एवं मध्यम सिंचाई परियोजनाओं की विस्तृत सूचना (पर्ट चार्ट मे) हर माह मंगवायेंगे और यह सुनिश्चित करेंगे कि इनको एक समयबद्ध कार्यक्रम के अनुसार पूरा किया जावे एवं सिंचाई क्षमता का अधिक से अधिक वास्तविक उपयोग किया जाये।

1. रावी-व्यास नदी समझौता

(1) रावी और व्यास नदियों के पानी का पूर्णतया भारत में ही उपयोग करने हेतु माह जनवरी, 1955 में एक समझौता तत्कालीन पंजाब, पेप्सू, राजस्थान व जम्मू-कश्मीर के बीच में हुआ था। इस समझौते के अनुसार इन दोनों नदियों के आधिक्य 158.5 लाख एकड़ फीट है। जम्मू काश्मीर के 6.5 लाख एकड़ फीट जल को निकालने के बाद 52.6% पानी राजस्थान को देय है।

(2) सिन्धु घाटी नदियों के पानी बंटवारे के लिये सन् 1960 में पाकिस्तान से हुई संधि से भारत ने तीन पूर्वी नदियों के सम्पूर्ण पानी के उपयोग का अधिकार पाकिस्तान को लगभग 110 करोड़ रुपये को

राशि मुआवजे में देकर प्राप्त किया है। राजस्थान प्रदेश के मरु क्षेत्र की आवश्यकता को दृष्टिगत रखकर ही भारत को इन तीन पूर्वी नदियों के पूरे पानी के उपयोग का अधिकार मिला था।

(3) राजस्थान के इस अधिकार को गत् 28 वर्षों तक कभी कोई चुनौती नहीं दी गई। गत् वर्षों से पंजाब में उठे आन्दोलन में इस अधिकार को चुनौती दी जा रही है।

(4) यह दुख का विषय है कि राजस्थान को अपने हिस्से का सम्पूर्ण पानी समय पर नहीं मिलता रहा है। नहरों के मुख्य हैड वर्क्स का नियंत्रण पंजाब में रहने के कारण पंजाब रावी-व्यास में उपलब्ध पानी का उपयोग पहले अपनी आवश्यकता पूरी कर शेष जल राजस्थान को देता रहा है। अतः पंजाब पुनर्गठन अधिनियम, 1966 के अन्तर्गत नहरों के मुख्य हेड वर्क्स (रोपड़, हरिके व फिरोजपुर) का नियंत्रण पंजाब से भाखड़ा व्यास नियंत्रण मण्डल को हस्तान्तरित करने का स्पष्ट प्रावधान रखा गया। वर्ष 1981 में रावी-व्यास पानी के बंटवारे में जो समझौता हुआ उसके अनुसार 171.7 लाख एकड़ फीट पानी में से राजस्थान को कुल 86 लाख एकड़ फीट पानी मिलना था। साथ में यह भी तय किया गया कि भाखड़ा व्यास नियंत्रण बोर्ड विभिन्न राज्यों को मिलने वाले पानी को उपलब्ध करने हेतु आवश्यक कार्यवाही करेगा एवं इसके लिये स्वतः अभिलिखित पानी मापक यंत्रों की स्थापना की जावेगी जिससे भाखड़ा-व्यास नियंत्रण बोर्ड के अधिकारी समय-समय पर बिना किसी रुकावट मिलने वाले पानी की जांच कर सकें। इसके लिये 48 स्थानों पर यंत्र लगाने थे, उनमें से अभी तक 26 स्थानों पर यंत्र लगा दिये गये हैं। इनके लगने से राजस्थान को अपने हिस्से का पानी मिलने की सुनिश्चितता करने में सहायता मिली है। हैडवर्क्स के प्रशासकीय रख-रखाव व संचालन का कार्य भाखड़ा व्यास नियंत्रण बोर्ड को अभी तक हस्तान्तरित नहीं हो पाया है।

इन्दिरा गांधी नहर

देश की सबसे बड़ी मानव निर्मित सिंचाई परियोजना का नाम स्वर्गीय प्रधान मंत्री इन्दिरा गांधी की स्मृति में राजस्थान नहर से बदल कर अब इन्दिरा गांधी नहर कर दिया गया है।

इन्दिरा गांधी नहर एक सामान्य सिंचाई परियोजना नहीं है। यह नहर आकार, लम्बाई, क्षमता, सिंचित क्षेत्र, निर्माण सामग्री की मांग और जन-शक्ति की दृष्टि से विश्व की वृहद् परियोजनाओं की श्रेणी में आती है।

इससे पूर्व कहीं भी इस प्रकार के विशाल रेगिस्तान मे जहां वर्षा का वार्षिक औसत केवल 15 से. मी. रहता है तथा जहां जनसंख्या का घनत्व प्रति वर्ग कि.मी. 4 व्यक्ति से अधिक नहीं है और जहां पीने का पानी कुण्डो मे एकत्रित किया जाता है। इससे पूर्व इतने विशाल स्तर पर प्यासी धरती पर नहरो का जाल नहीं बिछाया गया कभी भी किसी परियोजना का निर्माण अभियन्ताओं, श्रमिकों एवं अन्य व्यक्तियों को प्रति वर्ष एक स्थान से दूसरे स्थान पर निष्क्रमण करवाकर नही किया गया और न ही किसी क्षेत्र का कुल विकास परियोजना क्षेत्र से बाहर के काश्तकारों और विस्थापितों को लाकर किया गया है। किसी भी सिंचाई परियोजना से विशाल मरुस्थल क्षेत्र को कृषि प्रधान बनाने का कार्य इस स्तर पर इससे पूर्व कभी नहीं किया गया।

नहर का जन्म

इन्दिरा गांधी नहर परियोजना के निर्माण की परिकल्पना 1948 में ही हो गई थी। भारत सरकार ने आवश्यक जांच कर इन्दिरा गांधी नहर के निर्माण का निर्णय लिया। इस दिशा में पहले कदम के रूप में रावी-व्यास नदियों के संगम पर पंजाब में फिरोजपुर के निकट हरिके बैराज का निर्माण सन् 1952 में कराया गया जिससे इन्दिरा गांधी नहर के उद्गम की व्यवस्था की गई।

इन्दिरा गांधी नहर परियोजना के निर्माण कार्य का श्रीगणेश तत्कालीन केन्द्रीय गृह मंत्री स्व. गोविन्द बल्लभ पंत द्वारा 31 मार्च, 1958 को हुआ, 204 कि. मी. लम्बी राजस्थान फीडर के कार्य को शीघ्र पूरा कर 6 सितम्बर, 1961 को इसमें जल प्रवाहित किया गया।

रावी व व्यास नदियों के अतिरिक्त जल में राजस्थान के हिस्से के 86 लाख एकड़ फुट पानी मे से 76 लाख एकड़ फुट इन्दिरा गांधी नहर परियोजना पर उपयोग किया जायेगा। आरम्भ मे परियोजना का आकार छोटा था तथा मुख्यतः खरीफ में सिंचाई ही प्रस्तावित थी। सन् 1960 में सिन्धु जल समझौते के बाद व्यास नदी पर जलाशय बनाने के मामले को अन्तिम रूप दिया गया और तदनुसार इन्दिरा गांधी नहर परियोजना द्वारा बारह मासी सिंचाई के लिये परियोजना को संशोधित किया गया।

रावी-व्यास नदियों के संगम पर पंजाब मे हरिके बैराज से निकलने वाली इन्दिरा गांधी नहर की कुल लम्बाई 649 कि. मी. है, जिसकी जल क्षमता 18,500 क्यूसेक्स है, नहर का 204 कि. मी. राजस्थान फीडर का प्रथम 150 कि. मी. भाग पंजाब तथा 19 कि. मी. भाग हरियाणा में है, फीडर का सिंचाई के लिये उपयोग नहीं किया जाता है।

प्रशासनिक सुविधा की दृष्टि से परियोजना के निर्माण कार्यों को दो भागों मे विभक्त किया गया है।

प्रथम चरण :

परियोजना के प्रथम चरण में 204 कि. मी. लम्बी राजस्थान फीडर 189 कि. मी. लम्बी मुख्य नहर तथा 2945 कि. मी. लम्बी वितरण प्रणाली का निर्माण कार्य शामिल है जो लगभग पूर्ण हो चुके हैं। इनसे 5.53 लाख हैक्टर सिंचित क्षेत्र मे 5.87 लाख हैक्टर वार्षिक सिंचाई की जावेगी। प्रथम चरण की महत्वपूर्ण उपलब्धि बीकानेर-लनकरणसर लिफ्ट सिंचाई योजना से 50 हजार हैक्टर भूमि को सिंचाई सुविधा और बीकानेर शहर एवं नहर के निकटवर्ती गांवों को पेयजल सुलभ कराना है।

प्रथम चरण में मार्च, 1984 तक 4.05 लाख हैक्टर क्षेत्र मे सिंचाई सुविधा सुलभ कराई गई। वर्ष 1982-83 मे 4.27 लाख हैक्टर में सिंचाई हुई, जिससे लगभग 250 करोड़ रु० का अतिरिक्त कृषि उत्पादन हुआ। 240.89 करोड़ रु० की अनुमानित लागत के प्रथम चरण मे मार्च, 1985 तक 226.90 करोड़ रु० व्यय हो चुके हैं।

द्वितीय चरण:

इन्दिरा गांधी नहर परियोजना के द्वितीय चरण मे 256 कि.मी. मुख्य नहर तथा 5830 कि.मी. लम्बी वितरिकाओं के निर्माण कार्य प्रस्तावित हैं। इसमे से मुख्य नहर का 187 कि.मी. लम्बा भाग पूरा कर इस वर्ष जैसलमेर जिले में पानी पहुंचा दिया गया है। इसके साथ ही 252 कि.मी. लम्बी वितरक प्रणाली भी पक्की बनाई जा चुकी है, शेष कार्यों को शीघ्र पूरा करने के लिए द्रुत गति से निर्माण कार्य कराए जा रहे है।

द्वितीय चरण की अनुमानित लागत 1984 की कीमत पर 846.26 करोड़ रु० होगी, जिस पर मार्च, 85 तक 223.90 करोड़ रु० खर्च हो चुके हैं। सातवीं योजना मे लगभग 350 करोड रु० व्यय करने की योजना बनाई जा रही है। मुख्य नहर के साथ-साथ वितरक नहरों पर भी कार्य किया जा रहा है। द्वितीय चरण मे 9.11 हैक्टर सिंचाई क्षमता मे से 0.01 लाख हैक्टर क्षमता प्राप्त कर ली गई है।

राज्य सरकार ने द्वितीय चरण योजनान्तर्गत पाच लिफ्ट सिंचाई योजनाओं को प्रारम्भ करने का निर्णय लिया है। ये लिफ्ट योजनायें है—नोहर-साहवा (चूरू व गंगानगर), गजनेर-कोलायत (बीकानेर), फलौदी (जोधपुर) और पोकरण (जैसलमेर)। इन योजनाओं के अन्तर्गत 60 मीटर लिफ्ट तक 2.90 लाख हैक्टर सिंचाई योग्य क्षेत्र को शामिल करने की योजना है। इसके अतिरिक्त सागरमल गोपा शाखा (लीलवा) के सिंचित क्षेत्र में एक लाख हैक्टर क्षेत्र और जोड़ा जाकर इसे बाड़मेर जिले में गडरा रोड तक बढ़ाने का भी निर्णय लिया गया है।

पांच लिफ्ट योजनाओं व गडरा रोड तक नहर के विस्तार के प्रारम्भिक कार्यों के लिए राज्य सरकार ने इस वर्ष 50 लाख रु० स्वीकृत किये हैं, जिन्हें इस वर्ष के अन्तिम चरण मे तखमीनों की स्वीकृति के बाद प्रारम्भ करने का कार्यक्रम है।

परियोजना पर कार्य की मात्रा की कल्पना इस बात से की जा सकती है कि पंजाब में हरिके से राजस्थान में गडरा रोड तक नहर प्रणाली की लम्बाई 9,425 कि.मी. है जो देश की लम्बाई व चौड़ाई के जोड़ से लगभग दुगुनी है। नहरों के निर्माण पर 39 करोड़ घन मीटर मिट्टी का कार्य होगा, जो 350 मीटर आधार के एवरेस्ट पर्वत की ऊंचाई के पिरामिड के आयतन के बराबर है। 340 करोड़ टाइलों का उपयोग नहरों को पक्का करने के लिए किया जावेगा, जो पृथ्वी की सम्पूर्ण परिधि पर 8 मीटर चौड़ी पट्टी बनाने के लिऐ पर्याप्त हैं, 30 करोड़ मानव-दिवस की शक्ति की कुल आवश्यकता है। निर्माण कार्यों पर 40 हजार व्यक्तियों को रोजगार मिला है तथा कृषि फार्मों पर 2.5 लाख परिवारों को बसाया जाना है। परियोजना की पूर्ण क्रियान्विति पर भूमि के मूल्य में लगभग 5,000 करोड़ रु० की वृद्धि, अतिरिक्त वार्षिक खाद्यान्न उत्पादन 37 लाख टन व नहरों व सड़कों पर 10 हजार कि. मी. लम्बाई में वृक्षारोपण होगा। मरु क्षेत्र के सभी जिलों में पेयजल व उद्योगों के लिये 1200 क्यूसेक पानी का आरक्षण किया गया है।

ग्रामीण पेयजल योजना :

मरू प्रदेश के ग्रामीण क्षेत्र को पेयजल उपलब्ध कराने हेतु इंदिरा गांधी नहर परियोजना का विशेष योगदान रहेगा। जनसंख्या का बड़ा भाग ग्रामों में बसा है जो मरू क्षेत्रों के निवासी सदियों से शुष्क एवं कठोर परिस्थिति में रहते आये हैं। ये मीलों दूरी से प्रतिदिन पानी लाकर उसका भण्डारण एक अमूल्य कोष के रूप में करते हैं। ग्रामीण जल प्रदाय योजना का महत्त्व कृषि से भी अधिक है। इसी कारण राजस्थान सरकार ने इन्दिरा गांधी नहर से पेयजल का आरक्षण 500 से बढ़ाकर 1200 क्यूसेक करने का निर्णय लिया है। इस संदर्भ में देश की सबसे बड़ी "गंधेली साहबा ग्रामीण जल प्रदाय योजना" जो चूरू और गंगानगर जिलों के 313 गांवों को पीने का पानी सुलभ करवायेगी, का शुभारम्भ हो चुका है। इसी प्रकार जोधपुर शहर की पेयजल समस्या के स्थाई समाधान के लिए इन्दिरा गांधी नहर के पानी को ले जाने के कार्य प्रारम्भ किये जा चुके हैं। यह कार्य जन स्वास्थ्य अभियान्त्रिकी विभाग द्वारा किया जा रहा है।

वृक्षारोपण:

मरू भूमि में वृक्षारोपण अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, जिससे छाया, चारा, ईंधन लकड़ी की उपलब्धता के अतिरिक्त भूमि के कटाव, मरुस्थल विस्तार में रोकथाम और पर्यावरण संतुलन स्थापित करने में सहायता मिलती है। अच्छे पर्यावरण के लिये चारागाह एवं वृक्षारोपण का सुनियोजित विकास आवश्यक है। राज्य सरकार ने नहरों और नहर क्षेत्र की सड़कों के किनारे वृक्षारोपण की वृहद योजना क्रियान्वित की है। इन्दिरा गांधी नहर के बायें किनारे पर सेना के सहयोग से 500 कि०

में वृक्षारोपण तथा 1500 हैक्टर में घास उत्पादन का लक्ष्य रखा गया है। यह कार्य प्रादेशिक सेना के जवानों द्वारा किया जायेगा। केन्द्र सरकार ने इस कार्यक्रम के लिये 400 जवानों की सेवायें देना स्वीकार कर लिया है। सेना के 229 जवान यहां पहले ही कार्य कर रहे हैं।

परियोजना के स्वरूप में संशोधन :

वांछित लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की उपलब्धि के लिये अभी हाल ही मे राजस्थान सरकार ने इन्दिरा गांधी नहर के द्वितीय चरण के स्वरूप मे संशोधन निम्न प्रकार किया है :--

1. पांच लिफ्ट सिंचाई योजनाओं के अन्तर्गत 60 मीटर लिफ्ट तक 2.9 लाख हैक्टर क्षेत्र का समावेश करना।
   सिंचाई सघनता 110 प्रतिशत से घटाकर 90 प्रतिशत करना और कृषि योग्य क्षेत्र में जल प्रदाय क्षमता प्रति हजार एकड़ 5.23 क्यूसेक से घटाकर 3.5 क्यूसेक करना।
   नहर के अन्तिम छोर में 135 कि.मी. वृद्धि कर पानी को बाड़मेर जिले मे गडरा रोड तक ले जाना और प्रवाह सिंचित क्षेत्र मे 1.0 लाख हैक्टर भूमि का और समावेश करना।
   पश्चिमी राजस्थान के सात मरू जिलों को पीने का पानी सुलभ कराने के लिये 1200 क्यूसेक नहर का पानी आरक्षित करना जो पूर्व मे 500 क्यूसेक था।

ई कार्य प्रणाली व लक्ष्यों में बढ़ोतरी :

पूर्व में इन्दिरा गांधी नहर परियोजना पर कार्य गति पूर्वक नहीं किये जा के क्योंकि राज्य सरकार के सीमित ससाधनो के कारण आवश्यक धनराशि, रियोजना कार्यों के लिए आवंटित नहीं की जा सकी। वर्ष 1979-80 व 80-81 कोयले व सीमेन्ट की ढुलाई के लिये रेल्वे वैगन उपलब्धता की गंभीर कमी हुई, जिससे परियोजना कार्यों पर प्रतिकूल प्रभाव पड़ा और आवंटित राशि मे से क्रमशः व 10 करोड़ रु० का उपयोग नहीं हो सका। इस महत्वपूर्ण व चुनौतीपूर्ण रियोजना विशेषतः द्वितीय चरण के कार्यों को पूरा करने व रावी-व्यास के जल पूरे उपयोग में लगातार देरी राज्य सरकार के लिये सदैव चिंता का विषय रहा। उपरोक्त स्थिति को दृष्टिगत रखते हुए, परियोजना के द्वितीय चरण को शीघ्र करने के लिये एक नई कार्य-नीति अक्टूबर, 81 में अपनाई गई जिसके अनुसार मुख्य नहर को पक्का तथा वितरक प्रणाली को आरम्भ में कच्चा बनाया जा है। शाखाओं और वितरिकाओं की शुरू की लम्बाई तथा अधिक मिट्टी की ई की लम्बाइयों को भी इसी पंचवर्षीय योजना में पक्का किया जायेगा। रक प्रणाली की शेष लम्बाई को सातवीं योजना में, धनराशि, सीमेन्ट व कोयले उपलब्धता के अनुसार पूरा किया जायेगा।

उपरोक्त नई कार्य-नीति के अनुसार कार्य को गतिशील कर क्रियान्वित किया गया है। छठी पंचवर्षीय योजना में परियोजना के लिये आवंटित 162.0 करोड़ रु० की राशि के अतिरिक्त भारत सरकार ने विशेष सहायता योजना द्वारा 40 करोड़ रु० की राशि स्वीकृत कर दी है। भारत सरकार कोयला व सीमेन्ट भी पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध करा रही है, जिसके फलस्वरूप 1982-83 के मुकाबले में 1983-84 में कार्य की प्रगति अधिक हुई है। वर्ष 1984-85 में प्रगति और बढ़ाने का लक्ष्य रखा है।

1200 आर. डी. तक मुख्य नहर को पक्का करके मोहनगढ़ के पास शाखा के छोर तक आर. डी. 1460 तक की काफी लम्बाई मे वाटर सप्लाई चैनल बनाकर इन नहरों के लिये सांसद श्री राजीव गांधी द्वारा 17 अक्टूबर, 1983 को पानी छोड़ा गया। इस कार्यक्रम से जैसलमेर जिले में प्रथम बार सिंचाई सुविधा उपलब्ध हुई।

इस नई कार्य-नीति से द्वितीय चरण का काफी क्षेत्र छठी पंचवर्षीय योजना में सिंचाई के लिये उपलब्ध हो जायेगा और 1.46 लाख हैक्टर सिंचाई क्षमता पूरी हो जायेगी। उपनिवेशन तथा सिंचित क्षेत्र विकास के समुचित कार्यक्रम के साथ क्षेत्र में सिंचाई की व्यवस्था बढ़ाई जायेगी।

विश्व खाद्य कार्यक्रम:

इन्दिरा गांधी नहर परियोजना की भौगोलिक कठिनाइयों तथा निर्जन साधनहीन स्थानों पर मजदूरों को काम करने के लिये आकर्षित करने के उद्देश्य से संयुक्त राष्ट्र संघ के खाद्य एवं कृषि संगठन के तत्वावधान में विश्व खाद्य कार्यक्रम के अन्तर्गत खाद्य पदार्थों का वितरण सन् 1968 के अक्टूबर माह से प्रारम्भ किया गया जिसके अन्तर्गत खाद्यान्न सहायता (गेहूं, दालें व खाद्य तेल) बाजार दर से लगभग आधी कीमत पर इन्दिरा गांधी नहर पर कार्यरत श्रमिकों एवं उनके परिवारों को वितरण किया जा रहा है। इस कार्यक्रम की अवधि को जुलाई, 1985 तक के लिये बढ़ाया जा रहा है और इसके पश्चात् 5 वर्ष के लिये यह कार्यक्रम चालू रखने के लिये विश्व खाद्य कार्यक्रम संगठन ने सिद्धान्ततः स्वीकार किया है।

विश्व खाद्य कार्यक्रम के खाद्यान्नों की बिक्री से प्राप्त धनराशि का उपयोग परियोजना क्षेत्र मे मजदूरों को सुख-सुविधा व अन्य विकास में किया जाता है जिसके लिये 265.00 लाख रु० की लागत से भ्रमणशील चिकित्सा इकाई, चिकित्सालय, पशु चिकित्सालय, स्कूल, बालोद्यान, विपणन केन्द्र, [illegible] पशुओं के लिये खेलियां, सिनेमायान आदि योजनाएं क्रियान्वित की जा रही हैं। इसके अतिरिक्त इन्दिरा गांधी नहर सिंचित क्षेत्र मे प्रारम्भ से बसने वाले [illegible] हजार परिवारों को डेढ़ साल तक मुफ्त खाद्यान्न व प्रत्येक परिवार को [illegible]

मे 1000 रु० तक ब्याज-रहित ऋण के रूप में उपलब्ध कराने की व्यवस्था की गई है।

सदियों से प्यासे मरू प्रदेश में इन्दिरा गांधी नहर का पानी उपलब्ध होने पर ऐतिहासिक, भौगोलिक एवं सांस्कृतिक क्रान्ति का सूत्रपात हुआ है। इन्दिरा गांधी नहर आज मरू प्रदेश के लिए वरदान सिद्ध हो रही है।

इन्दिरा गांधी नहर–जलोत्थान योजनाएं :

राजस्थान के उत्तर-पश्चिम में फैले हुए थार के विशाल मरुस्थल को कृषि प्रधान धरती में बदलने और वहां के लोगों को पेयजल मुहैया कराने के उद्देश्य इन्दिरा गांधी नहर परियोजना का निर्माण बहुत मुस्तैदी से कराया जा रहा है। मुख्य नहर के साथ-साथ उसकी शाखाओं, उपशाखाओं एवं वितरिकाओं के निर्माण कार्यों का भी शीघ्र पूरा कर प्यासे धोरों की प्यास बुझाने में प्रकृति के साथ मानवीय संघर्ष अभी जारी है।

राज्य सरकार ने जून 1983 में इन्दिरा गांधी नहर परियोजना के द्वितीय चरण के अन्तर्गत पांच जलोत्थान योजनाओं—साहबा (श्रीगंगानगर-चूरू), कोलायत-गजनेर (बीकानेर), फलौदी (जोधपुर), पोकरण (जैसलमेर) को आरम्भ करने का निर्णय लिया है। इन लिफ्ट नहरो से 60 मीटर की ऊंचाई तक नहरी पानी को ऊंचा उठाकर श्रीगंगानगर, चूरू, बीकानेर, जोधपुर एवं जैसलमेर जिलों मे 3.12 लाख हैक्टर भूमि सिंचित करने की योजना तैयार की गई है। गत एक वर्ष की अवधि मे सर्वेक्षण पूर्ण कर इन जलोत्थान योजनाओं के विस्तृत तखमीने बनाकर केन्द्रीय सरकार को स्वीकृति के लिए प्रेषित किये जा चुके हैं।

1. गजनेर जलोत्थान सिंचाई योजना :

गजनेर जलोत्थान नहर इन्दिरा गांधी नहर की आर. डी. संख्या 749.6 (अमरपुरा गांव के निकट) से निकलकर बीला, नोखा, जैसलमेर आदि कई गांवों के पास होती हुई 32.10 किलोमीटर की दूरी तय करके पिजरापोल गौशाला के पास पहुंचेगी। इस दूरी में पानी को 6 स्थानों पर लिफ्ट किया जायेगा। हैड पर इस नहर का जल प्रवाह 447 क्यूसेक तथा अन्तिम छोर पर 150 क्यूसेक होगा। सिंचित क्षेत्र में वितरिकाओं की लम्बाई करीब 237 किलोमीटर होगी।

इस जलोत्थान योजना के तहत बीकानेर जिले के 18 गांवों की 17 हजार जनसंख्या को कृषि के लिये जल मिलेगा। गजनेर जलोत्थान योजना पर 41 करोड़ 57 लाख रुपये व्यय होने का अनुमान है और इसे सातवी पंचवर्षीय योजनावधि मे पूरा करने का लक्ष्य है। इस वित्तीय वर्ष मे योजना के प्रारम्भिक कार्यों पर 30 लाख रुपये व्यय किये जायेंगे।

योजना के पूर्ण होने पर इससे प्रतिवर्ष 1 लाख 22 हजार एकड़ कृषि योग्य भूमि में सिंचाई सुविधा मुहैया होगी जिससे 1 लाख टन खाद्यान्न तथा 24 लाख टन चारे का उत्पादन हो सकेगा।

गजनेर जलोत्थान नहर का पानी नागौर जिले में पहुंचाने के लिये भी सर्वेक्षण कार्य प्रगति पर है।

2 साहवा जलोत्थान सिंचाई योजना :

इन्दिरा गांधी नहर की आर. डी. 109 से निकलने वाली इस नहर की लम्बाई 109.5 किलोमीटर होगी तथा पांच स्थानों पर जलोत्थान किया जायेगा। हैड पर नहर का जल प्रवाह 890 घन फुट प्रति सैकण्ड तथा अन्तिम छोर पर 140 घन फुट प्रति सैकण्ड होगा। साहवा लिफ्ट नहर से सुई, साहवा और सरदारशहर उपशाखायें निकलेंगी जिनका सर्वेक्षण कार्य प्रारम्भ हो चुका है। सिंचित क्षेत्र में वितरिकाओं की लम्बाई 705 किलोमीटर होगी तथा सभी नहरें पक्की बनाई जायेंगी।

इस लिफ्ट योजना के तहत श्रीगंगानगर, चूरू एवं बीकानेर जिलों के 235 गावों की 2 लाख 60 हजार जनसंख्या को कृषि कार्यों के लिये जल उपलब्ध हो सकेगा। इस योजना की अनुमानित लागत 82,12 करोड़ रुपये है।

यह जलोत्थान नहर खोड़ा गांव के निकट से निकलकर धन्नासर, रामसरा, हमीर-देसर, रानीसर (गंगानगर जिला), सोमतीसर, मिलोपरिया, भूरावास, लूणस व बलिया (चूरू जिला) आदि गावों के पास होती हुई तारानगर के पास पहुंचेगी।

साहवा लिफ्ट सिंचाई योजना का निर्माण पूर्ण होने पर प्रतिवर्ष 1.22 लाख हेक्टेयर क्षेत्र में सिंचाई सुविधा मिलने के साथ ही 2 लाख 50 हजार टन खाद्यान्न, दलहन व तिलहन तथा 5.75 लाख टन चारा उत्पादित हो सकेगा।

3. पोकरण जलोत्थान सिंचाई योजना :

पोकरण जलोत्थान नहर अवाई गांव के पास से मुख्य नहर की आर. डी. संख्या 1201.5 से निकलकर रोला गांव के पास होती हुई बारू गांव के साथ चुनड़ा बारू-घोलिया सड़क के पास कुल 26 किलोमीटर दूरी तय करेगी। इस लिफ्ट नहर मे 6 स्थानों पर पम्पिग स्टेशन स्थापित कर प्रत्येक स्थान पर दस मीटर पानी लिफ्ट कर कुल 60 मीटर तक पानी को लिफ्ट किया जायेगा। लिफ्ट नहर के उद्गम बिन्दु पर नहर का जल प्रवाह 210 घन फुट प्रति सैकण्ड तथा आखिरी छोर पर 60 घन फुट प्रति सैकण्ड होगा। सिंचित क्षेत्र में इस नहर की वितरिकाओं की लम्बाई 165 किलोमीटर होगी।

इस लिफ्ट योजना से जोधपुर एवं जैसलमेर जिलों के 18 गांवों की 22 हजार 700 हैक्टेयर भूमि सिंचित हो सकेगी। इसके निर्माण पर 20 करोड़ 54 लाख

रुपये खर्च होंगे। चालू वित्तीय वर्ष में निर्माण कार्यों पर 35 लाख रुपये व्यय किये जाने का प्रावधान है।

पोकरण लिफ्ट सिंचाई योजना का निर्माण पूरा होने पर प्रतिवर्ष 0.56 लाख एकड़ कृषि योग्य भूमि में सिंचाई सुविधा, 0.47 लाख टन खाद्यान्न का उत्पादन तथा 1.1 लाख टन चारे का उत्पादन हो सकेगा।

4. फलौदी जलोत्थान सिंचाई योजना :

फलौदी जलोत्थान सिंचाई नहर मदासर गांव के पास से इन्दिरा गांधी मुख्य नहर की आर. डी. संख्या 1121 से निकलकर नेवा, कानासर आदि गावों के पास होती हुई 32 किलोमीटर की दूरी तय कर गांव रावरा तक पहुंचेगी। इस लम्बाई में 7 स्थानों पर पानी लिफ्ट किया जायेगा। नहर का जल प्रवाह उद्‌गम बिन्दु पर 510 तथा अन्तिम छोर पर 133 घन फुट प्रति सैकण्ड होगा। सिंचित क्षेत्र मे इस नहर की वितरिकाओं की लम्बाई 390 किलोमीटर होगी।

इस जलोत्थान नहर के पूर्ण होने पर इससे जोधपुर और जैसलमेर जिलों के 37 गांवो की करीब 30 हजार जनसंख्या को कृषि के लिये जल उपलब्ध कराया जा सकेगा। इसके निर्माण कार्यों पर 41.82 करोड़ रुपये व्यय होने का अनुमान है। चालू वित्त वर्ष में इसके निर्माण कार्यों पर 35 लाख रुपये खर्च किये जायेंगे।

इस लिफ्ट योजना के बनकर तैयार हो जाने पर प्रतिवर्ष 1.40 लाख एकड़ कृषि योग्य भूमि मे सिंचाई सुविधा उपलब्ध होने के परिणामस्वरूप 1.16 लाख टन खाद्यान्न तथा 2.70 लाख टन चारे का उत्पादन होने लगेगा।

5. कोलायत जलोत्थान सिंचाई योजना :

कोलायत जलोत्थान नहर इन्दिरा गांधी नहर की आर. डी. संख्या 958.6 से निकलकर *मोठड़िया, गांधी, सोलंकिया की ढाणी, गिराजसर, देवरा की ढाणी आदि* गांवों के पास से होती हुई 31.4 किलोमीटर दूरी तय करके जेटुंगा की ढाणी से कुछ पहले समाप्त होगी। इस नहर पर 6 स्थानो पर पानी को लिफ्ट किया जायेगा। हैड पर नहर का जल प्रवाह 700 क्यूसेक तथा अन्तिम छोर पर 170 क्यूसेक होगा। सिंचित क्षेत्र मे इसकी वितरिकाओं की लम्बाई 382 किलोमीटर होगी। बांगड़सर वितरिका इन्दिरा गाधी नहर की आर: डी. संख्या 886 से सीधी निकलेगी।

इस योजना से बीकानेर व जोधपुर जिलो के 21 गांवो की 25 हजार जनसख्या को कृषि के लिये जल सुलभ हो सकेगा। इस जलोत्थान नहर के निर्माण पर लगभग 68.65 करोड़ रुपये व्यय होने का अनुमान है तथा सातवी व आठवी व पचवर्षीय योजनावधि मे पूर्ण करने का लक्ष्य है। नहर के प्रारम्भिक कार्यो पर इस वित्तीय वर्ष में लगभग 50 लाख रुपये व्यय किये जायेंगे।

इस जलोत्थान नहर के पूर्ण होने पर प्रतिवर्ष 2.13 लाख एकड़ कृषि योग्य भूमि में सिंचाई सुविधा उपलब्ध होने के साथ ही 1.14 लाख टन खाद्यान्न तथा 4 लाख टन चारे का उत्पादन हो सकेगा।

इन सभी पांचों जलोत्थान योजनाओं के पूर्ण होने पर इनके तहत आने वाले किसानों को प्रतिवर्ष लगभग पांच हजार रुपये प्रति हैक्टर सकल उत्पादन एवं ढाई हजार प्रति हैक्टर शुद्ध लाभ मिल सकेगा।

इन योजनाओं से खाद्यान्न एवं चारे के उत्पादन के अलावा पशुपालन, दुग्ध एवं ऊन उत्पादन में भी सहायता मिलेगी। इसके अलावा सिंचित क्षेत्र में पेयजल संकट दूर हो सकेगा तथा आसपास के सभी क्षेत्रों में औद्योगिक उत्पादन भी बढ़ेगा।

16
कृषि विकास

क्षेत्रफल की दृष्टि से राजस्थान देश का दूसरा बड़ा राज्य है। कुल 3 करोड़ 42 लाख हैक्टर में फैले इस राज्य के लगभग आधे भाग में खेती होती है। अधिकांश रकबा अभी भी वर्षा पर ही निर्भर रहता है। राज्य में मरुस्थलीय व अर्द्ध-मरुस्थलीय भाग, जो कुल क्षेत्रफल का 67 प्रतिशत है, पूर्णतः वर्षा पर निर्भर रहता है। इस क्षेत्र की औसत वर्षा 15 से 20 से मी. है। राज्य का दक्षिणी-पूर्वी क्षेत्र सर्वाधिक उपजाऊ क्षेत्र है—यह भाग कुल क्षेत्रफल का 2/5 भाग है। चिकनी, काली व बलुई-दोमट मिट्टी वाले इस क्षेत्र में औसतन 85 सेन्टीमीटर वर्षा होती है। राज्य का पूर्वी भाग भी उपजाऊ है तथा इस क्षेत्र में 70 से. मी. औसत वर्षा होती है। यहां की मिट्टी चिकनी अथवा चिकनी दोमट भूमि है।

राजस्थान में जलवायु प्रभाव के कारण प्रायः प्रतिवर्ष कुछ भागों को अनावृष्टि, असमान वर्षा व अतिवृष्टि जैसी स्थिति का सामना करना पड़ता है। इन प्राकृतिक चुनौतियों के उपरान्त भी राजस्थान मे उन्नत बीज, रसायनिक खाद, पौध संरक्षण उपाय तथा कृषि विस्तार कार्यक्रमों के फलस्वरूप खाद्यान्न उत्पादन में उल्लेखनीय प्रगति अर्जित की गई है। विगत तीन दशकों में प्रदेश का खाद्यान्न उत्पादन जो पूर्व में 33.86 लाख टन था, 1983–84 वर्ष में बढ़कर 100.57 लाख टन तक पहुंच गया जो एक नया कीर्तिमान है।

कृषि क्षेत्रफल

प्रदेश में 1951–52 में कुल बोया हुआ क्षेत्रफल 97.55 लाख हैक्टेयर था वह अब बढ़कर 185.97 लाख हैक्टेयर हो गया है। इसी प्रकार दो फसलीय क्षेत्र 1951–52 में मात्र 4.42 लाख हैक्टेयर था परन्तु विगत तीस वर्षों के दौरान किये निरन्तर प्रयासों से यह बढ़कर 30.19 लाख हैक्टेयर तक पहुंच गया है।

सिंचित क्षेत्रफल

सिंचित क्षेत्रफल में भी प्रदेश में निरन्तर अभिवृद्धि हो रही है। राज्य के कृषकों में सिंचाई, कुओं के निर्माण—विद्युत् व डीज़ल पम्पिंग सैट लगाने की

प्रतिस्पर्द्धा तथा सरकार द्वारा सिंचाई योजनाओं को पूरा करने के फलस्वरूप क्षेत्र वर्तमान में बढ़कर 39.56 लाख हैक्टेयर पहुंच गया है जब कि 1951-52 वर्ष में यह मात्र 11.71 लाख हैक्टेयर ही था।

राज्य में सिंचित स्थितियों में कपास, धान, मक्का, गन्ना, गेहूं व जौ की फसलें ली जाती हैं। इनमें सर्वाधिक फसलीय क्षेत्र गेहूं का है जो लगभग 1783 हजार सिंचित क्षेत्रफल में है। खाद्यान्न, तिलहन, कपास व अन्य फसलों के बुवाई क्षेत्र में प्रतिवर्ष निरन्तर वृद्धि रिकार्ड की जा रही है।

क्षेत्रफल व उत्पादन

राज्य मे खरीफ की फसल सामान्यतया 120 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में बोई जाती है—इसमे 70 प्रतिशत क्षेत्र में खाद्यान्न, 7 प्रतिशत क्षेत्र में तिलहन, 4 प्रतिशत क्षेत्र में कपास व गन्ना तथा शेष फसलें 19 प्रतिशत क्षेत्रफल में बोई जाती हैं।

रबी की फसलों का क्षेत्रफल 55 लाख हैक्टेयर है जिसमे से 30 लाख हैक्टेयर सिंचित तथा शेष 25 लाख क्षेत्र असिंचित है। 1982-83 मे 56.95 लाख हैक्टेयर में रबी की बुवाई की गई थी जबकि वर्ष 1983-84 मे 50 83 लाख हैक्टेयर में ही रबी की बुवाई सभव हुई है। यह वर्षा की कमी के कारण ही पूरी नहीं हो सकी।

उत्पादन खरीफ

सामान्य वर्षा की स्थिति मे खरीफ का उत्पादन 25 से 30 लाख टन खाद्यान्नो के क्षेत्र मे तथा 2.5 से 3 लाख तिलहनो के क्षेत्र में होता है। 1983-84 वर्ष जो कि रिकार्ड वर्ष था, में 50.61 लाख टन उत्पादन हुआ था। इस वर्ष वर्षाभाव के कारण खरीफ की फसल का उत्पादन 24 लाख टन ही होने की संभावना है।

रबी का लक्ष्य वर्ष 1984–85 मे 59 85 लाख टन खाद्यान्न की बुवाई के लिए तथा 7. 60 लाख टन तिलहनों के उत्पादन के लिए रखा गया था परन्तु इस वर्ष इस उत्पादन मे भी कमी रहेगी। 1982–83 में कुल खाद्यान्न 42.57 लाख टन तथा 1983–84 मे 38 83 लाख टन हुआ था परन्तु 1984-85 में 33 लाख टन ही उत्पादन होने की सभावना है।

बीज वितरण

1966-67 मे प्रदेश मे पहली बार उन्नत बीजो की शुरुआत की गई थी तब यह कार्य 0.17 लाख हैक्टेयर मे प्रारम्भ किया गया था। कृषि विभाग द्वारा प्रत्येक जिले मे किये गये सम्पर्क, प्रसार व परीक्षणों के फलस्वरूप अधिक उपज वाले बीजों की लोकप्रियता मे निरन्तर वृद्धि होती गई। इसके फलस्वरूप यह क्षेत्रफल अब 25.53 लाख हैक्टेयर पहुंच गया है। वर्ष 1983-84 में 23.91 लाख हैक्टेयर मे उन्नत किस्मो के बीजो की बुवाई की गई थी।

बीजों के उपयोग में भी इसी प्रकार वृद्धि रिकार्ड की गई है। 1983-84 में, रबी व खरीफ की फसलों के लिए 1,78,161 क्विंटल उन्नत व प्रमाणित बीजों का उपयोग किया गया था। दस वर्ष पूर्व केवल 24,688 क्विंटल उन्नत बीजों का ही उपयोग किया जाता था।

उर्वरक :

रासायनिक खाद का उपयोग 1961-62 में प्रदेश के कृषकों द्वारा शुरू किया गया था जब परीक्षण के तौर पर 3000 टन की खपत सम्भव हुई थी। परन्तु आज स्थिति सर्वथा भिन्न है। वर्तमान में 2 लाख टन से भी अधिक उर्वरकों की खपत प्रदेश के कृषकों द्वारा की जा रही है।

पौध संरक्षण :

प्रथम योजना के पूर्व फसलों की सुरक्षा अथवा उनमें लगी बीमारियों की रोकथाम के लिए किसी-प्रकार की सुनियोजित व्यवस्था नहीं थी। परन्तु प्रथम योजनाकाल में पहली बार 38 हजार क्षेत्र में खड़ी फसल का उपचार किया गया। प्रत्येक योजनाकाल में पौध संरक्षण कार्यों में निरन्तर वृद्धि होती चली गई। मिट्टी, बीज व फसलों की सुरक्षा के प्रति कृषक जागरूक होते गये तथा 1984-85 में 22.83 लाख हैक्टेयर में पौध संरक्षण कार्य इस बात की पुष्टि करते हैं कि यह कार्यक्रम फसल की आवश्यकता बन गया है।

कृषि योजनाएं एवं कार्यक्रम : (बैनोट)

कृषि का नवीनतम ज्ञान समयबद्ध व योजनाबद्ध तरीके से किसानों तक पहुंचाने एवं कृषि उत्पादन बढ़ाने के उद्देश्य से प्रशिक्षण एवं भ्रमण पर आधारित कृषि विस्तार एवं अनुसंधान परियोजना वर्ष 1977 से राज्य के 18 जिलों में आरम्भ की गई थी। यह योजना कृषकों को अनुसंधान एवं वैज्ञानिक विधियों से सीधी जोड़ने एवं अनुकूल परिणाम प्राप्त करने की दृष्टि से अत्यन्त सफल रही है। इसकी सफलता का परिणाम 1976-77 में उपयोग किये गये उर्वरक, बीज व पौध संरक्षण कार्यों की शुरूआत तथा 1983-84 में प्राप्त उपलब्धियों की तुलना से भली भांति लगाया जा सकता है। 1976-77 में उर्वरक की खपत 92,940 टन, अधिक उपज देने वाली किस्मों के बीज का उपयोग 31,220 क्विंटल तथा पौध संरक्षण औषधियों का उपयोग 996 टन किया गया था जबकि 1983-84 में क्रमशः 2,05,015 टन, 1,11,432 क्विंटल तथा 1,566 टन उपयोग किया गया। इन उपायों से औसत उत्पादन में वृद्धि हुई। इस कार्यक्रम की सफलता के कारण 1984-85 वर्ष से 6 और जिलों को भी शामिल किया गया है।

लघु एवं सीमान्त किसानों के लिए वृहद् मिनीकिट कार्यक्रम :

1984-85 से लघु एवं सीमान्त किसानों को कृषि की नवीनतम वैज्ञानिक तकनीक का लाभ पहुंचाने तथा कृषि उत्पादन में वृद्धि कराने के उद्देश्य से दलहन

एवं तिलहन के मिनीकिट प्रदर्शन का एक वृहद् कार्यक्रम शुरू किया गया है। राज्य की प्रत्येक पंचायत समिति में लागू . कार्यक्रम के ...
दलहन व तिलहन फसलों के मिनीकिट लघु प्रदर्शन हेतु नि:शुल्क वितरित किये गये। 1984-85 में कुल एक करोड़ रुपये के 74,278 मिनीकिट वितरित किये गये थे। 1985-86 के दौरान लगभग 1 लाख मिनीकिट वितरित किये जाने का कार्यक्रम है। वर्ष 1984-85 कृषकों को प्रशिक्षित करने के उद्देश्य से 48,558 प्रदर्शन किये गये तथा चालू वर्ष के दौरान 63,200 प्रदर्शन किये जाने का कार्यक्रम है।

तिलहन विकास :

1984-85 से राष्ट्रीय तिलहन विकास परियोजना के माध्यम से सर्वांगीण सोयाबीन, तिल व मूंगफली का उत्पादन बढ़ाने के प्रयास किये जा रहे हैं। पूर्व में राज्य में सघन तिलहन विकास योजना लागू थी। सोयाबीन की खेती विकास योजना कोटा, बूंदी, झालावाड़, चित्तौड़गढ़, बांसवाड़ा, डूंगरपुर व भरतपुर में चलाई जा रही है। मूंगफली व तिल विकास कार्यक्रम अजमेर, ... सवाईमाधोपुर, नागौर, टोंक, भीलवाड़ा, भरतपुर, जयपुर, कोटा, झालावाड़, उदयपुर, श्री गंगानगर व बीकानेर में चलाया जा रहा है। तिल विकास योजना जोधपुर, जालौर, बाड़मेर, सिरोही व पाली में भी चलाई जा रही है। राई व सरसों की फसल के विस्तार की विशेष परियोजना समस्त राज्य में लागू है।

राष्ट्रीय तिलहन विकास परियोजना शत-प्रतिशत केन्द्रीय सहायता से चलाई जा रही है। परियोजना के तहत प्रमाणित बीज, खाद, पौध संरक्षण उपाय, आदि के लिए कृषकों को अनुदान दिया जाता है। 1985-86 में कुल 16.7 लाख हैक्टेयर में तिलहनी फसल की बुवाई का लक्ष्य है जिसमें 9.80 लाख टन उत्पादन प्राप्त किया जा सकेगा।

दलहन विकास :

प्रदेश में दलहनी फसलों की खेती सामान्यतः लगभग 35 से 40 लाख हैक्टेयर क्षेत्र में की जाती है। जबकि फसलों का उत्पादन 10 से 20 लाख टन के आसपास रहता है। रबी की दलहनी फसलों में चना, मसूर व मटर तथा खरीफ में मोठ, उड़द, चंवला, मूंग व अरहर प्रमुख हैं। मोठ की खेती सर्वाधिक ... 1985-86 में दालों का उत्पादन 17 30 लाख टन पहुंचाने का लक्ष्य है जबकि 1984-85 में 12 52 लाख टन ही उत्पादन किया गया था। राज्य के पांच दलहन जिलों जयपुर, अलवर, भरतपुर, कोटा व श्री गंगानगर में 1974-75 से प्रवर्तित दलहन विकास योजना कार्यशील है। चूरू व नागौर में भी एक-एक ... कार्यशील है। इस योजना के अन्तर्गत किसानों को प्रदर्शनों, प्रमाणित बीज, पौध संरक्षण उपायों व संयंत्रों के लिए अनुदान दिया जाता है।

शुष्क खेती कार्यक्रम :

बीस सूत्रीय आर्थिक कार्यक्रम के तहत राज्य में 1984-85 में ...

ाने क्षेत्रों में उन्नत तकनीक से खेती किये जाने का कार्य 22 लाख हैक्टेयर में
िये जाने का लक्ष्य निर्धारित था । इस कार्य को सुचारुता से पूरा करने हेतु 1306
शिक्षण शिविरों के माध्यम से 83,388 कृषकों को शुष्क खेती का आधुनिकतम
कनीक का ज्ञान दिया गया । इस कार्यक्रम के तहत भू-संरक्षण कार्यक्रमों को भी
ागू किया जा रहा है । 1985-86 के दौरान 1000 शिविरों के आयोजन का
क्ष्य है । प्रदेश की अन्य योजनाएँ निम्न प्रकार हैं :—

न्ना विकास :

राज्य सरकार की सहायता से गंगानगर, केशोरायपाटन, भोपालसागर व
न्य क्षेत्रों मे लगभग 50 हजार हैक्टेयर में यह कार्यक्रम चलाया जा रहा है।
1985-86 में 17.20 लाख उत्पादन प्राप्त करने का लक्ष्य है।

कपास विकास :

कपास विकास योजना भीलवाड़ा, मेवाड़ ट्रैक्ट, गंगानगर, झालावाड़,
ांसवाड़ा व डूंगरपुर जिलों मे चलाई जा रही है । श्रीगंगानगर व (राजस्थान नहर)
इन्दिरा नहर क्षेत्र में कपास का विशेष सघन कार्यक्रम भी प्रगति पर है । वर्तमान
ें लगभग 4 लाख हैक्टेयर में कपास की खेती की जाती है । 3.50 लाख हैक्टेयर
सिंचित मे तथा 50,000 लाख हैक्टेयर असिंचित क्षेत्र है । 1980-81 मे 3 57
लाख हैक्टेयर मे 3.88 लाख गांठों का उत्पादन हुआ था जबकि 1983-84 मे .
4.16 लाख हैक्टेयर रकबे में 5 79 लाख कपास की गांठों का रिकार्ड उत्पादन
प्राप्त किया गया ।

कपास का उत्पादन बढ़ाने तथा इसकी किस्म सुधारने हेतु 1.15 लाख
हैक्टेयर क्षेत्र मे उन्नत कृषि विधियां लागू की गई थीं । 1985-86 वर्ष में इस
कार्यक्रम का विस्तार कर 1.90 लाख हैक्टेयर में विकास कार्य किया जायेगा ।

कृषि उद्योग निगम

प्रदेश में कृषि उद्योग धंधों की स्थापना व विकास कृषि के यन्त्रीकरण,
तकनीकी सहायता, नये नये उपकरणों का उत्पादन करना आदि मुख्य उद्देश्यों की
पूर्ति के लिए राज्य सरकार ने अगस्त, 1969 में राजस्थान राज्य कृषि उद्योग
निगम की स्थापना की । इसमें राज्य व केन्द्र सरकार ने 51:49 के अनुपात मे
पूंजी लगाई ।

निगम ने विगत वर्षों में अपने विकास के अनुक्रम मे जयपुर, कोटा, बीकानेर,
हनुमानगढ़, जोधपुर, अलवर, भरतपुर, सीकर, अजमेर, टोंक, सिरोही, सवाई-
माधोपुर, श्रीगंगानगर, पाली, फलोदी, भीलवाड़ा, चित्तौड़गढ़ व जालौर मे अपनी
शाखाएँ खोली हैं । जयपुर व चित्तौडगढ़ में शो-रूम भी खोले हैं । प्रदेश से बाहर
होडल, यमुनानगर (हरियाणा) तथा विजयवाड़ा (आन्ध्रप्रदेश) में अपनी शाखाएं
स्थापित की हैं ।

निगम द्वारा प्रमुख रूप से निम्नलिखित कार्य सम्पादित किये जा रहे

कृषि उपकरणों का उत्पादन :

कृषि उपकरणों की फैक्ट्री भोटवाड़ा में स्थित है, जहां ट्रैक्टर के [illegible] टावर मेम्बर्स, फेन्सिंग सामान, गोवर गैस संयंत्र, अनाज की कोठियां, [illegible] चालित सभी प्रकार के उपकरण, कचरा ढोने की ठेलियां, मैला ढोने की [illegible] तथा कचरा पात्र का उत्पादन किया जाता है। इस फैक्ट्री द्वारा 1981 तक [illegible] लाख रुपये का कृषि उपकरणों का उत्पादन किया गया।

कम्पोस्ट खाद कारखाना:

जयपुर के निकट बृजलालपुरा में जयपुर नगर परिषद द्वारा एक [illegible] कारखाना 1979 जुलाई में आरम्भ किया गया था। इस कारखाने में जयपुर के कूड़ा-करकट से खाद तैयार की जा रही है। 1981 तक यहां लगभग 6 [illegible] रुपये की खाद का उत्पादन व विक्री की गई।

बुलडोजर्स व ट्रैक्टर्स किराया

निगम के पास 35 बुलडोजर्स व 51 ट्रैक्टर उपलब्ध है, जिन्हें [illegible] किराये पर किसानों की सुविधा के लिए उपलब्ध कराये जाने की व्यवस्था है। इसके अतिरिक्त 22 कम्बाईन हारवेस्टर्स का समूह भी है जो गेहूं व चावल की फसल काटने के लिए किराये पर दिये जाते है।

व्यापार :

जैसा कि ऊपर वर्णित किया जा चुका है निगम द्वारा अनेक प्रकार के [illegible] तैयार किये जाते है। इन संयंत्रों को निगम द्वारा बेचा जाता है। कृषकों की सुविधा के लिए निगम कीटनाशक दवाएँ, पम्प सैट्स, टायर ट्यूब का व्यापार भी करता है। एच. एम. टी. व इन्टर नेशनल ट्रैक्टर्स का निगम अधिकृत विक्रेता है जिसके द्वारा ट्रैक्टर्स की विक्री भी करता है।

अन्य प्रवृतियां :

निगम द्वारा पौध संरक्षक दवाओं का हवाई छिड़काव भी किया जा रहा है। उन्नत बीजों का कार्य 1978–79 से निगम द्वारा किया जा रहा है।

कृषि फार्म्स:

अगस्त 1976 में निगम द्वारा 19 कृषि फार्म हस्तान्तरित किये गये थे जिसमें से 4 फार्म वापस कृषि विभाग को दे दिये गये। निगम के पास अब 15 फार्म हैं जिनमें 809.90 हैक्टेयर क्षेत्र मे कृषि की जाती है। निगम इन फार्मों में उन्नत बीजों का उत्पादन कर रहा है।

कृषि सेवा केन्द्र

भारत सरकार की सहायता से निगम द्वारा 564 बेरोजगार कृषि स्नातक

एवं इन्जीनियरिंग स्नातक व डिप्लोमा होल्डर्स को प्रशिक्षित कर 365 स्वनियोजित कृषि सेवा केन्द्र भी स्थापित किये हैं ।

भावी योजनाएँ :

निगम द्वारा जोधपुर में 125 मैट्रिक टन प्रति दिन की क्षमता का एक कम्पोस्ट कारखाना जोधपुर में लगाया जा रहा है ।

कोटा मे चावल की भूमि व अन्य तिलहनों के खल से तेल निकालने का कारखाना भी स्थापित किया जा रहा है ।

इसी प्रकार 25,000 दूध के ढोल तैयार करने का एक कारखाना भी जयपुर में लगाने जाने की कार्यवाही निगम द्वारा की जा रही है ।

17

डेयरी विकास

राजस्थान सदा से अपने पशुधन और उनकी अच्छी नस्ल के लिए तो विख्या[illegible] रहा किन्तु पहले उत्पादित दूध के विपणन की समुचित व्यवस्था नहीं होने के का[illegible] दुग्ध तथा दुग्ध पदार्थों के उत्पादन की दृष्टि से अगुवा राज्यों की श्रेणी में नहीं [illegible] सका। अगस्त 1975 से आरम्भ किये गये डेयरी विकास के महत्वाकांक्षी कार्य[illegible] के तहत स्थापित डेयरी संयत्रों, अवशीतन केन्द्रों, पशु आहार संयत्रों और दुग्ध उ[illegible] दक सहकारी समितियों के सुगठित आधार के फलस्वरूप अब राजस्थान दे[illegible] डेयरी मानचित्र पर पूरी तरह उभर चुका है। डेयरी विकास की दिशा में किये [illegible] ठोस एवं कारगर प्रयासों के फलस्वरूप दुग्ध उत्पादन में पर्याप्त बढ़ोतरी हुई है [illegible] वर्ष 1984-85 तो इस दृष्टि से सर्वाधिक महत्त्वपूर्ण साबित हुआ है। इ[illegible] लगभग 7.20 लाख लीटर दूध प्रतिदिन संकलित किया जा रहा है जो पिछले व[illegible] की तुलना में एक नया कीर्तिमान है। गत वर्ष 4 लाख लीटर दूध प्रतिदिन संक[illegible] किया जाता था।

राजस्थान को-आपरेटिव डेयरी फेडरेशन द्वारा "सरस" नाम से तैयार कि[illegible] जा रहे विभिन्न दुग्ध पदार्थ उपभोक्ताओं में काफी लोकप्रिय हो चुके हैं और इन[illegible] मांग निरन्तर बढ़ती जा रही है।

दूध, दुग्ध पाउडर, पनीर व सरस घी के अतिरिक्त डेयरी फेडरेशन[illegible] आधुनिक तकनीकों से टेट्रापैक में उपभोक्ताओं के लिए ऐसा दूध सुलभ किया है [illegible] बिना फ्रिज के साधारण तापक्रम में एक पखवाड़े तक सुरक्षित रह सकता है। इ[illegible] विशेषताओं के कारण टेट्रापैक दूध की मांग आम आदमी में बढ़ती जा रही है। [illegible] आज जयपुर तथा राज्य के सुदूर कस्बों के अतिरिक्त दिल्ली, कानपुर व लखनऊ [illegible] शहरों को भी बड़ी मात्रा में यह दूध भेजा जा रहा है। इसके साथ ही देश के दू[illegible] भाग जो दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से कमी वाले क्षेत्र हैं, में भी शीघ्र ही टेट्रापैक [illegible] भेजा जायेगा ताकि वहां के निवासियों को पाउडर से तैयार किये गये दूध के ब[illegible] हर समय ताजा दूध मिल सके।

राज्य में डेयरी विकास का एकीकृत कार्यक्रम केवल डेयरी संयंत्रों की स्थापना का दुग्ध वितरण व्यवस्था तक ही सीमित नहीं है बल्कि इसके तहत दुधारू पशुओं की नस्ल सुधार, संतुलित आहार, स्वास्थ्य सेवाएं सुलभ कराने जैसी व्यापक योजनाएं लागू कर पशुपालकों को लाभान्वित किया जा रहा है। यह सब एकाएक ही हो गया हो सो बात नही है। इसके पीछे डेयरी विकास कार्यक्रम के तहत योजनाबद्ध तरीके से किये गये सतत् प्रयास रहे हैं जिसके फलस्वरूप पशुपालकों के आर्थिक एवं सामाजिक जीवन में सुधार एवं बदलाव आया है।

राजस्थान में कृषि के बाद पशुपालन ग्रामीण अर्थ व्यवस्था का प्रमुख आधार रहा है। दुधारू पशुओं की संख्या और दुग्ध उत्पादन की दृष्टि से राज्य का देश मे प्रमुख स्थान रहा है। किन्तु उत्पादित दूध के विपणन की समुचित व्यवस्था नहीं होने के कारण यहां के पशुपालकों द्वारा दूध का उपयोग अधिकाशत: घी व खोआ आदि बनाने मे किया जाता रहा, जिससे आय बहुत कम होती थी। इस प्रकार उत्पादन का उचित मूल्य नही मिलने से पशुपालक आर्थिक दृष्टि से कमजोर रहे जिसका सीधा प्रभाव उनके आर्थिक स्तर और पशु नस्ल पर भी पडा।

इस स्थिति मे पशुपालको के आर्थिक स्तर मे सुधार लाने के उद्देश्य से डेयरी विकास का महत्त्वाकांक्षी एवं बहुआयामी कार्यक्रम आरम्भ किया गया। इस कार्यक्रम के तहत जहां आधुनिक वैज्ञानिक तकनीकों से दुधारू पशुओं के दुग्ध उत्पादन में बढोतरी करने और इसके विपणन की सुनियोजित व्यवस्था की गई है वहां दुग्ध पाउडर, मक्खन, घी, पनीर, टेट्रापैक दूध तथा अधिक आय देने वाले अन्य पदार्थों का उत्पादन भी किया जाने लगा है। इसके अतिरिक्त पशु–नस्ल सुधार, संतुलित पशु आहार तथा पशुओं की बीमारियों की रोकथाम व उपचार के लिए पशु-चिकित्सालयों, चल एवं तात्कालिक चिकित्सा इकाइयों की सेवाए भी सुलभ की गई हैं। इन प्रयासों के फलस्वरूप अब स्थिति बदल चुकी है। पशुपालकों को उत्पादित दूध का घर बैठे उचित मूल्य प्राप्त हो रहा है। इससे उनके आर्थिक स्तर में आशातीत सुधार हुआ है। डेयरी विकास कार्यक्रम की सफल क्रियान्विति से ग्रामीण अर्थ-व्यवस्था में समृद्धि का एक नया अध्याय जुड़ गया है।

डेयरी विकास का प्रथम चरण

डेयरी विकास कार्यक्रम की नई संरचना के तहत चौथी पंचवर्षीय योजना में यद्यपि प्रारम्भ में केवल 75 लाख रुपये का ही प्रावधान किया गया था किन्तु बाद में इस कार्यक्रम के "आपरेशन फ्लड-1" तथा विश्व बैंक परियोजना के अन्तर्गत आ जाने से डेयरी विकास का एक व्यापक एवं वृहद् कार्यक्रम तैयार किया गया।

इस कार्यक्रम के प्रथम चरण में डेयरी संयंत्रों व अवशीतन केन्द्रों की स्थापना तथा डेयरी विकास संबंधी अन्य गतिविधियां लागू करने का व्यापक कार्य हाथ में

लिया गया। वर्ष 1979–80 तक इन कार्यों पर लगभग 38 करोड़ रुपये की राशि व्यय की जा चुकी थी।

छठी पंचवर्षीय योजना के तहत डेयरी विकास कार्यक्रम को और आगे बढ़ाया गया और योजना मे 42.23 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया जिसमें अन्य स्रोतों से जुटाई गई 31.59 करोड़ रुपये की राशि शामिल थी। इस प्रावधान में से वर्ष 1980-81 से 1982-83 तक के तीन वर्षों की अवधि में कार्यक्रम से सबद्ध विभिन्न गतिविधियो पर 16.25 करोड़ रुपये से अधिक की राशि व्यय की गई। वर्ष 1983-84 के लिये 13.50 करोड़ रुपये से अधिक राशि के व्यय का प्रावधान किया गया है।

द्वितीय चरण

डेयरी विकास कार्यक्रम को और व्यापक एवं सघन बनाने के लिए अन्तर्गत "आपरेशन फ्लड-2" योजना के लागू होने पर 83.36 करोड़ रुपये लागत के विभिन्न नये कार्य हाथ मे लिये जा सकेंगे।

इस योजना के तहत दुग्ध संकलन की मात्रा वर्तमान निर्धारित 4 लाख लीटर से बढ़ाकर 11.96 लाख लीटर प्रतिदिन तक पहुंचाने का लक्ष्य है। इस दौरान मे वर्तमान डेयरी संयंत्रों की क्षमता बढ़ाने के साथ-साथ लूणकरणसर, सरदारशहर, पाली और भरतपुर मे नये डेयरी संयंत्र स्थापित किये जाने का प्रावधान रखा गया है। इसी प्रकार सकलित दुग्ध को ठण्डा रखने के लिए जैसलमेर, टोंक, सीकर, धौलपुर, और चित्तौड़गढ में अवशीतन केन्द्र स्थापित किये जायेंगे। इन नये डेयरी संयंत्रों एव अवशीतन केन्द्रो के स्थापित होने पर फ्लड-2 योजना के अन्त तक राज्य में 13 डेयरी संयंत्र और 32 अवशीतन केन्द्र हो जायेंगे।

इस योजना मे दुग्ध विकास कार्यक्रम को राज्य के लगभग सभी जिलों में सहकारिता के अन्तर्गत लाया जा सकेगा। इसके लिए व्यापक स्तर पर दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों का गठन किया जायेगा। कुल मिलाकर योजना के अन्त तक दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों की संख्या बढ़ाकर 5800 करने का लक्ष्य है। इस समय राज्य में ऐसी 2949 सहकारी समितियां कार्यरत हैं।

आशातीत उपलब्धियां

डेयरी विकास कार्यक्रम के प्रथम चरण के अन्तर्गत किये गये सुनियोजित एवं कारगर प्रयासो के फलस्वरूप राज्य मे डेयरी विकास का ऐसा सुदृढ़ आधार तैयार हो चुका है जिससे आगे के लिए उज्जवल संभावनाएं स्पष्टत. परिलक्षित होती हैं।

कार्यक्रम के प्रथम चरण मे आशातीत एवं उल्लेखनीय उपलब्धियों के इस दौर के अन्तर्गत दिसम्बर, 1984 तक राज्य मे लगभग तीन हजार से अधिक दुग्ध

सहकारी समितियां व दुग्ध संग्रह केन्द्रों के माध्यम से 7722.70 लाख लीटर से अधिक दुग्ध संकलित किया जाकर दुग्ध उत्पादकों को लगभग 143.74 करोड़ रुपये का भुगतान किया गया। वर्तमान में 1.78 लाख ग्रामीण विभिन्न दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों के सदस्य हैं जिनमें अनुसूचित जाति व अनुसूचित जन जाति के क्रमशः 14571 एवं 10673 सदस्य शामिल हैं।

राज्य में गठित 2180 दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों में पशुधन के स्वास्थ्य की देखभाल की व्यवस्था की गई है। इन समिति क्षेत्रों में 47 पशु चल चिकित्सा इकाइयों द्वारा गांव-गांव पहुंचकर पशुओं के विभिन्न रोगों के उपचार की सुविधा जुटाई जाती है। अब तक कुल मिलाकर लगभग 43 लाख रोगग्रस्त पशुओं का समय-समय पर उपचार किया गया तथा बड़ी संख्या में पशुओं के रोग निरोधक टीके लगाये जा चुके हैं।

पशु नस्ल सुधार योजना के अन्तर्गत 356 दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों में कृत्रिम गर्भाधान की सुविधाएं उपलब्ध कराई जाकर अब तक लगभग 5 लाख से अधिक पशुओं के कृत्रिम गर्भाधान कराया गया है। इसके अतिरिक्त पशुओं के लिए लगभग 1.11 लाख मै. टन संतुलित आहार वितरित किया जा चुका है।

डेयरी संयंत्र एवं अवशीतन केन्द्र

दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों के माध्यम से संकलित दूध को कीटाणु रहित करने, उपभोक्ताओं को दूध सहज सुलभ कराने तथा अधिक आय देने वाले दुग्ध पदार्थ तैयार करने के लिए राज्य के विभिन्न अंचलों में डेयरी संयंत्र स्थापित किये गये हैं।

इस शृंखला के तहत अब तक जयपुर, जोधपुर, अलवर, भीलवाड़ा, उदयपुर, अजमेर तथा बीकानेर में डेयरी संयंत्र स्थापित किये जा चुके हैं। इन डेयरी संयंत्रों की दुग्ध उत्पादन क्षमता प्रतिदिन लगभग 7.25 लाख लीटर है। इसके अतिरिक्त कोटा व हनुमानगढ़ में स्थापित किये जा चुके हैं। ~~इन डेयरी संयंत्रों की दुग्ध उत्पादन क्षमता प्रतिदिन लगभग 7.25 लाख लीटर है। इसके अतिरिक्त कोटा व हनुमानगढ़ स्थापित डेयरी संयंत्रों का निर्माण कार्य तेजी से चल रहा है।~~

दुग्ध उत्पादन के अतिरिक्त जोधपुर, बीकानेर, अलवर, अजमेर एवं जयपुर डेयरी संयंत्रों द्वारा घी, मक्खन, पनीर, दुग्ध चूर्ण आदि पदार्थों का उत्पादन एवं विपणन भी किया जा रहा है।

इसके अतिरिक्त राज्य के सुदूर स्थानों पर संकलित दूध को ठण्डा रखकर डेयरी संयंत्रों तक पहुंचाने के लिए अवशीतन केन्द्रों की स्थापना की गई है। इस समय पोकरण, पाली, बालोतरा, मेड़तासिटी, लूणकरणसर, सरदारशहर, मालपुरा, हजारा, कोटपुतली, दौसा, ब्यावर, झुन्झुनू, गंगापुरसिटी, बाड़मेर, विजयनगर,

बांसवाड़ा, नागौर और डूंगरपुर सहित कुल 18 अवशीतन केन्द्र क्रियाशील हैं। इसके अतिरिक्त आगामी जून माह तक 7 और स्थानों पर अवशीतन केन्द्र स्थापित किये जा सकेंगे।

दुग्ध संवर्धन कार्यक्रम

पशुओं की दुग्ध उत्पादन क्षमता में बढ़ोतरी के उद्देश्य से संतुलित पशु आहार तैयार करने के लिए बीकानेर, तबीजी (अजमेर), भरतपुर तथा जोधपुर में पशु आहार संयंत्र स्थापित किये जा चुके हैं। इसके अतिरिक्त जयपुर में भी 40 मै.टन प्रतिदिन क्षमता का आहार संयंत्र लीज पर लिया हुआ है। इन केन्द्रों पर तैयार किया गया संतुलित आहार पशुपालकों को सहकारी समितियों के माध्यम से उचित दर पर सुलभ किया जाता है।

पशु नस्ल सुधार योजना के तहत कृत्रिम गर्भाधान पर भी यथेष्ट ध्यान दिया जा रहा है। वर्तमान में बस्सी में फ्रोजन सीमन बैंक तथा परियोजना मुख्यालयों पर वीर्य बैंक कार्यरत हैं। इस कार्य को व्यापक बनाने के लिए चार फ्रोजन सीमन बैंक स्थापित किये जा रहे हैं।

सहकारिता मुख्य आधार

डेयरी विकास के इस बहु-आयामी कार्यक्रम की सम्पूर्ण संरचना का मूल आधार सहकारिता है। इसके पीछे मुख्य अवधारणा यह है कि लोगों के लिए जो कार्यक्रम हैं उन्हें इसमें पूरी तरह भागीदार बनाया जाए। यही कारण है कि ग्राम स्तर पर दुग्ध उत्पादन सहकारी समितियों का गठन कर पशुपालकों को प्रत्यक्ष रूप से समितियों का सदस्य बनाया गया है। ग्रामीण क्षेत्रों में गठित इन समितियों को पशुपालकों से दुग्ध संकलन के साथ-साथ पशु नस्ल सुधार, संतुलित आहार वितरण एवं पशु चिकित्सा संबंधी दायित्व सौंपा गया है।

वर्तमान में राज्य के 19 जिलों में इस समय लगभग तीन हजार से अधिक प्राथमिक दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां कार्य कर रही हैं। प्रथम चरण में कार्य कर रही समितियों की सदस्य संख्या को शामिल करते हुए वर्तमान में इन पशुपालकों की संख्या लगभग 1.79 लाख तक पहुंच गई है।

गांवों में गठित दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियों के समन्वय के लिए जिला स्तर पर वर्तमान में राज्य में 14 दुग्ध उत्पादक सहकारी संघ कार्य कर रहे हैं। इन संघों को मुख्य रूप से ग्राम स्तरीय सहकारी समितियों तक पशु स्वास्थ्य, पशु नस्ल सुधार तथा तकनीकी जानकारी पहुंचाने का जिम्मा दिया गया है। शीर्ष स्तर पर राजस्थान को-आपरेटिव डेयरी फैडरेशन गठित किया गया है। फैडरेशन द्वारा डेयरी विकास कार्यक्रम की सम्पूर्ण गतिविधियों में मार्गदर्शन, समन्वय एवं नियन्त्रण किया

18

सहकारिता

आजादी से पूर्व राजस्थान की कुछ रियासतों मे सहकारिता का कार्य प्रारंभ हुआ था। सन् 1904 में भरतपुर व डीग मे कृषि बैंकों की स्थापना की गई थी। 1904 ही में अजमेर में भी सहकारिता का उदय हुआ था। 1912 मे भरतपुर में भारतीय सहकारिता अधिनियम कुछ संशोधनों के साथ लागू किया गया था। कोटा मे 1915–18 में यह अधिनियम लागू हुआ तथा 1927 मे कोटा राज्य सहकारी बैंक की स्थापना की गई। 1924 मे बीकानेर में, 1934 से अलवर मे, 1935 में किशनगढ़ में, 1938 से जोधपुर मे, 1944 से जयपुर में, 1947 से धौलपुर मे, 1949 से उदयपुर मे तथा टोंक, शाहपुरा, बांसवाड़ा, प्रतापगढ़ व डूंगरपुर की रियासतों मे राजस्थान गठन से पूर्व सहकारिता का श्री गणेश हुआ था।

राजस्थान के वर्तमान एकीकृत रूप के धारण से पूर्व यहां 2677 सहकारी समितियां विद्यमान थी। इनकी सदस्यता 90,000 थी। इनमे से भरतपुर में 654, जयपुर में 410, अलवर मे 321, जोधपुर में 275, बीकानेर मे 136 तथा अन्य रियासते जो संयुक्त राजस्थान का अंग बन चुकी थी, में 881 सहकारी समितियां थी। इस प्रकार राजस्थान के 5 प्रतिशत गांव व 0.8 प्रतिशत ग्रामीण सहकारी क्षेत्र में आ चुके थे।

राजस्थान में 1953 में पहली बार राजस्थान सहकारी समिति विधेयक पारित किया गया जो समय समय पर अधिक व्यावहारिक व कारगर बनाने के उद्देश्य से संशोधित हुआ तथा 1965 के स्वरूप मे आया, जो आज तक क्रियान्वित है।

राज्य में 2 अक्टूबर 1965 से नया सहकारी अधिनियम जारी किया गया तथा इसमे जो सुविधायें व प्रावधान रखे गये थे, वे अत्यन्त प्रगतिशील कहे जाते हैं।

पंचवर्षीय योजनाओं में सहकारिता

प्रथम योजना

पहली योजना के मध्य मे सहकारिता की शुरुआत हुई थी। प्रदेश में पिछड़ेपन व गरीबी के सम्बन्ध मे एक चुनौती थी। योजना के अन्त तक सहकारी

समितियों की संख्या 8077 तथा सदस्य संख्या 2.74 लाख पहुच गयी। राज्य मे एक शीर्ष सहकारी बैंक, 10 केन्द्रीय सहकारी बैंक तथा एक सहकारी प्रशिक्षण स्कूल खोला जा चुका था।

दूसरी योजना —

इस योजना के अन्त तक विभिन्न प्रकार की सहकारी समितियों की संख्या 18309 पहुंच गयी तथा सदस्य संख्या 9 लाख 68 हजार हो गई। राज्य के 59 प्रतिशत गांव तथा 26 प्रतिशत ग्रामीण परिवार सहकारी आन्दोलन के अन्तर्गत लाये जा चुके थे। सहकारी केन्द्रीय बैंकों की सख्या 24 हो गयी।

तीसरी व चौथी योजना

इन दस वर्षों में राज्य में सहकारी आन्दोलन को तेजी से आगे बढाया गया। 90 प्रतिशत गांव तथा 40 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों को सहकारिता के अन्तर्गत लाना एक महत्त्वपूर्ण उपलब्धि थी। चौथी योजना के अन्त तक कृषि साख समितियों का पुनर्गठन कर 7727 समितियां गठित की गई। पूर्व मे यह सख्या 12457 थी। समिति के सदस्यों की हिस्सा पूंजी 6 करोड़ रूपया थी। 20 प्राथमिक भूमि विकास बैंक की शाखाएँ खोली गयीं। भण्डारण की सुविधा बढ़ाने हेतु 135 मार्केटिंग गोदाम तथा 864 ग्रामीण गोदाम तैयार किये गये।

पांचवी योजना

इस योजना में 70 प्रतिशत ग्रामीण परिवार सहकारिता के अन्तर्गत लाये गये तथा 99 प्रतिशत गांवों को सहकारी आन्दोलन के अन्तंगत लाया गया। 26 जिलों मे केन्द्रीय सहकारी बैंक कार्यशील हो गये थे। राज्य में 1978-79 तक इनकी शाखाओं में विस्तार किया जाकर इनकी संख्या 210 तक हो गई। भूमि बन्धक बैंकों की संख्या भी 35 तक पहुंच गई थी। योजना काल मे अल्प कालीन, मध्यम कालीन ऋण के रूप में 77 करोड़ रुपये वितरित हुए तथा 21 करोड़ रुपये दीर्घ कालीन ऋण के रूप में वितरित हुए।

पांचवी योजना के समय राज्य में कृषि क्षेत्र के अलावा 1045 गृह निर्माण सहकारी समितियाँ 687 प्राथमिक भंडार तथा 874 श्रमिक ठेका समितियां कार्यशील थी। यूरोपीय आर्थिक समुदाय की मदद से 3500 ग्रामीण गोदाम राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम के माध्यम से बनाये गये।

छठी योजना

छठी योजना के दौरान शत प्रतिशत गावों तथा 90 प्रतिशत ग्रामीण परिवारों को सहकारिता के अन्तर्गत लाने के लक्ष्य की पूर्ति की जा रही है। 1983-84 के अन्त तक 85 प्रतिशत कृषक परिवार सहकारिता के अन्तर्गत लाये जा चुके थे। 1984-85 के प्रथम छः माह की अवधि मे 55000 नये सदस्य भी बनाये जा चुके हैं—सहकारी वर्ष जून, 84 के समय राज्य में सहकारी समितियों की संख्या 18440

तथा सदस्य संख्या 56.91 लाख तक पहुंच गई। सभी प्रकार की सहकारी समितियों की हिस्सा राशि 1983-84 में बढ़कर 163.12 करोड़ रुपये तथा अमानत राशि 217.29 करोड़ रूपये पहुंच गई। सहकारी समितियों की कार्यशील पूंजी 1403.61 करोड़ रुपये हो गई है।

सहकारी ऋण व्यवस्था – (कृषि)

कृषि उत्पादन हेतु अल्प कालीन व मध्य कालीन ऋण उपलब्ध कराने के लिये राज्य में एक राज्य स्तरीय राजस्थान सहकारी बैंक तथा जिला स्तर पर 25 केन्द्रीय सहकारी बैंक कार्यरत हैं। केन्द्रीय सहकारी बैंक 5228 कृषि ऋणदायी सहकारी समितियों के माध्यम से ऋण वितरण का कार्य कर रही है। 1984-85 वर्ष में अल्प कालीन ऋण वितरण का लक्ष्य 150 करोड़ रूपये निर्धारित था। मध्य कालीन ऋण का लक्ष्य 1983-84 मे 1300 लाख रुपये था जिसके विरुद्ध 952.04 लाख रुपये वितरित किये गये। 1984-85 मे लक्ष्य 1400 लाख रुपये का है। दीर्घ कालीन ऋण का लक्ष्य 3000 लाख रुपये है। यह ऋण राज्य मे 34 सहकारी भूमि विकास बैंकों के माध्यम से 7 से 15 वर्ष की अवधि के लिए दिया जाता है।

नागरिक सहकारी बैंक (उद्योग)

शहरी बैंक क्षेत्र मे अर्द्ध शहरी क्षेत्र में कुटीर एव लघु उद्योगों के माध्यम से स्वावलम्बन रोजगार योजना लागू की जा रही है। अभी राज्य मे 13 नागरिक सहकारी बैंक एवं एक औद्योगिक बैंक के माध्यम से यह कार्य किया जा रहा है। पाली, भीलवाड़ा, झुन्झुनूं व चितौड़गढ़ मे नये नागरिक सहकारी बैंको के गठन की कार्यवाही चालू है।

कैफीकार्ड योजना

इस योजना के अन्तर्गत 276 आर्थिक रूप से सक्षम समितियों का क्रम से प्रत्येक जिले मे 10 के हिसाब से चयन किया जाकर उन्हें और अधिक सुदृढ़ बनाने की कार्यवाही की गई है। इन चयनित समितियों द्वारा सदस्यों की सभी प्रकार की ऋण आवश्यकताएं एक स्थान पर पूरी की जावेगी। ये पैक्स मिनी बैंक के रूप में कार्य कर तथा ग्रामीण बचत का संग्रह कर उसे प्रोत्साहित करेगी।

प्राथमिक कृषि ऋणदायी सहकारी समितियां—

प्राथमिक स्तर पर सदस्यो को ऋण सुविधायें दिलाने की प्रमुख भूमिका प्राथमिक ऋणदायी समितियां ही पूरा करती हैं।

1983–84 में इन समितियों की संख्या 5228 थी तथा सदस्यता कम 40.17 लाख थी। इन समितियों के अन्तर्गत कुल हिस्सा पूंजी 52.21 करोड़ रुपये थी।

क्रय-विक्रय सहकारी समितियां

30 जून, 1984 तक राज्य मे मण्डी स्तर पर 158 क्रय विक्रय समितियां कार्य कर रही थी। इन समितियों की सदस्य संख्या 79750 तथा हिस्सा पूंजी

420. 69 लाख रुपये थी। इन समितियों के माध्यम से वर्ष 1983-84 में 2833.93 लाख रुपये की कृषि उपज, 4459.69 लाख रुपये के कृषि आदान तथा 6357.38 लाख रुपये की उपभोक्ता वस्तुओं का वितरण किया गया था।

राज्य की क्रय-विक्रय सहकारी समितियों की शीर्ष संस्था—राजस्थान राज्य सहकारी क्रय-विक्रय सहकारी संघ लिमिटेड, जयपुर है। संघ के अधीन जयपुर में शीतागार तथा अलवर में कीटनाशक दवाओं का कारखाना है। संघ के अधीन जयपुर में एक बर्फ का कारखाना तथा आबू रोड में ईसबगोल प्लान्ट भी है।

माल सवार इकाईयां

राज्य में उपरोक्त समितियों के साथ-साथ माल संवार इकाईयों की स्थापना भी की गई है ताकि कृषकों को इन समितियों के माध्यम से अपनी उपज का उचित मूल्य प्राप्त हो सके। वर्तमान में 25 माल सवार इकाईयां संचालित हैं। इनमें 7 दाल मिलें, 7 चावल मिलें, तीन तेल मिले, 7 काटन व जिनिंग एवं पेकिंग इकाईयां प्रमुख हैं।

स्टोरेज प्रोजेक्ट

यूरोपियन आर्थिक समुदाय की सहायता से 79-80 से 83-84 तक 5 वर्षों की अवधि में 3521 गोदामों के निर्माण का लक्ष्य रखा गया था। परन्तु निर्माण की लागत में मूल्य वृद्धि के कारण केवल 2828 गोदामों का निर्माण निर्धारित किया गया। 31 दिसम्बर, 84 के अन्त तक 2317 गोदाम पूर्णतः तैयार हो चुके हैं तथा इनकी 2 लाख मैट्रिक टन के लगभग भंडारण क्षमता है। 399 गोदाम निर्माणाधीन हैं। इन गोदामों के अलावा राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम, दिल्ली के सौजन्य से 1000 गोदामों का निर्माण भी हाथ में लिया गया है। इन गोदामों की लागत 9.18 करोड़ रुपये अनुमानित है तथा 77500 मैट्रिक टन भण्डारण क्षमता अर्जित करने का लक्ष्य है। इस योजना पर कार्य 1984–85 में आरम्भ किया गया है।

सहकारी उपभोक्ता भण्डार

1983-84 के अन्त में राज्य में शीर्ष स्तर पर राजस्थान राज्य सहकारी उपभोक्ता संघ लि० जयपुर तथा जिला स्तर पर 27 सहकारी उपभोक्ता होलसेल भण्डार तथा 677 प्राथमिक सहकारी उपभोक्ता भण्डार संचालित थे। होलसेल भंडारों की हिस्सा पूंजी 164.88 लाख रुपये व सदस्य संख्या 92345 थी। प्राथमिक भंडारों की हिस्सा पूंजी 37. 27 लाख रुपये तथा सदस्य संख्या 156152 थी। भंडारों का क्रमिक विकास भी किया जा रहा है।

कमजोर वर्ग को उपभोक्ता वस्तुएं उचित मूल्य पर उपलब्ध कराने के लिए राज्य में 111 जनता दुकानें भी कार्यरत हैं। जयपुर में सहकारी दवाईयों की दुकानों की संख्या 37 हैं। अन्य प्रमुख नगरों में भी सहकारी दवाओं की दुकाने खोले जाने की योजना है।

दैनिक उपभोक्ता वस्तुएं उचित मूल्य की दुकानों पर उपलब्ध कराने हेतु सार्वजनिक वितरण प्रणाली राज्य में 1979 में प्रारम्भ की गई थी। इस कार्य के लिए 5355 सहकारी समितियों का चयन किया गया है तथा अब तक 4231 समितियों का लाइसेंस दिया जाकर वितरण कार्य प्रारम्भ किया जा चुका है।

रेगिस्तानी व पहाडी इलाकों के लिए भ्रमणशील दुकानें प्रारम्भ की गई हैं। वर्तमान में 7 ऐसी दुकाने संचालित हैं।

गृह निर्माण सहकारी समितियां

समाज के कमजोर वर्ग एवं अनुसूचित जाति व जन जाति के सदस्यों के लिए आवास निर्माण हेतु राजस्थान स्टेट को आपरेटिव हाऊसिंग फाइनेन्स सोसायटी लि. द्वारा गृह निर्माण सहकारी समितियों को दीर्घकालीन ऋण उपलब्ध कराये जाते हैं।

व ग्राम सेवा सहकारी समितियों

19
भेड़ पालन

राजस्थान का भेड़ पालन में अपना विशेष स्थान है। प्रदेश मे लगभग 1.34 करोड़ भेड़ें हैं जिनसे वर्ष भर में एक करोड़ 56 लाख किलोग्राम ऊन प्राप्त होती है। यह अनुमान है कि प्रतिवर्ष लगभग 25 से 30 लाख भेड़ें मांस के लिये उपयोग मे ली जाती हैं। राज्य मे लगभग दो लाख परिवारों का जीवन निर्वाह मेड़पालन से होता है। इससे शहरों व गावो के 15 लाख लोगों को रोजगार उपलब्ध होता है।

राज्य सरकार भेड़ ऊन विकास की दिशा में सतत् प्रयत्नशील है। भेड़पालकों के आर्थिक उत्थान के कई कार्यक्रम सचालित किये जा रहे हैं। भेड़ों को संक्रामक रोगों से बचाने के सघन कार्यक्रम, सामान्य उपचार, नस्ल सुधार, प्रशिक्षण एवं चारागाह विकास के विविध कार्यक्रमो के साथ लघु एवं सीमान्त कृषको और कृषि श्रमिको की आय के साधन बढाने व रोजगार उपलब्ध कराने के लिये ऋण एवं अनुदान की वित्तीय सहायता दिलाकर भेड़ इकाइयों की स्थापना कराई जा रही है। इनका लाभ अनुसूचित जाति एव जन जाति के परिवारों को भी मिल रहा है। इसके अतिरिक्त भेड़पालकों की प्राथमिक सहकारी समितियों का भी गठन किया जा रहा है। भेड़पालको को भेड़पालन की नवीन एवं उन्नत विधियों का ज्ञान कराने के लिए भेड़पालकों के प्रशिक्षण शिविर भी लगाये जा रहे हैं।

राजस्थान राज्य सहकारी भेड़ व ऊन विपणन फेडरेशन के माध्यम से भेड़-पालक सहकारी समितियो को, ऊन व पशुओं के विक्रय पर कमीशन देकर, सुदृढ़ किया जा रहा है। भेड़पालको को उन्नत भेड़पालन विधियों का ज्ञान कराने के लिए बैठकों एवं प्रशिक्षण शिविरों का आयोजन किया जाता है और भेड़ों की स्वास्थ्य रक्षा के कार्य किये जाते हैं।

राज्य के 14 जिलों में 135 भेड़ व ऊन प्रसार केन्द्र तथा 28 कृत्रिम गर्भाधान प्रसार केन्द्र कार्यरत हैं। इसके अलावा एक प्रशिक्षण संस्थान, एक ऊन विश्लेषण प्रयोगशाला, 5 भेड़ प्रजनन फार्म तथा तीन भेड़ रोग अनुसंधान शालाएं भेड़पालन कार्यक्रम को सफल बनाने के लिए कार्य कर रहे है।

प्रसार कार्य

प्रत्येक प्रसार केन्द्र पर एक प्रसार अधिकारी और 2 से 6 स्कन्ध सहायक हैं, जो भेड़पालकों से सम्पर्क कर उन्हें उन्नत भेड़पालन करने की नवीनतम तकनीक की जानकारी देते हैं। प्रसार कार्यक्रम के अन्तर्गत आलोच्य वर्ष में माह जनवरी 85 तक 4 46 लाख नाकारा व अनुपयोगी भेड़ों का बधियाकरण किया गया व 69.09 लाख भेड़ों को दवा पिलाई गई। इसके अलावा 27.21 लाख भेड़ों को रोग निरोधक टीके लगाये गये।

नस्ल सुधार के लिये संकर प्रजनन

भेड़ के मांस एवं उत्पादन में वृद्धि और सुधार के लिये भेड़ों में संकर प्रजनन किया जाता है। इसके तहत स्थानीय भेड़ों में विदेशी मेढ़ों से कृत्रिम और नैसर्गिक दोनों ही गर्भाधान विधियों से संकर प्रजनन कराया जाता है। सघन संकर प्रजनन का कार्य जयपुर, भीलवाड़ा, चूरू और झुंझुनू जिला क्षेत्रों में किया जाता है। यह कार्य राजकीय भेड़ प्रजनन फार्मों के अतिरिक्त 28 कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों के माध्यम से भी कराया जाता है। नर संकर मेमनों को चार-पांच माह की उम्र होने पर क्रय कर मिनी फार्मों पर रखा जाता है तथा मेमने वयस्क होने पर निर्धारित दर पर भेड़पालकों को उपलब्ध कराये जाते हैं।

नस्ल सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत विभाग द्वारा इस वित्तीय वर्ष में माह जनवरी तक 49 हजार 600 भेड़ों में संकर प्रजनन किया गया जिससे 22 हजार 759 मेमने पैदा हुए तथा यह क्रम अभी भी जारी है। ये संकर नस्ल के मेमने मिनी फार्मों पर पाले जा रहे हैं।

देश में ऊनी कपड़े बनाने के लिये अच्छी किस्म की ऊन अभी विदेशों से मंगाई जाती है, जिस पर बड़ी मात्रा में विदेशी मुद्रा खर्च करनी पड़ती है। वैज्ञानिक अनुसंधानों से प्राप्त परिणामों में यह निष्कर्ष निकला है कि चोकला व मगरा नस्लों की भेड़ों में यदि संकर प्रजनन कराया जावे तो अच्छी किस्म की ऊन पैदा की जा सकती है। इसी प्रकार मालपुरा व सोनाड़ी भेड़ों में संकर प्रजनन से गलीचा बनाने के योग्य ऊन का उत्पादन किया जा सकता है। इसी दृष्टि से इन नस्लों में भेड़ों में संकर प्रजनन का कार्य किया जा रहा है।

देशी भेड़ों में ऊन का औसत उत्पादन पौन किलोग्राम से सवा किलोग्राम होता है जबकि संकर नस्ल की भेड़ों में ऊन का औसत उत्पादन 2 से 2.5 किलोग्राम होती है।

भेड़ इकाइयों के लिए ऋण व अनुदान

विशिष्ट पशुधन उत्पादन कार्यक्रम राज्य के दस जिलों में भेड़ व ऊन प्रसार केन्द्रों के माध्यम से चलाया जा रहा है। लघु एवं सीमान्त कृषकों को भेड़पालन

आय के साधन बढाने की दृष्टि से भेड़ इकाई की स्थापना के लिये समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत ऋण व अनुदान के रूप में वित्तीय सहायता उपलब्ध कराई जाती है। लघु-काश्तकारों को सम्पूर्ण राशि का चौथाई भाग और सीमान्त कृषक तथा कृषि श्रमिक को एक तिहाई भाग अनुदान के रूप में दिया जाता है। शेष राशि ऋण के रूप मे उपलब्ध कराई जाती है। जन जाति परिवारों को 50 प्रतिशत ऋण और 50 प्रतिशत अनुदान दिया जाता है।

इस वित्तीय वर्ष में गत जनवरी तक 3 हजार 644 भेड़ इकाइयां स्थापित करने के लिये सहकारी एवं व्यवसायिक बैंकों द्वारा 118.49 लाख रुपये का ऋण तथा 65.76 लाख रूपये का अनुदान दिया गया है।

भेड़ों के लिये चरागाह विकास

राज्य में सूखा संभावित क्षेत्रों मे विकास कार्यक्रमों के अन्तर्गत जोधपुर, नागौर, जालौर एवं चूरू में चरागाह भूखण्डो के विकास और भेड़ों के रेवडो के सही प्रबन्ध के लिये कार्य किया जा रहा है। इसके तहत 100-100 हैक्टेयर भूखण्डों का चयन व अधिग्रहण कर उस पर तारबंदी एवं बीजारोपण कर चारागाह विकास किया जा रहा है और विकसित चारागाहों मे भेड़ो को प्रवेश देकर चराई सुविधा दी जा रही है। इन चारागाह भूखण्डों पर वर्षा का जल एकत्रित करने के लिए कुण्डो का निर्माण कराया जा रहा है जिससे चारागाह भूखण्डो पर भेड़ों को पीने का पानी उपलब्ध हो सके।

योजना के प्रारम्भ से जनवरी 85 तक 139 चारागाह भूखण्डों को विकसित कर इन पर 22 हजार 185 भेड़ों को चराई सुविधा उपलब्ध कराई गई है। अब तक 134 सहकारी समितियां गठित कर 9 हजार 968 भेड़-पालको को इनका सदस्य बनाया जा चुका है। आलोच्य वर्ष में 19 भूखण्ड वन विभाग को स्थानान्तरित किये गये हैं।

मरू विकास कार्यक्रम

मरू विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत भेड़ नस्ल सुधार के लिए झुंझुनू मे 8 एवं चूरू में 4 कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र और झुंझुनू मे ही एक रोग अनुसधान केन्द्र सचालित हो रहा है। भेड़-पालको को उन्नत एव नवीन विधियो का ज्ञान कराने के लिये राज्य के दस जिलों में चार दिवसीय प्रशिक्षण शिविर चलाये जा रहे हैं। योजना के तहत इस वित्तीय वर्ष में जनवरी तक 59 प्रशिक्षण शिविर आयोजित कर 2 हजार एक भेड-पालकों को प्रशिक्षित किया गया है।

निष्क्रमणायी भेड़ों के लिये सेवायें

राज्य से प्रतिवर्ष करीब 20 लाख भेड़ें निष्क्रमण पर जाती हैं। निष्क्रमण के समय इनकी स्वास्थ्य रक्षा, जनकल्याण एवं निष्क्रमण नियमन की सेवाओ के लिये एक

निष्क्रमण प्रकोष्ठ प्रारम्भ किया गया है। भेड़ व ऊन विभाग द्वारा इस वर्ष निष्क्रमण मार्गों पर 40 अस्थायी चैक पोस्ट स्थापित किये गये हैं। इन चैक पोस्टों पर निष्क्रमित भेड़ों के लिये टीके व दवाई तथा भेड़-पालकों को परिचय पत्र देने की व्यवस्था की गई और उन्हें निश्चित मार्ग के अनुसार निर्धारित स्थानों में ले जाने के निर्देश दिये गये।

राज्य के जन-जाति बहुल जिलों के आदिवासी परिवारों को भेड़-पालन संबंधी सुविधायें सुलभ कराने के लिये विभाग द्वारा 6 भेड़ व ऊन प्रसार केन्द्र स्थापित हैं। इनमें से उदयपुर जिले में धरियावद, खैरवाड़ा व सराड़ा, डूंगरपुर जिले में डूंगरपुर और सीमलवाड़ा तथा बांसवाड़ा जिले में घाटोल में कार्यरत हैं। इसके अलावा कांकरोली में एक कृत्रिम गर्भाधान प्रसार केन्द्र भी अपनी सेवायें दे रहा है।

समग्र ग्रामीण विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत इस संभाग में पिछले वित्तीय वर्ष के दौरान जनवरी माह तक 1 हजार 121 अनुसूचित जाति एवं 563 अनुसूचित जन-जाति के परिवारों को भेड़ इकाइयां क्रय करवाकर लाभान्वित किया गया है।

ऊन प्रयोगशाला बीकानेर द्वारा इस वर्ष जनवरी तक 11 हजार 444 ऊन के नमूनों की जांच की जाकर विश्लेषण परिणामों से अवगत कराया गया है। इसी प्रकार जयपुर स्थित भेड़ ऊन संस्थान के माध्यम से आलोच्य अवधि में 81 अधिकारियों व कर्मचारियों को प्रशिक्षित किया गया है।

छठी व सातवीं पंचवर्षीय योजना

भेड़ व ऊन विकास कार्यक्रम पर छठी पंचवर्षीय योजना काल में वर्ष 1982-83 तक 201.03 लाख रुपये तथा वर्ष 83-84 में 87.29 लाख रुपये व्यय किये गये। इस वित्तीय वर्ष में 90 लाख रुपये व्यय होने की संभावना है। इस प्रकार छठी योजनावधि में कुल 378.32 लाख रुपये व्यय होंगे। इसी प्रकार सूखा संभावित क्षेत्रीय कार्यक्रम तथा मरू विकास योजना के तहत 328.83 लाख रुपये व्यय होंगे।

सातवी पंचवर्षीय योजना के लिये 1023.50 लाख रुपये की राशि प्रस्तावित की गई है। इस योजनावधि में सघन भेड़ प्रजनन कार्यक्रम, चारागाह विकास, भेड़ों की स्वास्थ्य रक्षा एवं अनुसंधान कार्यक्रम को गति देने के लिये दो जिला भेड़ व ऊन कार्यालय तथा 37 नये प्रसार एवं कृत्रिम गर्भाधान केन्द्रों के साथ ही दो रोग अनुसंधान प्रयोगशालायें खोलने के प्रस्ताव हैं।

इसी प्रकार सातवी योजनावधि में मरू विकास कार्यक्रम के तहत 715.[illegible] लाख रुपये प्रस्तावित हैं। भेड़ व ऊन विपणन फेडरेशन के लिये पूंजीगत व्यय एवं सहकारिता के लिए 124.80 लाख रुपये का प्रावधान प्रस्तावित है।

20

विद्युत-विस्तार

आजादी से पूर्व राजस्थान में विद्युत केवल सामन्ती सुख व वैभव के लिए थी परन्तु राजस्थान के निर्माण के उपरान्त न केवल शहरी उपभोक्ताओं वरन् ग्रामीण क्षेत्रों में भी विद्युत का निरन्तर विस्तार संभव हुआ है।

वर्तमान मे राज्य की विद्युत उत्पादन की सस्थापित क्षमता 1713.16 मेगावाट तक पहुंच चुकी है जबकि 1949 मे राजस्थान निर्माण के समय यह क्षमता मात्र 13.27 मेगावाट थी। राज्य मे बिजली की खपत भी अब 100 यूनिट प्रति व्यक्ति हो चुकी है जबकि राज्य के निर्माण के समय यह केवल 2.9 यूनिट ही थी।

बिजली उत्पादन मे उल्लेखनीय प्रगति हुई है तथा इसकी मांग उससे भी कई गुणा बढ़ी है। राज्य बिजली की बढ़ती इस मांग को पूरा करने के लिये विद्युत उत्पादन की गति बनाये रखने के लिये जूझ रहा है। इस उद्देश्य की पूर्ति के लिये ही बिजली के लिये पूंजी विनियोजन भी साल-दर साल बढ़ता रहा है। वर्तमान मे राज्य की पूरी योजना की लगभग एक तिहाई राशि विद्युत विकास के लिये ही आवंटित है।

इस एक तिहाई हिस्से मे से काफी राशि विद्युत उत्पादन क्षमता बढाने तथा ट्रान्समिशन व सब-ट्रान्समिशन लाइनो का जाल बिछाने के उपयोग मे लायी जा रही है ताकि राज्य मे विभिन्न उपभोक्ताओं को स्थायी रूप से विद्युत की आपूर्ति की जा सके। औद्योगिक भार और काश्तकारो के पम्पसेटों मे हुई बढ़ोतरी से 'सिन्क्रोनस कण्डेंसर्स' और 'शन्ट केपेसिटर्स' लगाने की ओर भी समुचित ध्यान दिया जा रहा है ताकि विद्युत सप्लाई व्यवस्था मे स्थायी मदद मिल सके।

अड़चनों का निराकरण

राजस्थान में बिजली के उत्पादन और विकास मे शुरू से ही काफी अड़चनें आयी हैं। बारहमासी नदियां नही होने की वजह से पन-बिजली विकास का मार्ग अवरूद्ध हो गया वहीं कोयला खदान नही होने से ताप बिजली उत्पादन की दिशा मे भी नहीं बढ़ा जा सका। ऐसी स्थिति मे जो बेहतर विकल्प हो सकता था वही

राजस्थान ने अपनाया और, विकल्प यह कि उसने पन-बिजली उत्पादन की दृष्टि से भाग्यशाली राज्यों की साझेदारी में पन बिजली विकास के प्रयत्न शुरू किये। पंजाब और हरियाणा की साझेदारी में भाखड़ा नांगल तथा व्यास परियोजना और मध्य प्रदेश की साझेदारी में चम्बल तथा सतपुड़ा परियोजनायें, इसी प्रकार की परियोजनायें है।

राजस्थान में कृषि और औद्योगिक विकास की भारी संभावनाओं को ध्यान में रखते हुये कोटा के पास 'राजस्थान आणविक विद्युत परियोजना' प्रारम्भ की गई तथा वहां 220-220 मेगावाट की दो इकाइयां स्थापित की गयीं ताकि राजस्थान का अपना कोई आधारभूत स्टेशन बन जाये जिस पर यह राज्य निर्भर रह सके। इसके बाद 1978 में कोटा ताप विद्युत केन्द्र का काम हाथ में लिया गया जिसकी अधिकतम उत्पादन क्षमता 850 मेगावाट बिजली होगी। इसकी 110-110 मेगावाट क्षमता की दो इकाइयां कायम की जा चुकी हैं। पहली इकाई जनवरी, 83 में तथा दूसरी इकाई जुलाई, 83 में स्थापित की गयी।

ये दोनों इकाइयां अब अपनी पूरी क्षमता से काम करने लगी हैं। केन्द्रीय विद्युत अभिकरण ने इन इकाइयों की विद्युत उत्पादन क्षमता का लक्ष्य मार्च, 84 तक 3750 लाख यूनिट प्रस्तावित किया था किन्तु मार्च, 84 तक इन दोनों इकाइयों से लक्ष्य से अधिक 5775 यूनिट बिजली उत्पादित की जा चुकी है। एक नव-स्थापित ताप विद्युत परियोजना के लिये यह अच्छी उपलब्धि है। इसी परियोजना के दूसरे चरण में 210-210 मेगावाट क्षमता की दो और इकाइयां स्थापित करने का कार्य प्रगति पर है। राज्य के नागरिकों को बिजली सुलभ कराने की दिशा में यह एक महत्वपूर्ण कदम है।

वर्तमान हालात

राजस्थान आणविक विद्युत परियोजना और कोटा ताप विद्युत परियोजना से उत्पन्न होने वाली बिजली और विभिन्न अन्तरराज्यीय परियोजनाओं सहित वर्तमान में राजस्थान की विद्युत क्षमता कुल 1713 मेगावाट है। इसमें सिंगरौली सुपर पावर स्टेशन से मिलने वाली 123.52 मेगावाट बिजली भी शामिल है। सिंगरौली सुपर पावर स्टेशन केन्द्रीय सरकार की परियोजना है जिसमें पूरी क्षमता से दो हजार मेगावाट बिजली पैदा होने पर राजस्थान को कुल 300 मेगावाट बिजली मिलेगी।

औद्योगिक एवं कृषि जगत के उपभोक्ताओं की आकांक्षायें पूरी करने के लिये सरकार के प्रयास राज्य में बिजली पैदा करने की क्षमता बढ़ाने तक ही सीमित नहीं हैं बल्कि वह बारहमासी नदियों पर पन-बिजली की दृष्टि से समृद्ध राज्यों की परियोजनाओं में हिस्सेदारी भी रख रही है। इसके अलावा केन्द्रीय विद्युत उत्पादन क्षेत्र से भी राज्य के लिये बिजली प्राप्त करने के लिए प्रयत्न जारी हैं।

लिग्नाइट पर आधारित थर्मल परियोजनाएं

राजस्थान को स्वयं का कोयले का कोई भण्डार नहीं है। राज्य ने ऊर्जा के भूमिगत साधन खोज निकाले हैं। बीकानेर जिले के पलाना में लिग्नाइट के बहुत बड़े भण्डार मिले हैं। केन्द्रीय ऊर्जा प्राधिकरण ने इस योजना को स्वीकृति प्रदान कर दी है। इस योजना पर शीघ्र ही कार्य प्रारम्भ होने की आशा है।

रावी-व्यास और सतलज नदियों पर परियोजनाएं

राज्य ने रावी, व्यास और सतलज नदियों के पानी पर आधारित पन बिजली परियोजना में अपने हिस्से को प्राप्त करने के लिये अपना दावा पेश किया है। ये परियोजनाएं हैं—नायपा-झाकड़ी प्रोजेक्ट (1020 मेगावाट), थीन डेम पावर प्रोजेक्ट (134 मेगावाट), मुकरियन प्रोजेक्ट (207 मेगावाट), आनन्दपुर साहब प्रोजेक्ट (134 मेगावाट) यू. बी. डी. सी. स्टेज-2 (45 मेगावाट), शापुर काडी प्रोजेक्ट (94 मेगावाट), वेयराबून प्रोजेक्ट (180 मेगावाट) तथा सलाल प्रोजेक्ट (330 मेगावाट)।

हिमाचल प्रदेश से साझे में परियोजनाएं

राजस्थान और हिमाचल प्रदेश के बीच 1981 में हुए समझौते के अनुसार राजस्थान कोल-डेम प्रोजेक्ट मे 51 प्रतिशत हिस्सा प्राप्त करने का हकदार होगा। सतजल नदी के 6 किलोमीटर ऊपर की ओर 600 मेगावाट क्षमता वाला देहर पावर प्लान्ट लगाया जायेगा। इसके अलावा हिमाचल प्रदेश 3x40 मेगावाट क्षमता की स्थापित की जाने वाली संजय विद्युत परियोजना की अतिरिक्त बिजली राजस्थान राज्य को देगा।

ट्रान्समिशन लाइनों का विस्तार

1949 में राजस्थान निर्माण के समय राज्य मे व्यावहारिक रूप से कोई भी ट्रान्समिशन लाइन नहीं थी। राज्य में 2501.737 किलोमीटर 220 के. वी. व 5618.83 किलोमीटर 132 के. वी. ट्रान्समिशन लाइनो तथा 220 के. वी. तथा 132 के. वी. विद्युत उप केन्द्रों का निर्माण किया गया है। इन केन्द्रों की कुल क्षमता क्रमश: 1970 एम. वी. ए. तथा 2088.5 एम. वी. ए. है। इसमे से गत तीन वर्षों में 2110. 76 किलोमीटर एम. वी. ए. तथा 1120.00 किलोमीटर इ. एच. वी. ट्रांसमिशन लाइनें डाली गयी।

इसके अतिरिक्त 15751 किलोमीटर लम्बी 33 के वी. लाइन तथा 178.28 एम.वी.ए. 33/11 के.वी. क्षमता के सब स्टेशनों का निर्माण कराया गया। इन ट्रान्समिशन लाइनों व सब स्टेशनों के निर्माण से एक ओर जहां बिजली वितरण को बनाये रखा जा सकता है वहां पर्याप्त मात्रा में बिजली के वोल्टेज को समान बनाये रखने मे भी मदद मिलती है। वर्ष 1984-85 में 1251.5 किलोमीटर ट्रान्समिशन

लाइनें तथा उप-ट्रान्समिशन लाइनें तथा उप केन्द्रों के निर्माण का कार्यक्रम है। ये सब परियोजनाएं राज्य की खुशहाली का आधार बनेंगी।

ग्रामीण विद्युतीकरण

राजस्थान निर्माण के समय कुल 42 कस्बों और गांवों में ही बिजली थी तथा कुछ कुंए ही विद्युतीकृत थे। वर्तमान में कुल मिलाकर 20 हजार 10 गांवों एवं कस्बों में बिजली पहुंचाई गयी जो राज्य के कुल कस्बों एवं गांवों का 58 प्रतिशत है। साथ ही फरवरी, 1984 के अन्त तक 2 लाख 89 हजार 845 सिंचाई पम्पसेटों का भी विद्युतीकरण किया जा चुका है। जन जाति उपयोजना के अन्तर्गत इस वर्ष 115 आदिवासी गांवों में बिजली पहुंचाई गई तथा 601 पम्पसेटों का विद्युतीकरण किया गया।

विद्युतमण्डल उद्यमियों को कई रियायतें और सुविधायें देता है। कुछ शर्तों पर लघु और मध्यम औद्योगिक उपभोक्ताओं से सर्विस लाइन पर कोई व्यय भार नहीं लिया जाता। उद्योगों व ग्रामीण क्षेत्रों में विद्युत की मांग को पूरा करने हेतु विद्युत मण्डल निरन्तर चेष्टा करता है।

वैकल्पिक ऊर्जा

जनसंख्या वृद्धि के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों में ईंधन की आवश्यकता बढ़ती जा रही है। पारम्परिक ईंधन स्रोत लकड़ी व कोयला मंहगे होते जा रहे हैं। इन ऊर्जा के वैकल्पिक स्रोत एवं ईंधन के कम उपयोग की दृष्टि से राजस्थान में गम्भीरता से कार्य किया जा रहा है। इनमे से दो कार्यक्रमों में उल्लेखनीय प्रगति अर्जित की गई है।

बायो गैस

राज्य में विगत 16 वर्षों से बायो गैस संयंत्र स्थापित किये जाने का कार्य खादी ग्रामोद्योग निगम के माध्यम से किया जा रहा था। परन्तु इस कार्य की महत्ता को दृष्टिगत रख राज्य सरकार ने 1979-80 में यह कार्यक्रम विशिष्ठ योजना संगठन को सौंप दिया। मार्च, 1983 तक राज्य मे 3661 बायो गैस सयत्रो की स्थापना की गई थी। 1983-84 में इस कार्य को और गतिशीलता दी गई तथा 2525 बायो गैस संयंत्रों की स्थापना कर दी गई। वर्ष 1984-85 के दौरान 6525 संयंत्र स्थापित किए गए जो एक कीर्तिमान है।

निर्धूम चूल्हे

ईंधन की बचत के उद्देश्य से राजस्थान में केन्द्रीय सरकार के तकनीकी मार्गदर्शन मे ग्रामीण क्षेत्रों में धुआरहित चूल्हो की स्थापना का कार्यक्रम 1 अप्रैल 1985 से प्रारम्भ किया गया। गांव-गांव इस कार्यक्रम का प्रचार किया गया। अब तक 560 गांवों मे 1 लाख 35 हजार निर्धूम चूल्हे स्थापित किये जा चुके हैं।

I T I

राजस्थान मे भारतीय तकनीकी संस्थान द्वारा "सहयोग मॉडल" का निर्धूम चूल्हा उपयोग में लाया जा रहा है।

इस योजना में जहां ग्रामीण महिलाओं को नेत्रों व फेफड़ों को धुंए से होने वाले कुप्रभाव से राहत मिलती है वही परिवार के अन्य लोगो को स्वास्थ्य लाभ होता है। वन संरक्षण एव पर्यावरण सुधार के साथ-साथ ईंधन की भी काफी बचत होती है। सवा लाख चूल्हों से प्रतिदिन 5 लाख किलो या 500 टन ईंधन की बचत सम्भव हुई है। यदि एक वृक्ष की क्षमता 1 टन लकड़ी के बराबर मान ली जाय तो 500 पेड़ों के जीवन की रक्षा सम्भव हुई है।

21
पेयजल

राजस्थान क्षेत्रफल के आधार पर देश का दूसरा सबसे बड़ा राज्य है परन्तु यहां पेयजल प्रचुर मात्रा में उपलब्ध नहीं है। 1981 की जनसंख्या के आधार पर इसकी कुल जनसख्या 3.42 करोड़ है–जिसमे से 34968 आबाद ग्रामों में 2.71 करोड़ लोग निवास करते हैं तथा 201 शहरों में 72 लाख जनसंख्या रहती है। राज्य में 24037 ग्राम पेयजल की दृष्टि से समस्याग्रस्त माने जाते हैं।

वर्षा की कमी के कारण राज्य के आधे मरुस्थलीय भाग मे पानी 200 मीटर तक गहरा है। कई स्थानो पर खारा पानी है तो कही जल स्रोत दूर-दूर तक उपलब्ध नही है। यदि है तो वहां अत्यधिक फ्लोराइड, नाइट्रेट आदि रसायनों के कारण पीने के उपयुक्त नहीं है। पहाड़ी क्षेत्रों में भू-गर्भ जल स्रोत सीमित हैं तथा इन स्रोतों मे नारू रोग कीटाणुयुक्त साईक्लोप अधिकतर पाये जाते हैं। प्रतिवर्ष सूखे की स्थिति के कारण यहां की जनसंख्या को पशुधन की सुरक्षा के लिए पड़ोसी राज्यों में पलायन करना पडता है।

राजस्थान गठन के बाद पेयजल समस्या के निराकरण हेतु निरन्तर प्रयत्न किये गये हैं जबकि रियासती युग में इस ज्वलंत समस्या के निराकरण के लिए कुछ नही किया गया। सुरक्षित जल प्रदाय सुविधा केवल जयपुर, जोधपुर, कोटा, बीकानेर और डूंगरपुर शहरों मे उपलब्ध थी। शेखावाटी के कुछ कस्बो मे बहुत छोटे पैमाने पर जलआपूर्ति के कुछ प्रबन्ध किये गये थे। कुछ उदारमना दानशील लोग कुएं खुदवाते थे तथा इन कुओ से पानी बस्ती तक पहुंचाने की व्यवस्था करते थे परन्तु यह व्यवस्था बहुत सीमित होती थी। सम्पूर्ण ग्रामीण क्षेत्र उपेक्षित था। जोधपुर एवं बीकानेर दो रियासतो मे पानी के लिए खोजबीन शुरू की गई थी तथा सर विलियम स्टेम्पस जैसे विदेशी विशेषज्ञों को बुला कर राय ली गई थी। जोधपुर में इन इलाको के लिए एक हनुमंत परोपकारिक कोष स्थापित किया गया था और बीकानेर मे भी सादुल नि:शुल्क जलपूर्ति कोष बनाया गया था। इन कोषों मे से कुछ राशि गांवों में पेयजल के लिए खर्च भी की गई थी लेकिन इससे कुछ विशेष नहीं किया जा सका।

राजस्थान के निर्माण के बाद लोकतान्त्रिक प्रशासन ने मानव की इस मूलभूत आवश्यकता को पूरा करने की दिशा मे सुनियोजित ढंग से कार्य शुरू किया। चिंतन प्रारम्भ हुआ। पेयजल समस्या की दृष्टि से राज्य को चार भागों मे विभाजित किया गया – (1) मरुस्थलीय क्षेत्र जिसमें बीकानेर, चूरू, नागौर, बाड़मेर व जैसलमेर जिले लिये गये। (2) अर्द्ध मरुस्थलीय क्षेत्र जिसमें झुंझुनू, सीकर, जयपुर, टोंक, सवाईमाधोपुर, अलवर, भरतपुर, जोधपुर, पाली, जालौर व गगानगर जिले लिये गये। (3) पहाड़ी क्षेत्र – जिसमें कोटा, बून्दी, झालावाड़, भीलवाड़ा, अजमेर व सिरोही जिले लिये गये। इन जिलों की वर्षा की स्थिति, भौगोलिक परिस्थितियों तथा जल के वर्तमान स्रोतों की जांच की गई। यह पाया गया कि इन क्षेत्रों मे भिन्न भिन्न स्थितियां है। समस्या की गम्भीरता भी अलग-अलग है। एक ही जिले के एक गांव की समस्या दूसरे गांव की समस्या से नही मिलती। अधोभूमि जल का स्तर 30 फुट से लेकर 350 फुट तक जाता है। उपलब्ध पानी की किस्म में भी अन्तर है। कही पानी हल्का और मीठा है। पानी कुछ इलाकों मे भारी है और खारा है। पानी 350 और 400 फुट गहरा मिलता है। यहां भी कई बार खारा पानी निकल जाता है। जिसे मनुष्य ही क्या पशु भी भरपेट पीने के बाद मर जाते हैं। ऐसे क्षेत्र भी हैं जहां पीने के पानी का कोई स्रोत ही नही है। लोग रोज पाच से 20 मील तक पानी लाते जाते हैं। ऐसे गाव है जहां वर्षा के पानी को कुओं और टांकों मे जमा कर लिया जाता है और उसका उपयोग वर्ष भर पूरी कजूसी के साथ खारा पानी मिलाकर किया जाता है। कुछ गांवों में अधोभूमि जल मिलता है— परन्तु पर्याप्त मात्रा में नही मिलता। कई स्थानो पर गर्मियो में कुओं का पानी सूख जाता है और जल स्तर इतना घट जाता है कि पानी निकालना सम्भव नही रहता। अनेक गांवों में अधोभूमि जल मीठा है पर्याप्त है तो वहा कुओं की सख्या कम है। एक अनुमान के अनुसार एक कुए पर 400 से अधिक व्यक्ति निर्भर नही रह सकते। कई स्थानों पर तालाबों व टांकों में भरा पेयजल बिना शुद्ध किये काम मे लाया जाता है क्योंकि इसे स्वच्छ बनाने का कोई साधन नहीं। कुछ स्थानों पर पेडीवाले कुओं व बावड़ियों से पानी लाया जाता है, जहां मनुष्य व जानवर भी नहाते-धोते हैं। ऐसे स्थानों में ही नारू जैसे भयंकर रोग फैलते हैं। दो दशको तक राज्य मे "नारू" का ऐसा भयानक प्रकोप था कि कई बार पूरे गाव मे एक भी व्यक्ति नहीं मिल पाता था जिसके नारू नहीं निकला हो। कुछ स्थानों पर पानी में फ्लोराइड व अन्य प्राकृतिक रासायनिक तत्त्व इतनी अधिक मात्रा मे मिले हुए हैं कि इसके पीने से लोग शारीरिक विकृतियों के शिकार हो गये हैं। नागौर जिले की बांका पट्टी में आज भी ऐसे कुबड़े और विकलांग मिल सकते हैं जिनका कसूर केवल एक ही था कि उन्होने अपनी प्यास उस पानी से बुझा ली थी।

इस पृष्ठभूमि में 1958 में सरकार ने संसद सदस्य स्वर्गीय हरिश्चन्द्र माथुर की

ग्रध्यक्षता में एक पेयजल समस्या समाधान समिति नियुक्त की। समिति ने एक विस्तृत प्रतिवेदन 1959 में सरकार को दिया। इसने नगरीय और ग्रामीण दोनों क्षेत्रों की पेयजल समस्याओं का ग्रध्ययन कर जो सिफारिशें दी। उन्हें क्रियान्वित राज्य के जलप्रदाय विभाग द्वारा कराया गया किन्तु इन सिफारिशों का आधार 1951 की जनगणना थी। इन्ही की ग्रध्यक्षता में ग्रामीण पेयजल योजनाओं के बारे में परामर्श देने के लिए सरकार ने एक जलबोर्ड का गठन किया। बाद में इस बोर्ड का पुनर्गठन किया गया और इसका नाम जलदाय परामर्श मण्डल कर दिया गया।

राज्य मे सर्वप्रथम पंचायत विभाग द्वारा कुछ पेयजल योजनाएं बनाई गईं। इसके बाद जल बोर्ड ने नये कुंओं का निर्माण, पुराने कुओं व तालाबों की मरम्मत आदि कार्य किये। पेयजल समस्या समाधान समिति की सिफारिश के अनुसार राज्य मे 1965 मे एक स्वतन्त्र जन स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग का गठन किया गया। इससे पूर्व यह विभाग सार्वजनिक निर्माण विभाग का एक भाग था।

राज्य मे 1951 में पहली पंचवर्षीय योजना शुरू हो चुकी थी। इससे पूर्व की दो घटनाएं उल्लेखनीय हैं। भारत सरकार से देहाती क्षेत्रों मे जल योजनाएं चलाने के लिए राजस्थान निर्माण के समय 125 लाख रुपये का अनुदान मिला था। पंचायत विभाग को यह कार्य मिला था जो तीन चार सालों तक केवल 20 लाख रुपयो का उपयोग कर सका। फिर यह कार्य जलबोर्ड को दिया गया। इसने 1955-56 मे 98 38 लाख रुपये व्यय किये। इससे 5 हजार से अधिक कुओं की मरम्मत नये कुओं का निर्माण, बावड़ियों की पेड़ियां हटाना, तालाबो का निर्माण व मरम्मत की गई।

दूसरी घटना वर्ष 1950-51 की है जब 17 शहरों मे दस लाख रुपये की लागत की कतिपय छुटपुट जल योजनाएं बनाई गई थीं जिनमें सार्वजनिक स्थानों पर नल लगाकर प्रतिव्यक्ति 5 गैलन पानी प्रतिदिन देने की व्यवस्था की गई थी और इनका सचालन नगरपालिकाओं को दे दिया गया। इनमें से अधिकांश योजनाएं अर्थाभाव व तकनीकी कमियों से बन्द हो गईं।

अब योजनाबद्ध विकास का युग शुरू हो गया था। अजमेर व अनुदान से स्वास्थ्य मंत्रालय की एक योजना के तहत दो विशेष अनुसंधान मंडल स्थापित किये गये। इन मण्डलो ने ढाई वर्ष तक परिश्रम कर समस्त गांवों की समस्या के आंकड़े एकत्रित किये। प्रत्येक पंचायत समिति के अनुसार पेयजल का मास्टर प्लान तैयार किया गया। फिर समस्त 232 पंचायत समितियों के मास्टर प्लान को जिलेवार एकत्र करके राज्य के 26 जिलो के मास्टर प्लान को स्वास्थ्य मन्त्रालय को भेजा गया। केन्द्र ने इसके आधार पर प्राथमिकताएं तय की।

प्रथम बार राज्य के ग्रामीण इलाकों में 1972 मे उपलब्ध स्रोतों का सर्वे

निक विश्लेषण किया गया। इसके अनुसार 1971 की जनगणना के आधार पर राज्य के कुल 35305 आबाद गांवों में से 24037 गांव पेयजल समस्याग्रस्त पाये गये। इनमें 11,317 गांव ऐसे हैं जहां पीने का पानी 1.6 किलोमीटर दूर है या पानी सतह से 15 मीटर से ज्यादा गहरा है, 8596 गांव ऐसे हैं जहां पानी में खनिज-लवण या फ्लोराइड अत्यधिक मात्रा में घुले हुए हैं तथा 4124 गांव ऐसे हैं जहां पानी का स्रोत नारू रोग अथवा हैजे आदि रोगों के कीटाणुओं से ग्रस्त है।

प्रदेश में 1971 की जनगणना के आधार पर कुल 33305 आबाद ग्रामों में से 24037 गांवों को पेयजल की दृष्टि से समस्याग्रस्त घोषित किया गया था। मार्च, 1980 के अन्त तक कुल 4859 गांवों में पेयजल उपलब्ध कराया जाना संभव हो सका। इसके विपरीत छठी पंचवर्षीय योजना के प्रथम चार वर्षों में मार्च 84 के अन्त तक 14494 गांवों में पेयजल उपलब्ध करा दिया गया। मार्च 1984 तक लाभान्वित समस्याग्रस्त एवं असमस्याग्रस्त गांवों में विभिन्न सुविधाओं की स्थिति निम्न प्रकार है—हैण्ड पम्पों के माध्यम से 12499, टी. एण्ड एस. पी. एण्ड टी. एण्ड पाइप के माध्यम से 3711, क्षेत्रीय योजनाओं के माध्यम से 3063 तथा अन्य 80 गांवों को पेयजल सुलभ करा दिया गया है।

जल स्वास्थ्य अभियान्त्रिकी विभाग ने इस अभियान को वर्ष 1984-85 के दौरान और अधिक गतिशीलता प्रदान की है, जिसके फलस्वरूप मार्च, 1985 के अन्त तक राज्य में 22547 गावों में स्थायी पेयजल सुलभ कराने की व्यवस्था कर ली है।

1984 85 के दौरान ही शुरू में देश की सबसे बड़ी ग्रामीण जलप्रदाय योजना गधेली-साहबा-तारानगर प्रारम्भ की है, जिससे कुल 353 गाव लाभान्वित होंगे। अन्तर्राष्ट्रीय जल प्रदाय सेनीटेशन दशक वर्ष 1981 से 1990 तक मनाया जा रहा है। इस दशक के अन्त तक समस्त ग्रामो में पेयजल उपलब्ध कराने की योजना है। शहरी योजनाओं का पुनर्गठन व संवर्धन जिससे पचास हजार तक की आबादी के नगरों में 100 लीटर प्रति व्यक्ति प्रति दिन तथा इससे अधिक आबादी के नगरों मे 135 लीटर प्रति व्यक्ति प्रति दिन पेयजल उपलब्ध कराने का लक्ष्य है।

इसके अतिरिक्त 80% नगरीय जन संख्या हेतु मल निकासी की सुविधा भी उपलब्ध कराई जानी है। राजस्थान मे इस योजना के अन्तर्गत 1981 के मूल्यों के आधार पर 721 करोड रुपये की आवश्यकता प्रतिपादित की गई है। परन्तु इतनी धनराशि उपलब्ध नही होने के कारण ग्रामीण क्षेत्रों में पेयजल सुविधा उपलब्ध कराने की दृष्टि से राज्य की छठी पचवर्षीय योजना के अन्तर्गत ही जो राशि जल

प्रदाय योजना के अन्तर्गत स्वीकृत की गई है, उसी के तहत यह चेष्टा की जा रही है कि अधिक से अधिक गांवों को स्थायी पेयजल सुविधा उपलब्ध करा दी जावे।

विश्व बैंक एवं अन्तर्राष्ट्रीय विकास अभिकरण ने जन-स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग को विभिन्न योजनाओं के लिए छः करोड़ डालर का ऋण स्वीकृत किया है। इस राशि के उपयोग के लिए निम्नलिखित योजनाओं के अन्तर्गत कार्य हाथ में लिया लिया है :–

(1) जयपुर, जोधपुर व बीकानेर की मल निकासी योजनाओं का सवर्धन 14.75 करोड़ रुपये के प्रावधान में से किया जाना प्रस्तावित है।

(2) जयपुर, जोधपुर, बीकानेर व कोटा की जलप्रदाय योजना के पुनर्गठन के लिए 69.56 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है।

(3) राज्य के दस जिलों–अजमेर, बीकानेर, कोटा, झंझुनू, सीकर, चूरु श्रीगंगानगर, जोधपुर, पाली एवं नागौर के 2500 समस्याग्रस्त गांवों को पेयजल उपलब्ध कराने के लिए 53.38 करोड़ रुपये का प्रावधान इस योजना का एक भाग है।

यह उल्लेखनीय है कि राजस्थान गठन के बाद से लेकर अब तक राज्य के समस्त 201 नगरो मे शुद्ध पेयजल की व्यवस्था की जा चुकी है जिससे 1981 की जनगणना के अनुसार 72 लाख नगरीय जनता लाभान्वित हो रही है। परन्तु नगरीय योजनाओ मे स्त्रोतों में कमी व अधिक जल की मांग को दृष्टिगत रखते हुए वर्तमान योजनाओं का पुनर्गठन किया जा रहा है। जिन योजनाओं का वर्ष 1983-84 में पुनर्गठन किया गया है उनमे सुजानगढ, झालावाड़, झालरापाटन, कुम्हेर व जोधपुर नगर प्रमुख हैं।

सातवी पंचवर्षीय योजना के लक्ष्यो में प्रमुख रूप से व सिद्धान्ततः यह माप-दण्ड रखा गया है कि राज्य के शेष सभी समस्याग्रस्त गावो को पेयजल उपलब्ध करा दिया जाय तथा ऐसे सभी गांवों व ढाणियों जिनकी आबादी 250 से अधिक है पेयजल उपलब्ध कराया जाय तथा इसी के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों मे सेनीटेशन की सुविधा उपलब्ध कराने का कार्य भी इस योजना के अन्तर्गत प्रारम्भ किये जाने का प्रस्ताव है।

जल निस्सारण योजना

राज्य के 5 बड़े नगरों में जल निस्सारण योजना वर्तमान में प्रगति कर रही है— इनमें से 3 योजनाएं अन्तर्राष्ट्रीय विकास अभिकरण के अन्तर्गत तथा दो विभिन्न वित्तीय स्त्रोतों के अन्तर्गत क्रियान्वित की जा रही हैं।

(1) निस्सारण योजना, जयपुर : जयपुर में उत्तर क्षेत्र योजना का कार्य पूरा हो चुका है। इस योजना के अन्तर्गत डाली गई सीवर लाइनें तथा निस्सारण जल शोध एवं संयंत्र सुचारू रूप से कार्य कर रहे हैं। इस संयंत्र के द्वारा प्रतिदिन खाद का उत्पादन भी किया जा रहा है जिसकी उर्वर शक्ति काफी अच्छी है। 1980-81 से विश्व बैंक परियोजना के अन्तर्गत 7.7 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत से एक अन्य योजना जयपुर में प्रगति पर है। इस योजना के अन्तर्गत नगर के भीतरी भागों में छोटी सीवर लाइनें, दक्षिण क्षेत्र में मुख्य लाइनें डालना व श्योपुर-सांगानेर मे प्रारम्भिक शोध एवं संयंत्र के कार्य प्रस्तावित हैं।

(2) जल निस्सारण योजना, जोधपुर : विश्व बैंक परियोजना के अन्तर्गत जोधपुर नगर में सीवरेज योजना के अन्तर्गत 3.35 करोड़ रुपये की लागत से कार्य किया जाना है। इस योजना के तहत मुख्य एवं छोटी लाइनें डालने के साथ-साथ प्रारम्भिक शोध एवं संयंत्र के निर्माण का कार्य प्रस्तावित है। जोधपुर नगर मे कच्चे तहारतों को फ्लश में बदलने का कार्य लगभग पूरा हो चुका है।

(3) जल निस्सारण योजना, बीकानेर: बीकानेर नगर के लिए सूरसागर क्षेत्र के आबादी वाले क्षेत्र में मुख्य लाइनों के लिए 65 लाख रुपये की योजना 1977-78 में स्वीकार की गई थी जो लगभग पूरी हो चुकी है। इसके अतिरिक्त विश्व बैंक परियोजना के तहत 3.70 करोड़ रु. की एक अन्य योजना स्वीकृत हो चुकी, जिसके अन्तर्गत बाकी बची अन्य योजनाओं को शामिल कर दिया गया है। इसके साथ मुख्य एवं छोटी सीवर लाइनें डालने, शोधन संयंत्र की स्थापना तथा कच्चे तहारतों को फ्लश में परिवर्तित करने का कार्य प्रस्तावित है।

(4) जल निस्सारण योजना, उदयपुर: उदयपुर मे समस्त परकोटा क्षेत्र में व बाहरी क्षेत्र मे जल निस्सारण के लिए एक योजना 2.27 करोड़ रु. की लागत से वर्ष 1980-81 मे स्वीकृत की गई थी। इस योजना पर अभी कार्य प्रगति पर है।

(5) जल निस्सारण योजना, कोटा: 1.58 करोड़ रु. की लागत से कोटा शहर की आबादी में मुख्य सीवर लाइन डालने हेतु वर्ष 1977-78 मे जल निस्सारण योजना स्वीकृत की गई थी। इस योजना के अन्तर्गत जीवन बीमा निगम व कोटा नगर परिषद से क्रमशः 83 लाख व 44 लाख रुपये ऋण के रूप मे प्राप्त हो चुके हैं तथा जल निस्सारण का कार्य वर्तमान मे प्रगति पर है।

उपरोक्त सामान्य परियोजनाओं के अन्तर्गत राजस्थान में ... परि-योजनाओं पर भी काम किया जा रहा है, जिससे पिछड़े वर्ग ... क्षेत्र में आवास कर रही आबादी को पेयजल सुविधा उपलब्ध कराना

प्रदाय योजना के अन्तर्गत स्वीकृत की गई है, उसी के तहत यह चेष्टा की जा रही है कि अधिक से अधिक गांवों को स्थायी पेयजल सुविधा उपलब्ध करा दी जावे।

विश्व बैंक एवं अन्तर्राष्ट्रीय विकास अभिकरण ने जन-स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग को विभिन्न योजनाओं के लिए छः करोड़ डालर का ऋण स्वीकृत किया है। इस राशि के उपयोग के लिए निम्नलिखित योजनाओं के अन्तर्गत कार्य हाथ मे लिया लिया है :—

(1) जयपुर, जोधपुर व बीकानेर की मल निकासी योजनाओं का संवर्धन 14.75 करोड़ रुपये के प्रावधान में से किया जाना प्रस्तावित है।

(2) जयपुर, जोधपुर, बीकानेर व कोटा की जलप्रदाय योजना के पुनर्गठन के लिए 69.56 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया है।

(3) राज्य के दस जिलों—अजमेर, बीकानेर, कोटा, झुंझुनू, सीकर, चूरू श्रीगंगानगर, जोधपुर, पाली एवं नागौर के 2500 समस्याग्रस्त गांवो को पेयजल उपलब्ध कराने के लिए 53.38 करोड़ रुपये का प्रावधान इस योजना का एक भाग है।

यह उल्लेखनीय है कि राजस्थान गठन के बाद से लेकर अब तक राज्य के समस्त 201 नगरो मे शुद्ध पेयजल की व्यवस्था की जा चुकी है जिससे 1981 की जनगणना के अनुसार 72 लाख नगरीय जनता लाभान्वित हो रही है। परन्तु नगरीय योजनाओ में स्त्रोतों मे कमी व अधिक जल की मांग को दृष्टिगत रखते हुए वर्तमान योजनाओं का पुनर्गठन किया जा रहा है। जिन योजनाओं का वर्ष 1983-84 में पुनर्गठन किया गया है उनमे सुजानगढ, झालावाड़, झालरापाटन, कुम्हेर व जोधपुर नगर प्रमुख हैं।

सातवीं पंचवर्षीय योजना के लक्ष्यो मे प्रमुख रूप से व सिद्धान्ततः यह मापदण्ड रखा गया है कि राज्य के शेष सभी समस्याग्रस्त गावो को पेयजल उपलब्ध करा दिया जाय तथा ऐसे सभी गांवों व ढाणियों जिनकी आबादी 250 से अधिक है पेयजल उपलब्ध कराया जाय तथा इसी के साथ-साथ ग्रामीण क्षेत्रों में सेनीटेशन की सुविधा उपलब्ध कराने का कार्य भी इस योजना के अन्तर्गत आरम्भ किये जाने का प्रस्ताव है।

जल निस्सारण योजना

राज्य के 5 बडे नगरो में जल निस्सारण योजना वर्तमान में प्रगति कर रही है— इनमे से 3 योजनाएं अन्तर्राष्ट्रीय विकास अभिकरण के अन्तर्गत तथा दो विभिन्न वित्तीय स्त्रोतों के अन्तर्गत क्रियान्वित की जा रही हैं।

(1) निस्सारण योजना, जयपुर : जयपुर में उत्तर क्षेत्र योजना का कार्य पूरा हो चुका है । इस योजना के अन्तर्गत डाली गई सीवर लाइनें तथा निस्सारण जल शोध एवं संयंत्र सुचारू रूप से कार्य कर रहे हैं । इस संयंत्र के द्वारा प्रतिदिन खाद का उत्पादन भी किया जा रहा है जिसकी उर्वर शक्ति काफी अच्छी है । 1980-81 से विश्व बैंक परियोजना के अन्तर्गत 7.7 करोड़ रुपये की अनुमानित लागत से एक अन्य योजना जयपुर में प्रगति पर है । इस योजना के अन्तर्गत नगर के भीतरी भागों में छोटी सीवर लाइनें, दक्षिण क्षेत्र में मुख्य लाइनें डालना व श्योपुर-सांगानेर में प्रारम्भिक शोध एवं संयंत्र के कार्य प्रस्तावित हैं ।

(2) जल निस्सारण योजना, जोधपुर : विश्व बैंक परियोजना के अन्तर्गत जोधपुर नगर में सीवरेज योजना के अन्तर्गत 3.35 करोड़ रुपये की लागत से कार्य किया जाना है । इस योजना के तहत मुख्य एवं छोटी लाइनें डालने के साथ-साथ प्रारम्भिक शोध एवं संयन्त्र के निर्माण का कार्य प्रस्तावित है । जोधपुर नगर में कच्चे नहारतों को फ्लश में बदलने का कार्य लगभग पूरा हो चुका है ।

(3) जल निस्सारण योजना, बीकानेर: बीकानेर नगर के लिए सूरसागर क्षेत्र के आबादी वाले क्षेत्र में मुख्य लाइनों के लिए 65 लाख रुपये की योजना 1977-78 में स्वीकार की गई थी जो लगभग पूरी हो चुकी है । इसके अतिरिक्त विश्व बैंक परियोजना के तहत 3.70 करोड़ रु. की एक अन्य योजना स्वीकृत हो चुकी है, जिसके अन्तर्गत बाकी बची अन्य योजनाओं को शामिल कर दिया गया है । इसके साथ मुख्य एवं छोटी सीवर लाइनें डालने, शोधन सयंत्र की स्थापना तथा कच्चे नहारतो को फ्लश में परिवर्तित करने का कार्य प्रस्तावित है ।

(4) जल निस्सारण योजना, उदयपुर: उदयपुर मे समस्त परकोटा क्षेत्र में व बाहरी क्षेत्र में जल निस्सारण के लिए एक योजना 2.27 करोड़ रु. की लागत से वर्ष 1980-81 में स्वीकृत की गई थी । इस योजना पर अभी कार्य प्रगति पर है ।

(5) जल निस्सारण योजना, कोटा: 1.58 करोड़ रु. की लागत से कोटा शहर की आबादी मे मुख्य सीवर लाइन डालने हेतु वर्ष 1977-78 में जल निस्सारण योजना स्वीकृत की गई थी । इस योजना के अन्तर्गत जीवन बीमा निगम व कोटा नगर परिषद से क्रमशः 83 लाख व 44 लाख रुपये ऋण के रूप में प्राप्त हो चुके है तथा जल निस्सारण का कार्य वर्तमान मे प्रगति पर है ।

उपरोक्त सामान्य परियोजनाओं के अन्तर्गत राजस्थान में कुछ ऐसी परियोजनाओं पर भी काम किया जा रहा है, जिससे पिछड़े वर्ग व परिगणित क्षेत्र मे आवास कर रही आबादी को पेयजल सुविधा उपलब्ध कराना प्रमुख है ।

समाज के कमजोर वर्गों, अनुसूचित जाति, जनजाति एवं कच्ची बस्ती के निवासियों को पेयजल उपलब्ध कराने के उद्देश्य से विभाग निरन्तर प्रयत्नशील है। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत ऐसे मोहल्लों व बस्तियों में पेयजल उपलब्ध कराने का प्रावधान है जहां 75% से अधिक आबादी अनुसूचित जाति की है।

राज्य के डूंगरपुर–बांसवाड़ा जिले व उदयपुर, चित्तौड़गढ़ तथा सिरोही जिले के कुछ भाग आदिवासी जनजाति बाहुल्य क्षेत्र के अन्तर्गत आते हैं– इन क्षेत्रों में पेयजल समस्या के समाधान हेतु परिगणित क्षेत्र विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत विभिन्न कार्य किये जा रहे हैं तथा जनवरी, 84 तक इस कार्यक्रम के तहत 3136 गांव लाभान्वित हो चुके हैं।

22
उद्योग

क्षेत्रफल के लिहाज से राजस्थान भले ही आज देश का दूसरा सबसे बड़ा राज्य है किन्तु औद्योगिक विकास की दृष्टि से आज भी यह प्रदेश देश के सबसे पिछड़े राज्यों मे शुमार किया जाता है।

मरु प्रदेश कहे जाने वाले इस राज्य में औद्योगिक पिछड़ेपन का मुख्य कारण जहा एक ओर यहा की विषमतापूर्ण भौगोलिक संरचना है वहा दूसरी ओर सदियों तक इस प्रदेश मे सामन्ती शासन व्यवस्था के तहत औद्योगिक विकास की सुनिश्चित परिकल्पना का अभाव रहना भी रहा है। इसके बावजूद राजस्थान में औद्योगिक विकास के लिए आवश्यक बुनियादी उपादान यथा, कृषिजन्य पदार्थों का उत्पादन, खनिज एवं वन सम्पदा, विपुल पशुधन तथा ऊर्जा के परम्परागत व नवीन स्रोत प्रचुरता से उपलब्ध है। यदि इन उपादानों का सुव्यवस्थित रूप से इस्तेमाल किया जाये तो निःसन्देह राजस्थान देश मे औद्योगिक विकास की दृष्टि से अग्रणी समझे जाने वाले राज्यों की पंक्ति में शामिल हो सकता है।

राजस्थान में औद्योगिक विकास की दिशा में पिछले 35 वर्षों के दौरान हुए प्रयासों का ही प्रतिफल है कि जहां 1949 मे मात्र 207 पंजीकृत औद्योगिक इकाइयां थी वहां वर्तमान में 260 मध्यम व वृहद उद्योग तथा 1,12,018 लघु उद्योग इकाइयां कार्यरत हैं।

राजस्थान में औद्योगिक विकास की सरचना को मुख्यत: कृषि, वन सम्पदा पशुधन व खनिज आधारित उद्योगों मे वर्गीकृत किया जा सकता है।

कृषि आधारित उद्योग

राजस्थान की 70 प्रतिशत आबादी की आजीविका का मुख्य स्रोत कृषि व्यवसाय है और राज्य सरकार की कुल आय का लगभग 52 प्रतिशत राजस्व कृषि क्षेत्र से प्राप्त होता है। राजस्थान की कृषिजन्य पैदावार मे गेहूं, मक्का, चना, सरसों, तिल, मूंगफली, कपास, गन्ना व ग्वार आदि विविध प्रकार की उपज होती है जिनसे सम्बन्धित अनेक प्रकार के उद्योग स्थापित किये जा सकते हैं। राजस्थान नहर, चम्बल परियोजना तथा माही बजाज सागर जैसी महत्वाकांक्षी परियोजनाओं के

अलावा अनेक मध्यम व लघु परियोजनाओं के कारण सिंचाई एवं विद्युत सुविधा के विस्तार के फलस्वरूप राज्य में कृषि उत्पादन मे भारी वृद्धि हुई। इससे चीनी, कपड़े, ग्वारगम, चावल-दाल व तेल तथा वनस्पति घी आदि विविध प्रकार की उपभोक्ता वस्तुओं के नये-नये कारखाने स्थापित किए जा रहे हैं।

वनों पर आधारित उद्योग

राजस्थान के दक्षिण-पश्चिम छोर से लेकर प्रदेश के उत्तर-पूर्वी सीमान्त तक चली गई अरावली पर्वत माला के दक्षिणी एवं पूर्वी ढाल मे बसे बांसवाड़ा, डूंगरपुर, चित्तौड़गढ़, कोटा, बूंदी, झालावाड़, अलवर, अलवर, भरतपुर व सवाई माधोपुर जिलो मे यत्र-तत्र सघन वन पाये जाते हैं। इन वनों से जलाऊ व ईमारती लकड़ी के अलावा तेन्दू पत्ता, महुआ, खस, बांस, कई प्रकार की घास, गोंद, कत्था तथा अन्य प्रकार की उपयोगी चीजें प्राप्त होतीं हैं। यद्यपि इन उत्पादनों पर आधारित कोई बड़ा उद्योग लगाने की सम्भावना कम ही है तथापि दियासलाई, पैंकिग के कागज तथा इसी प्रकार की कुछ लघु व कुटीर उद्योग इकाइयां अवश्य स्थापित की जा सकती है।

पशुधन आधारित उद्योग

राजस्थान पशुधन की दृष्टि से देश का एक सम्पन्न राज्य है। देश मे कुल पशुधन का लगभग एक चौथाई भाग राजस्थान मे है। पशुधन से प्राप्त होने वाली खालो, चमड़े तथा ऊन के कारखाने लगाये जा सकते हैं। इसी प्रकार भेडो से प्राप्त होने वाली ऊन से होजरी के वस्त्रों को तैयार करने की सम्भावना भी काफी अच्छी है। दुधारू पशुओं के दूध के संकलन व विपणन तथा इससे निर्मित होने वाले विविध प्रकार के अन्य उत्पाद तैयार करने की दिशा में पिछले एक दशक से श्वेत क्राति अभियान के तहत राजस्थान राज्य को-आपरेटिव डेयरी फेडरेशन द्वारा काफी उल्लेखनीय कार्य किया जा रहा है। इनके अलावा पशुओं की हड्डी का चूरा तैयार करने तथा मछली उत्पादन से सबद्ध उद्योग लगाने की भी अच्छी सम्भावनायें हैं।

खनिज आधारित उद्योग

राजस्थान के विभिन्न अचलों मे पाये जाने वाले विविधवर्णी इमारती पत्थर के अलावा कई एक अन्य प्रकार के खनिज पदार्थ यथा; तांबा, मैंगनीज, अभ्रक, धीया पत्थर, चूने का पत्थर, टगस्टन, बेराइट, फलोरसपार, रॉक फास्फेट, एस्बेस्टोस आदि खनिजों पर आधारित उद्योग राज्य में ही लगाये जा सकते हैं।

बड़े उद्योग

राज्य में वर्तमान मे स्थापित वृहद् उद्योगों में सूती वस्त्र, चीनी, सीमेन्ट, वनस्पति घी के कारखानो के अलावा इन्जीनियरी उद्योग, विद्युत उपकरणों की उत्पादक इकाइयां, बिजली व पानी के मीटर, लोहे के इमारती सामान, मशीनें,

केबल (तार), बाल बियरिंग, रेल्वे वैगन तथा विविध प्रकार के रासायनिक उर्वरक व कृत्रिम धागों तथा होजरी की वस्तुयें तैयार करने के उद्योग कार्यरत हैं। टोंक में चमड़े का कारखाना, बीकानेर में ऊनी मिल तथा जस्ता, तांबा, कांच का सामान, तथा टायरों व ट्रकों के निर्माण के उद्योग लग चुके हैं तथा कई अन्य नये-नये प्रकार के उद्योगों की स्थापना की अच्छी सम्भावनायें हैं। डीडवाना व साभर मे नमक उत्पादन किया जाता है।

उद्योग-संकुल

राजस्थान में उपलब्ध विविध प्रकार के कृषि उत्पादों, खनिजों, वन संपदा तथा पशुधन पर आधारित उद्योग कायम करने के लिए राज्य मे एक सुस्पष्ट एवं गतिशील औद्योगिक नीति तथा औद्योगिक विकास का मजबूत आधारभूत ढांचा तैयार है। जिसके तहत राज्य के चुनींदा नगरों व कस्बों के इर्द-गिर्द ही नही अपितु दूरस्थ एवं उपस्थित आदिवासी एवं पिछड़े क्षेत्रों मे भी औद्योगिक विकास की सम्भावनाओं का समुचित दोहन किया जा सकता है। औद्योगिक विकास की संभावनाओ को मूर्तरूप देने के उद्देश्य से राज्य सरकार द्वारा जयपुर मे एक विशाल उद्योग संकुल का गठन किया गया है जिसके तहत, राजस्थान औद्योगिक विकास एवं विनियोजन निगम (रीको), राजस्थान खनिज विकास निगम, राजस्थान वित्त निगम उद्योग निदेशालय तथा राजस्थान लघु उद्योग निगम के मुख्यालय उद्योग भवन नामक एक विशाल परिसर में केन्द्रित कर दिये गये हैं। राज्य के औद्योगिक विकास से सम्बन्धित सभी प्रकार की गतिविधियों का केन्द्र स्थल अब उद्योग भवन ही है जहां उपक्रमियों को बड़े, मध्यम अथवा लघु श्रेणी के उद्योग लगाने के लिए एक ही जगह सभी वांछित साधन-सुविधायें उपलब्ध कराई जाने लगी हैं। इसी प्रकार, जिला स्तर पर कार्यरत जिला उद्योग केन्द्र के जरिये 'एक ही खिडकी पर सभी सुविधायें' उपक्रमियों के लिए उपलब्ध हैं। इसी प्रकार ग्रामीण अंचलो में छोटे-मोटे उद्योग लगाने के लिए पंचायत समिति स्तर पर उद्योग प्रसार अधिकारी है जो ग्रामीण उद्यमियो के लिए साधन-सुविधाओं का जुगाड करते हैं।

राज्य मे औद्योगिक विकास को अपेक्षित गति प्रदान करने के उद्देश्य से राज्य के विभिन्न अंचलों में अब तक 148 औद्योगिक क्षेत्र विकसित किये जा चुके हैं जहां उपक्रमियो को सडक, बिजली, पानी, बैंक, डाकघर, औषधालय, परिवहन, गोदाम तथा जलपान गृह आदि सभी सुविधायें सहजता से उपलब्ध कराई जाती हैं। अब तक इन औद्योगिक क्षेत्रों के लिए राज्य सरकार द्वारा 17,507 एकड़ भूमि अवाप्त की जा चुकी है जिसमें से 11,768 एकड़ भूमि को औद्योगिक सकुलो मे परिवर्तित कर विकसित किया जा चुका है।

पिछड़े जिलों की घोषणा

औद्योगिक विकास के लिए बहुवांछित केन्द्रीय अनुदान सुविधा प्राप्त करने

के उद्देश्य से पूर्व में राज्य में 11 जिलों को पिछड़ा घोषित कराया गया था। शेष 16 ज़िले भी पिछले वित्तीय वर्ष के दौरान पिछड़े घोषित करा दिये गये हैं।

केन्द्रीय अनुदान

केन्द्रीय अनुदान योजना के तहत 'ए' श्रेणी में जैसलमेर व सिरोही, 'बी' श्रेणी में अलवर, जोधपुर, भीलवाड़ा, चूरू, नागौर व उदयपुर, 'सी' श्रेणी में बांसवाड़ा, बाड़मेर, डूंगरपुर, जालौर, झुन्झुनू, झालावाड़, सीकर व टोंक जिले सम्मिलित किये गये हैं। इस योजना के अधीन 'ए' श्रेणी में शुमार जिलों में उद्योग लगाने के इच्छुक उद्यमियों को लागत की 25 प्रतिशत राशि या अधिकतम 25 लाख रु. तक अनुदान दिया जा सकता है जबकि 'बी' श्रेणी में अनुदान की यह सीमा 15 प्रतिशत अथवा 15 लाख रु. तथा 'सी' श्रेणी में 10 प्रतिशत अथवा 10 लाख रु. तक है।

उपरोक्त 16 पिछड़े घोषित जिलों के अतिरिक्त 'डी' वर्ग के 11 जिलों—जयपुर, अजमेर, बीकानेर, भरतपुर, धौलपुर, सवाई माधोपुर, कोटा, बूंदी, पाली, चित्तौड़गढ़ व गंगानगर जिलों में राजकीय अनुदान योजना के तहत 1 अप्रैल, 1983 से पूंजी अनुदान के बतौर 'ए' श्रेणी के बड़े उद्योगों के कुल पूंजी विनियोजन पर 10 प्रतिशत अथवा अधिकतम 10 लाख रु. तथा 15 प्रतिशत अथवा अधिकतम 3 लाख रु. सुलभ कराये जाने का प्रावधान है। 'सी' श्रेणी के लघु उद्योगों को 10 प्रतिशत केन्द्रीय अनुदान के अलावा 5 प्रतिशत ब्याज मुक्त ऋण के रूप में वित्तीय सुविधा भी उपलब्ध कराई जाती है। इसी प्रकार 'बी' श्रेणी के जिलों में अनुसूचित जाति व जन जाति के उपक्रमियों को केन्द्रीय अनुदान के अलावा 10 प्रतिशत ब्याज मुक्त ऋण की सुविधा राज्य सरकार द्वारा दी जाती है। आदिवासी क्षेत्रों में उद्योग लगाने के लिए केन्द्रीय अनुदान योजना के तहत मिलने वाले 10 प्रतिशत विनियोजन अनुदान के अतिरिक्त सभी प्रकार के उद्योगों के लिए 5 प्रतिशत ब्याज-मुक्त ऋण राज्य स्रोतों से वित्तीय सहायता के बतौर प्रदान किये जाने की व्यवस्था है।

नई केन्द्रीय अनुदान योजना के तहत 'डी' श्रेणी के वर्गीकृत जिलो में उन ब्लाक : नगर संकुल सीमा : पंचायत समिति क्षेत्रों में स्थापित उद्योगों में 31-3-83 तक जहां कुल पूंजी विनियोजन 30 करोड़ रु. से अधिक हो गया है वहां उक्त तिथि के पश्चात पूंजी विनियोजन पर पूर्व मे दी जाने वाली राज्य अनुदान राशि समाप्त कर दी गई है। राज्य योजना के तहत वर्ष 1984-85 मे 450.05 लाख रु. का प्रावधान था जिसमे से जनवरी, 1985 तक 248.79 लाख रु. व्यय किए जा चुके थे। इसी प्रकार केन्द्र प्रवृतित अनुदान योजना के तहत वर्ष 1984-85 में विभिन्न कार्यक्रमों के अन्तर्गत 248.35 लाख रु. के कुल प्रावधान की तुलना मे जनवरी 85 तक 132.27 लाख रु. की राशि व्यय की जा चुकी थी।

निगमीय सहायता

राजस्थान के औद्योगिक विकास में राज्य में कार्यरत दो निगमों—राजस्थान वित्त निगम तथा राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास एवं विनियोजन निगम की विशेष भूमिका रही है। इन दोनों निगमों द्वारा विभिन्न उद्योगों को वित्तीय सहायता ही सुलभ नहीं कराई जाती अपितु मध्यम व बड़े आकार के उद्योगों के लिए संयुक्त क्षेत्र अथवा सहायता प्राप्त क्षेत्रों मे औद्योगिक इकाइयों की स्थापना के लिए भी उद्यमियों को प्रोत्साहित किया जाता है। वित्त निगम द्वारा मार्च, 85 तक 27239 इकाइयों को 348.35 करोड़ रु. की सहायता स्वीकृत कर 900 करोड़ रु. का पूंजी विनियोजन कराया है। जबकि 'रीको' द्वारा 190 इकाइयों को 110 करोड़ रु. की सहायता दी जाकर 600 करोड़ रु. का पूंजी विनियोजन कराया गया है।

लघु उद्योग क्षेत्र में पूंजी विनियोजन व रोजगार को बढ़ावा देने के लिए भी राज्य सरकार द्वारा सहायता एवं सुविधायें दी जाती हैं, इसके परिणामस्वरूप राज्य में फरवरी, 85 के अन्त तक 1 लाख 12 हजार 18 लघु उद्योग इकाइयां स्थापित हो गईं जबकि 1960 में इनकी कुल संख्या मात्र 1334 थी। इन इकाइयों में 423.85 करोड़ रु. का पूंजी विनियोजन हो चुका है जबकि 4.34 लाख लोगों को रोजगार सुविधा से लाभान्वित किया गया है।

वर्ष 1984-85 मे फरवरी, 1985 तक क्रमशः 5883 दस्तकारों तथा 5054 लघु उद्योग इकाइयों का पंजीयन कराकर 40.87 करोड़ रु. का पूंजी विनियोजन किया गया जिससे 29,051 बेकार लोगों को रोजगार सुविधा सुलभ हुई।

गृह उद्योग योजना

राज्य के 18 चुनींदा शहरों—जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर, कोटा, अजमेर, अलवर, गंगानगर, बांसवाड़ा, बाड़मेर, रतनगढ़, डूंगरपुर, पिंडवाड़ा, धौलपुर, टोंक, भीलवाड़ा, भरतपुर व बूंदी में स्वयंसेवी संस्थाओं के माध्यम से संचालित गृह उद्योग योजना के तहत सिलाई, होजरी, ऊनी बुनाई, गोटा एवं आरी-तारी, चमड़ा व रेक्जीन, नाईलोन के मोजों की बुनाई आदि कार्यों का प्रशिक्षण दिया जाता है। वर्ष 1984-85 में इस योजना के तहत जनवरी, 1985 के अन्त तक 2070 पुरुषों तथा 17,439 महिलाओं को विविध प्रकार का प्रशिक्षण दिया गया। इन प्रशिक्षण प्राप्त पुरुषों व महिलाओं मे से अधिकांश अब लघुत्तम अथवा लघु उद्योग इकाइयों मे कार्यरत है।

अन्य अनुदान

राज्य में औद्योगीकरण को बढ़ावा देने के लिए केन्द्रीय व राज्य प्रवृतित विनियोजन अनुदान योजना के अलावा विद्युत परीक्षण यन्त्रों की खरीद, डीजल जेनेरेटिंग सेट लगाने, भारतीय मानक संस्थान से उत्पादित वस्तुओं के प्रमाणीकरण के लिए भी अनुदान सुविधा उपलब्ध है।

ऋण में राहत

विभागीय एवं मार्जिन मनी ऋण, ब्याज मुक्त ऋण तथा मशीनों व उपकरणों की खरीद तथा कार्यशील पूंजी के लिए व्यावसायिक बैंकों द्वारा जिला उद्योग केन्द्रों की सिफारिश पर डी. श्राई श्रार. योजना के तहत मात्र 4 प्रतिशत की दर से ग्रामीण व शहरी क्षेत्रो मे क्रमशः 2 हजार तथा 3 हजार रु. तक की वार्षिक श्राय वाले परिवारों को जमानत के बगैर ऋण दिये जाने की भी सुविधा दी जाती है। इनके अतिरिक्त राज्य सरकार द्वारा 1 अप्रैल, 79 से 31 मार्च, 84 के बीच स्थापित हुए उद्योगों को बाहर से मंगाये गये कच्चे माल, मशीनों तथा भवन निर्माण से संबंधित सामान की खरीद पर चुंगी से छूट देने की सुविधा के अलावा जयपुर स्थित उद्योग विभाग की विभागीय कार्यशाला मे कच्चे माल व निर्मित वस्तुओं के परीक्षण की व्यवस्था भी है।

विपणन सुविधा

राज्य से बाहर स्थित उद्योगों की तुलना मे राजस्थान में राजकीय विभागों व स्वायत्तशासी संस्थाओं द्वारा उत्पादित लघु उद्योग इकाइयो के माल के भण्डार क्रय पर 15 प्रतिशत तक मूल्य वरीयता देने की भी एक उपयोगी योजना शुरू की गई है। मूल्य वरीयता की यह राशि क्रेता विभाग तथा स्वायत्तशासी सस्थाओं द्वारा वहन की जाती है। जिला स्तर पर कार्यरत जिला उद्योगों के केन्द्र कतिपय विशिष्ट प्रदर्शनियों, मेलों व अन्य महत्वपूर्ण अवसरों पर लघु उद्योग इकाइयो द्वारा उत्पादित वस्तुओं की बिक्री को प्रोत्साहित करने के उद्देश्य से ऐसी संस्थाओ के प्रयायोजक बनकर वस्तुओ के विपणन के लिए समुचित प्रचार-प्रसार की सुविधा जुटाने का कार्य करते हैं।

अन्य योजनायें

हाल के वर्षों मे राज्य में सहकारी आधार पर हाथ कर्घा उद्योग की इकाइयां स्थापित करने तथा इनके उत्पादित माल की बिक्री के लिए 5 प्रतिशत साधारण तथा 20 प्रतिशत विशेष छूट देने की भी एक योजना शुरू की गई है।

न्यूक्लियस प्लान्ट योजना

उद्योग विभाग के अधीन भागीदारी फर्मों अथवा गैर व्यावसायिक कम्पनियों के पंजीयन, बाट व माप के प्रमाणीकरण कार्य की व्यवस्था के लिए पृथक से एक सगठन है।

औद्योगिक विकास की दृष्टि से पिछड़े जिलों में न्यूक्लियस प्लान्ट योजना के तहत सहायक उद्योग लगाने के कार्यक्रम को प्रोत्साहित किया जा रहा है, इस योजना के तहत जोधपुर जिले में न्यूक्लियस प्लान्ट की योजना की रिपोर्ट तैयार कर भारत सरकार को भेजी जा चुकी है जबकि भीलवाड़ा, नागौर व चूरू जिलों से संबद्ध रिपोर्ट को अन्तिम रूप दिया जा रहा है।

विशिष्ट योजना

(क) 20 सूत्रीय प्रार्थिक कार्यक्रम एवं अनुसूचित जाति संगठक योजना-इस नई योजना के तहत ग्रामीण अंचलों में कुटीर व लघु उद्योगों के विकास को प्राथमिकता दिये जाने पर विशेष जोर दिया जाता है। इस योजना के तहत गत वर्ष फरवरी, 85 तक 5883 दस्तकारों तथा 5054 लघु उद्योग इकाइयों का स्थाई पंजीयन किया गया जबकि सहकारिता क्षेत्र में 654 हाथ कर्घों के वितरण की स्वीकृति दी गई। इस योजना के तहत पंजीबद्ध 1120 अनुसूचित जाति के लोगों को ऋण देने के लक्ष्य की तुलना मे 1403 व्यक्तियो को 19.76 लाख रु. की ऋण सुविधा से लाभान्वित किया गया।

(ख) स्पेशल कम्पोनेन्ट प्लान योजना के तहत अनुसूचित जाति के परिवारों द्वारा संचालित 18 इकाइयो को फरवरी 85 तक वित्त अनुदान के बतौर 20 हजार रु० की राशि जुटाई गई वहां 72 अन्य इकाइयों को विनियोजन अनुदान के रूप मे 3.03 लाख रु० की राशि उपलब्ध कराई गई। घरेलू उद्योग योजना के अधीन अनुसूचित जाति के 423 जनो को प्रशिक्षण सुविधा जुटाने क लिए 97 हजार रु. की राशि व्यय की गई वहां 7728 अनुसूचित जाति वर्ग के उपक्रमियो को 124.01 लाख रू. के ऋण भी दिए गये।

जनजाति उपयोजना

जनजाति बहुल क्षेत्रो मे स्थापित किए जाने वाले उद्योगों की विभिन्न प्रकार की राज्य योजनाओं के तहत अनुदान व प्रशिक्षण सुविधा से सबद्ध कार्यक्रमो के तहत पिछले वित्तीय वर्ष में 24.58 लाख रू. का प्रावधान किया गया।

शिक्षित बेरोजगारों के लिए स्वरोजगार योजना

केन्द्रीय सरकार द्वारा अक्टूबर, 84 में प्रवर्तित की गई इस योजना के तहत 15 हजार शिक्षित बेरोजगारो को अपना उद्योग, व्यवसाय अथवा वर्कशाप स्थापित करने के लिए 25 हजार रू. तक ऋण स्वीकार किये जाने की व्यवस्था है। फरवरी, 85 तक इस योजना के तहत ऋण सुविधा के लिए प्राप्त हुए 96033; आवेदनों में से 20303 प्रार्थना पत्रो पर ऋण स्वीकृति की सिफारिश की जा चुकी थी। इन बेरोजगार शिक्षित युवकों में से 8114 युवकों को ऋण स्वीकृत किया जा चुका है जब कि 2593 अभ्यार्थियों को ऋण राशि का भुगतान भी कर दिया गया है महिलाओं, तकनीकी प्रशिक्षण प्राप्त युवको तथा आर्थिक रूप से कमजोर वर्ग के व्यक्तियों को इस योजना के तहत प्राथमिकता से ऋण स्वीकृत करने का प्रावधान है।

इन्डो-जर्मन प्रोजेक्ट

पश्चिम जर्मनी के सहयोग से फरवरी, 84 से शुरू की गई इस योजना के तहत वढईगीरी तथा शीट तैयार करने वाले उपक्रमियों को तकनीकी सहयोग उप-

लब्ध कराया जाता है। फरवरी, 84 में इस योजना के तहत पश्चिमी जर्मनी की गोपाक-सलटेन्ट फर्म से आये दो प्रशिक्षक दो वर्ष तक भारतीय तकनीकी अधिकारियों के साथ मिलकर तकनीकी सहयोग सुलभ करायेंगे। वर्ष 84-85 में इस योजना के तहत प्रशिक्षण कार्यक्रम के लिए 2 लाख रु. का प्रावधान था।

फील्ड टेस्टिंग स्टेशन

भारत सरकार की क्षेत्रीय परीक्षण योजना के तहत लघु उद्योगों के उत्पादनों की गुणवत्तता जांचने तथा इसे स्तरीय बनाये रखने के लिए राज्य में एक पृथक् रासायनिक परीक्षण प्रयोगशाला स्थापित करने की कार्यवाही की जा रही है।

प्रदूषण निवारण

राज्य मे विभिन्न उद्योगो से नि.सृत होने वाले हानिकर रासायनिक द्रव्यों के कारण उत्पन्न प्रदूषण की कारगर रोकथाम एवं नियंत्रण पर भी सरकार की नजर है। इसके लिए राज्य में पृथक् से एक समिति गठित है जिसने पेस्टीसाइंटस इंडिया नामक उदयपुर की एक कम्पनी को प्रदूषण की रोकथाम के लिए आवश्यक कदम उठाने के निर्देश दिये हैं। प्रदूषण समस्या के लिए चर्चित अन्य कई एक औद्योगिक इकाइयों की भी समिति द्वारा जाच की जा रही है।

मध्यम एवं वृहत् उद्योग

राज्य मे कार्यरत 260 मध्यम एवं वृहद स्तर के उद्योगों के अलावा पिछले वित्तीय वर्ष के दौरान मैसर्स कल्याण सुन्दरम् सीमेन्ट इण्डस्ट्रीज ने बांसवाडा मे तथा जे. के. सीमेन्ट वर्क्स ने गोटन में क्रमशः पोर्टलेण्ड सीमेन्ट व सफेद सीमेन्ट का उत्पादन प्रारम्भ किया है। श्री सीमेन्ट लिमिटेड ने भी हाल ही सफेद सीमेन्ट उत्पादन प्रारम्भ किया है। भारत सरकार द्वारा मैसर्स जुआरी एग्रोकेमिकल्स लि. को इसी वर्ष सवाईमाधोपुर के निकट चौथ का बरवाड़ा ग्राम में बम्बई हाई से प्राप्त गैस पर आधारित 940 करोड रुपये की लागत का एक वृहद् उर्वरक संयत्र लगाने का आशय पत्र मंजूर कर दिया गया है।

राजस्थान की प्रमुख औद्योगिक इकाइयां

सूती वस्त्र :

राजस्थान में पहली सूती मिल 1889 मे ब्यावर मे स्थापित की गई थी तत्पश्चात् यहीं दो और मिलें क्रमशः 1908 व 1925 में स्थापित की गई। सन् 1938 व 1942 में एक-एक सूती मिल भीलवाड़ा व पाली नगर मे लगाई गई। स्वाधीनता प्राप्ति के समय राज्य मे कुल सात सूती मिलें थी जिनकी संख्या अब 21 हो गई है। इन सूती मिलो मे हर वर्ष 7 करोड मीटर कपड़ा तथा 35 लाख किलोग्राम सूत तैयार किया जाता है। इनमें से 17 मिलें निजी क्षेत्र में, 3 सरकारी [illegible] क्षेत्र मे है। इनके अतिरिक्त 10 [illegible] चुके है।

चीनी उद्योग :

राजस्थान में पहली चीनी उत्पादक मिल 1932 में भूपाल सागर-जिला-चित्तौड़गढ़ में लगाई गई थी। तत्पश्चात् 1946 में एक और चीनी मिल श्रीगंगानगर में स्थापित हुई। स्वाधीनता पूर्व स्थापित हुई इन दो चीनी मिलों के पश्चात् केशोरायपाटन तथा उदयपुर के समीप दो अन्य चीनी मिलें स्थापित हुई हैं। इनमे से भूपालसागर व उदयपुर की चीनी मिलें निजी क्षेत्र में है जबकि श्री गंगानगर व केशोरायपाटन स्थित चीनी मिलें क्रमशः सरकारी व सहकारी क्षेत्र मे हैं। सन् 1951 में राज्य मे कुल 1.5 हजार टन चीनी का उत्पादन होता था जो मार्च, 85 के अन्त तक बढ़कर 39 हजार टन तक जा पहुंचा है। इस उद्योग में कुल 35 करोड़ रु० की पूंजी लगी है तथा दो हजार से ज्यादा लोगों को रोजगार मिल रहा है। चीनी मिलों से प्राप्त शीरे से शराब बनाने के लिए अटरू, अजमेर, जोधपुर व प्रतापगढ़ में चार कारखाने भी कार्यरत हैं। चीनी उद्योग के विकास की संभावनाओं को दृष्टिगत रखते हुए भरतपुर, हनुमानगढ़, चित्तौड़गढ़ क्षेत्र मे और नई चीनी मिलें लगाई जा सकती हैं।

सीमेन्ट उद्योग:

राजस्थान मे सीमेन्ट उत्पादन के लिए आवश्यक चूने का पत्थर तथा जिप्सम प्रचुर मात्रा में उपलब्ध है। स्वाधीनता से पूर्व राज्य मे पहला सीमेन्ट उत्पादक कारखाना 1915 मे लाखेरी (जिला-बूंदी) में स्थापित हुआ था। दूसरा सीमेन्ट कारखाना सवाईमाधोपुर में लगाया गया था। तत्पश्चात प्रदेश मे 6 और नये सीमेन्ट के कारखाने कायम हुए तथा कुछ नई सीमेन्ट उत्पादक इकाइयों को लाइसेन्स जारी किए गये। सन् 1951 मे राज्य मे जहां मात्र 2.6 लाख टन सीमेन्ट का उत्पादन होता था वहां 84-85 के अन्त तक 33 लाख टन सीमेन्ट राज्य में तैयार हुई। इस उद्योग में कुल 70 करोड़ रु० की पूंजी लगी हुई है तथा कोई 3 हजार श्रमीकों को रोजगार मिल रहा है। सीमेन्ट की बढ़ती मांग को देखते हुए निकट भविष्य में बड़े और पांच छोटे सीमेन्ट उत्पादक कारखाने स्थापित होने की सम्भावना है। भिवाड़ी व आबू रोड़ के सीमेन्ट कारखानों में शीघ्र ही उत्पादन प्रारम्भ होने की आशा है। जबकि नीमकाथाना, पाली, सिरोही, जोधपुर व सीकर मे पांच मिनी सीमेन्ट प्लान्ट शीघ्र कायम किये जाने की संभावना है। ग्यारह नये मिनी सीमेन्ट कारखानों के लाइसेन्स भी दिये गये है।

वनस्पति घी-उद्योग :

राजस्थान मे वनस्पति घी का पहला कारखाना सन् 1964 में भीलवाड़ा में स्थापित किया गया था। तत्पश्चात जयपुर, अलवर, उदयपुर, कोटा, चित्तौडगढ़, गंगानगर आदि अन्य नगरो मे भी तेल व घी उत्पादक इकाइयां स्थापित हुई। वर्तमान में राज्य में कुल 9 वनस्पति घी उत्पादक इकाइयां हैं जिसमे से 5 जयपुर मे तथा एक-एक क्रमशः भीलवाड़ा, चित्तौड़गढ़, उदयपुर व श्रीगंगानगर में कार्यरत

हैं। वर्ष 1984-85 में इन इकाइयों में लगभग 17 लाख टन वनस्पति घी का उत्पादन किया गया था।

राज्य के अन्य बड़े उद्योगो से संबंधित जानकारी निम्नानुसार है :—

ऊनी मिलें :

राजस्थान में प्रति वर्ष भेडों से लगभग 4 करोड़ पौंड ऊन प्राप्त होती है जिनसे विभिन्न प्रकार के ऊनी वस्त्र तथा कम्बल, लोइयां, नमदे आदि तैयार किये जाने के कारखाने स्थापित किये जा सकते हैं। वर्तमान में राज्य में दो ऊनी मिलें क्रमशः जोधपुर व बीकानेर मे कार्यरत है जबकि दो अन्य मिलें लाडनूं (जिला-नागौर) तथा चूरू मे स्थापित की गई हैं। ये दोनों ही मिलें सार्वजनिक क्षेत्र में हैं।

इंजीनियरिंग उद्योग:

राज्य मे इंजीनियरिंग उद्योग के रूप में स्थापित बड़ी इकाइयों में जयपुर मेटल्स (बिजली के मीटर) मान इंडस्ट्रीज कारपोरेशन (लोहे की खिड़कियां तथा इमारती सामान) कैप्सटन मीटर कम्पनी (पानी के मीटर) (नेशनल इंजीनियरिंग इंडस्ट्रीज बालबियरिंग (जयपुर मे), इन्स्ट्रूमेन्टेशन लि० कोटा (मशीन व यंत्रादि का निर्माण, कोटा व पिपलिया मे, (केबल कारखाने), भरतपुर में रेल्वे वैगन निर्माण करने का कारखाना (सिमको) उल्लेखनीय है। अलवर मे ही अशोक लेलेण्ड का ट्रेक्टर निर्माण का कारखाना भी उत्पादन शुरू कर चुका है।

रासायनिक उद्योग:

रासायनिक उद्योगों का पिछले वर्षों में राज्य मे काफी विकास हुआ है। इसके तहत डीडवाना में सोडियम सल्फेट, कोटा मे श्रीराम फर्टीलाइजर, श्री राम रेयंस कायर कोड तथा कांकरोली में, जे० के० टायर्स तथा धौलपर मे कांच की वस्तुओ तथा विस्फोटक पदार्थो के निर्माण का कारखाना विशेष महत्त्वपूर्ण है।

राज्य के खनिज आधारित उद्योगों में भारत सरकार के देबारी (उदयपुर) स्थित जस्ता परिद्रवण संयंत्र तथा खेतड़ी (झुंझुनू) में हिन्दुस्तान तांबा परिशोधन कारखाना विशेष उल्लेखनीय है। इनके अलावा दौसा, भीलवाड़ा व उदयपुर में घीया पत्थर पीसने के कारखाने, जालोर में ग्रेनाइट तथा टोंक में चमडे का कारखाना भी महत्त्वपूर्ण औद्योगिक इकाइयां हैं।

लघु एवं कुटीर उद्योग :

इनके अतिरिक्त राजस्थान मे कई प्रकार के लघु एवं कुटीर उद्योगो के विकास की भी पर्याप्त गुंजाइश है। फिसकल कमीशन (1949-50) की रिपोर्ट के अनुसार जो उद्योग पूर्णतः अथवा मुख्य रूप से श्रमिक अथवा दस्तकार द्वारा अपने परिवार के सदस्यों की सहायता से पूर्णकालिक या- अशकालिक व्यवसाय के रूप मे चलाया जाये उसे कुटीर उद्योग की संज्ञा दी जा सकती है। कुटीर उद्योगो मे डेयरी

फार्मिंग, मधुमक्खी पालन तथा मुर्गीपालन भी शामिल है। फिस्कल कमीशन के अनुसार लघु उद्योग किसी कारीगर या श्रमिक के बल पर नहीं चलाये जाते। इनमें 10 से 50 तक श्रमिक तथा 5 लाख रु० से कम पूंजी से सचालित हों उन्हें ही लघु उद्योग कहा जा सकता है।

राजस्थान स्टेट एक्ट के अनुसार राज्य मे लघु उद्योगों को दो वर्गों में विभाजित किया गया है। प्रथम वर्ग में वे लघु इकाइया आती है जिनमे पूंजी विनियोजन 5 लाख रुपये से कम है, भले ही इनमें कितने ही व्यक्ति लगे हों। दूसरे वर्ग में पूंजी विनियोजन की सीमा 10 लाख रु. तक सीमित होने के साथ-साथ ऐसी लघु इकाइयो में सहायक या अंगभूत उपकरणो का राज्य सरकार के निर्देशो के अनुरूप उत्पादन किया जाना वांछनीय है।

तीसरे वर्ग मे ग्राम्य उद्योग आते हैं जो ग्रामीण लोगो के किसी वर्ग के लिए पूर्ण अथवा अंशकालिक धन्धे के रूप में सचालित किये जायें।

आज के वैज्ञानिक युग मे कुटीर उद्योग की कल्पना असगत प्रतीत होती है किन्तु औद्योगिक दृष्टि से अत्यन्त विकसित देशो मे भी बेकारी की समस्या के निदान के लिए लघु व कुटीर उद्योगों की महत्ता स्वीकारी जाने लगी है।

जहां तक राजस्थान की अर्थ व्यवस्था का प्रश्न है, इस प्रदेश मे कृषि उसका शरीर है तो लघु व कुटीर उद्योग इसकी रक्त धमनियां है। राजस्थान जैसे प्रदेश में जहां 80 प्रतिशत ग्रामीण आबादी है तथा जहां भौगोलिक विषमताओं के फलस्वरूप कृषि व्यवसाय महज एक मौसमी धन्धा है वहां ग्रामीण आबादी के लिए फालतू समय मे अर्थोपार्जन के लिए कुटीर उद्योग एक मूलभूत आवश्यकता बन जाती है। पंडित जवाहर लाल नेहरू के अनुसार 'भारत के अवनति काल में भी राजस्थान कुटीर एवं विविध कलाओं का केन्द्र रहा है और अब भी अच्छे शिल्पकार वहां है। मुझे विश्वास है कि जिस महान् शिल्पकारी और कला के लिए राजस्थान प्रसिद्ध है उसको प्रोत्साहित करने का उचित प्रयत्न राजस्थान सरकार द्वारा किया जावेगा।'

राजस्थान के प्रमुख कुटीर उद्योग :

राजस्थान का इतिहास भले ही निरन्तर युद्धों और संघर्षों से परिपूर्ण रहा हो और भौगोलिक विषमताओं के कारण भले ही आये दिन यहां के लोगों को अकाल और अभाव की स्थितियों के बीच जीने की विवशता झेलनी पड़ी हो, इसके बावजूद यहां के लोगों में एक ऐसी जबर्दस्त चैतन्यता है जिसने इस मरूप्रदेश को कला-कौशल और सांस्कृतिक वैभव से सम्पन्न किया है। आज भी राजस्थान के ग्रामीण अंचलों मे हजारो परिवार इन कलाओं की परम्परा को सहेजे हुए हैं और अपनी विशिष्ट प्रतिभा का परिचय देते रहे हैं।

राजस्थान के कुटीर उद्योगों में सूती वस्त्र उद्योग के तहत कोटा की मसूरिया साड़ी, जयपुर, जोधपुर की चुनरियां व लहरिये, गोविन्दगढ़, करौली व जालोर का बना कपड़ा, गुढा, बालोतरा, फालना, सुमेरपुर में खेसला, धोती व टकड़ी तथा ऊनी व सूती खादी का उत्पादन प्रमुख है। इनके अलावा जयपुर, जोधपुर, चित्तौडगढ़ व भरतपुर में छपाई तथा जोधपुर, पाली, पीपाड़, जयपुर, बगरू व सांगानेर व कोटा में वस्त्रों की रंगाई का कार्य भी प्रसिद्ध रहा है। जयपुर, जोधपुर, कुचामन, नागौर, उदयपुर व कोटा में बंधेज का काम अच्छा होता है।

ऊनी वस्त्रों में ऊन के नमदे, कम्बल, आसन, घोड़े व ऊंट की जीनें तथा मोटा कपड़ा बनाने के लिए बीकानेर, जोधपुर, जैसलमेर व जयपुर प्रमुख केन्द्र है। अजमेर, जयपुर व खण्डेला में गोटे-किनारी का सुन्दर काम होता है। कई जिलों में जुलाहे परिवारों में दरी व निवार बनाने का कार्य भी किया जाता है।

पशुधन की अधिकता के कारण राज्य में पशुओं की खाल साफ करने तथा इससे जूते, मशक, चरस, घोड़े की जीनें व बटुवे जैसी कई प्रकार की उपयोगी चीजें तैयार की जाती हैं। बाकी चमड़ा साफ करने के उपरान्त कानपुर, आगरा व मद्रास के चमड़े के कारखानों को निर्यात कर दिया जाता है।

कोटा, उदयपुर, बांसवाड़ा, सवाईमाधोपुर व डूंगरपुर जिलों में लकड़ी के खिलौने तथा फर्नीचर, किवाड़, पलंग इत्यादि उपयोगी सामान बनाया जाता है। उदयपुर व सवाईमाधोपुर लकड़ी के खिलौनों के लिए विशेष प्रसिद्ध हैं। जयपुर, जोधपुर व अजमेर में बांस से टोकरियां, हल्की मेजें, चिके व कुर्सियां इत्यादि बनाई जाती हैं। लाख की चूड़ियां बनाने का कार्य यद्यपि राज्य के सभी अंचलों में किया जाता है किन्तु जयपुर की लाख की चूड़ियां, खिलौने तथा कई प्रकार की अन्य कलात्मक चीजों की बाहर भी काफी मांग है। यूं तो राजस्थान के हर नगर व कस्बे में लोहे से कृषि उपकरण तथा अन्य प्रकार की घरेलू उपयोग की वस्तुएं बनाई जाती रही हैं किन्तु डीग, बाडी, सिरोही, झुंझुनू लोहे के सामान के लिए विशेष प्रसिद्ध हैं। इन वस्तुओं में कड़ाई, अंगीठी, चाकू, उस्तरे, कैंची व रसोई बनाने प्रयुक्त में विविध प्रकार की वस्तुओं का निर्माण प्रमुख है।

पीतल की खुदाई :

पीतल पर खुदाई व नक्काशी के काम के लिए जयपुर के दस्तकार प्रसिद्ध रहे हैं। यद्यपि इनमें से कई परिवार विभाजन के पश्चात् पाकिस्तान चले गये हैं फिर भी अभी तक जयपुर में कई ऐसे परिवार मौजूद हैं जो सदियों से परम्परागत रूप से पीतल पर खुदाई व नक्काशी का कार्य करते आ रहे हैं। इनके अलावा पत्थर की मूर्तियां, चकले तथा अन्य कई उपयोगी वस्तुएं, हाथी दांत के खिलौने, कागज की कुट्टी के खिलौने, खस का इत्र व पंखे, रस्सियां बनाने, साबुन, तेल निकालने, ई

बनाने, बीड़ी व ताड़गुड़ तथा पापड़ इत्यादि तैयार करने का कार्य भी राज्य में कुटीर उद्योग के बतौर किया जाता है।

निर्यात की वस्तुएं :

राजस्थान में उत्पादित वस्तुएं अन्तर्राज्यी व्यापार में ही नहीं विदेशों को भी निर्यात की जाती हैं। एक सर्वेक्षण के मुताबिक वर्ष 1984-85 में राजस्थान से लगभग 130 करोड़ रु० मूल्य का सामान विदेशों को निर्यात किया गया जिससे विदेशी मुद्रा का अर्जन हुआ।

राजस्थान से निर्यात की जाने वाली वस्तुओं में प्रमुख स्थान जवाहरात तथा आभूषणों का रहा है जो कुल निर्यात का लगभग 47 प्रतिशत है। निर्यात की जाने वाली अन्य वस्तुओं में हाथ से छपाई-रंगाई के वस्त्र, हस्तकला की वस्तुएँ, ऊनी गलीचे, नमदे, संगमरमर व इसकी मूर्तियां, खनिज व इंजीनियरिंग उत्पादन प्रमुख हैं। इनके अलावा नमक, प्लास्टिक का सामान, कीटनाशक औषधियां, कांच का सामान, बुलेट प्रूफ कांच, ग्वार गम, तिलहन की खली, मक्का व मक्का से तैयार वस्तुएं, हड्डियां व हड्डियों का चूरा, चमड़ा व चमड़े से बनी चीजें, ऊट की खाल व बालों से बनी वस्तुएं, बाल बियरिंग, लाख, केबल, बिजली व पानी के मीटर, बिजली के खम्भे, तार की जालियां, विद्युत उपकरण, मेहंदी, ताड़ का तेल, अचार, मुरब्बे, पापड़, भुजिया, बीड़ी, शराब, अगरबत्तियां, साइकिल व मोटरों के पुर्जे इत्यादि उल्लेखनीय हैं। नित नये प्रकार के उद्योगों के विकास के साथ राजस्थानी उत्पादों के निर्यात की संभावनाएं उज्जवल हैं।

राजकीय उपक्रम

राजस्थान में सरकारी क्षेत्र में कार्यरत उद्योगों को सुव्यवस्थित रूप से संचालित करने के उद्देश्य से सन् 1964 में राजकीय उपक्रम विभाग के नाम से एक पृथक विभाग की स्थापना की गई थी।

राजकीय उपक्रम विभाग के अधीन राज्य में संचालित इकाइयां निम्नानुसार हैं :—

विभागीय उद्योग :

1. राजस्थान स्टेट कैमिकल वर्क्स, डीडवाना
   (क) सोडियम सल्फेट प्लान्ट। (ख) सोडियम सल्फेट वर्क्स।
   (ग) सोडियम सल्फाइड फैक्ट्री।
2. राजकीय लवण स्रोत
   (क) राजकीय लवण स्रोत, डीडवाना।
   (ख) राजकीय लवण स्रोत, पचपदरा।

3. राजकीय ऊनी मिल, बीकानेर

सरकारी कम्पनियां :

(1) राजस्थान स्टेट टेनरीज लि० टोंक

(2) गंगानगर शुगर मिल्स लि०

(क) दी गंगानगर शुगर मिल्स लि०

(ख) हाइ-टेक प्रिसीजन ग्लास वर्क्स लि०, धौलपुर

राजकीय उपक्रम ब्यूरो—

उपरोक्त इकाइयों से संवद्ध संक्षिप्त विवरण निम्नानुसार है :—

सोडियम सल्फेट प्लान्ट :

सोडियम सल्फेट प्लान्ट विभाग के अधीन स्थापित पृथक इकाई के रूप में सन् 1974 से उत्पादन कर रहा है । इस इकाई में पहला संयत्र जर्मन तकनीकी विशेषज्ञों द्वारा तथा दूसरा संयत्र विभागीय तकनीशियनों द्वारा लगाया गया था। दोनो सयत्रो पर लगभग एक करोड़ रु० की लागत आई थी। फरनेस आयल की कीमतो मे बेतहाशा हुई वृद्धि के फलस्वरूप 1975-76 से यह इकाई लगातार घाटे मे चलने लगी थी। अतः राज्य सरकार ने इसे डीडवाना केमिकल्स प्रा० लि० को सितम्बर, 81 से 33.91 लाख रुपये वार्षिक पट्टे पर दे दिया । पट्टाधारी ने फैक्ट्री क्षेत्र मे उत्पादित क्रूड सोडियम सल्फेट पर अपना अधिकार जताते हुए इस प्रकरण को पंच निर्णय को सौप दिया जिसमें राज्य सरकार के विरूद्ध निर्णय हुआ। तदुपरान्त पट्टाधारी डीडवाना केमिकल्स प्रा० लि० से बातचीत की गई और पूरक समझौता हो गया । इस समझौते के फलस्वरूप अब पुरानी पट्टा राशि मय ब्याज के वसूल की जा रही है ।

सोडियम सल्फेट वर्क्स

डीडवाना मे इस कारखाने द्वारा नमक के क्यारों में जमी क्रूड सोडियम सल्फेट को खुदाई कर निकाला जाता है । पिछले वर्ष नमक स्रोत का बांध टूट जाने से वर्षा का पानी क्यारो मे भर गया था । अतः पिछले वर्षों के मुकाबले इस वर्ष सोडियम सल्फेट का उत्पादन कम होने की आशा है । औसतन यह इकाई प्रतिवर्ष 10 लाख रु. का शुद्ध लाभ अर्जित करती है ।

सोडियम सल्फाइड फैक्ट्री

यह रसायन क्रूड सल्फेट व कोयले की रासायनिक क्रिया से तैयार किया जाता है । इस संयंत्र मे वर्ष 1966 से उत्पादन शुरू किया गया था और अगले दस वर्षों मे इसकी उत्पादन क्षमता तीन गुनी कर दी गई थी परन्तु तत्पश्चात कोयला तथा बिजली पर्याप्त मात्रा में सुलभ न होने से केवल एक ही भट्टी मे सोडियम सल्फाइड

का उत्पादन किया जाता रहा है। यह इकाई प्रतिवर्ष औसतन 2 लाख रु. का शुद्ध लाभ अर्जित कर रही है।

राजकीय लवण स्रोत, डीडवाना

नमक स्रोत डीडवाना नमक उत्पादन का एक प्रमुख स्रोत है जहां देश भर में सबसे अधिक नमक बनाया जाता है। सन् 1983-84 में यहां 8.02 लाख क्विंटल नमक बनाया गया था जबकि वर्ष 1984-85 के अन्त में इस स्रोत से 15.50 लाख क्विंटल नमक उत्पादित होने की आशा है। इस वर्ष नमक विक्रय से 75.00 लाख रु. की राजस्व प्राप्ति का अनुमान है। वर्तमान में इस स्रोत की प्रमुख समस्या 27 लाख क्विंटल एकत्रित नमक की बिक्री की है जिसके लिए आवश्यक प्रयास किये जा रहे है।

राजकीय लवण स्रोत, पचपदरा

पचपदरा नमक स्रोत पर नमक उत्पादन का कार्य खारवालों द्वारा किया जाता है। यह स्रोत एक कोने मे होने के कारण अन्य स्रोतों से नमक उपलब्ध न होने पर ही नमक के व्यापारी यहां पहुंचते हैं। यहां से नमक लेने के लिए जहां उन्हें परिवहन के लिए अधिक किराया देना पड़ता है वहां रेल्वे वैगन भी नमक ढोने के लिए सहजता से उपलब्ध नही हो पाते। इस कारण पचपदरा स्रोत पर नमक की बिक्री मे उतार-चढ़ाव का दौर बना रहता है। नमक उत्पादकों की सुविधा के लिए अब पचपदरा लवण स्रोत क्षेत्र में पानी और बिजली की लाइनों का विस्तार कराया जा रहा है ताकि उत्पादकों व कर्मचारियों को सुविधा हो सके। डीडवाना व पचपदरा नमक स्रोत पर कार्यरत मजदूरों की मजदूरी दर मे प्रति क्विंटल क्रमशः 45 व 50 पैसे की बढ़ोतरी की गई है।

नई योजनाएं

भारत सरकार द्वारा गलगण्ड (गोइटर) की बीमारी को दूर करने के लिए डीडवाना व पचपदरा में एक-एक साल्ट आयोडाइजेशन संयन्त्र लगाये जाने की योजना है। साढे बारह हजार टन प्रति वर्ष उत्पादन क्षमता के ये संयंत्र वर्ष 1985-86 से कार्य करना प्रारम्भ कर देंगे। इससे गलगण्ड रोग के निदान मे योगदान के साथ-साथ नमक की बिक्री भी बढ़ेगी। यहां उत्पादित नमक के परिवहन के लिए रेल मंत्रालय द्वारा विशेष गाड़ी उपलब्ध कराई जायेगी। व्यापारियों की सुविधा के लिए डीडवाना व पचपदरा नमक स्रोतो पर ट्रक तोलने के कांटे भी लगाये जा रहे हैं ताकि नमक की निकासी मे वृद्धि हो सके। बड़े उपभोक्ताओं को बिना पैकिंग के नमक ले जाने की भी सुविधा दी जायेगी। बढ़ती मजदूरी दरों तथा बाजार भावों को दृष्टिगत रखते हुए विभाग ने नमक की बिक्री की नई दरें नये सिरे से निर्धारित की हैं। परिवर्तित दरो के अनुसार डीडवाना स्रोत में उत्पादित औद्योगिक नमक की

दर 105 रु. से बढ़ाकर 125/- रु. प्रति टन की गई है जबकि 'ए' श्रेणी के खाद्य व अखाद्य नमक की नई दरें क्रमश : 90 व 80 रु. प्रति टन से बढ़ाकर 100 रू. व 80 रु. प्रति टन की गई है।

इसी प्रकार पचपदरा स्रोत के नमक की बिक्री दर औद्योगिक नमक तथा 'ए' श्रेणी के खाद्य व अखाद्य नमक के लिए क्रमश: 90 रू., 75 रू. व 70 रू. तय की गई है। 'ए' श्रेणी के खाद्य नमक की पूर्व बिक्री दर 80 रू. प्रति टन थी।

राजकीय ऊनी मिल

बीकानेर स्थित राजकीय ऊनी मिल राजकीय उपक्रम विभाग की उत्पादक इकाई के रूप मे 11 अप्रेल 68 से कार्यरत है। लगातार घाटा उठाते रहने के कारण राज्य सरकार ने इस मिल को जून, 1976 मे 10 वर्ष के लिए 18.12 लाख रू. वार्षिक लाइसेंस राशि पर मैसर्स जगन्नाथ जीवनमल वूलन मिल्स प्रा. को दे दिया। पट्टा राशि पर विवाद पर मई 1981 मे राज्य सरकार ने पट्टाधारी को 1.10 लाख रु. प्रति पट्टा राशि देने और प्रकरण को पंचनिर्णय के लिए देने की बात तय हुई। पंचनिर्णय मे प्रारम्भ से ही 1.15 लाख रु. प्रतिमाह लीज लिये जाने तथा 6 प्रतिशत ब्याज पार्टी से लिये जाने का प्रावधान था इसके बावजूद पट्टेधारी द्वारा पट्टे की शर्तों के मुताबिक राशि जमा नही कराई गई अत. राज्य सरकार द्वारा मिल को वापस लेने के लिए लाइसेन्सधारी को तीन माह का नोटिस दिया गया जिसके अनुसार 1-4-83 को यह मिल राज्य सरकार को सौंपी जानी थी। किन्तु लाइसेंसधारी द्वारा मुन्सिफ कोर्ट से स्टे प्राप्त कर लेने पर विभाग द्वारा अपील दायर की गई जो अभी विचाराधीन है।

राजस्थान स्टेट टेनरीज लि.

इसकी स्थापना टोंक में 1973 मे हुई थी तथा मई 75 से इसमें उत्पादन शुरू होने लगा था। संस्थान ने 1980-81 तक अपनी निर्धारित क्षमता की तुलना मे मात्र 5 से 22 प्रतिशत तक ही उत्पादन करने के कारण इसे लगातार घाटा होता रहा। सन् 1981-82 में जहां उत्पादन क्षमता में समुचित वृद्धि हुई और उत्पादन क्षमता का 56.54 प्रतिशत तक उपयोग हुआ वहां 75.47 लाख रु. के उत्पादित चमड़े की बिक्री भी सम्भव हो सकी। इसी वर्ष से निर्यात की सभावनाओं में भी सुधार किया गया जिसके फलस्वरूप पिछले तीन वर्षों में इस इकाई द्वारा 39.68 लाख रु. 52 60 लाख रु. तथा 60 लाख रु. का चमड़ा निर्यात किया गया जबकि सन् 81-82 से पूर्व के छ: वर्षों में कुल 22 लाख रु. का चमड़ा निर्यात किया गया था। सन् 82-83 से संस्थान में उत्पादित चमड़े से जैकेट, कोट, दस्ताने तथा जूते जैसी कई उपभोक्ता वस्तुओं का उत्पादन भी प्रारम्भ किया गया। इन उत्पादनों की बिक्री में निरन्तर वृद्धि हो रही है। इसके बावजूद यह संस्थान लगातार घाटे में चल रहा है। संस्थान

को इस स्थिति से उबारने के लिए विभाग ने एक पुर्नसंस्थापन योजना भी तैयार की है जिसके क्रियान्वयन के लिए विभिन्न वित्तीय संस्थाओं से विचार-विमर्श किया जा जा रहा है ।

दी गंगानगर शुगर मिल्स

1 जुलाई, 1956 से कार्यरत इस राजकीय उपक्रम के 95 प्रतिशत शेयर राज्य सरकार तथा शेष निजी अंशधारियों के हैं । इस संस्थान के प्रभारी संचालक राजकीय उपक्रम विभाग के सचिव हैं । संस्थान के अधीन एक चीनी मिल, मदिरा उत्पादक इकाई तथा धौलपुर स्थित कांच के सामान बनाने वाली इकाई हाईटेक ग्लास फैक्ट्री है । पिछले दो वर्षों में इस संस्थान को चीनी, मदिरा तथा ग्लास के उत्पादन से क्रमशः 15.68 लाख रु. व 15.28 लाख रु. का लाभ रहा । कंपनी द्वारा क्रियान्वित नवीनीकरण योजना की बदौलत कम्पनी की कार्य क्षमता मे जहां सुधार हुआ वहां विद्युत मण्डल पर इसकी निर्भरता भी कम हुई । पिछले तीन वर्ष मे इस कारखाने में गन्ने व चुकन्दर की पिराई से होने वाली चीनी की रिकवरी में भी निरन्तर वृद्धि हो रही है, जिसका कारण क्षेत्र में अच्छे किस्म के गन्ने की बुवाई व सामयिक पकाई रहा । चुकन्दर से चीनी की रिकवरी बढ़ाने के लिए कम्पनी द्वारा नया फाउन्डेशन बीज प्राप्त करने के प्रयास किए जा रहे हैं ।

हाईटेक प्रिसिजन ग्लास लि. धौलपुर

धौलपुर स्थित हाईटेक ग्लास फैक्ट्री का संचालन 1968 से गंगानगर शुगर मिल्स द्वारा किया जा रहा है । इस फैक्ट्री में पहली बार 1981-82 में कम्पनी को 17.66 लाख का लाभ हुआ । वर्ष 83-84 मे भट्टी खराब होने तथा उत्पादन लागत में वृद्धि के कारण करीब 19 लाख रु. की हानि हुई । इस इकाई का मुख्य उत्पादन शराब भरने की बोतलें पकाना है । सन् 1981 से इस कारखाने मे निर्मित प्रति बोतल का मूल्य दो रुपये निर्धारित है । इस वर्ष नई भट्टी बन जाने पर पूर्ण क्षमता से उत्पादन एवं उचित मूल्य निर्धारण से घाटे की स्थिति के पुनः लाभ मे परिणित हो जाने की आशा की जा सकती है ।

राजकीय उपक्रम ब्यूरो

सितम्बर, 78 में राजकीय उपक्रम विभाग के नियन्त्रण में राजकीय उपक्रमों के सु-संचालन व व्यवस्था के लिए पृथक ब्यूरो का गठन किया गया । ब्यूरो विभिन्न राजकीय उपक्रमो के बीच हाउसकीपिंग, कार्मिकों सम्बन्धी आयोजन, वेतन एवं मजदूरी संरचना, परिलब्धियों, वरिष्ठ पदों पर भर्ती, उत्पादनो की गुणवत्ता से सम्बन्धित विविध विषयों में समन्वय व एकरूपता सुनिश्चित करने के अलावा विभिन्न उपक्रमो के कार्यकरण को मानीटर एवं नियंत्रित करता है । ब्यूरो को व्यापक अधिकार देने तथा प्रभावी बनाने के उद्देश्य से सितम्बर, 84 में

इसे पुनर्गठित किया गया तथा इसके अधिकार क्षेत्र को व्यापक बनाया गया। अब तक ब्यूरो द्वारा पांच राजकीय उपक्रमों के कार्य का मूल्यांकन किया जाकर उन्हें मार्गदर्शन दिया गया है। इसके अलावा विभिन्न इकाइयों के लिए विभिन्न क्षेत्रों में समन्वय एवं एकरूपता लाने के लिए भी कदम उठाये जा रहे है। ब्यूरो द्वारा राजकीय उपक्रमों से सम्बन्धित विस्तृत सूचना एकत्रित करने के लिए डेटा बैंक का भी कार्य सम्पादित किया जाने लगा है।

23
वन सम्पदा

वन मानव को प्रकृति का ऐसा बहुमूल्य उपहार है जिससे न केवल उसको अस्तित्व रक्षा के लिए प्राणवायु सुलभ होती है अपितु जलवायु तथा पर्यावरण संतुलन और आर्थिक समृद्धि के लिए भी उनकी उपयोगिता सार्वदेशिक रूप से महत्वपूर्ण मानी जाती है। नैसर्गिक छटा से परिपूर्ण वन श्री मन को प्रमुदित ही नहीं करती वरन् सौन्दर्य बोध की मानवी कल्पना को भी नित नये स्वर देती है।

भारत जैसे आस्था प्रधान देश में अति प्राचीनकाल से वनों तथा वन्य जीवों के संरक्षण और उनके प्रति यथेष्ट सम्मान जताने की परम्परा रही है। मानवी सभ्यता के प्रारम्भिक दौर में वेदों, पुराणों, उपनिषदों आदि का प्रणयन प्रकृति की सुरम्य गोद में स्थित आश्रमों में ही किया गया था। इन ग्रन्थों में वनो मे मिलने वाली विभिन्न प्रकार की वनस्पति के नाना प्रकार के उपयोगों की व्याख्या आयुर्वेद शास्त्र में मिलती है। इसी प्रकार वन-देवता और वन-देवियों के आख्यान भी यत्र-तत्र पाये जाते हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि भारत मे वन-सम्पदा के रख-रखाव और संरक्षण के प्रति शुरू से ही विशेष चेतना विद्यमान रही है।

कालान्तर में सभ्यता के विकास और बढ़ती जनसंख्या के कारण वन खंडों को साफ कर नई-नई बस्तियां बसने से जहां वन क्षेत्रों के रकबे में कमी आती गई वहीं वन्य जीवों के अविवेकपूर्ण शिकार के कारण कई प्रकार के जीवों की प्रजातियां ही विनष्ट कर दी गई। औद्योगिक क्रांति के पश्चात् पश्चिमी देशों की देखा-देखी भारत में भी यत्र तत्र नित नये कारखाने खड़े होने लगे और वन क्षेत्रों के स्थान पर नई-नई विशाल बस्तियां आबाद होने लगी। इन औद्योगिक इकाइयों से निकलने वाली विषैले धुंए तथा अनेकानेक प्रकार के हानिकारक द्रव्यो के रिसाव के कारण जहां पर्यावरण प्रदूषण होने लगा वहीं जनसंख्या के विस्फोट ने भारी तादाद मे प्राकृतिक सुषमा से युक्त वन खंडों को उजाड़ कर असंतुलन की एक नई समस्या को जन्म दे डाला। यह हर्ष का विषय है कि पिछले कुछ वर्षों से विश्व भर में वन सपदा के विनाश से उत्पन्न विषम स्थितियों, खतरो और समस्याओं के प्रति एक नई चेतना

का उदय हुआ है और पर्यावरण संतुलन के लिए पुन: वनों और वन्य जीवों की महत्ता स्वीकारी जाने लगी है।

'भारत 1984' में दिये गये आंकड़ों के मुताबिक भारत मे कुल 754 लाख हैक्टर क्षेत्र वनो के अन्तर्गत आता है जो देश के कुल क्षेत्रफल का 22.8 प्रतिशत है। भारतीय वनों में पाई जाने वाली विभिन्न प्रकार की वनस्पतियों में लगभग 15 हजार प्रकार के फूलदार तथा 35 हजार प्रकार के गैर-फूलदार वृक्ष व पौधे पाये जाते है। इनके अलावा भारतीय वनों में 350 प्रकार के स्तनपायी जीव तथा 1200 प्रकार की विविध आकार-प्रकार व वर्ण की चिड़ियायें और कोई 30 हजार प्रकार के छोटे-बड़े जीव पाये जाते हैं। कितने ही प्रकार की प्रजाति के जीव तथा मछलियां इनके अतिरिक्त है।

जहां तक राजस्थान का प्रश्न है, इस प्रदेश के मात्र 9 प्रतिशत भू-भाग मे वन हैं। जबकि राष्ट्रीय स्तर पर 22.8 प्रतिशत भू-भाग वनों के अन्तर्गत आता है। क्षेत्रफल के लिहाज से भले ही राजस्थान देश के 1/10 भाग में फैला हुआ है किंतु देश के वन क्षेत्र का मात्र 1.8 प्रतिशत भाग ही इस प्रदेश में वनो के अन्तर्गत आता है। इसी प्रकार राष्ट्रीय स्तर पर औसतन जहां प्रति व्यक्ति 0.2 हैक्टर वन क्षेत्र है, राजस्थान मे प्रति व्यक्ति वन क्षेत्र मात्र 0.3 हैक्टर ही है। राजस्थान के वन क्षेत्रों में 32 प्रतिशत वन क्षेत्र सुरक्षित वर्ग में, 44 प्रतिशत वन क्षेत्र संरक्षित वर्ग में तथा शेष 24 प्रतिशत अवर्गीकृत वनों में शुमार होता है। प्रदेश की कुल कार्यशील जनशक्ति का मात्र 0.4 प्रतिशत भाग ही वन-संपदा पर रोजगार के लिए निर्भर है।

वनों का आंचलिक वितरण

राज्य का अधिकांश भाग मरुस्थलीय अथवा मरुस्थली जलवायु के कारण वनो के विकास के अनुकूल नही है। राज्य के दक्षिणी, दक्षिण-पूर्वी भाग में जहां 50 सेन्टीमीटर से अधिक वर्षा होती है, वही वनों का विशेष आधिक्य है। इस क्षेत्र मे राज्य के डूंगरपुर, बांसवाड़ा, उदयपुर, चित्तौडगढ, कोटा, बूंदी, झालावाड, भरतपुर व सवाईमाधोपुर जिले आते हैं। दूसरे वर्ग में 30 से 60 से.मी. वार्षिक वर्षा वाले पाली, अजमेर, जयपुर, झुन्झुनू, सीकर व टोंक जिले आते हैं जबकि अत्यल्प 5 से 30 से.मी. वार्षिक वर्षा वाले जिलों में गंगानगर, बीकानेर, जोधपुर, बाड़मेर, नागौर, जैसलमेर व चूरू जिले हैं जहां मरुस्थलीय वनस्पति यत्र-तत्र छितरी अवस्था मे पाई जाती है।

वनों के प्रकार

इमारती सागवान के वन

राजस्थान के दक्षिणी जिलों—बांसवाड़ा, डूंगरपुर, चित्तौड़गढ़ व उदयपुर

जहां अपेक्षाकृत अच्छी वर्षा होती है सागवान जैसी इमारती महत्त्व के वृक्ष बहुलता से पाये जाते हैं। इसके अतिरिक्त सफेद धौक, तेंदू, खैर, सालर और बांस के वृक्ष तथा कई प्रकार की घास भी इस अंचल में पाई जाती है।

धौंक के वन

उदयपुर, कोटा, बूंदी, चित्तौड़गढ़, झालावाड और सिरोही जिलों के अच्छी वर्षा वाले पर्वतीय भू-भाग में धौंक जैसी जलाऊ लकड़ी के अलावा खेर, गूलर, महुआ वहेड़ा आदि वृक्ष तथा पहाड़ी नालों में बांस के पेड़ों की प्रचुरता मिलती है। धौंक सालर व पलाश के वन अलवर, कोटा, सवाई माधोपुर, अजमेर व बूंदी जिलो के पर्वतीय क्षेत्र मे पाये जाते हैं।

कांटेदार झाड़ियां

कम वर्षा वाले अर्द्धमरुस्थलीय तथा शुष्क जलवायु वाले क्षेत्रों मे कांटेदार टहनियों व मोटी व खुरदरी पत्तियो वाले वृक्ष या झाड़िया पाई जाती हैं। शुष्क जलवायु वाले क्षेत्र मे इस प्रकार की वनस्पति इसीलिए जीवित रह पाती है क्योकि एक तो इनमें नमी अपेक्षाकृत अधिक समय तक बनी रह सकती है, दूसरे इनमे काटे लगे होने से सामान्यतः पशु इन्हें खाकर नष्ट नही कर पाते। जैसलमेर, बाड़मेर, जोधपुर, पाली, चूरू, नागौर, सीकर व झुन्झुनू व गंगानगर जिलों मे प्रायः इसी प्रकार की वनस्पति पाई जाती है। विशिष्ट प्रकार की भौगोलिक संरचना, भूमि की आर्द्रता तथा तापमान के अनुसार राज्य के विभिन्न अचलों में भिन्न-भिन्न प्रकार के घास के मैदान (बीड़) भी पाये जाते हैं, जिन्हें पशुओ की चराई के लिए प्रयुक्त किया जाता है।

वनों की उपज

राजस्थान के विभिन्न अंचलों में फैले वन खण्डों में कई प्रकार की लकड़ी के अलावा अन्य कई उपयोगी वस्तुऐं मिलती हैं जिनमें जलाऊ लकड़ी, इमारती लकड़ी, बांस व घास, कत्था, गोंद, आवला, तेन्दू की पत्तियां, खस, महुआ तथा शहद व मोम आदि प्रमुख हैं। इनके अलावा सघन वनों तथा अर्द्धशुष्क क्षेत्र की झाड़ियों में विभिन्न प्रकार की जड़ी-बूंटियों के अलावा सिघाड़े, शरीफे, वेर, जामुन, आम जैसे फल और लाख भी प्राप्त की जाती है। इनके अलावा प्रदेशों के वनों में विविध प्रकार के जंगली जीव व अनेकानेक प्रकार के कीडे-मकोडे भी प्रचुरता से पाये जाते हैं। राज्य मे जंगलों मे पाये जाने वाले प्रमुख वन्य जीवों मे शेर, बघेरा, भालू, सांभर, चीतल, चिंकारा, चौसिंगा, काला हरिण, नील गाय, जरख, स्याह गोश, सूअर, लोमड़ी, सेही, नेवला, अजगर, छिपकलियां, गिलहरी, पाटागोह, बिच्छू तथा चूहे प्रमुख हैं। मोर व गोड़ावण जैसे राज्य के प्रमुख पक्षियों के अलावा तीतर, चील, बाज, चमगादड़, सारस, जंगली मुर्गा, कौआ, तोता, मैना, नीलकंठ जैसे अनेका-

नक बतख तथा पाड़याल, जलबिलाव, जल कौआ, बत्तख, हवासील, बगुला, तथा कई अन्य प्रकार के जलीय जन्तु भी पाये जाते हैं।

वन विकास व वन्यजीव संरक्षण

राजस्थान के निर्माण से पूर्व इस प्रदेश में जैसा कि सर्वविदित है केन्द्रशासित अजमेर, मेरवाड़ा को छोड़कर लगभग सारा ही प्रदेश 22 छोटी बड़ी रियासतों में बंटा हुआ था। इन रियासतों के शासकों में प्रायः जहां वन-संपदा के संरक्षण के प्रति कोई विशेष अभिरुचि नहीं थी वहां कतिपय रियासती शासकों ने अपने निजी आमोद-प्रमोद व अपने मेहमानों के लिए शिकार की व्यवस्था को दृष्टिगत रखते हुए वन क्षेत्रों के विकास की ओर पर्याप्त ध्यान दिया था। फिर भी रियासती शासन के दौरान जनसंख्या के सीमित रहने तथा राजकोप के भय से वन संपदा को विशेष क्षति नहीं पहुंच पाई और उनका नैसर्गिक सौन्दर्य और वन्य जीवों की प्रचुरता अक्षुण्ण बनी रही। किन्तु राजस्थान निर्माण के पश्चात देश के विभाजन के फलस्वरूप उमड़ी शरणार्थियों की भीड़ और दिन पर दिन बढ़ती आबादी के कारण राज्य के वन खंड शनैः शनैः सीमित होते गए और वनों तथा वन्य जीवों दोनों का ही बेरहमी से विनाश किया जाने लगा।

वन नीति का निर्धारण

वन संपदा के संरक्षण की आवश्यकता अनुभव करने पर राज्य सरकार ने दूसरी पंचवर्षीय योजना के दौरान राज्य की वन नीति घोषित की। इसके तहत स्थानीय जनता की घरेलू उपयोग के लिए वन की उपज सुनिश्चित करने, वनों की उपज पर आधारित उद्योगों के लिए कच्चे माल की व्यवस्था करने, वन क्षेत्र में वृद्धि करने, मिट्टी का कटाव रोकने, वन लगाकर सीमान्त भूमि का सदुपयोग करने तथा पशुधन के लिए पर्याप्त चरागाह भूमि का विकास किये जाने पर बल दिया गया।

पंचवर्षीय योजनाओं में वन विकास

राज्य की पहली पंचवर्षीय योजना *(1951–56)* में वन विकास पर कुल *26.37* लाख रुपये व्यय किये गये। इस योजना मे मुख्यतः वन अनुसंधान, ग्राम्य वनों का निर्माण, वन संरक्षण सम्बन्धी योजनाएं तैयार की गईं। उदयपुर, बांसवाड़ा व झालावाड़ में फारेस्ट गार्ड प्रशिक्षण केन्द्र तथा कोटा मे वन अनुसंधान केन्द्र स्थापित हुआ। केन्द्रीय सरकार ने जोधपुर में मरू अनुसंधान केन्द्र स्थापित किया। रेगिस्तानी अंचलों में वनों की पट्टियां लगाई गई और पुरानी पौधशालाओं के अलावा 8 नई पौधशालाएं (नर्सरी) कायम की गईं।

दूसरी पंचवर्षीय योजना में वन विकास कार्यों पर *125.67* लाख रुपये व्यय किये गये। योजनाकाल में 14 वन क्षेत्रों मे वन संपत्ति के परीक्षण तथा *1750* वर्ग मील क्षेत्र मे नये वन लगाये गये। खस के उत्पादन के विकास, भू-संरक्षण कार्य की पहल,

40 नई पौधशालाओं की स्थापना तथा रेगिस्तानी अंचलों में बबूल के पौधे लगाने के विशेष कार्यक्रम के अलावा वन विभाग के कई अधिकारियों को विशिष्ट प्रशिक्षण के लिए अमेरिका भी भेजा गया।

तीसरी पंचवर्षीय योजना में वन विकास के लिए करीब 245 लाख रुपये की राशि का प्रावधान किया गया। योजनाकाल में इस बार आर्थिक महत्व के वृक्षों यथा, सागवान, आम, चीड़ आदि के पेड़ लगाने के अलावा कर्मचारियों के प्रशिक्षण, और वन अनुसंधान कार्य किये गये तथा वन खण्डो मे सड़कों के निर्माण कार्य तथा 17 नई पौधशालाओं की स्थापना की गई।

चौथी पंचवर्षीय योजना में नये क्षेत्रों में वन लगाने, पुराने वनों को विकसित करने, नई पौधशालाओं की स्थापना तथा पूर्व मे स्थापित पौध शालाओं के विकास के अलावा विभागीय कर्मचारियों के प्रशिक्षण पर विशेष बल दिया गया।

पांचवी पचवर्षीय योजना काल मे युवा नेता संजय गांधी के पांच सूत्री कार्यक्रम के तहत वृक्षारोपण कार्य को विशेष गति मिली। प्रधान मंत्री के 20 सूत्री आर्थिक कार्यक्रम मे भी वनों के विकास पर विशेष ध्यान दिया गया।

छठी पंचवर्षीय योजना में वनों के विकास तथा संरक्षण पर विशेष ध्यान दिया गया। इसके तहत पहली बार खेतों के इर्द-गिर्द पेड़ लगाने तथा सड़कों के किनारे पेड़ लगाने के अलावा विद्यालयों व पहाड़ी क्षेत्रों में वृक्षारोपण कार्य शुरू किए गये तथा विद्यालयों व कालेजों के छात्रों के पर्यावरण विकास शिविर लगाये गये तथा अनुसंधान कार्यों पर विशेष ध्यान दिया गया।

पिछले तीन वर्षों से केन्द्र सरकार के निर्देशानुसार राज्य सरकार द्वारा पर्यावरण संतुलन के तहत वनों तथा वन्य जीवों के सरक्षण के विशेष प्रयास किए गये। राष्ट्रीय वन नीति के अनुरूप वृक्षारोपण तथा वन संवर्धन कार्यक्रमों पर जहां तेजी से अमल किया गया वहा बंजर क्षेत्रों व खुली पहाड़ियों, अनुसूचित जाति व जनजाति क्षेत्रों, किसानों के खेतों तथा विद्यालयों में वृक्षारोपण के अलावा सामाजिक सुरक्षा योजना, मरुस्थल क्षेत्र में वृक्षारोपण योजना, नहरी एवं नदी घाटी योजना क्षेत्र में वृक्षारोपण योजनाओं पर कार्य प्रारंभ किया गया है। इसके अतिरिक्त जनजाति वर्ग के साधनहीन लोगों को अनुदान तथा ग्रामीण अचलों में वृक्षारोपण के लिए पंचायतों को अनुदान देने की अभिनव योजनायें प्रारम्भ की गई हैं।

इसके फलस्वरूप वर्ष 1982 की वर्षा ऋतु मे जहां केवल 1·10 करोड़ पौधे वितरित किये गये वहां 1982-83 मे 32 करोड़, 1983-84 में 4. 50 करोड़ तथा वर्ष 1984-85 में 6.50 करोड पौधे लगाने का लक्ष्य तय किया गया। उक्त तीनों ही वर्षों में नये 20 सूत्री कार्यक्रम के 'जंगल से मंगल' सूत्र के तहत लक्ष्य से अधिक उपलब्धियां अर्जित की गईं। कृषि वानिकी कार्यक्रम के तहत राज्य में वर्तमान में 600 हैं।

वर्ष 1984-85 में राज्य में वन संवर्धन एवं विकास तथा वन्य जीवों के संरक्षण से संबद्ध विविध प्रकार के कार्यक्रमों पर 2455 करोड़ रु० का प्रावधान रखा गया।

वन्य जीव संरक्षण

आलोच्य वर्ष में वन्य जीवों के संरक्षण के प्रयासों के तहत 31 दिसम्बर 1986 से समूचे राज्य में जहां शिकार करने पर प्रतिबन्ध लगाने का निश्चय किया गया वहां रणथम्भोर बाघ अभयारण्य के अलावा सरिस्का वन्यजीव अभयारण और जैसलमेर अभयारण्य को भी राष्ट्रीय उद्यान का दर्जा देने की कार्यवाही प्रगति पर है। वर्तमान में राज्य मे 20 वन्यजीव अभयारण्य हो गये हैं जबकि 30 वन्य क्षेत्रों में शिकार वर्जित किया जा चुका है। जयपुर, उदयपुर, जोधपुर एवं बीकानेर की जन्तुशालाओं को केन्द्रीय सरकार की प्रवृतित योजना के तहत विकास के लिए शामिल कर लिया गया है। इसी प्रकार कुंभलगढ़ (उदयपुर), सीतामाता (चित्तौडगढ़), माउन्ट आबू (सिरोही) तथा कोटा का दर्रा अभयारण्य भी देश के चयनित अभयारण्यों मे शामिल कर लिए गये हैं। वन्य जीव (संरक्षण) अधिनियम 1972 को लागू किए जाने के क्रम में वन्य जीवों के संरक्षण के लिए राज्य मे 7 गश्ती दल कार्यरत हैं जिससे वन्य जीवों के अवैध शिकार में कमी आई है और उनकी संख्या पूर्वापेक्षा बढ़ी है।

वनों से आय

वर्ष 1984 में वन विभाग के तहत संचालित राजकीय व्यापार योजना के तहत विभिन्न प्रकार की वनो की उपज यथा, लकडी, बांस, कोयला व कत्था आदि के विदोहन तथा ठेकेदारी प्रथा की समाप्ति के फलस्वरूप जहा पूर्व में मात्र 25 से 35 लाख की वार्षिक आय होती थी वह अब तीन गुनी से अधिक होने लगी है। ठेकेदारी प्रथा की समाप्ति से ठेकेदारों के शोषण से कामगारों की मुक्ति के साथ-साथ वन उपज के मूल्य भी स्थिर हुए हैं। राज्य में इस योजना के तहत वर्तमान में 37 केन्द्र कार्यरत हैं। वर्ष 1983-84 में राजकीय व्यापार योजना के तहत कुल 214. 06 लाख रु० का शुद्ध लाभ रहा जबकि पिछले वित्तीय वर्ष के संशोधित अनुमानों के अनुसार वर्ष 84-85 में राजस्व प्राप्ति व व्यय क्रमशः 478 90 लाख रु० व 372.39 लाख रु० होने की आशा है। तेंदू पत्ता योजना के तहत वर्ष 1984-85 मे 1.10 करोड़ के शुद्ध लाभ का अनुमान है। उल्लेखनीय है कि वर्ष 1970-71 में जहा राज्य में वनो से मात्र 1.50 करोड़ रु० की आय होती थी उसके मार्च, 1984 के अन्त तक 8.39 करोड रु० तक जा पहुंचने की आशा है।

केवलादेव घना राष्ट्रीय पक्षी अभयारण्य, भरतपुर

भरतपुर नगर से कोई 3 किलोमीटर दक्षिण पूर्व की ओर लगभग 2872 हैक्टर क्षेत्र में फैला केवलादेव घना पक्षी अभयारण्य देश में अपने प्रकार का सबसे

बड़ा पक्षी विहार स्थल है। जहां 300 से भी अधिक प्रकार के रंग-बिरंगे पक्षी पाये जाते हैं। सर्दियां प्रारम्भ होते ही विश्व के विभिन्न भागों से नाना प्रकार के पक्षी समुदाय अपने शीतकालीन प्रवास के लिए अभयारण्य में आने लगते हैं और ग्रीष्म ऋतु प्रारम्भ होते ही इनकी वापसी शुरू हो जाती है। दूर-दराज के देशों से आने वाले इन प्रवासी पक्षियो मे कूट, पोचर्ड, पिनटेल, मलार्ड, टील, मेड्वेल व नाना प्रकार की मुर्गाबियां प्रमुख हैं। ये प्रवासी पक्षी अभयारण्य मे प्रजनन नही करते।

अभयारण्य में पाये जाने वाले देशी पक्षियों में पेन्टेड स्टोर्क, ओपन बिल्ड, स्टोर्क, बगुले, कोरमोरेन्ट, फ्लेमिंगो, हवासील तथा विभिन्न प्रकार की चिड़ियां प्रमुख हैं। अभयारण्य का एक और विशिष्ट आकर्षण अजगर भी है।

इस पक्षी विहार में वर्षा ऋतु के दौरान समीपवर्ती अजानबन्ध में एकत्रित जल सर्दी की ऋतु प्रारम्भ होते ही भर दिया जाता है जिससे नियंत्रित प्रणाली से पक्षी विहार स्थलों के निकट बनी उथले पानी की झीलो में पहुंचाया जाता है। अन्तर्राष्ट्रीय ख्याति प्राप्त इस अभयारण्य की देश विदेश के पर्यटकों मे बढ़ती ख्याति के कारण भारत सरकार द्वारा वर्ष 82-83 में इसे राष्ट्रीय उद्यान के रूप मे क्रमोन्नत कर दिया गया है। सन् 1964 से इस अभयारण्य मे पक्षियों का शिकार वर्जित है।

रणथम्भोर बाघ संरक्षण स्थल, सवाईमाधोपुर :

दिल्ली-बम्बई रेल मार्ग पर स्थित सवाईमाधोपुर स्टेशन से 11 किलोमीटर दूर लगभग 39200 हैक्टर के सघन वन क्षेत्र मे यह बाघ संरक्षण स्थल स्थित है। यह क्षेत्र 'प्रोजेक्ट टाइगर' योजना के अन्तर्गत वर्ष 1973-74 में चुना गया। संरक्षण स्थल के विकास हेतु भारत सरकार एवं विश्व वन्य प्राणी कोष द्वारा यथेष्ट योगदान किया जा रहा है। इस सघन वन में बहुतायत से पाये जाने वाले चीतल, सांभर, नीलगाय, रीछ, आदि कचौदा घाटी, पदम तालाब, राजबाग व गिलाई सागर क्षेत्र में देखे जा सकते हैं अभयारण्य क्षेत्र मे शेर, बघेरे भी पाये जाते है। पर्यटकों की सुविधा हेतु सवाई माधोपुर वन विश्राम गृह एवं रणथम्भोर दुर्ग की छाया में जोगी महल में प्रवास की सुविधा उपलब्ध है।

सरिस्का बाघ संरक्षण स्थल :

दिल्ली से 200 किलोमीटर दक्षिण पश्चिम व जयपुर से 110 किलोमीटर दूर उत्तर पूर्व मे स्थित सरिस्का बाघ सरक्षण स्थल अपने आप में अनूठा स्थान है जिसमे जीप व मिनी बस द्वारा अथवा सर्वथा सुरक्षित 'ओदियो' मे बैठकर शेर देखे जा सकते हैं। अभयारण्य में शेर के अतिरिक्त बघेरा, चीतल, सांभर, नीलगाय, जंगली सुअर, सैली भी बहुतायत से पाये जाते हैं। चौसिंगा, रेटल व स्याहगोश जो राजस्थान के अन्य क्षेत्रो मे प्रायः बहुत कम पाये जाते हैं, यहां सहजता से दिखाई

देते हैं। पर्यटकों के ठहरने हेतु सुन्दर आवास गृह हैं जिनमें भारतीय व विदेशी भोजन की व्यवस्था पर्यटन विभाग द्वारा की जाती है। यह अभयारण्य भी प्रोजेक्ट टाइगर योजना के तहत शुमार कर लिया गया है जिससे बाघों की संख्या में अभिवृद्धि होने लगी है।

दर्रा संरक्षण स्थल :

दर्रा अभयारण्य कोटा नगर से 48 किलोमीटर विन्ध्य पर्वतीय शृंखला की मनोरम घाटियों में स्थित है। अभयारण्य क्षेत्र में चीतल, सांभर, नीलगाय, हिरण व जंगली सुअर सरलता से देखे जा सकते हैं। बघेरा व शेर जीप द्वारा घूमते हुए अथवा ओदी पर से देखे जा सकते हैं। यहां एक लकड़ी से बना वन आवास गृह भी है जिसे मण्डल वन अधिकारी कोटा को पूर्व में लिखकर ठहरने के लिए आरक्षित कराया जा सकता है। अभी इस आवास गृह में भोजन की व्यवस्था नहीं है।

जय समन्द अभयारण्य :

भीलों की नगरी उदयपुर से 50 किलोमीटर दूर-मनोरम पहाड़ियों व घाटियों में स्थापित जयसमन्द वन्य जीव संरक्षण स्थल में चीतल, नीलगाय, रीछ, जंगली सुअर व अनेक पक्षी पाये जाते हैं। हर शनिवार की सांयकाल ओदी के नीचे पर्यटकों को बघेरा दिखाने की दृष्टि से 'पाडा' बांधा जाता है। संरक्षण स्थल के समीप विशाल जयसमन्द झील के किनारे वन आवास-गृह है जिसमें ठहरने के लिए मण्डल वन अधिकारी, उदयपुर या गेम वार्डन, जय समन्द से पूर्व सम्पर्क किया जाना चाहिए।

धौलपुर वन-विहार अभयारण्य : (रामसागर)

यह वन्य जीव संरक्षण स्थल धौलपुर से 10 किलोमीटर दूर व आगरा से 72 किलोमीटर दूर धौलपुर-आगरा-ग्वालियर-बम्बई राष्ट्रीय मार्ग के समीप स्थित है। वन विहार आवास गृह झील के किनारे स्थित है। जहाँ से चीतल, नीलगाय, सांभर तथा मोर इत्यादि विचरण करते हुए देखे जा सकते हैं।

ताल छापर कृष्ण मृग अभयारण्य :

यह संरक्षण स्थल सुजानगढ़ (चूरू जिले) से 10 किलोमीटर दूर स्थित है। इस संरक्षण स्थल में 500 काले हिरन झुण्डों में विचरते देखे जा सकते हैं।

रणकपुर-कुम्भलगढ़ अभयारण्य :

उदयपुर से लगभग 80 किलोमीटर दूर कुम्भलगढ़ के समीप अरावली पर्वतीय शृंखला में व इसके मैदानी भाग मे यह संरक्षण स्थल स्थित है इस संरक्षण स्थल के समीप रणकपुर के मन्दिर व ऐतिहासिक कुम्भलगढ का किला पर्यटकों के अन्य आकर्षक केन्द्र हैं। इस संरक्षण स्थल मे रीछ, साभर, चीतल, सुअर, जगली मुर्गा इत्यादि को संरक्षण प्राप्त है। इस क्षेत्र में बघेरा भी पाया जाता है।

आबू पर्वत अभयारण्य :

यह अभयारण्य माउंन्ट आबू की उच्च पर्वतीय शृंखला में स्थित एक मनोरम स्थल है। यह दिल्ली-अहमदाबाद रेल मार्ग पर आबू रोड रेलवे स्टेशन से 29 किलोमीटर दूर स्थित है। यहाँ जंगली मुर्गा, सूअर, रीछ, सांभर, तीतर व नाना प्रकार के सुन्दर पक्षी देखे जा सकते हैं।

अभयारण्यों में प्रकृति के स्वच्छन्द वातावरण मे उन्मुक्त रूप से विचरण करते वाले वन्य जीवों की दैनन्दिन क्रीड़ाओं को निकट से देखने के लिए आने वाले देशी-विदेशी पर्यटकों के सुविधापूर्ण प्रवास तथा उन्हें वन्य जीवों के विचरण स्थलों तक पहुंचाने के लिए प्राय: सभी अभयारण्यों में पर्यटक आवास गृहों, परिवहन सुविधाम तोवा प्रशिक्षित गाइडों व नौकाओं आदि की समुचित व्यवस्था उपलब्ध है। अभयारण्यों के पशुओं के लिए पेयजल, लवणयुक्त क्षेत्र की व्यवस्था के लिए उनके अलावा वन्यजीवों के कोलाहल रहित वातावरण व अवैध शिकार से उनकी सुरक्षा पर भी पर्याप्त ध्यान दिया जाने लगा है।

24
शिक्षा प्रसार के नये क्षितिज

आधुनिक समाज में प्रजातंत्र की सफलता व असफलता शिक्षा के विस्तार एवं विकास पर निर्भर करती है। परतंत्र भारत में शिक्षा विस्तार एवं विकास की बातें करना मरू प्रदेश में जलधारा की कल्पना करने के समान थी। उस वक्त शिक्षा मुट्ठी भर लोगों तक सीमित थी। शेष जनता अशिक्षा के अन्धकार मे भटक रही थी। सम्पूर्ण भारत की यही स्थिति थी।

शिक्षा के क्षेत्र में राजस्थान भी अत्यन्त पिछड़ा हुआ प्रदेश था। प्रदेश में शिक्षा की पहुंच कुछ अभिजात्य वर्गों तक ही सीमित थी। रियासती राज्यों में शिक्षा पर बहुत कम ध्यान इसलिए भी दिया जाता था क्योंकि शिक्षित समाज गुलामी की बेड़ियों को तोड़ने के लिए उतावला हो जाता था।

फिर भी 1930-40 में कुछ बड़ी रियासतों में राज्य प्रशासन को चलाने के लिए बाबुओं तथा स्वदेशी अधिकारियों की जरूरत महसूस की जाने लगी। अतः जयपुर जोधपुर, बीकानेर, कोटा, उदयपुर आदि मे शिक्षा के सीमित प्रसार की ओर ध्यान दिया गया। फलस्वरूप इन रियासतों की राजधानियों में ही शिक्षा के केन्द्र खोले गये।

स्वतन्त्रता से पूर्व राजस्थान में कोई विश्वविद्यालय नहीं था, न ही प्रारम्भिक शिक्षा का कोई स्तर था। 1941 में राज्य में साक्षरता का प्रतिशत मात्र 5.51 था। राजस्थान निर्माण के साथ ही विकास की किरणें फूटने लगीं। चहुंमुखी विकास की ओर ध्यान दिया जाने लगा। योजनाओं में शिक्षा पर पर्याप्त ध्यान दिया जाने लगा। फलस्वरूप 1950-51 तक राज्य मे शिक्षण संस्थाओं की संख्या 6027 हो गयी जो 1960-61 में बढ़कर 20,771 हो गयी। वर्ष 1963 के अन्त में इनकी कुल संख्या 27,560 हो गयी जो 1967 मे 40 हजार तक जा पहुंची।

योजनानुसार प्रथम पंचवर्षीय योजना में कुल 4.06 करोड़ रुपये, द्वितीय पंचवर्षीय योजना मे 12.719 करोड़ रु. एवं तृतीय पंचवर्षीय योजना में 21.10 करोड़ रुपये शिक्षा पर व्यय किये गये।

दो पंचवर्षीय योजनाओं में साधारण शिक्षा पर तथा तीसरी तथा चौथी योजना मे तकनीकी शिक्षा पर अधिक बल दिया गया। परिणामस्वरूप 1950-51 में प्राथमिक विद्यालयों की 4.336 संख्या 1960-61 में 14,548 तथा 1963-64 में 18,500 हो गयी। माध्यमिक विद्यालयों की 1950-51 में जो संख्या 762 थी, जुलाई 1964 मे यह 1747 हो गयी।

1948-49 में उच्चविद्यालयों की संख्या 139 थी और 54-55 मे 243 हो गयी। 1960-61 में हायर सैकण्डरी स्कूलों की संख्या 304 थी जबकि हाई स्कूल तथा हायर सैकण्डरी स्कूल 537 थे।

शिक्षा के प्राचार-प्रसार की ओर निरन्तर ध्यान दिया जाने लगा। अतः 1980 तक राज्य में प्रारम्भिक विद्यालयों की संख्या 21,313 प्राथमिक विद्यालयों की सख्या 5,175 माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालय 2,168 सामान्य शिक्षा के 117 कालेज एवं विश्व विद्यालयों की संख्या चार (विज्ञान तथा तकनीकी शिक्षा संस्थान, पिलानी सहित) हो गयी।

राज्य में शिक्षण संस्थाओं की स्थापना निरन्तर होती रही फलतः मार्च, 84 तक प्राथमिक विद्यालय 24,360 उच्च प्राथमिक विद्यालय 654, माध्यमिक एव उच्च माध्यमिक विद्यालय 2;519 तथा विश्वविद्यालयो की सख्या 5 हो गयी।

प्राथमिक, माध्यमिक, विशेष, विश्वविद्यालय एवं उच्च शिक्षा, तकनीकी शिक्षा, सामान्य शिक्षा तथा खेलकूद पर राज्य सरकार ने 79-80 मे 12614.91 लाख रु. 80-81 मे 14445.10 लाख रु., 81-82 में 17350.77 लाख रु. 82-83 मे 21219.13 लाख रु. व्यय करने का तथा 84-85 मे 28086.29 लाख रु. के आय-व्ययक अनुमान का प्रावधान रखा।

नारी शिक्षा :

1981 की जनगणना के अनुसार राज्य के कुल साक्षरता प्रतिशत 24 38 मे से महिला साक्षरता का प्रतिशत केवल 11.42 है। स्वतंत्रता पूर्व राजस्थान की देशी रियासतों में महिला शिक्षा पर नगण्य ध्यान दिया गया। उच्च वर्गीय समाज मे भी महिला शिक्षा की अनिवार्यता कम महसूस की गयी। 1981 में महिला शिक्षा का जो प्रतिशत है वह नगरीय क्षेत्र की महिलाओं में साक्षरता की वृद्धि को दर्शाता है। अब भी ग्रामीण क्षेत्र की महिलाओं में साक्षरता कम ही है।

राजस्थान निर्माण के पश्चात नारी शिक्षा पर भी ध्यान दिया गया। फलस्वरूप 1967 तक राज्य में 205 उच्च तथा उच्चतर माध्यमिक बालिका विद्यालयों की सख्या हो गयी। 1950-51 में 6 से 11 वर्ष की बालिकाओं का शिक्षा प्रतिशत 5.7 था। अतः राज्य में लड़कियों की शिक्षा के प्रसार के लिए अनेक कदम उठाए गये। स्नातकोत्तर स्तर तक लड़कियों की शिक्षा निःशुल्क कर दी गई। साथ ही अध्यापिकाओं को पर्याप्त ट्रेनिंग सुविधाएं सुलभ कराई गई।

छठी पंचवर्षीय योजना में (1980-85) प्राथमिक शिक्षा के क्षेत्र में छात्र संख्या तथा विद्यालयों की संख्यात्मक वृद्धि पर विशेष बल दिया गया फलस्वरूप 84-85 में राज्य में 1,454 प्राथमिक एवं 1,095 उच्च प्राथमिक विद्यालय छात्राओं के लिए स्थापित हो गये।

सत्र 84-85 में ग्रामीण क्षेत्रों में छात्राओं के लिए 22 माध्यमिक विद्यालय खोले गये। इस प्रकार समीक्षाधीन वर्ष में छात्राओं के लिए कुल 261 माध्यमिक विद्यालय तथा 150 उच्च माध्यमिक विद्यालय कार्यरत रहे।

समाज के पिछड़े वर्ग विशेषकर अनु० जाति एवं अनु० जनजाति की छात्राओं में शिक्षा प्रसार के लिए अधिक बल दिया गया। इन छात्राओं को निःशुल्क स्कूल यूनिफार्म, पुस्तकें एवं कापियां तथा दोपहर में मुफ्त भोजन सुलभ कराने की योजना अपनाई गयी।

9-14 आयु वर्ग की जो छात्राएं नियमित शिक्षा नहीं ग्रहण कर पातीं उनके लिए अनौपचारिक शिक्षण कार्यक्रम चलाया गया। वर्ष 84-85 में इस कार्यक्रम से 35,699 अनु० जाति की तथा 30,371 अनु० जनजाति की छात्राएं लाभान्वित हुईं।

महिलाओं के तकनीकी प्रशिक्षण के लिए जयपुर में एक राजकीय महिला पोलिटेक्निक खोला गया है जिसमें महिलाओं की अभिरुचि के अनुसार कामर्शियल आर्टस, टैक्सटाइल डिजाइन तथा ड्रेस मेकिंग और कोस्ट्यूम डिजाइन व्यवसायों में कुल 60 छात्राओं को प्रति वर्ष तीन वर्षीय पाठ्यक्रम में प्रशिक्षण दिया जाता है। राज्य की अन्य पोलिटेक्निक संस्थाओं में महिलाओं के लिए 10 प्रतिशत स्थान आरक्षित हैं। जयपुर में एक निजी संस्थान 'चांद शिल्प शाला' में भी महिलाओं को प्रशिक्षण दिया जाता है।

महिलाओं को दस्तकारी का प्रशिक्षण सुलभ कराने हेतु जयपुर में एक महिला औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान अलग से स्थापित किया गया है। राज्य की अन्य सभी औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थानों में महिलाओं के लिए पांच प्रतिशत स्थान आरक्षित हैं।

वनस्थली विद्यापीठ नारी शिक्षण का उच्च संस्थान है, जिसे महिला विश्वविद्यालय का स्तर प्राप्त है।

शिक्षा का प्रतिशत :-

1951 में राज्य मे साक्षरता का प्रतिशत केवल 8.95 था जबकि सम्पूर्ण भारत का साक्षरता प्रतिशत 23.70 था। 1971 में कुल में जनसंख्या का 19.07 प्रतिशत भाग साक्षरता की श्रेणी में आता था जबकि सम्पूर्ण भारत का साक्षरता प्रतिशत 29.46 था। 1981 में राज्य में साक्षरता का प्रतिशत 24.38 हो गया। इसमें 36.30 प्रतिशत पुरुष तथा 11.42 प्रतिशत महिलाएं साक्षर है। राज्य

के ग्रामीण क्षेत्रों में साक्षरता का प्रतिशत 17.59 है जबकि नगरीय क्षेत्रों की साक्ष-रता का प्रतिशत 48.35 है। निम्नांकित विवरण से यह स्पष्ट है :—

वर्ष	पुरुष	महिलाएं	कुल
1921	7.33	0.59	4.22
1931	8.15	0.72	4.65
1941	9.36	1.14	5.51
1951	14.44	3.00	8.95
1961	23.71	5.84	15.21
1971	28.74	8.46	19.07
1981	36.30	11.42	24.38

माध्यमिक शिक्षा :

1950-51 में जहां माध्यमिक विद्यालयों की संख्या 762 थी, जुलाई 64 तक इनकी संख्या 1747 हो गयी। 75-76 में राज्य में 1456 हायर सेकेण्डरी विद्यालय थे जो 79-80 में 2168 हो गये। छठी पंचवर्षीय योजना काल में माध्य-मिक शिक्षा प्रसार पर 3500 लाख रु. व्यय करने का प्रावधान रखा गया। 1984-85 में माध्यमिक शिक्षा के विकास को गति देने के लिए 395 उच्च प्राथमिक विद्यालयों को माध्यमिक विद्यालयो में क्रमोन्नत किया गया। छात्रों के लिए ग्रामीण क्षेत्र में 338 तथा छात्राओं के लिए 22 विद्यालय खोले गये, जबकि शहरी क्षेत्र में छात्रों के लिए 18 तथा छात्राओं के लिए 17 विद्यालय खोले गये।

उल्लेखनीय है कि इस वर्ष प्रत्येक पंचायत समिति मुख्यालय पर उच्च माध्य-मिक विद्यालयों की सुविधा उपलब्ध करा दी गई।

इस प्रकार 84-85 में 2052 माध्यमिक तथा 892 उच्च माध्यमिक विद्यालय कार्यरत रहे। माध्यमिक विद्यालयों में से छात्रों के 1791 तथा 261 छात्राओं के एवं उच्च माध्यमिक स्तर के 742 छात्रो के तथा 150 छात्राओं के विद्यालय हैं।

84-85 में उर्दू पठन-पाठन हेतु 100 उर्दू अध्यापकों के पद सृजित किये गये। 356 वर्ग एवं 87 विषय माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालयों में खोले गये।

उच्च शिक्षा

स्वतन्त्रता पूर्व राजस्थान में कोई भी विश्वविद्यालय नहीं था। 1947 में राजस्थान के एक मात्र विश्वविद्यालय (पूर्व में राजस्थान विश्वविद्यालय) की नींव डाली गयी। राजस्थान निर्माण के समय राज्य में सामान्य शिक्षा के लिए 27 महा-विद्यालय (7 लड़कियों के, 8 व्यावसायिक और 5 विशिष्ट शिक्षा के लिए) थे।

1962-63 में इन कालेजों की संख्या 62 थी जो 1980 में 120 तक जा पहुंची। व्यावसायिक एवं विशिष्ट शिक्षा के लिए कालेजों की संख्या 149 हो गयी।

वर्ष 84-85 में राज्य मे कुल 131 महाविद्यालय, 19 व्यावसायिक शिक्षण संस्थान, 5 विश्वविद्यालय (वनस्थली एवं पिलानी समेत), विश्वविद्यालयों से संबद्ध कालेज 6 कार्यरत रहे, 13 पोलिटेक्निक संस्थान कार्यरत हैं।

तकनीकी शिक्षा

1953 तक तकनीकी शिक्षण हेतु राज्य भर में एम.बी.एम. इन्जीनियरिंग कालेज, जोधपुर में था। 1957 में तकनीकी शिक्षा के लिए अलग निदेशालय की स्थापना की गई। जोधपुर, अजमेर, उदयपुर, अलवर, कोटा और बीकानेर मे पोलिटेक्निक संस्थानो की स्थापना की गई।

तकनीकी शिक्षा की ओर विशेष ध्यान दिया गया। परिणामस्वरूप 84 85 तक राज्य में 5 इन्जीनियरिंग कालेज और 13 पोलिटेक्निक संस्थानों की संख्या हो गई। पिलानी के बिड़ला इन्स्टीट्यूट आफ साइन्स एण्ड टेक्नोलोजी को विश्वविद्यालय का दर्जा दिया गया है। इसमें टेलीविजन व इलेक्ट्रोनिक्स सम्बन्धी आधारभूत तकनीकी अनुसंधान की व्यवस्था की गई।

स्वास्थ्य एवं चिकित्सा

राज्य मे आधुनिक शिक्षण-प्रशिक्षण के लिए 5 मेडीकल कालेज जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, उदयपुर एवं अजमेर मे स्थित है। जयपुर, जोधपुर व बीकानेर में स्नातकोत्तर पाठ्यक्रम की शिक्षा दी जा रही है। मेडिकल में उच्च अध्ययन के लिए छात्रों को बाहर भेजा जाता है।

राजस्थान राज्य के निर्माण के समय आयुर्वेद विभाग का 10.11 लाख रु. का बजट था। तृतीय योजना में आयुर्वेद पर एक करोड़ रू. खर्च किया गया। राजस्थान निर्माण के पूर्व राजकीय स्तर पर जयपुर तथा उदयपुर में दो आयुर्वेद महाविद्यालयों मे आचार्य तक की शिक्षा दी जाती थी। वर्तमान मे जयपुर तथा उदयपुर मे स्थित दोनो महाविद्यालयों के अतिरिक्त छ अन्य आयुर्वेद कालेज स्थित हैं। जयपुर तथा उदयपुर में धात्री उपवैद्य प्रशिक्षण केन्द्र स्थापित किया गया है।

कृषि प्रशिक्षण

राज्य में तीन कृषि महाविद्यालय उदयपुर, जोबनेर तथा संगरिया मे स्थित हैं। इसके अतिरिक्त स्वामी दयानन्द कालेज अजमेर मे भी कृषि अध्ययन की सुविधा सुलभ है।

पशु चिकित्सा प्रशिक्षण

1954 मे राज्य पशु चिकित्सा विज्ञान और पशुपालन कालेज बीकानेर में स्थापित किया गया। 1957 मे भेड़ एवं ऊन प्रशिक्षण केन्द्र की स्थापना की गई। भारत में अन्य राज्यो की अपेक्षा राजस्थान मे पशु चिकित्सा सेवा सर्वाधिक व्यवस्थित रूप से सुलभ है।

संस्कृत शिक्षा

राजस्थान संस्कृत शिक्षा का सदियों से प्रमुख केन्द्र रहा है। भारत में वाराणसी के बाद संस्कृत शिक्षा के लिए जयपुर का नाम शीर्षस्थ रहा है। राजस्थान निर्माण के बाद 1958 में संस्कृत शिक्षा निदेशालय आरम्भ किया गया। राज्य में संस्कृत की आचार्य परीक्षा को एम. ए. तक की मान्यता प्रदान की गयी।

मार्च 85 तक राज्य में राजकीय संस्कृत संस्थानों की संख्या 197 तथा अनुदानित एवं मान्यता प्राप्त संस्कृत शिक्षा संस्थानों की संख्या 135 तक जा पहुंची है। इनमें आचार्य कालेज, शास्त्री कालेज, उपाध्याय विद्यालय, प्रवेशिका विद्यालय संस्कृत उच्च माध्यमिक विद्यालय, संस्कृत प्राथमिक विद्यालय तथा संस्कृत एस.टी.सी. विद्यालय सम्मिलित हैं।

इनमें छात्रों की संख्या 68,400 रही जिनमें छात्राओं की संख्या 16,800 व अनुसूचित जाति एवं जन जाति के छात्रों की संख्या 8 400 रही।

वित्तीय वर्ष 1984-85 में छात्र संख्या में 16 प्रतिशत की वृद्धि हुई। 50 उच्च प्राथमिक स्तर के नये विद्यालय खोले गये तथा 5 प्रवेशिका स्तर के विद्यालय आचार्य स्तर का कालेज क्रमोन्नत किया गया। उपाध्याय स्तर के विद्यालयों मे 20 नये विषय खोले गये एवं 6 अनुदानित संस्थानों के अनुदान प्रतिशत में वृद्धि की गई।

अनौपचारिक शिक्षा

9 से 14 आयु वर्ग के ऐसे छात्र-छात्रायें जो अपने पारिवारिक कारणों से विद्यालय में जाकर औपचारिक शिक्षा नहीं ग्रहण कर पाते, उनकी शिक्षा के लिए अनौपचारिक शिक्षा का सहारा लिया गया। इसे 20 सूत्री कार्यक्रम के सूत्र 16 के अन्तर्गत लेकर गति प्रदान की गई।

वर्ष 1984-85 में कुल 10600 अनौपचारिक केन्द्रों के माध्यम से फरवरी 85 तक 3.37 लाख बालक-बालिकाओं को इस योजना से लाभान्वित किया गया। इनमें अनुसूचित जाति के 39,666 बालक तथा 35,699 बालिकाएं अनु० जनजाति के 41439 बालक तथा 30,371 बालिकाएं लाभान्वित हो रही हैं।

वर्ष 83-84 में अनौपचारिक शिक्षा के क्षेत्र में बालिकाओं के नामांकन में उल्लेखनीय वृद्धि पर राजस्थान को भारत सरकार द्वारा तृतीय पुरस्कार के रूप मे 30 लाख रु. की राशि प्रदान की गयी। जबकि वर्ष 84-85 में बालिका नामांकन के क्षेत्र में श्रेष्ठ कार्य हेतु राज्य सरकार को 25 लाख रु. को पुरस्कार राशि पुनः प्राप्त हुई।

अनौपचारिक शिक्षा केन्द्रों के लिए वर्ष 84-85 में पाठ्य पुस्तकें प्रकाशित की गयी तथा राज्य मे 8 लाख पुस्तकें निःशुल्क वितरित की गयी। अनौपचारिक शिक्षण एवं परीवीक्षण के लिए परिवीक्षण अधिकारी एवं अनुदेशकों को प्रशिक्षित किया गया। वर्ष 84-85 में 110 परीवीक्षण अधिकारी एवं 3,000 अनुदेशक इस क्षेत्र में कार्यरत रहे। छात्र-छात्राओं को रोजगारों के बारे में जानकारी देने हेतु 6 जिला स्तरीय समारोह आयोजित किये गये एवं 450 अध्यापकों को इस कार्य हेतु विशेष प्रशिक्षण किया गया।

प्रौढ़ शिक्षण

राज्य की प्रथम पंचवर्षीय योजना मे समाज शिक्षा केन्द्रो की स्थापना की गई। प्रौढ शिक्षा एवं साक्षरता वृद्धि का आन्दोलन चलाया गया ताकि राज्य के आर्थिक एव सामाजिक, विकास मे जन निरक्षरता बाधक न बने। छठी पंचवर्षीय योजना काल में प्रौढ शिक्षा प्रचार हेतु 1000 लाख रु० का प्रावधान किया गया।

1980 में विश्वविद्यालय के अभिभूत प्रौढ शिक्षा सस्थानों की संख्या 6194 हो गई एव 3816 अनौपचारिक प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र संचालित रहे। इनमें 1.64 लाख प्रौढ़ जन शिक्षा ग्रहण कर रहे थे।

बीस सूत्री कार्यक्रम के सूत्र 16 वें में सम्मिलित प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के दो मुख्य आयाम निर्धारित किये गये :-(1) साक्षरता (2) सामाजिक चेतना। वर्ष 84-85 मे ग्रामीण क्रियात्मक साक्षरता योजना के अन्तर्गत भारत सरकार द्वारा 100 प्रतिशत आर्थिक सहायता के आधार पर स्वीकृत 8100 प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र सचालित किये गये जिनमे से 2648 केन्द्र केवल महिलाओं के लिए थे। कुल 2,36497 प्रौढ़ इनसे लाभान्वित हुए जिनमे से महिला प्रौढाओं की संख्या 92636 थी। कुल प्रौढ लाभान्वितो मे अनुसूचित जाति के 52998 तथा अनुसूचित जन जाति के 37551 प्रौढ/प्रौढ़ाए थी।

इसी वर्ष राजस्थान सरकार के व्यय पर 14 जिलों मे 3400 प्रौढ़ शिक्षा केन्द्र संचालित किये गये जिससे 64704 पुरुष एव 39031 महिला प्रौढ़/प्रौढाएं लाभान्वित हुए। इनमे अनुसूचित जाति के 27815 एवं अनुसूचित जनजाति के 232-41 प्रौढ़-प्रौढाए थीं।

राज्य की स्वयं-सेवी संस्थाओं एवं नेहरू युवक केन्द्रों द्वारा क्रमशः 490 एवं 40 प्रौढ शिक्षा केन्द्र भी संचालित किये गये जिनसे कुल 15512 प्रौढ-प्रौढ़ाए लाभान्वित हुए।

राज्य में भारत सरकार के शत-प्रतिशत व्यय पर एवं राज्य सरकार के व्यय पर क्रमश: 725 एवं 455 उत्तर साक्षरता कार्यक्रम के अन्तर्गत उत्तर साक्षरता केन्द्र लित किये गये जिनके माध्यम से 26533 पुरुष एवं 9196 महिलाए लाभा-

न्वित हुए। इनमें अनुसूचित जाति एवं जनजाति के प्रौढ़-प्रौढाओं की संख्या 7840 एवं 4172 रही।

वर्ष 83-84 से भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय प्रौढ़ शिक्षा कार्यक्रम के अन्तर्गत महिला साक्षरता वृद्धि हेतु संचालित पुरस्कार योजनान्तर्गत राज्य सरकार को दो पुरस्कार वर्ष 1982-83 एवं 83-84 के लिए क्रमश. 9.25 लाख व 9.75 लाख रु. प्राप्त हुए।

सैनिक शिक्षा एवं एन० सी० सी०

राष्ट्रीय प्रतिरक्षा अकादमी में प्रवेश हेतु चित्तौडगढ़ तथा धौलपुर में दो सैनिक स्कूल हैं जिनमें राज्य के बालकों को प्रशिक्षित किया जाता है। राज्य के सभी महाविद्यालयो में एन० सी०सी० वैकल्पिक है। राजस्थान मे 1963 में एन०सी०सी० निदेशालय की स्थापना की गई उस समय केवल 14 एन०सी०सी० इकाइयां थीं। अब राज्य के सभी महाविद्यालयो मे एन०सी०सी० वैकल्पिक है। उत्तरोत्तर विकास के फलस्वरूप अब तक चार ग्रुप मुख्यालय व 35 एन०सी०सी० इकाइयां राज्य में कार्यरत हैं। इनमे चार हवाई प्रशिक्षण एवं दो जल प्रशिक्षण इकाइयां हैं और शेष थल प्रशिक्षण इकाइयां हैं। छात्राओं की चार प्रशिक्षण इकाइयां स्वतत्र रूप से स्थापित हैं। राज्य में सीनियर डिवीजन् मे 26418 तथा जूनियर डिवीजन मे 27300 छात्र-छात्राएं अध्ययन रत है।

राष्ट्रीय केडिट कोर के लिए भारत सरकार के रक्षा मंत्रालय के अतिरिक्त राज्य सरकार द्वारा वर्ष 84-85 के लिए 160 34 लाख रु. का प्रावधान किया गया. और वर्ष 85-86 के लिए 185 03 लाख रू० प्रस्तावित किया गया।

शारीरिक शिक्षा :

राज्य की शिक्षण संस्थाओं मे विद्यार्थियों के लिए खेलकूद की व्यवस्था शिक्षण क्रम का पूरक बनाई गई है। जोधपुर मे एक शारीरिक प्रशिक्षण कालेज की स्थापना की गई है जहां शारीरिक प्रशिक्षक तैयार किये जाते हैं। इसके अतिरिक्त राज्य में खेलकूद सलाहकार मण्डल एव एक खेलकूद परिषद की स्थापना की गई है।

खेलकूद प्रसार हेतु 4 प्रशिक्षण शिविरो के माध्यम से वर्ष 84-85 में 180 शिक्षकों को प्रशिक्षित किया गया। स्काउट गाइड आन्दोलन के लिए इस वर्ष लगभग 20 लाख रु. का अनुदान स्वीकृत किया गया। राज्य मे वर्तमान मे 6 डिवीजन एसोसियेशन एवं 178 स्थानीय एसोसियेशन के अन्तर्गत स्काउट विभाग में 165079 तथा गाइड विभाग में 33623 सदस्य संभागी हैं।

विकलांग, मूक, बधिर तथा नेत्रहीन :

विकलांग बालकों को भली प्रकार से शिक्षा दी जा सके और लोगों की इसमें रुचिवर्धन हेतु वर्ष 84-85 में एक फिल्म का निर्माण और 38 अध्यापकों को प्रशिक्षित किया गया। विकलांग बालक/बालकाओं की शिक्षा को व्यवसाय से संबद्ध करने पर जोर दिया गया।

राज्य में बीकानेर, अजमेर, जयपुर, जोधपुर तथा उदयपुर में मूक, बधिर एवं नेत्रहीन छात्र/छात्राओ के लिए शिक्षण संस्थान खोले गये।

प्रशिक्षण :

प्राथमिक तथा माध्यमिक शिक्षकों के प्रशिक्षण हेतु राज्य में क्रमश: 60 एवं 9 प्रशिक्षण संस्थान हैं। इस प्रशिक्षण व्यवस्था का प्रमुख उद्देश्य शिक्षा प्रसार तथा स्तर को उन्नत बनाये रखना है।

प्रमुख शिक्षण संस्थाएं :

बिड़ला शिक्षण सम्थान, पिलानी : 1901 में प्राथमिक पाठ्यशाला के रूप में प्रारम्भ होकर सयुक्त राज्य अमेरिका के मेसाचूसेट के तकनीकी सस्थान के अनुरूप आज विश्वविद्यालय का स्तर प्राप्त कर चुका है। वर्तमान में यह भारत के उन्नत शिक्षण केन्द्रों में गिना जाता है। किन्डरगार्डन से कला, विज्ञान, तकनीकी, वाणिज्य और फार्मेसी तक की उच्च शिक्षा सुलभ कराई जाती है। शोध कार्य इस संस्थान का मुख्य शिक्षण ध्येय है। सस्थान मे 5 महाविद्यालय स्थित हैं। संस्थान में देश-प्रदेश के 6000 छात्र-छात्राएं शिक्षण प्राप्त करते हैं।

विद्या भवन, उदयपुर :

1931 में मोहन सिह मेहता द्वारा स्थापित विद्या भवन में बहुउद्देशीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, टीचर्स ट्रेनिंग कालेज, हस्तकला संस्थान, सीनियर बेसिक स्कूल, ग्रामीण संस्थान, पंचायत राज ट्रेनिंग केन्द्र और समाज शिक्षा ट्रेनिंग केन्द्र स्थित है।

वनस्थली विद्यापीठ :

जयपुर से 45 किलोमीटर दूर स्थित वनस्थली विद्यापीठ नारी शिक्षा का एक अनुपम संस्थान है। यहां शिशु कक्षा से लेकर विज्ञान तथा कला मे उच्च शिक्षा दी जाती है। छात्राओं को शिक्षा के अतिरिक्त चित्रकला, गायन, नृत्य, वादन, खेल, व्यायाम, घुड़सवारी, तैराकी आदि का भी प्रशिक्षण दिया जाता है। यहां देश-विदेश की छात्राएं शिक्षा ग्रहण के लिए आती हैं। वर्ष 83 में इसे विश्वविद्यालय का स्तर प्रदान किया गया।

ग्रमोत्थान विद्यापीठ :

यह संस्थान सांगरिया में 1917 से संस्थापित है। इसमें कृषि कालेज, बहुउद्देशीय उच्चतर विद्यालय, महिला आश्रम, छात्राओं का विद्यालय तथा शिक्षक प्रशिक्षण कालेज चलते हैं। इनके अतिरिक्त संगीत तथा व्यायाम शाला, सर छोटूराम मेमोरियल अजायबघर, पुस्तकालय आदि भी स्थित हैं।

महिला शिक्षा सदन, हटूंडी :

1948 मे गांधीजी के आदर्शों पर शिक्षा प्रदान करने के लिए इसकी स्थापना की गई। यहां महिलाओं को विशुद्ध भारतीय शिक्षा दी जाती है। यहां महिला छात्रावास की उत्तम व्यवस्था है।

गांधी शिक्षण समिति, गुलाबपुरा :

1938 में नानक जैन विद्यालय के रूप में स्वर्गीय मुनि श्री पन्नालाल जी की प्रेरणा से इसकी स्थापना की गई। 4 जुलाई, 1949 में इसका नामकरण गांधी विद्यालय किया गया जो आगे चलकर 'गांधी शिक्षण समिति के रूप में परिवर्तित हो गया। इसके अन्तर्गत भारतीय शोध संस्थान, गांधी बहुद्देशीय उच्चतर माध्यमिक विद्यालय, गांधी बुनियादी शिक्षण प्रशिक्षणालय तथा शिशु शाला चलाये जाते हैं।

अकादमी :

राज्य में निम्नलिखित अकादमियां कार्यरत हैं। (1) राजस्थान संगीत नाटक अकादमी : 6 सितम्बर, 1957 को संस्थापित की गयी। छठी पंचवर्षीय योजना के अन्तर्गत इस अकादमी को 20 लाख रु. का अनुदान दिया गया। राज्य में संगीत, नाटक तथा नृत्य को प्रोत्साहन देना इसका प्रमुख उद्देश्य है।

(2) राजस्थान साहित्य अकादमी : 28 जनवरी, 1958 को उदयपुर में इसकी स्थापना की गयी। राज्य में साहित्यिक विकास तथा साहित्यकारों को संरक्षण सहयोग इसका प्रमुख उद्देश्य निर्धारित किया गया। नवम्बर, 1962 में इसे स्वायत्तता प्रदान की गयी। राजस्थान के कृतिकारों की रचनाओं का प्रकाशन करना इसकी प्रमुख प्रवृत्ति है। प्रदेश में इससे 25 साहित्य सेवी संस्थाएं एवं संगठन संबद्ध हैं।

(3) राजस्थान संस्कृत अकादमी : राज्य में संस्कृत भाषा का प्रचार-प्रसार इसका प्रमुख उद्देश्य है। वेद विद्या के सवर्द्धन के लिए वैदिक विद्वानों को मधुसुदन ओझा पुरस्कार की योजना प्रारम्भ की गयी। वर्ष 84-85 में यह पुरस्कार जयपुर के प्रसिद्ध वैदिक विद्वान पं० शिवप्रताप शर्मा को प्रदान किया गया। अकादमी की संस्कृत पत्रिका 'स्वरमंगला' में प्रकाशित सर्वोत्तम रचना पर 501 रु. की अम्बिका दत्त व्यास पुरस्कार राशि दी जाती है। वेद सहिता पाठ प्रतियोगिता, वेद विद्यालयों का सचालन, संस्कृत विद्वानों का सम्मान करना आदि इसकी प्रमुख गतिविधियां है। वर्ष 84-85 से माघ पुरस्कार की राशि 3000/- से बढ़ाकर 5000/- रुपये कर दी गई।

(4) राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी : लेखकों से स्तरीय पाठ्य पुस्तकों का लेखन कराकर उचित मूल्य पर उपलब्ध करवाना, पुस्तकों का प्रकाशन करवाना, इनका विक्रय करना, पुस्तक प्रदर्शनियां आयोजित करना, आदि इसकी प्रमुख गतिविधियां हैं। वर्ष 84-85 मे लगभग 461000 रुपये की पुस्तकों को अकादमी द्वारा विक्रय किया गया।

(5) राजस्थान उर्दू अकादमी : इसकी गतिविधियां राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी के अनुरूप हैं। वर्ष 84-85 मे अकादमी द्वारा पांच बीमार साहित्यकारों

को चिकित्सा हेतु 1500/- रु. की आर्थिक सहायता दी गई। अकादमी द्वारा त्रैमासिक पत्रिका नख्लिस्तान का प्रकाशन अप्रेल 1981 से प्रारम्भ किया गया। अकादमी के पुस्तकालय में 1975 पुस्तकें संग्रहीत हैं। प्रथम कक्षा से पाचवी कक्षा तक के निर्धन छात्रों को अकादमी द्वारा उर्दू की पाठ्यपुस्तकें निःशुल्क वितरित की जाती हैं।

(6) राजस्थान सिंधी अकादमी : वर्ष 1979 में इसका गठन किया गया। सिंधी समाज के विभिन्न क्षेत्रों के प्रतिष्ठित विद्वानों का सम्मान करना, विभिन्न उपाधियों से विभूषित करना, समाज सुधारात्मक प्रवृत्तियों का आयोजन करना, पुस्तकें प्रकाशित करना, रचनाकारों को अपनी अपनी रचनाओं को प्रकाशित करने में आर्थिक सहयोग करना, साहित्यकारों को आर्थिक मदद देना आदि इसकी प्रमुख प्रवृत्तियां हैं। वर्ष 84-85 में तीन जरुरतमन्द साहित्यकारों को 600/–रु. प्रतिवर्ष की दर से आर्थिक सहायता अकादमी द्वारा प्रदान की गई।

(7) राजस्थानी भाषा साहित्य एवं संस्कृति अकादमी, बीकानेर : राजस्थानी भाषा एवं संस्कृति के प्रचार-प्रसार हेतु इसकी स्थापना की गई। वर्ष 84-85 में अकादमी ने राजस्थानी की सर्वश्रेष्ठ कृति पर 'महाकवि सूर्यमल्ल मिसरण' पुरस्कार योजना के अन्तर्गत 11000/– रुपये का पुरस्कार रखा इसी सत्र से भाषा, साहित्य, संस्कृति पत्रकारिता के क्षेत्र में विशिष्ठ कार्य करने वाले साहित्यकारों की सेवाओं के सम्मानार्थ 5 हजार रुपये प्रदान करने की योजना रखी गई।

(8) गुरु नानक भवन संस्थान, जयपुर : 1969 में मनाये गये गुरुनानक देवजी के 500 वें जन्म उत्सव के उपलक्ष में राज्य सरकार द्वारा इस छात्र सेवा संस्थान का निर्माण कराया गया। वर्ष 1984-85 में संस्थान की विभिन्न गतिविधियों से 1100 छात्र-छात्राएं नये सदस्य बनकर लाभान्वित हुए तथा 10,000 से अधिक बिना सदस्य बने लाभान्वित हुए। संस्थान में प्रातः 7 बजे से सायं 7 बजे तक विभिन्न गतिविधियां आयोजित होती रहती हैं, यथा खेलकूद, गृहसज्जा, कला, पत्र संरक्षण, सर्फ तथा साबुन बनाना, फोटोग्राफी आदि।

(9) ललितकला अकादमी : इस अकादमी की स्थापना 1957 में उदयपुर में की गई। इसने ललित कला के क्षेत्र में राज्य की प्रतिभाओं को विकसित करने पुरानी कला को कायम रखने में महत्वपूर्ण कार्य किये हैं। छठी पंचवर्षीय योजना काल में इस अकादमी को 20 लाख रु. का अनुदान दिया गया। समय-समय पर राज्य के विभिन्न क्षेत्रों में ललितकला विषयक कलात्मक प्रदर्शनियों का आयोजन करना तथा कलाकारों का आर्थिक संबल प्रदान करना आदि इसकी प्रमुख गतिविधियां हैं।

माध्यमिक शिक्षा बोर्ड :

इसकी स्थापना 1 अगस्त, 1957 को की गई। राज्य में माध्यमिक शिक्षा

पद्धति को आधुनिक, वैज्ञानिक एवं प्रगतिशील रूप मे विकसित करना इसका प्रमुख उद्देश्य है। परीक्षा प्रणाली में सुधार, परीक्षार्थियों को छात्रवृत्तियां एवं पदक तथा विद्यालयों को विजयोपहार, अध्यापक कल्याण कोष का संचालन, पत्राचार पाठ्यक्रम, पाठ्य पुस्तकों का प्रकाशन एवं राष्ट्रीयकरण आदि इसकी प्रमुख गतिविधियां हैं।

वर्ष 85 मे विभिन्न परीक्षाओं हेतु 396659 छात्रों का पंजीकरण हुआ। वर्ष 84-85 मे विभिन्न परीक्षाओं मे योग्यता सूची के आधार पर वरीयता क्रम में 392 छात्र/छात्राओं को कुल 315250 रु. की छात्रवृत्तियां प्रदान की गयीं। अध्यापक कल्याण कोष से 31-3-84 तक एवं एक वर्ष में 1,09,300/- रुपये की राशि सेवारत/सेवानिवृत/दिवंगत अध्यापकों के लिए सहायता के रूप में स्वीकृत की गई। वर्ष 84-85 के दौरान सैकेण्डरी स्कूल परीक्षा 1986 हेतु नौ विषयों एव हायर सैकण्डरी परीक्षा 1985 हेतु आठ विषयों में पाठ्यक्रम में परिवर्तन व सुधार किये गये।

राष्ट्रीय शिक्षा नीति के अन्तर्गत वर्ष 1984-85 में सैकण्डरी स्तर पर पाठ्यक्रम में एक नवीन विषय 'समाजोपयोगी' उत्पादक कार्य एवं समाज सेवा अनिवार्य विषय के रूप में सम्मिलित किया गया।

राजस्थान राज्य पाठ्य पुस्तक मण्डल :

राजस्थान में अविभक्त इकाई से लेकर कक्षा 8 तक के विद्यार्थियों के लिए सस्ती, सुन्दर तथा अद्यतन ज्ञान-विज्ञान की समग्र सामग्री से युक्त पाठ्य पुस्तकों, कार्य पुस्तिकाओं एवं अध्यापक संदर्शिकाओं के लेखन, संशोधन, मुद्रण एवं वितरण व्यवस्था में संलग्न स्वायत्तशासी प्रतिष्ठान है। यह गत 29 वर्षों (1956) से अपने दायित्व निर्वहन एवं उद्देश्य पूर्तिकरण में सतत् सन्नद्ध है। यह मण्डल प्रदेश के सभी विद्यालयों एवं महाविद्यालयों में अभ्यास पुस्तिकाओं के वितरण का कार्य करता है।

वर्ष 84-85 में मण्डल ने कुल 70 पुस्तकों के मुद्रण का कार्य अपने हाथ में लिया। मण्डल के दायित्व, निर्वहन एवं कार्य संचालन हेतु शासी परिषद एवं निष्पादक परिषद का गठन किया है। मण्डल के दैनिक एवं नियमित कार्य संचालन हेतु निष्पादक परिषद के सभापति व सचिव उत्तरदायी हैं।

वर्ष 84-85 में (माह फरवरी 85 तक) 9440834 पुस्तकें 26953295 96 रूपये की राशि की मण्डल द्वारा बेची गई। इसी प्रकार वर्ष 84-85 में मण्डल ने अपने विभिन्न वितरण केन्द्रों के माध्यम से 14004445.15 रूपये की राशि की अभ्यास पुस्तिकाओं का विक्रय किया।

भाषा विभाग :

राज भाषा हिन्दी के राजकाज में प्रयोग, विकास और संवर्धन हेतु भाषा विभाग योजनाबद्ध रूप से कार्यरत है। वर्ष 84-85 में राज्य सरकार ने पेंशन संबंधी समस्त कार्य अनिवार्यतः हिन्दी में किये जाने का निर्णय लेकर इस आशय के आदेश जारी किये। आलोच्य वर्ष में भाषा विभाग एवं सिंध राजस्थान राष्ट्र भाषा प्रचार समिति, जयपुर के संयुक्त तत्वाधान में हिन्दी दिवस समारोह का आयोजन द्वि-दिवसीय कार्यक्रम के रूप में किया गया। इस विभाग के शोध-संदर्भ पुस्तकालय में 8500 पुस्तकें हैं। वर्ष 84 85 में 100 नई पुस्तकें खरीदी गई। आलोच्य वर्ष में 70 कर्मचारियों हेतु शीघ्रलिपि प्रशिक्षण के दो सत्र संचालित किये गये। इस वर्ष विभिन्न राजकीय विभागों को 60 टंकण यंत्र दिये गये।

25

खेलकूद

राजस्थान में खेलकूद से संबधित गतिविधियों को प्रोत्साहित करने तथा विभिन्न स्तरों पर इनमें समन्वय के लिए राज्य सरकार द्वारा फरवरी, 1957 में राजस्थान राज्य क्रीड़ा परिषद के नाम से एक शीर्ष संस्था का गठन किया गया था। परिषद का मुख्य कार्य शहरों व ग्रामीण अंचलो से खिलाड़ियों का चयन करने खिलाड़ियों की प्रतिभा को सवारनें तथा विभिन्न खेल संघों को खेलों के मैदान, खेल उपकरण, प्रशिक्षण तथा खिलाड़ियों को प्रोत्साहित करने के लिए वांछित आर्थिक सहायता तथा खुराक भत्ता आदि सुलभ कराना है ताकि देश-विदेश में आयोजित की जाने वाली खेल स्पर्धाओं में राजस्थान का नाम रोशन हो सके।

यूं तो राजस्थान के निर्माण से पूर्व भी प्रदेश में यदा-कदा विद्यालय, कालेज, विश्वविद्यालय अथवा राज्य व राष्ट्रीय स्तर की खेल प्रतिस्पर्धाएं आयोजित की जाती थीं और विभिन्न स्थानीय खेल संगठनों की टीमें भी इनमें भाग लेती थी किन्तु समुचित तालमेल के अभाव में न तो इन संगठनों को राज्य सरकार अथवा केन्द्रीय सरकार से अनुदान ही मिल पाता था और न ही खिलाड़ियों को समुचित सुविधायें तथा तकनीकी प्रशिक्षण ही सुलभ हो पाता था। इसके फलस्वरूप प्रतिभाशाली खिलाड़ी भी राष्ट्रीय स्तर पर अपनी प्रतिभा का समुचित प्रदर्शन नहीं कर पाते थे। परिषद के गठन के पश्चात राज्य में खिलाड़ियों का न केवल खेल स्तर सुधरा है अपितु इनके अभ्यास के लिए खेल मैदानों, तकनीकी एवं व्यावहारिक ज्ञान के लिए खेल प्रशिक्षण शिविर, खुराक भत्ता और आर्थिक अनुदान व पुरस्कारों की योजना से राजस्थान की राष्ट्रीय व अन्तरराष्ट्रीय खेल जगत में विशिष्ट पहचान भी बनी है।

खेल प्रशिक्षण शिविर

खेलों के विकास की दृष्टि से प्रारंभिक प्रयास के बतौर 1959 से राज्य के ग्रीष्मकालीन पर्वतीय पर्यटन केन्द्र माउन्ट आबू में हर वर्ष आयोजित किये जाने वाले खेल प्रशिक्षण शिविर देश भर में चर्चित रहे हैं। इन शिविरों में राष्ट्रीय स्तर पर ख्याति प्राप्त भूतपूर्व खिलाड़ियों तथा पटियाला स्थित राष्ट्रीय खेल संस्थान से

नियोजित प्रशिक्षकों के माध्यम से नवोदित खिलाड़ियों की प्रतिभा को आवश्यक तकनीकी प्रशिक्षण दिये जाने की व्यवस्था की जाती है। माउन्ट आबू के इन ग्रीष्म प्रशिक्षण शिविरों की बदौलत राज्य में कई ऐसी खेल प्रतिभायें निखरी हैं जिन्होंने राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर कीर्तिमान स्थापित करखेल जगत में राजस्थान की प्रतिष्ठा में अभिवृद्धि की है। वर्तमान में खेल परिषद के अधीन नेताजी सुभाष राष्ट्रीय खेल संस्थान पटियाला से प्रतिनियुक्ति पर पूर्ण व अल्पकालिक अवधि के कोई 90 प्रशिक्षक उपलब्ध हैं जिनमें कई महिला प्रशिक्षक भी हैं। समय, सुविधा एव मांग के अनुसार इन प्रशिक्षकों को राज्य में संचालित छात्र प्रशिक्षण केन्द्रों—जयपुर, जोधपुर, उदयपुर, बीकानेर, कोटा, अजमेर व श्री गंगानगर पर प्रशिक्षण कार्य हेतु नियोजित किए जाने की व्यवस्था है। इनके अलावा अलवर, भीलवाड़ा, भरतपुर, चित्तौड़गढ़, झुंझुनू, सीकर, सवाईमाधोपुर, कांकरोली व चूरू में उपकेन्द्र पर भी प्रशिक्षण सुविधा जुटाई गई है।

खेल संगठनों में समन्वय :

अखिल भारतीय स्तर पर विभिन्न खेलों की प्रतियोगिताओं में भाग लेने के लिए प्रतिभाशाली खिलाड़ियों का चयन करने तथा राज्य स्तर पर प्रतिस्पर्धाओं के आयोजन के लिए राज्य स्तर पर विभिन्न खेल संगठनों की व्यवस्था है। वर्तमान में राज्य में विभिन्न खेलों से संबद्ध 27 सगठनो को परिषद द्वारा अखिल भारतीय सघो से मान्य कराया जा चुका है। इन राज्य स्तरीय खेल संगठनों की इकाइया सभी जिलों में कायम की जा चुकी हैं। अखिल भारतीय ओलम्पिक संघ के अनुरूप विभिन्न राज्य स्तरीय खेल संगठनों की मान्यता के लिए राजस्थान में भी राज्य स्तर पर एक पृथक ओलम्पिक सघ है।

स्टेडियम :

राजस्थान राज्य क्रीड़ा परिषद ने राज्य के सभी प्रमुख नगरों में खेल गतिविधियो के आयोजन के लिए वृहदाकार स्टेडियमों के निर्माण की दिशा में भी पहल की है। इनके निर्माण में व्यय होने के लिए विपुल राशि की सुविधा न होने के बावजूद परिषद ने जयपुर में सवाई मानसिंह स्टेडियम का निर्माण कराया है जहां आज परिषद का मुख्यालय है। इस स्टेडियम के निर्माण के लिए जयपुर के भू० पू० नरेश महाराजा सवाई मानसिंह ने 90 एकड़ भूमि परिषद को नि शुल्क प्रदान की थी। स्टेडियम का समूचा निर्माण कार्य पूरा होने पर यह देश के सर्वश्रेष्ठ स्टेडियमो में से एक होगा। इस स्टेडियम में लगभग 30 हजार दर्शकों के बैठ पाने की व्यवस्था होगी। स्व० प्रधान मंत्री जवाहर लाल नेहरू द्वारा 1963 में स्टेडियम का उद्घाटन किये जाने के पश्चात् से इस स्टेडियम में कई राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय प्रतिस्पर्धाओं का आयोजन किया जा चुका है। जयपुर के अतिरिक्त अजमेर, जोधपुर, कोटा, बीकानेर व उदयपुर नगरों में भी स्टेडियमों का निर्माण कार्य जारी है तथा इसके लिए

केन्द्रीय शिक्षा मंत्रालय से समुचित अनुदान भी परिषद द्वारा उपलब्ध कराया जाता रहा है।

खेल छात्रवृत्ति एवं अनुदान :

विभिन्न खेलों में उदीयमान अथवा प्रतिभा सम्पन्न खिलाड़ियों को परिषद द्वारा अनुदान व खुराक भत्ता दिये जाने की एक प्रोत्साहन योजना भी शुरू की गई है। मुख्यमंत्री अवार्ड योजना के तहत राष्ट्रीय व राज्य स्तर पर कीर्तिमान स्थापित करने वाले एथलीट को क्रमशः 1000 रु० व 500 रु० की राशि बतौर अनुदान दी जाती है जबकि राष्ट्रीय व अन्तर्राष्ट्रीय स्तर के ख्यातिप्राप्त खिलाड़ी को खेलवृत्ति व खुराक भत्ता दिये जाने की व्यवस्था है। पुराने खिलाड़ियों तथा खेलकूद को प्रोत्साहित करने में उल्लेखनीय योगदान देने वाले चुनीदा व्यक्तियों को मासिक आर्थिक सहायता तथा राष्ट्रीय क्रीड़ा संस्थान पटियाला में प्रशिक्षण पाठ्यक्रम में भाग लेने वाले प्रशिक्षणार्थियों को परिषद अपने स्तर पर छात्रवृत्ति प्रदान करती है। राष्ट्रीय स्तर पर विजेता, उप विजेता तथा तृतीय स्थान अर्जित करने वाले प्रतियोगी खिलाड़ियो को क्रमशः 500 रु०, 150 रू० व 100 रू० के नकद पुरस्कार देने का प्रावधान है जबकि कनिष्ठ वर्ग की राष्ट्रीय स्पर्धाओं मे प्रथम, द्वितीय व तृतीय स्थान अर्जित करने वाले खिलाड़ियों को क्रमशः 300 रू०, 100 रू० व 50 रू० के नकद पुरस्कार दिये जाते हैं। आबू खेल प्रशिक्षण शिविर तथा ग्रामीण खेलकूद योजना की शुरूआत के लिए राजस्थान ने समूचे राष्ट्र में पहल कर अनुकरणीय कार्य किया है। ग्रामीण खेलों की यह शुरूआत जयपुर के निकट गोनेर ग्राम मे सन् 1965 में की गई थी। ग्रामीण खेलों की इन प्रतियोगिताओं के आयोजन में जिला खेलकूद परिषदों तथा पंचायत समितियों की विशेष भूमिका होती है जिन्हें प्रतियोगिताओ के लिए परिषद द्वारा अनुदान दिया जाता है।

ग्रामीण खेलों के विकास की एक और कड़ी नेहरू युवक केन्द्र भी हैं जो वर्तमान मे 140 पंचायत समितियों में खेलकूद की गतिविधियां संचालित कर ग्रामीण समुदाय के युवक युवतियों में छिपी प्रतिभा को प्रकाश में लाने का महत्वपूर्ण कार्य कर रहे हैं। जन जाति क्षेत्रों में खेलों को बढ़ावा दिये जाने के प्रयास किये जा रहे हैं।

विभिन्न खेलों में सर्वश्रेष्ठ प्रतिभा का प्रदर्शन करने वाले खिलाड़ियों को पुरस्कृत करने के लिए राज्य स्तर पर 'प्रताप पुरस्कार' योजना भी शुरू हुई है। इस योजना के तहत सर्वप्रथम 1982-83 मे दिल्ली में आयोजित नवें एशियाई खेलों में पदक विजेता रहे 11 खिलाड़ियों को सम्मानित किया गया। इस पुरस्कार के तहत विजेता खिलाड़ी को महाराणा प्रताप की एक कांस्य प्रतिमा, प्रशस्ति पत्र तथा एक हजार रु. की नगद राशि प्रदान की जाती है। यह पुरस्कार हर वर्ष प्रताप जयन्ती के अवसर पर प्रदान किया जाता है। वर्ष 83-84 मे 8 अन्य खिलाड़ियों को इस पुरस्कार

से सम्मानित किया गया। राष्ट्रीय स्तर पर अर्जुन पुरस्कार से सम्मानित हुए राजस्थान के खिलाड़ियों में क्रमशः रीमा दत्ता व मंजरी भार्गव (तैराकी), सुनीता पुरी (हाकी) तथा भुवनेश्वरी कुमारी व राज्य श्री कुमारी (निशानेबाजी) हैं। नवम एशियाई खेलों में राजस्थान का नाम रोशन करने वाले खिलाड़ियों में गोपाल सैनी, हमीदा बानू व राजकुमार अहलावत (एथलेटिक्स), कैप्टन गुलाम मोहम्मद खान, प्रहलादसिंह, रघुवीरसिंह व विशाल सिंह (घुड़सवारी), लक्ष्मण सिंह (गोल्फ), सुश्री गंगोत्री भडारी व सुश्री वर्षा सोनी (महिला हाकी) तथा डा० कर्णी सिंह (निशाने बाजी) हैं। इनमें से रघुवीरसिंह (घुड़सवारी), लक्ष्मणसिंह (गोल्फ) तथा वर्षा सोनी (महिला हाकी) को अर्जुन पुरस्कार से भी सम्मानित किया जा चुका है जबकि दो अन्य खिलाड़ियों भुवनेश्वरी कुमारी (स्क्वेश) तथा अजमेरसिंह (बास्केटबाल) को भी अर्जुन पुरस्कार से विभूषित किया गया है। राज्य की शिक्षण संस्थाओं मे खेलकूद को प्रोत्साहित करने का कार्य क्रमशः प्राथमिक व माध्यमिक शिक्षा निदेशालय, कालेज शिक्षा निदेशालय, विश्वविद्यालयों तथा ग्रामीण विकास एवं पंचायती राज विभाग के अधीन संचालित किया जाता है।

वर्ष 1984-85 मे क्रीड़ा परिषद को अपनी नियमित खेलकूद गतिविधियों के संचालन के लिए राज्य सरकार ने 32 लाख रु. के अनुदान देने का प्रावधान रखा था जिसमें सशोधन कर 1.10 लाख रु. की राशि की बढोतरी और किये जाने की संभावना है। केन्द्र सरकार द्वारा इस वर्ष स्टेडियमों व मैदानों के लिए 6.13 लाख रु०, माउन्ट आबू प्रशिक्षण शिविर के लिए 0.73 लाख रू० तथा ग्रामीण खेलकूद केन्द्रों के लिए 0.58 लाख रू० की राशि बतौर अनुदान मन्जूर की गई।

पिछले वर्ष राज्य में आयोजित की गई महत्त्वपूर्ण राष्ट्रीय स्तर की खेलकूद प्रतियोगिताओं में जयपुर में जूनियर व सीनियर साईकिल, सब जूनियर महिला हाकी, जूनियर एवं सब जूनियर टेबिल टेनिस (अजमेर) राष्ट्रीय जूनियर बैडमिन्टन (कोटा), राष्ट्रीय सीनियर साफ्टबाल, (भरतपुर) राष्ट्रीय जूनियर भारोत्तोलन (उदयपुर) उत्तर क्षेत्र टेबिल टेनिस (कोटा), मेजर बैडमिन्टन स्पर्धा उदयपुर मे आयोजित की गई। जयपुर मे भारत–न्यूजीलैंड एक दिवसीय महिला क्रिकेट मैच तथा बोर्ड एकादश व एम.सी.सी. के बीच क्रिकेट मैच आयोजित किया गया। इंगलैण्ड की फुटबाल टीम से जयपुर मे एक अन्तर्राष्ट्रीय मैच के आयोजन की भी योजना विचाराधीन है।

परिषद द्वारा अपनी रजत जयन्ती के अवसर पर प्रदेश की सौ से अधिक खेल विभूतियों को सम्मानित एवं पुरस्कृत करने के अलावा अन्तर्राष्ट्रीय युवा वर्ष के उपलक्ष में जयपुर, उदयपुर, जोधपुर, अजमेर व बीकानेर मे खेल सप्ताहों का आयोजन विशेष उल्लेखनीय समारोह थे।

26

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य

भोजन, वस्त्र और आवास जैसी मूलभूत आवश्यकताओं की पूर्ति के पश्चात मानव की सबसे बड़ी अभिलाषा स्वास्थ्य और निरोगी जीवन व्यतीत करने की होती है। किसी ने कहा भी है— 'पहला सुख, निरोगी काया।' व्यापक संदर्भ में स्वस्थ नागरिक पर ही राष्ट्र की शक्ति, सामर्थ्य और विकास की संभावना निर्भर करती है। कल्याणकारी शासन की आधुनिक परिकल्पना में इसीलिए नागरिकों के लिए समुचित चिकित्सा एवं कारगर स्वास्थ्य प्रणाली पर विशेष बल दिया जाता है।

जहां तक राजस्थान का प्रश्न है, यह प्रदेश सदियों तक सामन्ती शासन व्यवस्था के अधीन रहा है। तत्कालीन व्यवस्था के रहते चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं के नाम पर ले-देकर कतिपय प्रगतिशील रियासतों की राजधानियों अथवा कुछ गिने-चुने प्रमुख कस्बों की आबादी को छोड़कर प्रदेश की अधिकांश आबादी इन सुविधाओं से सर्वथा वंचित थी। ग्रामीण तथा आदिवासी अंचलों में दवादारु के नाम पर, अंधविश्वासों से ग्रस्त अधिकांश आबादी, मुख्यतया नीम-हकीमों अथवा ओझाओं तथा गुनियों के टोने-टोटकों अथवा झाड़फूंक जैसे दकियानूसी इलाज पर ही आश्रित थी। इसके फलस्वरूप किसी महामारी का प्रकोप होने पर हजारों लोग मौत के शिकार बन जाते थे।

राजस्थान निर्माण के पश्चात् पिछले 35 वर्षों में सुनियोजित विकास की व्यूह रचना के तहत राज्य में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं का काफी विस्तार किया गया। इसी का सुपरिणाम है कि राज्य के हर बड़े शहर और कस्बों में ही नहीं, दूर दराज के गांवों तथा आदिवासी क्षेत्रों तथा छोटी-छोटी बस्तियों तक के लोगों के लिए रोगों की रोकथाम, बेहतर इलाज और दवादारु की समुचित व्यवस्था के प्रयास किये जा सके हैं। वर्तमान में राज्य में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं के अधीन 177 अस्पताल, 818 औषधालय, 50 सहायक स्वास्थ्य केन्द्र, 280 एड-पोस्ट, 288 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र, 3522 स्वास्थ्य उपकेन्द्र, 111 मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्र, 14 मिनी हैल्थ सेन्टर तथा 21916 रोगी शैय्याओं की व्यापक संर-

चना उपलब्ध है। इनके अलावा 3046 आयुर्वेदिक औषधालय, 72 यूनानी औषधालय, 80 होम्योपैथिक निदान केन्द्र तथा 3 प्राकृतिक चिकित्सा केन्द्र भी राज्य में कार्यरत हैं।

राज्य में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा विभाग के अधीन चिकित्सा सुविधाओं का लगातार विस्तार किया जा रहा है तथा इसमें ग्रामीण व पिछड़े क्षेत्रों का विशेष ध्यान रखा जा रहा है। विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा 1978 में अलमा अट्टा बैठक में लिये गये निर्णय के अनुसार सन् 2000 तक स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार की सिफारिश के तहत राज्य के सभी शहरों तथा सुदूर ग्रामीण क्षेत्रों में किसी न किसी प्रकार की चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराने के लिए राष्ट्रीय एवं राज्य स्तर के कार्यक्रमों को सुचारू रूप से चलाया जा रहा है।

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार कार्यक्रम के तहत वर्तमान में राज्य मे 47 क्षय निवारण अस्पताल, वार्ड एवं क्लिनिक, मानसिक व्याधियो के उपचार के लिए 7 अस्पताल वार्ड, मातृ शिशु कल्याण कार्यक्रम के तहत 159 अस्पताल एवं वार्ड, नेत्र रोगों के उपचार के लिए 35 पृथक वार्ड, कुष्ठ रोग के 2 विशेष अस्पताल, कुष्ठ रोग के सर्वेक्षण, शिक्षा एवं उपचार के 72 केन्द्र तथा 4 नगरीय कुष्ठ निदान केन्द्र, पागल कुत्ते के काटने के 148 उपचार केन्द्र, एक्स-रे सुविधा युक्त 152 संस्थायें, 164 प्रयोगशालायें, 18 रक्त संग्रहण केन्द्र तथा 3 नेत्रदान बैंक कार्यरत हैं।

इनके अलावा 2 अक्टूबर 79 से प्रारम्भ हुई ग्रामीण स्वास्थ्य पथ-प्रदर्शक योजना (रूरल हैल्थ गाइड प्रोग्राम) जो अप्रेल 79 तक मात्र 78 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर लागू थी वर्तमान में 158 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रो पर क्रियान्वित की जा रही है। फरवरी 84 तक इस योजना के तहत 11309 हैल्थ गाइडों को प्रशिक्षित किया जा चुका था।

स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम :

विद्यालय स्वास्थ्य सेवा योजना : राज्य में शाला स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम सभी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों एवं राजकीय चिकित्सालयो से संबद्ध 3277 प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक शालाओं में क्रियान्वित किया जा रहा है। इस कार्यक्रम के तहत प्रत्येक शाला के छात्र/छात्राओं का वर्ष में कम से कम दो बार स्वास्थ्य परीक्षण कर चिकित्सा की जाती है। संक्रामक रोगों से बचाव के लिए टीके लगाने के अलावा स्वास्थ्य संबंधी वार्तायें, स्वास्थ्य शिक्षा संबंधी साहित्य, चलचित्र प्रदर्शन एवं प्रदर्शनियों के माध्यम से विद्यार्थियों के स्वास्थ्य की देखभाल और उनमें स्वास्थ्य संबंधी ज्ञान का विकास किया जाता है। वर्ष 1983 तक इस कार्यक्रम के तहत 65,058

छात्रों का स्वास्थ्य परीक्षण किया जाकर विविध, व्याधियों से ग्रस्त 1083 छात्रों का उपचार किया जा चुका था।

व्यापक मार्गदर्शी परियोजना—इस परियोजना के तहत डूंगरपुर जिले के प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र सागवाड़ा से संबद्ध 148 प्राथमिक एवं उच्च माध्यमिक शालाओं के 16,709 आदिवासी छात्र-छात्राओं का स्वास्थ्य परीक्षण कर उन्हें चिकित्सा सुविधा से लाभान्वित किया गया। इस योजना के क्रियान्वयन का समस्त वित्तीय भार 'सीडा', विश्व स्वास्थ्य संगठन एवं भारत सरकार द्वारा संयुक्त रूप से वहन किया जाता है। मार्च 1984 तक इस योजना के अधीन सभी संबद्ध शालाओं के छात्र/छात्राओं के स्वास्थ्य परीक्षण कर उन्हें आवश्यक उपचार सुविधायें सुलभ कराई गईं।

स्वास्थ्य शिक्षा कार्यक्रम

गत वर्ष विश्व स्वास्थ्य दिवस के नारे—'मंजिल की ओर बढ चले कदम'—को अमली रूप दिये जाने के निमित्त प्लास्टिक के हैंगर्स, ट्यूब लाइट प्लेट, स्टीकर बनाये गये तथा जयपुर में एक विशाल स्वास्थ्य प्रदर्शनी का आयोजन किया गया।

औषधि नियंत्रण संगठन

राज्य में विविध प्रकार के रोगों के निदान के लिए उत्पादित की जाने वाली दवाइयों की गुणवत्ता के प्रमाणीकरण एवं विक्रय के नियंत्रण के लिए चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग में अतिरिक्त निदेशक प्रशासन के अधीन एक पृथक संगठन कार्यरत हैं। जिलों मे दवा-विक्रेताओं को लाइसेंस प्रदान करने तथा अन्य प्रकार के दूसरे अधिकार मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारियों को दिये गये हैं। मुख्यालय पर कार्यरत इस संगठन के अधीन दो सहायक औषधि नियत्रक, (एक आयुर्वेद) तथा 29 औषधि निरीक्षक (3 आयुर्वेद) कार्यरत हैं।

निर्मित औषधियों के परीक्षण एवं विश्लेषण के लिए राज्य में एक प्रयोगशाला भी कार्यरत है जहां से औषधियों के नमूने गहन परीक्षण के लिये कलकत्ता, गाजियाबाद तथा कर्नाटक राज्य की प्रयोगशालाओं को भेजे जाते हैं। नशीली व आदतन औषधियों के विक्रय पर भी इसी संगठन द्वारा नियंत्रण रखा जाता है। इस योजना के तहत राज्य के सभी लाइसेन्सधारी दवा विक्रेताओं के यहां एक निरीक्षण पुस्तिका रखी जाती है जिसमे अंकित विवरण की विभागीय स्वास्थ्य निरीक्षक समय-समय पर जाकर जांच करते हैं। आवश्यक लगने पर दवा विक्रेताओं तथा निर्माताओं की बैठकें आयोजित की जाकर उनकी समस्याओं पर भी विचार कर उनका समाधान किया जाता है तथा आवश्यक सुझाव एवं हिदायतें दी जाती हैं वर्ष 1983 में राज्य में ऐसी कुल 518 औषधि निर्माण इकाइयां कार्यरत थी जिनमें से 247 इकाइयां आयुर्वेदिक एवं यूनानी दवाइयां तैयार करती थीं।

खाद्य पदार्थों में मिलावट की रोकथाम

खाद्य पदार्थों मे मिलावट करने की समस्या देशव्यापी है विशेषकर त्यौहारों या अन्य महत्त्वपूर्ण सार्वजनिक महत्त्व के अवसरों पर अपमिश्रण की यह समस्या और भी बढ जाती है खाद्य पदार्थों मे मिलावट पर कारगर नियंत्रण रखने के उद्देश्य से खाद्य अपमिश्रण निवारण अधिनियम 1954 (केन्द्रीय अधिनियम स.-37 1954) के तहत राज्य सरकार द्वारा 12-8-83 को जारी की गई अधिसूचना के अनुसार प्रदेश के सभी शहरों एव ग्रामीण क्षेत्रों मे यह अधिनियम उक्त तिथि से लागू कर दिया गया है। इससे पूर्व केवल 209 स्थानीय क्षेत्रों मे ही यह अधिनियम लागू था।

अधिनियम के तहत खाद्य वस्तुओं के नमूने लेने के लिये सभी जिलों मे उप-मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी (स्वास्थ्य) को खाद्य निरीक्षक के अधिकार दे दिये गये हैं। इसके अतिरिक्त जिला स्तर पर 30 खाद्य निरीक्षक एव राज्य स्तर पर 4 खाद्य निरीक्षक के पूर्णकालिक पद भी सृजित है। राज्य स्तर पर खाद्य पदार्थ अपमिश्रण संगठन के सर्वोच्च अधिकारी अतिरिक्त निदेशक (प्रशासन) जो खाद्य (स्वास्थ्य) प्राधिकारी के बतौर इस संगठन के काम-काज को देखते हैं। सभी विभागीय क्षेत्रीय उप-निदेशक तथा जिला स्तर पर कार्यरत मुख्य चिकित्सा एवं स्वास्थ्य अधिकारी क्रमश: अपने क्षेत्र व जिले के स्थानीय (स्वास्थ्य) प्राधिकारी हैं। खाद्य पदार्थों में मिलावट की जांच के लिये वर्तमान में राज्य में 12 प्रयोगशालायें कार्यरत हैं।

राष्ट्रीय कुष्ठ रोग नियंत्रण कार्यक्रम

राजस्थान में यह कार्यक्रम वर्ष 1970-71 से चलाया जा रहा है जिसके लिये शत-प्रतिशत सहायता केन्द्र सरकार से प्राप्त होती है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य कुष्ठ रोगियो को खोजकर चिकित्सा द्वारा उन्हे कुष्ठ रोगग्रस्त अगों की उपचार सुविधा उपलब्ध कराना है। इस कार्यक्रम के तहत 1982-83 तक राज्य के 22 जिलों में 55 सर्वेक्षण, शिक्षा एव उपचार केन्द्र विभिन्न प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रो/अस्पतालों व चिकित्सालयों पर कार्यरत थे। जयपुर, जोधपुर, अजमेर, बीकानेर व उदयपुर नगरों के सामान्य अस्पतालों के चर्म एवं रतिरोग विभागों के अधीन कुष्ठ रोग केन्द्र भी हैं जबकि 2 कुष्ठ रोग उन्मूलन इकाइयां क्रमश: नागौर व लक्ष्मणगढ़ (अलवर) मे कार्यरत हैं। जयपुर व उदयपुर के अस्पतालो मे 20 शैय्याओं वाले दो पृथक वार्ड हैं जबकि 40 व 50 शैय्याओं वाले दो कुष्ठ रोग आश्रम क्रमश: जयपुर व जोधपुर नगरो में कार्य कर रहे हैं। एक कुष्ठ रोग नियंत्रण इकाई भरतपुर जिले की डीग तहसील मे डेंमियन फाउण्डेशन नामक संस्था की सहायता से जनवरी, 81 से कार्यरत है।

जयपुर स्थित कुष्ठ रोग चिकित्सालय को नया रूप देने के लिए टी. बी. अस्पताल के पीछे जमीन का चयन कर लिया गया है। इस जमीन पर नया भवन बन जाने पर चिकित्सालय को वर्तमान स्थल से स्थानांतरित कर दिया जायेगा। जयपुर में राज्य कुष्ठ रोग अधिकारी के अलावा 3 क्षेत्रीय कुष्ठ रोग कार्यालय जोधपुर, उदयपुर व कोटा मे भी स्वीकृत हैं।

वर्ष 1983-84 मे कुष्ठ रोग कार्यक्रम के तहत एक क्षेत्रीय कुष्ठ रोग कार्यालय, एक कुष्ठ रोग उन्मूलन इकाई, 30 शय्याओं वाला एक कुष्ठ रोग वार्ड तथा 5 सर्वेक्षण शिक्षा एव उपचार केन्द्र खोलने का प्रावधान था। वर्ष 1983-84 मे 2500 कुष्ठ रोगियों को खोजा गया जबकि 3143 कुष्ठ रोगियों का नियमित उपचार एवं उनके पुनर्वास की व्यवस्था की गई।

विस्तृत प्रतिरक्षण कार्यक्रम (ई.पी.आई.)

वर्ष 1977 मे विश्व स्वास्थ्य संगठन द्वारा चेचक उन्मूलन कार्यक्रम की घोषणा के पश्चात राजस्थान में भी चेचक उन्मूलन के लिए रोग प्रतिरक्षण अभियान व्यापक स्तर पर प्रारभ किया गया। इसके तहत बालकों को विभिन्न प्रकार की बीमारियों यथा डिप्थीरिया, खांसी, टिटेनस, पोलिया, टी.बी., खसरा व मोतीझरा आदि के टीके लगाये जाते हैं। भारत सरकार से प्राप्त वैक्सीन को विभिन्न जिलों में कोल्ड चेन पद्धति से रेफ्रीजिरेटर्स मे सुरक्षित रखा जाता है। यह सुविधा पूरे राज्य मे 'यूनिसेफ' संस्था द्वारा सचालित की जा रही है। गत वर्ष मार्च, 85 तक इस कार्यक्रम के तहत 13,32,470, बालको के प्रतिरक्षक टीके लगाये जा चुके थे। पिछले वर्ष 8.80 लाख बच्चों को डी.डी.टी. व डी.पी.टी. टीके लगाये गये।

अन्धता निवारण का राष्ट्रीय कार्यक्रम

अन्धेपन की रोकथाम का यह कार्यक्रम शत-प्रतिशत केन्द्रीय सहायता से राज्य में चलाया जा रहा है। इस कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य जन सामान्य को विविध प्रकार के नेत्र रोगों के उपचार तथा अन्धेपन की रोक-थाम करना है।

कार्यक्रम के तहत वर्तमान में चार नेत्र चिकित्सा इकाइयां क्रमशः गंगानगर, पाली, भीलवाड़ा व भरतपुर में कार्यरत हैं। ये इकाइयां अपने मुख्यालय के समीप के चार-पांच जिलों में नेत्र शिविर आयोजित कर नेत्र रोगों से ग्रस्त लोगों के उपचार तथा स्वास्थ्य शिक्षा प्रदान करने का कार्य करती है। वर्ष 1983-84 से इसी प्रकार की एक अन्य इकाई डूंगरपुर जिले में भी प्रारम्भ की गई है।

इस कार्यक्रम के अधीन बीकानेर व जोधपुर स्थित दो मेडिकल कालेजों के अलावा अजमेर मे एक और मेडिकल कालेज में नेत्र रोग चिकित्सा के उपकरणों से सुसज्जित इकाई स्थापित की गई है। सभी जिला मुख्यालयों पर नेत्र रोग विशेषज्ञों की सेवायें उपलब्ध कराने के अलावा सीकर, धौलपुर, जैसलमेर, कोटा, पाली, सिरोही

चूरू, झुन्झुनू, नागौर, गंगानगर, अलवर, भरतपुर, बाड़मेर एवं जालोर स्थित जिला चिकित्सालयों को केन्द्र सरकार द्वारा 50 हजार रु. लागत के नेत्र शल्य चिकित्सा के उपकरण व औजार आदि से सुसज्जित किया गया है। वर्ष 1983-84 में ब्यावर, भीलवाड़ा, डूंगरपुर, बांसवाड़ा, बूंदी, करौली, चित्तौड़गढ़ व झालावाड़ में भी यह सुविधा उपलब्ध करा दी गई है।

इनके अलावा सीकर, झुन्झुनू, नागौर, बीकानेर, चूरू, गंगानगर, जोधपुर, अलवर, कोटा, भरतपुर, धौलपुर, जैसलमेर, पाली, सिरोही, जालौर तथा बाड़मेर जिलों में कार्यरत सभी प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों सहित कुल 133 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों को इस कार्यक्रम के तहत केन्द्र सरकार द्वारा 3000 रु. की लागत के शल्य उपकरण व औजार सुलभ कराये गये हैं। वर्ष 1983-84 में 20 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों तथा भीलवाड़ा, अजमेर व डूंगरपुर के क्रमश. 8, 11 व 1 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र पर यह सुविधा उपलब्ध कराई गई है।

ग्रामीण अचलों में नेत्र चिकित्सा शिविरो के आयोजन के लिए स्वयसेवी अथवा स्वैच्छिक सस्थाओं को भी प्रोत्साहित किया जा रहा है। इस योजना के तहत प्रत्येक ऐसे शिविर का आयोजक संस्था को केन्द्र सरकार द्वारा 60 रु. प्रति इन्ट्रा आक्यूलर आपरेशन की दर से 12 हजार रु. तथा राजकीय नेत्र शल्य इकाइयों को 40 रु. प्रति इन्ट्रा आक्यूलर आपरेशन की दर से 12000 हजार रु. का अनुदान दिया जाता है।

राष्ट्रीय क्षय निवारण कार्यक्रम

केन्द्र प्रवृतित राष्ट्रीय क्षय निवारण कार्यक्रम के तहत केन्द्र सरकार द्वारा सुलभ कराई जा रही 50% सहायता से राज्य मे वर्ष 1983-84 में 25 केन्द्रों तथा दो उपकेन्द्रो पर यह कार्यक्रम चलाया जा रहा था। इस कार्यक्रम के तहत क्षय निवारण केन्द्रो मे रोगियो को पंजीकृत कर उनके थूक की सूक्ष्मदर्शक यंत्र तथा एक्स-रे पद्धति से गहन जांच की जाकर उन्हे क्षय रोग निरोधक औषधिया दी जाती हैं। इस कार्यक्रम के तहत राज्य में 81 चिकित्सा अधिकारी, 2 वरिष्ठ विशेपज्ञ तथा 9 कनिष्ठ विशेषज्ञो की सेवाए उपलब्ध कराई जा रही हैं। ये सभी अधिकारी व कर्मचारी राष्ट्रीय क्षय संस्थान, बैंगलोर से प्रशिक्षित है। कार्यक्रम से सबद्ध अप्रशिक्षित कर्मचारियों को भी समय-समय पर विशेष प्रशिक्षण के लिए उक्त संस्थान मे भिजवाया जाता है। इस कार्यक्रम के तहत राज्य मे 2818 रोगी शैय्याओं की व्यवस्था है। सीकर जिले के सांवली तथा अजमेर में मदार क्षेत्र मे कार्यरत चिकित्सालय निजी क्षेत्र मे है।

इस कार्यक्रम के तहत राज्य मे बी.सी.जी. के टीके लगाने, क्षय निवारण केन्द्रों पर रोगियो की भर्ती, जांच व उपचार सुविधा टी.बी.एच.ई. दल द्वारा रोगियों

के घर घर जाकर उनके स्वास्थ्य की देखभाल व जांच, नये क्षय रोगियों की पहचान करने व थूक जांचने तथा सिनेमा स्लाइडों व अन्य स्वास्थ्य शिक्षा सामग्री के माध्यम से लोगों को क्षय रोग के कारणों व इसके उपचार के सम्बन्ध में शिक्षित करने के कार्यक्रम संचालित किए जाते हैं।

राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन योजना

भारत सरकार व राज्य सरकार द्वारा 50:50 प्रतिशत संचालन व्यय वहन करने के आधार पर चलाई जा रही इस योजना के तहत सभी जिला मुख्यालयों पर राष्ट्रीय मलेरिया उन्मूलन अधिकारी कार्यरत हैं। बड़े शहरों के गन्दगी भरे वातावरण में मलेरिया रोग के मच्छरों के उन्मूलन के लिए राज्य के प्रमुख नगरों—अजमेर, जयपुर, जोधपुर, बीकानेर, कोटा व भरतपुर में मच्छरों के लार्वा को दवा छिड़क कर मारने के लिए नगरीय मलेरिया उन्मूलन योजना चालू है।

इस योजना के तहत बहुद्देशीय स्वास्थ्य कार्यकर्ता घर-घर जाकर माह में दो बार बुखार पीड़ित रोगियों की जानकारी कर उनके खून के नमूने लेते हैं तथा उसी समय निःशुल्क गोलियां रोगियों को खिला देते हैं। वर्तमान में विभिन्न ग्राम पचायतों तथा पचायत समितियों में कार्यरत पटवारियों व अध्यापकों के माध्यम से राज्य में 12,789 बुखार केन्द्र 2393 दवा वितरण केन्द्र तथा 283 मलेरिया क्लिनिक संचालित किए जा रहे हैं। घरों में मलेरिया रोग के मच्छरों को समाप्त करने के लिये डी.डी.टी. जैसी दवाइयों के छिड़काव के अलावा जलाशयों में गम्बूजिया तथा गप्पी किस्म की मछलियां छोड़ने तथा पशुओं के वाड़ों में कीटनाशक औषधियों का छिड़काव भी किया जाता है।

प्रशिक्षण कार्यक्रम

(क) सामान्य नर्सिंग पाठ्यक्रम (महिला एवं पुरुष) :—राजस्थान के विविध अस्पतालों व चिकित्सालयों के कार्यरत कम्पाउन्डरों व नर्सों को नियुक्ति से पूर्व अपने कार्य का विधिवत् प्रशिक्षण दिया जाता है। अलवर, बाड़मेर, कोटा, जोधपुर व उदयपुर में 25 प्रशिक्षणार्थी क्षमता के प्रशिक्षण केन्द्र हैं जबकि महिलाओं के लिए 30 प्रशिक्षणार्थी क्षमता वाले 6 अन्य प्रशिक्षण केन्द्र क्रमशः अजमेर, बांसवाड़ा, कोटा, जोधपुर व उदयपुर में कार्यरत हैं। तीन वर्ष की अवधि का नर्सिंग पाठ्यक्रम हर वर्ष अगस्त माह से शुरू होता है। इसमें प्रवेश के लिए इच्छुक अभ्यार्थी का जीव विज्ञान से प्रथम वर्ष परीक्षा उत्तीर्ण होना आवश्यक है।

(ख) महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता पाठ्यक्रम—यह पाठ्यक्रम सेवा से पूर्व दिया जाता है। वर्तमान मे महिला स्वास्थ्य कार्यकर्ता पाठ्यक्रम के अधीन 12 केन्द्रों पर मैट्रिक उत्तीर्ण महिलाओं को तथा 6 केन्द्रों पर आठवीं श्रेणी उत्तीर्ण महिलाओं को प्रशिक्षण देने की व्यवस्था है। इन प्रशिक्षण केन्द्रों पर केवल राजस्थानी महिलाओं को ही प्रशिक्षण के लिये चुना जाता है। मैट्रिक उत्तीर्ण के लिए डेढ़ वर्ष

तथा आठवीं श्रेणी उत्तीर्ण प्रशिक्षणार्थी के लिये 2 वर्ष के प्रशिक्षण कार्यक्रम की अवधि निर्धारित है। प्रशिक्षण के लिए अभ्यार्थियों का चुनाव वर्ष में दो बार किया जाता है। प्रशिक्षण के दौरान प्रत्येक अभ्यार्थी को 1983 से 125 रु. प्रतिमाह की छात्रवृत्ति दी जाने लगी है।

अनुसूचित जाति की महिला प्रशिक्षणार्थियों को समाज कल्याण विभाग द्वारा 50 रु. प्रतिमाह की *अतिरिक्त छात्रवृत्ति राशि तथा प्रति छात्र* 300 रु. की पोशाक 100 रु. पुस्तकों के लिए देने का भी प्रावधान है।

(ग) प्रमोशनल महिला स्वास्थ्य गाइड प्रशिक्षण कार्यक्रम—

सेवारत ए. एन. एम. के लिए प्रशिक्षण का यह पाठ्यक्रम जयपुर जोधपुर, व कोटा नगरो मे आयोजित किया जाता है। प्रतिनियुक्ति आधर पर किये जाने वाले इस पाठ्यक्रम की अवधि, 6 माह होती है।

(घ) रेडियोग्राफर प्रशिक्षण कार्यक्रम

बीकानेर के जनरल अस्पताल व जयपुर स्थित सवाई मानसिंह अस्पताल मे 12-12 प्रशिक्षणार्थियों के लिए चलाये जाने वाले इस प्रशिक्षण कार्यक्रम के तहत डेढ वर्ष का प्रशिक्षण दिया जाता है। प्रशिक्षण के लिए वांछित शैक्षिक योग्यता विज्ञान विषय से सैकण्डरी उत्तीर्ण होना है।

इनके अलावा विभाग के अधीन प्रयोगशाला तकनीशियनों, सिस्टर ट्यूटरों, बहुउद्देशीय कार्यकर्त्ताओं, ज. बी, एस. सी. नर्सिंग, फार्मेसी डिप्लोमा, बी. सी. जी. तकनीशियनों तथा पोस्ट ग्रेजुएट डिग्री व डिप्लोमा पाठ्यक्रम के प्रशिक्षण कार्यक्रम भी संचालित किए जाते हैं।

डिग्री एवं डिप्लोमा प्रशिक्षण सी. ए. एस. डाक्टरों के लिए है जो राज्य के सभी पांचों *आयुर्विज्ञान महाविद्यालयों में दिया जाता है तथा क्रमशः* 2 व $1\frac{1}{2}$ वर्ष की अवधि का होता है।

पैरा मेडिकल स्टाफ की कमी को दृष्टिगत रखते हुए वर्ष *1983* से 18 महिला स्वास्थ्यकर्त्ता प्रशिक्षण केन्द्रों पर सीटें 30 से बढाकर 50 कर दी गई हैं। साथ ही जयपुर व बीकानेर के अतिरिक्त जोधपुर मे भी रेडियोग्राफर प्रशिक्षण केन्द्र खोल दिया गया है।

राज्य के बड़े अस्पतालों मे विविध प्रकार के जटिल रोगों के निदान एवं गहन जांच परीक्षण इत्यादि के लिए कई नई इकाइयां स्थापित की गई हैं। राज्य में सी. ए. एस. चिकित्सकों की कमी को मद्देनजर रखते हुए राज्य सरकार ने निर्धारित योग्यता प्राप्त सी. ए. एस. डाक्टर को लोक सेवा आयोग से विधिवत चयन से पूर्व ही अस्थाई तौर पर नियुक्त दे दिए जाने का निर्णय लिया है।

पूर्व में स्वास्थ्य एवं चिकित्सा सचिव ही जन स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग से संबद्ध प्रशासनिक मामलों को भी देखते थे किन्तु दो वर्ष पूर्व से जन स्वास्थ्य अभियांत्रिकी विभाग से संबद्ध कार्य को देखने के लिए पृथक सचिव की व्यवस्था कर दी गई है।

परिवार कल्याण कार्यक्रम

आज की विषम परिस्थितियों तथा जनसंख्या के अबाध गति से विस्तार ने देश की एक राष्ट्रीय समस्या का रूप ग्रहण कर लिया है। सन 1971 की जनगणना के अनुसार प्रदेश की आबादी 2.57 करोड़ थी जो 1981 में बढ़कर 3.43 करोड़ तक आ पहुंची है। सुरसा की तरह बढ़ती जनसंख्या को सीमित करने के लिए जन्म दर में कमी करने के लिए राज्य सरकार कृतसंकल्प है। भारत सरकार से इस कार्यक्रम के लिए प्राप्त हो रही साधन सुविधाओं के अलावा राज्य सरकार अपने स्तर पर भी परिवार कल्याण सेवाओं के विस्तार के लिए निरन्तर जागरुक व प्रयत्नशील रही है।

वर्तमान में राज्य में परिवार कल्याण कार्यक्रम के तहत 26 जिलास्तरीय परिवार कल्याण केन्द्र, 159 शहरी व 248 ग्रामीण परिवार कल्याण केन्द्र, 246 मान्यता प्राप्त गर्भ समापन केन्द्र, 64 पोस्टमार्टम केन्द्र तथा 809 ओरल पिल्स वितरण केन्द्र कार्यरत हैं।

पिछले वर्ष इस कार्यक्रम के तहत 1·38 लाख नसबंदियां की गई तथा 62 हजार महिलाओं के लूप लगाये गये। इनके अलावा प्रजनन क्षमता योग्य पुरुषों व महिलाओं को क्रमश: 112 लाख कन्डोम तथा ओरल पिल्स का वितरण किया गया। परिवार कल्याण कार्यक्रम के प्रति जनता को आकर्षित एवं प्रेरित करने के लिये परंपरागत प्रचार माध्यमों के अलावा रेडियो व दूरदर्शन का भी उपयोग किया जाने लगा है। नये-नये नारे तथा आकर्षक प्रचार साहित्य से भी लोगों को परिवार कल्याण कार्यक्रम अपनाने के लिए प्रेरित किया जा रहा है। इसके साथ ही नसबन्दी के लिए प्रेरक का कार्य करने वालों को समुचित रूप से पुरस्कृत करने की योजना भी प्रभावी ढंग से लागू की जा रही है। इन कार्यक्रमों से लोगों में परिवार कल्याण कार्यक्रम के प्रति जानकारी मे यथेष्ट वृद्धि हुई है।

सन 1975–76 से मातृ एवं शिशु कल्याण कार्यक्रम को भी परिवार कल्याण कार्यक्रम से संबद्ध कर दिया गया है। इस कार्यक्रम के तहत दूध पिलाती माताओं तथा शिशुओं को विभिन्न प्रकार के रोगों से बचाने के लिए आवश्यक टीके लगाने तथा दवाइयां वितरित करने के कार्य आते हैं। पिछले वर्ष इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 4.49 लाख बच्चो को डी. पी. टी. तथा 4·41 लाख बच्चों को डी. टी. के टीके लगाये गये जबकि 5·25 लाख दूध पिलाती माताओं तथा

बच्चों को श्राइरन युक्त गोलियां श्रौर 4·17 लाख बच्चों को विटामिन 'ए' की गोलियां व तरल दवाइयां सुलभ कराई गईं।

ग्रामीण क्षेत्रों मे स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण कार्यक्रम के प्रभावी अमल के लिए प्रति एक हजार की श्राबादी पीछे एक प्रशिक्षित ग्रामीण स्वास्थ्य कार्यकर्त्ता (गाइड) तथा एक प्रशिक्षित दाई उपलब्ध कराने का लक्ष्य है। इस कार्यक्रम के तहत वर्ष 1983–84 के अंत तक राज्य मे 16,859 दाइयों तथा 11,309 ग्रामीण स्वास्थ्य गाइड प्रशिक्षित किये जा चुके थे। इन ग्रामीण स्वास्थ्य गाइडों को तीन माह के प्रशिक्षण के दौरान 200 रु. प्रतिमाह तथा प्रशिक्षण के उपरान्त 50 रु. प्रतिमाह मान देय दिया जाता है जबकि दाई प्रशिक्षणार्थी को 300/–रु. प्रशिक्षण अवधि में दिया जाता है।

राज्य में प्रसवोत्तर सेवाकाल योजना वर्ष 1983-84 मे 37 स्थानों पर चलाई जा रही थी। इनमें 35 जिला अस्पतालों तथा 2 उप जिला अस्पतालों के अतिरिक्त 3 स्वैच्छिक संस्थानों पर भी यह योजना संचालित की जा रही थी। इनमें से 33 स्थानो पर नसबन्दी वार्ड तथा आपरेशन थियेटर तथा 31 स्थानों पर शहरी परिवार कल्याण केन्द्र का एक कमरे का निर्माण कार्य पूरा किया जा चुका था। ब्रिटिश सहायता योजना के तहत 30 उप जिला अस्पतालों पर 6 शैय्या वाले वार्ड तथा आपरेशन थियेटर तथा 76 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र (आर. एफ. डबल्यू. सी) पर लेबर रूम को आपरेशन थियेटर में परिवर्तित किया जा चुका है।

21. यू.एन. एफ. पी. ए. परियोजना Unitied Nations Fund for Population Activities

शत प्रतिशत केन्द्रीय सहायता से राज्य के चार जिलों धौलपुर, भरतपुर, सवाई माधोपुर व कोटा मे चलाई जा रही इस विशिष्ट परियोजना के तहत इन जिलों की जनता को स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण की सघन सेवाए उपलब्ध कराई जा रही हैं।

इस परियोजना के अंतर्गत ग्राम स्वास्थ्य रक्षको तथा दाइयों के प्रशिक्षण, प्रसविकाओं के प्रशिक्षण तथा महिला स्वास्थ्य गाइडों के प्रशिक्षण के अलावा स्वास्थ्य एवं परिवार कल्याण कार्यक्रम से सबद्ध प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों, ग्रामीण परिवार कल्याण केन्द्रो के भवन, स्वास्थ्य कार्यकर्त्ताओं व अधिकारियों के लिए आवासीय भवनो के निर्माण, आपरेशन थियेटरों तथा मातृ एवं शिशु कल्याण केन्द्रों के भवनों के भवन निर्माण कार्य और बहुउद्देशीय कार्यकर्त्ताओं के प्रशिक्षण केन्द्रों की व्यवस्था पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

वर्ष 1983-84 तक इस परियोजना के तहत 292 स्वास्थ्य उपकेन्द्र, 173 महिला स्वास्थ्य दर्शिका भवन, 26 ग्रामीण परिवार केन्द्र, 33 चिकित्सा

अधिकारियों के आवासीय भवन, 24 आपरेशन थियेटर, 83 उच्चीकृत प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा 2 मातृ शिशु कल्याण केन्द्रों के भवनों का निर्माण कार्य हाथ में लिया जा चुका था। इनमें से सितंबर 83 तक 169 उप केन्द्रों, 100 महिला स्वास्थ्य दर्शिकाओं के भवनों, 19 ग्रामीण परिवार केन्द्रों, 25 चिकित्सा अधिकारियों के आवास भवनो, 11 आपरेशन थियेटरों, 3 उच्चीकृत प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों तथा एक मातृ शिशु कल्याण केन्द्र के भवन के निर्माण कार्य पूरे किये जाने के थे जबकि अन्य निर्माण कार्य प्रगति पर थे। वर्ष 84-85 में इस परियोजना के तहत 1059 ग्रामीण स्वास्थ्य रक्षकों, 475 दाइयों तथा 160 प्रसाविकाओं को प्रशिक्षण देने का लक्ष्य था। 40 महिला स्वास्थ्य दर्शिकाओं की नियुक्ति तथा 100 ग्रामीण क्षेत्रों मे स्वास्थ्य उपकेन्द्र स्थापित करने, एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र का उच्चीकरण करने तथा एक मेटरनिटी होम तथा एक बहुउद्देश्यीय कार्यकर्त्ता प्रशिक्षण स्कूल स्थापित करने का लक्ष्य था।

कर्मचारी राज्य बीमा योजना

कर्मचारी राज्य बीमा योजना (चिकित्सा) श्रम विभाग राजस्थान के प्रशासकीय नियंत्रण में संचालित योजना है जिसके प्रभारी निदेशक चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवायें (कर्मचारी राज्य बीमा योजना) राजस्थान हैं। सामाजिक सुरक्षा के तहत चिकित्सा परिचर्या की इस योजना का समस्त उत्तरदायित्व राज्य सरकार वहन करती है। राजस्थान में यह योजना 2 दिसंबर 1956 से लागू है जिसके अधीन बीमाकृत व्यक्तियों तथा उनके परिवारजनों को एक बहिरंग तथा अंतरंग चिकित्सा सुविधा उपलब्ध कराई जाती है। कर्मचारी राज्य बीमा निगम नई दिल्ली व राज्य सरकार के बीच इस संबंध में हुए एक समझौते के अनुसार सम्पूर्ण व्यय का 7/8 भाग निगम द्वारा प्रतिपूरित कर दिया जाता है।

इस योजना के तहत जयपुर में 250 रोगी शैय्याओं का एक अस्पताल है जिसे सवाई मानसिंह मेडिकल कालेज जयपुर द्वारा नेत्र, चर्म, नाक, कान, गला, क्षय एवं पैथोलोजी के विशेषज्ञों की सेवायें उपलब्ध करायी जाती हैं। जयपुर के अलावा कुछ अन्य नगरों में भी सामान्य तथा क्षय चिकित्सालयों मे इस योजना से संबधित रोगियों के लिए 245 रोगी शैय्याओं के आरक्षण की सुविधा उपलब्ध है। पिछले वर्ष इस योजना के तहत रायला (भीलवाड़ा), विजयनगर, हनुमानगढ़ टाऊन मे औषधालय खोले जाने के प्रस्ताव थे।

भ्रमणशील शल्य चिकित्सा इकाई

एक चलते फिरते अस्पताल के रूप में कार्यरत यह इकाई 500 रोगियों के उपचार की व्यवस्था के साथ निदेशक, भ्रमणशील शल्य चिकित्सा इकाई के अधीन कार्यरत है। इस इकाई द्वारा राज्य के सुदूर ग्रामीण अंचलों मे चिकित्सा शिविरों

का आयोजन कर विविध प्रकार की व्याधियों से ग्रस्त रोगियों का शल्योपचार किया जाता है। वर्ष 1983-84 में इस इकाई द्वारा राज्य के विभिन्न अंचलों में 22 शिविर लगाये जाकर कुल 29, 704 रोगियों का स्वास्थ्य परीक्षण किया गया, 2105 रोगियों को सामान्य आपरेशनों तथा 1984 नेत्र रोगियों को नेत्र रोगों के आपरेशन कर लाभान्वित किया गया।

जन-जाति क्षेत्र योजना

राज्य के जन-जाति बहुल क्षेत्रों में न्यूनतम आवश्यकता कार्यक्रम के तहत चलाई जा रही इस योजना के तहत प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों के भवनों के निर्माण, पेयजल के कुए तथा चिकित्सालयों मे कमरों का निर्माण जन-जाति उपयोजना के तहत किया जाता है। राज्य योजनान्तर्गत जन-जाति क्षेत्र में तीन सबसीडियरी हैल्थ सेन्टर गढ़ी (बांसवाडा), आसपुर (डूंगरपुर) खेरर (सिरोही) में तथा बागीडोरा (बांसवाड़ा) में एक प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खोले जाने की स्वीकृति राज्य सरकार द्वारा दी जा चुकी है।

अनुसूचित जाति (स्पेशल कम्पोनेन्ट) योजना—इस योजना के तहत आदि वासी युवकों तथा महिलाओं को रेडियोग्राफर, प्रयोगशाला तकनीशियन तथा सामान्य नर्सिंग कार्य का प्रशिक्षण देने की व्यवस्था है।

चिकित्सा शिक्षा

भारत सरकार के अनुमोदन से भारतीय आयुर्विज्ञान अनुसंधान परिषद द्वारा जोधपुर स्थित क्षेत्रीय मरु अनुसंधान केन्द्र में स्थापित किये जाने वाले चिकित्सा एवं अनुसंधान केन्द्र के लिए राज्य के राजस्व विभाग द्वारा फरवरी 84 मे आवश्यक भूमि का आवंटन किया जा चुका है। यह केन्द्र मरु क्षेत्र के निवासियों की स्वास्थ्य समस्याओं की सर्वेक्षण कर उनके निवारण के लिए विस्तृत कार्य करेगा।

सवाई मानसिंह अस्पताल जयपुर में डेन्टल विंग में बी. डी. एस. कोर्स शुरु किये जाने के अलावा ओपन हार्ट सर्जरी व एण्डो यूरोलाजी के लिये आवश्यक उप-करणों की खरीद की स्वीकृति राज्य सरकार द्वारा दे दी गई है। अस्पताल के लिये गामा कैमरा खरीदने की भी स्वीकृति दे दी गई है जबकि जनाना अस्पताल मे साइटोलोजी, साइटोकोपी, कोटिस, कोलोपी की सुविधायें उपलब्ध कराई जाने लगी हैं। जोधपुर स्थित नव शिक्षण अस्पताल में मानसिक रोग चिकित्सालय तथा उदयपुर में कैंसर रोग के उपचार के लिए कोबाल्ट थिरेपी यूनिट की स्थापना कर दी गई है। इसी प्रकार अजमेर में जवाहर लाल नेहरू अस्पताल में कार्डियोलोजी विभाग स्थापित किया गया है।

वर्ष 1985-86 के लक्ष्य

वर्ष 85-86 के चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं के विस्तार पर कुल 16.26 करोड़ रु. व्यय करने का प्रावधान है जबकि 14.05 करोड़ रुपये का व्यय प्रस्तावित किया गया है। चालू वित्तीय वर्ष में एलोपैथी चिकित्सा सुविधा पर 6603.51 लाख रु. अन्य चिकित्सा प्रणालियों पर 1626.68 लाख रु., परिवार कल्याण कार्यक्रम पर 2444.70 लाख रु. तथा नवीन सेवा के कार्यक्रम पर 179.28 लाख रुपये व्यय करने का प्रावधान है।

इस वर्ष के बजट प्रस्तावों के अनुसार राज्य में प्रत्येक पंचायत समिति में 2 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र स्थापित किए जाने का लक्ष्य है। इसके अलावा इस वर्ष 11 नये प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा 124 वर्तमान प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों को सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रों की क्रमोन्नति किये जाने का प्रस्ताव है।

इस वर्ष के नये कार्यक्रमों के तहत 30 शैय्या वाले 3 चिकित्सालयों में रोगी शैय्याओं की संख्या 30 से बढ़ाकर 50 कर दी जायेगी। शैण्डर, फतेहपुर, राजगढ़ व तारानगर में एक्स-रे यूनिट कायम करने तथा मेड़ता सिटी, आबू रोड व श्रीमाधोपुर के चिकित्सालयों मे रोगी वाहन सुविधा उपलब्ध कराने के प्रस्ताव हैं। मेडिकल कालेजों तथा अस्पतालों मे इस वर्ष नये उपकरणों की खरीद के लिए 1.23 करोड़ रु. का प्रावधान रखा गया है जबकि 'बी' श्रेणी के 10 आयुर्वेदिक चिकित्सालयों को क्रमोन्नत कर उनमें 50 अतिरिक्त रोगी शैय्याओं की व्यवस्था की जायेगी। इनके अलावा उदयपुर स्थित मेडिकल कालेज मे रोग विज्ञान का एक नया विभाग खोलने तथा आयुर्वेदिक अस्पताल मे 50 शैय्या वाले चिकित्सालय भवन का निर्माण करने का प्रस्ताव है।

इनके अतिरिक्त चालू वित्तीय वर्ष के बजट प्रस्तावों मे 32 नये सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्रो पर 20 शैय्या वाले रेफरल अस्पताल, 100 नये प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खोलने, 50 ग्रामीण औषधालयों को सहायक–स्वास्थ्य–केन्द्रों में क्रमोन्नत किये जाने तथा 472 उप-स्वास्थ्य केन्द्रों को क्रमोन्नत किये जाने का प्रस्ताव है। 50 शैय्या वाले 5 सेटेलाइट अस्पतालों की स्थापना के अलावा इस वर्ष नागौर, झालावाड़, चित्तौडगढ़, जालोर, सवाईमाधोपुर, सिरोही, टोंक, झुन्झुनु व चूरू के के जिला अस्पतालो में रोगी शैय्याओं की सख्या 100 से बढाकर 150 करने तथा जैसलमेर मे 50 के बजाय 100 रोगी शैय्याओं की सुविधा जुटाने के प्रस्ताव हैं।

पांच सामान्य नर्सिंग-प्रशिक्षण–केन्द्रों मे 50 प्रशिक्षणार्थियों को प्रवेश देने तथा एक अन्य नर्सिंग प्रशिक्षण केन्द्र की प्रवेश क्षमता में बढ़ोतरी करने का भी संकल्प व्यक्त किया गया है।

27
राजस्थान के प्रमुख स्वतन्त्रता सेनानी

अर्जुनलाल सेठी

अर्जुनलाल सेठी का जन्म 9 सितम्बर, 1880 को जयपुर में हुआ था। सन् 1902 में उन्होंने बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की तथा 1907 में जयपुर के वर्द्धमान विद्यालय की स्थापना की। सेठीजी को संस्कृत, अंग्रेजी, फारसी, अरबी और पाली भाषा का अच्छा ज्ञान था।

सेठीजी के इस वर्द्धमान स्कूल में विद्यार्थियों को धार्मिक एवं देश सेवा की शिक्षा ही नहीं दी जाती थी वरन् क्रांतिकारियों को भी प्रशिक्षण दिया जाता था। क्रांतिकारी माणकचन्द और मोतीचन्द भी इस विद्यालय में पढ़ने आये थे। इनमें से मोतीचन्द को तो नीमेज के महन्त हत्याकाण्ड में फांसी की सजा दी गई थी।

सन् 1914 में सेठीजी को भी उक्त हत्याकाण्ड के सिलसिले में नजरबन्द कर दिया गया। इस नजरबन्दी का विरोध होने पर सेठीजी को मद्रास प्रेसीडेन्सी के वेलूर जेल में भेज दिया गया। सन् 1920 में जेल से मुक्त होने के बाद सेठीजी ने अजमेर को अपना कार्यक्षेत्र बनाया। यहां रहकर उन्होंने कांग्रेसी तथा क्रांतिकारी दोनों ही प्रकार की गतिविधियों में सक्रिय भाग लिया। सन् 1921 में सविनय अवज्ञा आंदोलन में भाग लिया और अजमेर में हिन्दू-मुस्लिम एकता और शराब के ठेकों की जोरदार पिकेटिंग की।

सेठीजी क्रांतिकारी गतिविधियों से जुड़े रहे। यहां तक कि चन्द्रशेखर आजाद और उनके दल के लोग सेठीजी के पास विचार-विमर्श के लिए आया करते थे। मेरठ काण्ड के अभियुक्त शौकत उस्मानी और काकोरी केस के फरार अभियुक्त अशफाकउल्ला को सेठीजी ने शरण दी थी। सेठीजी हिन्दू-मुस्लिम एकता के प्रबल पक्षधर थे। यही कारण है कि साम्प्रदायिक दंगों के समय वे अपनी जान को हथेली पर रखकर दंगों के बीच कूद पड़े। उनकी अन्तिम इच्छा थी कि उन्हें जलाया नहीं जाये बल्कि दफनाया जाये। ऐसे क्रांतिकारी सपूत का 23 दिसम्बर, 1941 को देहांत हो गया।

ठा. केसरीसिंह बारहठ

केसरीसिंह का जन्म 21 नवम्बर, 1872 मे हुआ था। इनके पिता का नाम कृष्णसिंह था। कृष्णसिंह उच्च कोटि के विद्वान और इतिहास के अच्छे ज्ञाता थे। इन्होंने एक बार चित्तौड़ में महर्षि स्वामी दयानन्द सरस्वती और एक मौलवी साहब के बीच हुए शास्त्रार्थ की मध्यस्थता की थी। केसरीसिंह पर अपने पिता के अलावा कविराज श्यामलदास का भी व्यापक प्रभाव पडा।

केसरीसिंह को संस्कृत, ज्योतिष, दर्शन, राजनीति, प्राकृत, पाली, बंगला, मराठी और गुजराती का अच्छा ज्ञान था। बारहठ केसरीसिंह का क्रांतिकारियों से निकट का सम्बन्ध था। इनके पुत्र प्रतापसिंह ने तो सेठीजी के स्कूल में क्रांतिकारियो के साथ प्रशिक्षण पाया और शहीद हुए। इन्हे भी एक मुकदमे के सिलसिले में जेल जाना पड़ा था।

सन् 1903 में लार्ड कर्जन द्वारा दिल्ली मे एक दरबार आयोजित किया गया था। उसमें राजस्थान के राजाओं को बुलाया गया था। उदयपुर के महाराणा फतेहसिंह भी उसमें सम्मिलित होने जा रहे थे। जब केसरीसिंह को यह बात मालूम हुई तो उन्होंने महाराणा के पास 'चेतावणी रा चुंगटिया' नामक तेरह सोरठे लिख कर भेजे। इन सोरठों से प्रेरणा प्राप्त कर महाराणा का सोया अभिमान जाग उठा और वे लार्ड कर्जन के दरबार में भाग लेने नही गये। इस महान कवि एवं स्वतंत्रता सेनानी की सन् 1941 मे जीवन-ज्योति बुझ गई।

विजयसिंह पथिक

विजयसिंह पथिक का जन्म उत्तरप्रदेश मे बुलन्दशहर जिले के गुढ़ावली ग्राम के एक गूजर परिवार मे हुआ था। विजयसिंह पथिक राजस्थान में किसान आंदोलन के जनक कहे जाते हैं। देश प्रसिद्ध बिजोलिया किसान आंदोलन का नेतृत्व एवं सफल संचालन विजयसिंह पथिक ने ही किया था। इनका वास्तविक नाम भूपसिंह था किन्तु जब तक ये टाडगढ में नजरबन्द थे तो वेश बदल कर भाग निकले और अपना नाम भी बदल कर विजयसिंह पथिक रख लिया।

बिजोलिया के किसानो का जो विश्वास पथिक को मिला वैसा विश्वास एवं श्रद्धा अन्य किसी व्यक्ति को नही मिली। इन्होने तत्कालीन सामन्ती व्यवस्था के प्रति जो जन-चेतना जागृत की और किसानों को सामन्ती शोषण से बचाया उससे तो ये जन-जन के प्रिय हो गये।

पथिक जी एक कुशल जननेता होने के साथ-साथ एक अच्छे साहित्यकार भी थे। यही कारण है कि वे राष्ट्रीय पत्र-पत्रिकाओं से जुड़कर लोगो मे राष्ट्रीय चेतना का संचार भी करते रहे।

बिजोलिया के बाद पथिक जी ने बेगूं के किसान आन्दोलन को भी

किया। इन्होंने वर्धा से 'राजस्थान केसरी' नामक पत्र निकाला और अजमेर में राजस्थान सेवा संघ की स्थापना की।

28 मई, सन् 1954 को पथिक जी का देहावसान हो गया।

सेठ दामोदरदास राठी

दामोदरदास राठी का जन्म 8 फरवरी, 1884 को पोकरण में सेठ खींवराज राठी के यहां हुआ था। ब्यावर के मिशन हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण करने के बाद इनका झुकाव राष्ट्रीय गतिविधियों की ओर हो गया।

खरवा के राव गोपालसिंह से राठी जी की अंतरंग मित्रता थी। गोपाल सिंह ने राजस्थान में सशस्त्र क्रांति की जो योजना बनाई थी उसमे दामोदरदास राठी का बडा योगदान था। लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक, अरविन्द घोष, दादाभाई नौरोजी, महामना मदनमोहन मालवीय, सुरेन्द्रनाथ बनर्जी तथा पंजाब केसरी लाला लाजपतराय से भी दामोदरदास राठी का निकट सम्बन्ध था।

राठी जी ने राजस्थान मे शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए भी कार्य किया और अनेक शिक्षा संस्थाओं को आर्थिक सहयोग दिया। राठी जी यों तो प्रत्यक्षतः एक उद्योगपति थे किन्तु उनका राजनीतिक जीवन अर्जुनलाल सेठी, केसरीसिंह बारहठ, गोपालसिंह खरवा, भूपसिंह और विजयसिंह पथिक जैसे क्रांतिकारियों के साथ गुजरा था। अतः ये सदैव ही क्रांतिकारियों के साथ कदम से कदम मिला कर चलते रहे और उनकी गतिविधियों में आर्थिक सहायता देते रहे।

34 वर्ष की आयु मे 2 जनवरी, सन् 1918 को राठीजी का देहान्त हो गया।

माणिक्यलाल वर्मा

माणिक्यलाल वर्मा का जन्म विक्रम सम्वत् 1954 की माघ शुक्ला एकादशी को मेवाड़ में हुआ था। वर्मा जी ने अपना प्रारम्भिक जीवन एक अध्यापक के रूप में शुरू किया था किंतु पथिक जी के सम्पर्क में आने के बाद वे बिजौलिया में सामंती शोषण एवं उत्पीड़न के विरुद्ध किसानों को जागृत करने के प्रयास में जुट गये।

वर्माजी कवि होने के साथ-साथ एक अच्छे गायक भी थे। बिजौलिया किसान आन्दोलन के समय गांवों मे जुड़ी सभाओं में जब वे अपनी ओजस्वी शैली में अपना गीत गाते थे तो हताश और निराश मन में भी उत्तेजना का संचार हो जाता था। बिजौलिया आंदोलन के समय वर्मा जी के गीतो ने शोषित किसानों के मन मे जिस उत्साह और आक्रोश को जन्म दिया उसी का परिणाम था कि जो किसान ठिकाने और मेवाड सरकार के दमन-चक्र के विरुद्ध तनिक भी आवाज नहीं उठा सकते थे वे आगे चलकर किसी भी प्रकार की लाग और बेगार के विरुद्ध उठ खड़े हुए। कविता द्वारा भीरू मन में भी वीरत्व का संचार कर देना वर्मा जी की अपनी एक विशेषता थी।

वर्मा जी जीवन भर अन्याय का विरोध करते रहे और लोगों को अपने अधिकारों के प्रति जागरुक रहने का आह्वान करते रहे। स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद वे राजस्थान की रियासतों से बने एक संघ के प्रथम मुख्यमन्त्री भी बने, परन्तु पीड़ित जनों की पुकार फिर उन्हें अपने बीच खींच लाई। इसके बाद वे मृत्युपर्यन्त शोषित एवं पीड़ितों की सेवा करते रहे। 14 जनवरी, 1969 को वर्मा जी का देहान्त हो गया।

हरिभाऊ उपाध्याय

हरिभाऊ उपाध्याय का जन्म तत्कालीन राज्य ग्वालियर के भौंरासा ग्राम में 9 मार्च, सन् 1893 में हुआ था।

इनकी प्रारम्भिक शिक्षा भौंरासा मे हुई। बारह वर्ष की उम्र में हरिभाऊ उपाध्याय अपने चाचा के यहां बरमण्डल चले गये। बरमण्डल के बाद आगे की शिक्षा के लिये वाराणसी चले गये। वहां उन्होने एक 'औदुम्बर' नामक मासिक पत्र का सम्पादन किया। सन् 1916 से 1919 तक आपने महावीरप्रसाद द्विवेदी के साथ सरस्वती नामक पत्रिका का सम्पादन किया।

इसके पश्चात् सन् 1920 से 1925 तक हरिभाऊ उपाध्याय गांधी जी के सान्निध्य में रहे और सन् 1926 में राजस्थान आ गये। यहां आने के बाद पूरे 45 वर्ष तक आप राजस्थान के होकर राजस्थान की राजनीतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक और साहित्यिक गतिविधियों में लीन रहे और यथासमय उनका नेतृत्व किया।

आजादी के बाद हरिभाऊ उपाध्याय राजस्थान के मंत्रिमडल में करीब दस वर्ष तक मंत्री रहे और शिक्षा, वित्त, योजना, समाज कल्याण और खादी ग्रामोद्योग जैसे विभागो के मंत्री रहे। 25 अगस्त, सन् 1972 को हरिभाऊ उपाध्याय का निधन हो गया।

हीरालाल शास्त्री

हीरालाल शास्त्री का जन्म 24 नवम्बर, सन् 1899 में जयपुर के जोबनेर कस्बे में पुरोहित परिवार में हुआ था। इनके पिता का नाम श्रीनारायण जोशी और माता का ममता जोशी था। इनके जन्म के सोलह मास बाद ही इनकी माता का देहावसान हो गया।

सोलह वर्ष की उम्र मे इन्होंने जोबनेर हाई स्कूल से मैट्रिक की परीक्षा उत्तीर्ण की। बाद मे जयपुर आकर सन् 1920 में साहित्य शास्त्री और 1921 मे बी.ए. की परीक्षा उत्तीर्ण की। इसके बाद असहयोग आन्दोलन में भाग लेने के कारण ये आगे नही पढ़ पाये।

शिक्षा समाप्त करने के बाद करीब 6 वर्ष तक इन्होंने राजकीय सेवा की

किन्तु अर्जुनलाल सेठी के सम्पर्क में आने के बाद 7 सितम्बर, 1927 को राजकीय सेवा से त्याग-पत्र दे दिया।

शास्त्रीजी ने जयपुर राज्य की निवाई तहसील के वनस्थली ग्राम में जीवन-कुटीर नामक संस्था की स्थापना की, जिसके माध्यम से वस्त्र स्वावलम्बन की दिशा में महत्त्वपूर्ण कार्य किया गया।

सन् 1931 में जयपुर में प्रजामण्डल की स्थापना हुई। इसके बाद तो सन् 1944 तक आप प्रजामण्डल से किसी न किसी रूप में जुड़े रहे। आगे चलकर शास्त्रीजी जयनारायण व्यास के साथ अखिल भारतीय देशी राज्य लोक-परिषद के प्रधानमन्त्री बने और बाद में जब जयपुर राज्य का पूरा लोकप्रिय मंत्रिमण्डल बना तो उसमें मुख्यमंत्री भी बने।

वनस्थली विद्यापीठ आज भी शास्त्री के शैक्षिक कार्यों की याद दिलाती है।

सागरमल गोपा

अमर शहीद सागरमल गोपा का जन्म संवत् 1957 की कार्तिक शुक्ला एकादशी को जैसलमेर के सम्पन्न ब्राह्मण परिवार में हुआ था।

सागरमल गोपा यो तो एक साधारण कार्यकर्ता थे किंतु राष्ट्रीयता की भावना इनमें कूट-कूट कर भरी हुई थी। अपने इसी उग्र स्वभाव के कारण इन्होंने जैसलमेर के तत्कालीन महारावल जवाहरसिंह के अत्याचारों का डटकर विरोध किया। इनकी जन-आक्रोश पैदा करने वाली गतिविधियों को देखकर जैसलमेर एवं हैदराबाद में इनके प्रवेश पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया। परन्तु इन्होंने इन प्रतिबन्धों की तनिक भी परवाह नहीं की और लगातार अखिल भारतीय देशी राज्य लोक परिषद् के अधिवेशनों में भाग लेने के अलावा अपनी क्रांतिकारी गतिविधियां भी जारी रखीं। असहयोग आंदोलन में भी सागरमल गोपा ने सक्रिय रूप से भाग लिया।

सन् 1939 में अपने पिता के देहावसान पर ये जैसलमेर गये और वहां सन् 1941 में इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया। जेल में इन्हें कठोर यातनाएं दी गईं। इन्हीं यातनाओं के सिलसिले में 3 अप्रेल, 1946 को इन पर मिट्टी का तेल डालकर आग लगा दी गई। फलस्वरूप 4 अप्रेल, 1946 को इनकी मृत्यु हो गयी।

जयनारायण व्यास

राजस्थान के प्रमुख स्वतन्त्रता सेनानी जयनारायण व्यास का जन्म 18 फरवरी, सन् 1899 को जोधपुर में हुआ था।

जयनारायण व्यास ही राजस्थान में पहले व्यक्ति थे जिन्होंने सबसे पहले यह आवाज उठाई कि राजतंत्रों और सामन्तों का समय समाप्त हो चुका है। या

तो वे लोकहित में अपनी सत्ता जनता के निर्वाचित प्रतिनिधियों के हाथों में सौंप दें अन्यथा रूस में जार के साथ घटी घटनाओं की पुनरावृत्ति राजस्थान की रियासतों में भी होगी। जयनारायण व्यास ने ही सबसे पहले जागीरदारी प्रथा की समाप्ति और रियासतों में उत्तरदायी शासन की स्थापना का नारा लगाया।

सन् 1927 में वे 'तरुण राजस्थान' पत्र के प्रधान सम्पादक बन गये और 1936 से बम्बई से हिन्दी 'अखण्ड भारत' नामक दैनिक पत्र निकाला। 'अगीवाण' नामक राजस्थानी भाषा के पत्र का प्रकाशन भी इन्होंने किया। अपने अन्तिम समय तक 'पीप' नामक अंग्रेजी साप्ताहिक के द्वारा अपने स्वतन्त्र चिन्तन और परिपक्व विचारों से जनता को मार्गदर्शन प्रदान करते रहे।

जयनारायण व्यास अनेक बार जेल गये और नमक सत्याग्रह में भी गिरफ्तार किये गये। अखिल भारतीय देशी राज्य प्रजा परिषद के ये महामंत्री चुने गये और करीब 14 वर्ष तक इस पद पर कार्य करते हुए रियासती आंदोलन को गतिशील बनाये रखा।

सन् 1948 में जोधपुर में लोकप्रिय मन्त्रिमण्डल का गठन हुआ तो व्यास जी राज्य के प्रधानमन्त्री बनाये गये। सन् 1949 से 52 तक राजपूताना प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष रहे और 1956 से 57 तक प्रान्तीय कांग्रेस कमेटी के अध्यक्ष तथा 1951 से 54 तक राजस्थान के मुख्यमन्त्री भी रहे। 14 मार्च, सन् 1963 में इनका देहावसान हो गया।

ठा. जोरावरसिंह बारहठ

ठा. जोरावरसिंह बारहठ राजस्थान केसरी ठा. केसरीसिंह बारहठ के छोटे भाई और अमर शहीद प्रतापसिंह के चाचा थे। इनका बाल्यकाल शाहपुरा, उदयपुर और जोधपुर के जागीरी घरानों के साथ बीता। पिता की मृत्यु के बाद इन्होंने थोड़े दिनों तक जोधपुर राजघराने में कुछ दिन काम किया, किन्तु अटूट देशभक्ति के कारण वहां रम नहीं सके और क्रांतिकारी गतिविधियों से जुड़ गये।

12 दिसम्बर, 1911 को दिल्ली दरबार के अवसर पर इन्होंने लार्ड हार्डिंग्ज पर बम फेंक इन्होंने अपने अद्भुत साहस एवं देशभक्ति का परिचय दिया। इन्हें पकड़ने के लिए सरकार एवं रजवाड़ों की तरफ से अनेक इनामों की घोषणाएं की गईं किन्तु ये जीवन पर्यन्त पकड़ में नहीं आये और 19 वर्ष तक वेश बदल कर भूमिगत रह कर कार्य करते रहे। अन्त में सन् 1930 में इनकी मृत्यु हो गयी।

राव गोपालसिंह खरवा

राजपूताने में 'वीर भारत सभा' के नाम से जो गुप्त सैनिक संगठन बनाया गया था। इसके संस्थापकों और संचालकों में ठा. केसरीसिंह बारहठ के साथ खरवा के राव गोपालसिंह ने भी महत्त्वपूर्ण कार्य किया था। इन्होंने न केवल बड़े पैमाने पर...

राजपुताने के राजपूतों को वीर भारत सभा में सम्मिलित किया अपितु उनके मन में आजादी प्राप्त करने में क्रांतिकारियों का साथ देकर भारत में फिर से अपना राज्य कायम करने की भी महत्त्वाकांक्षा जाग्रत कर दी।

राव गोपालसिंह ने क्रांतिकारियों और रियासतो के राजाओं के बीच एक महत्त्वपूर्ण कड़ी का कार्य किया और राजाओं से क्रांतिकारियों को धन एवं शस्त्र दिलाने का महत्त्वपूर्ण कार्य किया।

21 फरवरी, 1915 को तय की गई सशस्त्र क्रांति में राजपुताने में राव गोपालसिंह और दामोदरदास राठी को ब्यावर और भोपसिंह को अजमेर, नसीराबाद पर कब्जा करने का कार्य सौंपा गया था किन्तु इस योजना की भनक अंग्रेजों को लग जाने से यह सफल नहीं हो सका।

आगे चलकर इन्हें टाडगढ़ के किले में नजरबन्द रखा गया जहां से ये फरार हो गये और महिनों तक इधर-उधर भटकते रहे। अन्त में किशनगढ़ के पास पहचान लिये जाने के कारण फिर नजरबन्द कर दिये गये। सन् 1920 में इन्हें मुक्त कर दिया गया।

प्रतापसिंह बारहठ

प्रतापसिंह बारहठ का जन्म सम्वत् 1950 को ज्येष्ठ शुक्ला नवमी को उदयपुर में हुआ था। इनके पिता ठाकुर केसरी सिंह बारहठ उदयपुर के महाराणा के सलाहकार थे। बाद में उन्हें कोटा के महाराज उम्मेदसिंह ने अपने पास बुलवा लिया।

प्रतापसिंह का बचपन कोटा में व्यतीत हुआ और यहीं पर उन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा ग्रहण की। चूंकि पिता केसरी सिंह बारहठ की यह दृढ़ मान्यता थी कि अंग्रेजों द्वारा चलाये गये विद्यालय गुलामो को उत्पन्न करने वाले सांचे हैं अतः प्रताप सिंह को अर्जुन लाल सेठी द्वारा संचालित वर्द्धमान विद्यालय में भेज दिया। यहां रहकर प्रतापसिंह के मन मे देश की स्वतंत्रता के लिए काम करने की भावना घर कर गई।

आगे चलकर प्रतापसिंह ने प्रसिद्ध देशभक्त और क्रांतिकारी मास्टर अमीर चन्द से भी प्रशिक्षण प्राप्त किया। दिल्ली में वायसराय हार्डिंज पर बम फेंकने के बाद प्रतापसिंह छिपे तौर पर क्रांतिकारियो मे भी रहे किन्तु एक बार जब ये हैदराबाद से बीकानेर जा रहे थे तो जोधपुर के पास आशानाडा स्टेशन पर स्टेशन मास्टर नें इन्हे धोखे से पकड़वा दिया। इन्हे बरेली की जेल मे रखा गया और क्रांतिकारियों का पता बताने के लिए इन्हे कई प्रलोभन तथा यातनाएं दी गई किन्तु ये अपने पथ सें तनिक भी विचलित नहीं हुए। अन्त में इन्हें सता-सताकर मार डाला गया।

मोतीलाल तेजावत

मोतीलाल तेजावत का जन्म उदयपुर को फलासिया तहसील के कोल्यारी गांव मे सन् 1896 में हुआ था। इन्हें हिन्दी, उर्दू एवं गुजराती का ज्ञान था अतः झाड़ोल के जागीरदार के यहां कामदार का कार्य करने लगे।

इस सेवा के दौरान इन्हें भील गगरा, सिये एवं अन्य काश्तकारों पर जागीरदारों द्वारा ढाये जा रहे जुल्मो को निकट मे देखने का अवसर मिला। फलस्वरूप इन्होंने ठिकाने की नौकरी छोड दी और संवत् 1977 को बैसाख शुक्ला 15 को चित्तौड़ के मातृकुंडिया जाकर मेवाड राज्य के जुल्मों के खिलाफ पहली बार 'एकी' नामक आन्दोलन का श्रीगणेश किया।

इसके बाद हजारों किसानों के साथ मे उदयपुर आने और वहां के महाराणा फतहसिंह को एक ज्ञापन देकर लगान एवं बेगार की कलमें माफ कराने का निवेदन किया। तेजावत को इस आन्दोलन मे अभूतपूर्व सफलता मिली और 21 कलमों में से महाराणा ने 18 कलमे माफ कर दीं।

इसके बाद यह आन्दोलन सिरोही, दाता, पालनपुर, ईडर और विजयनगर आदि रियासतो मे भी फैल गया। विजयनगर रियासत के नीमडा गांव में पुलिस द्वारा निहत्थी जनता पर गोली चलाये जाने से मोतीलाल तेजावत भी घायल हो गये और तब से लेकर 8 वर्ष तक ये भूमिगत रहे। मेवाड़ सरकार ने इन्हें ढूंढवाने की जी-तोड़ कोशिश की किन्तु इनका पता नही चला। अन्ततः गांधीजी के आदेशानुसार इन्होंने सन् 1929 में अपने आपको गिरफ्तार करवा लिया। इसके बाद ये 1936 तक जेल रहे। रिहा होने पर सन् 1938 मे पुनः गिरफ्तार कर लिये गये। इसके बाद इन्हें बार-बार गिरफ्तार करने, नजरबन्द रखने और जेल भेजने का सिलसिला चलता रहा।

5 दिसम्बर, 1963 को यह आदिवासियों का मसीहा इस संसार से कूच कर गया।

बालमुकन्द बिस्सा

बालमुकन्द बिस्सा का जन्म सन् 1908 में जोधपुर राज्य की डीडवाना तहसील के पीलवा ग्राम में हुआ था। इनके पिता का कलकत्ता मे व्यवसाय होने के कारण इनकी आरम्भिक शिक्षा भी कलकत्ते मे हुई।

बाद में ये जोधपुर आ गये और सन् 1934 में इन्होंने जोधपुर में राजस्थान चर्खा एजेन्सी लेकर खद्दरभण्डार की स्थापना की। सन् 1934 से 1940 के जोधपुर आन्दोलन में बालमुकन्द बिस्सा पर जेल से बाहर रहकर आन्दोलन के संचालन की सारी व्यवस्था करने की जिम्मेदारी सौंपी जिसे उन्होंने बखूबी निभाया।

आगे चलकर जयनारायण व्यास के नेतृत्व में उत्तरदायी शासन के लिए जो

आन्दोलन चलाया गया था उसमें बालमुकन्द बिस्सा को भारत रक्षा कानून के अन्तर्गत 9 जून 1942 को जोधपुर में गिरफ्तार कर लिया गया। इन्हें जोधपुर की सेन्ट्रल जेल में नजरबन्द रखा गया। वहां इन्होंने राजबंदियों के प्रति दुर्व्यवहार के विरोध में भूख हड़ताल शुरू कर दी। भूख हड़ताल से इनका रक्तचाप गिर गया और ये कमजोर हो गये। भूख हड़ताल समाप्त करने के तुरन्त बाद ये सनस्ट्रोक से ग्रस्त हो गये। समुचित चिकित्सा के अभाव में 19 जून 1942 को इनकी मृत्यु हो गई।

रमेश स्वामी

रमेश स्वामी का जन्म सम्वत् 1861 में मुसावर के एक साधारण परिवार में हुआ था। इनका जन्म का नाम कुन्दन था।

मुसावर से वर्नाक्यूलर मिडिल पास करके अध्यापन का कार्य शुरू किया किन्तु वैदिक धर्म की ओर रुचि होने के कारण भरतपुर को छोड़कर लाहौर चले गये। वहां पर इनका सम्पर्क प्रसिद्ध आर्य विद्वान पं० विश्वबन्धु शास्त्री से हुआ और वहीं पर इन्होंने वैदिक साहित्य का अध्ययन करना शुरू कर दिया। ये वैदिक साहित्य व हिन्दी का प्रचार करने श्याम, जावा तथा मलाया भी गये और करीब डेढ साल बाद पुनः भारत आ गये।

प्रजा मण्डल का प्रचार करने के बाद मई 1938 के सत्याग्रह में इन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और डेढ साल की सजा से दंडित किया गया। सन् 1942 में इन्हें पुनः गिरफ्तार कर लिया गया। इसके बाद ये सन् 1945 में भी जेल गये।

सन् 1947 में लाल झण्डा किसान सभा, मुस्लिम कांफ्रेन्स तथा प्रजा परिषद् द्वारा बेगार आन्दोलन आरम्भ कर दिये जाने पर रमेश स्वामी इस आन्दोलन को सफल बनाने में जुट गये।

5 फरवरी 1947 को सब इन्सपेक्टर सुरेन्द्रपाल सिंह के उकसाने पर एक बस के सामने लेट कर सत्याग्रह कर रहे स्वामीजी पर बस के मालिक भगवान सिंह द्वारा इन पर से बस गुजार देने से इनकी वहीं मृत्यु हो गई।

नानक भील

बिजौलिया के सफल किसान आन्दोलन के बाद बेगूं और बून्दी के किसानों में भी जागृति आई और वे भी अपने अधिकारों के लिये उठ खड़े हुये। बूंदी के किसान आन्दोलन की यह भी एक विशेषता थी कि उसमें स्त्रियों ने भी मर्दों के साथ कन्धे से कन्धा मिलाकर भाग लिया और बेगार एवं ज्यादतियों का विरोध किया।

इस प्रवृत्ति को दबाने के लिए बूंदी की सेना ने किसानों और उनकी स्त्रियों पर बड़े अत्याचार किये। इसके विरोध में पंडित नयनूराम शर्मा की अध्यक्षता में

डाबी ग्राम में एक सम्मेलन हुआ जिसमें हजारों की संख्या में स्त्री-पुरुषों ने भाग लिया।

सम्मेलन की कारवाई शुरू हुई और नानक भील झण्डा गीत गाने के लिए मंच पर आया। नानक भील बड़े उत्साही, निर्भीक एवं निष्ठावान कार्यकर्ता थे। अच्छे गायक होने के नाते वे गीतों के माध्यम से जन जागरण का कार्य भी करते थे नानक भील ने झण्डा गीत गाना शुरू ही किया था कि पीछे से एस. पी. इकराम हुसैन के नेतृत्व में आये पुलिस दल ने उन पर गोली चला दी। नानक भील की पीठ में तीन गोलियां लगी और वे वहीं पर ढेर हो गये।

नेतराम सिंह गौरीर

नेतराम सिंह का जन्म झुंझनू जिले के गौरीर गांव में सम्वत् 1949 की भाद्रपद शुक्ला द्वितीया को हुआ था। सन् 1914 में जब ये पटियाला के भूपिन्द्रा हाईस्कूल के विद्यार्थी थे तो नारनोल बम विस्फोट में इनका सम्बन्ध बताकर इन्हें स्कूल से निकाल दिया गया। इसके बाद ये आर्य समाज की ओर आकर्षित हुए और सन् 1983 तक शेखावाटी के गांवों में घूम-घूमकर किसानों को सगठित करने में लगे रहे।

किसान सभाओं की बढ़ती गतिविधियों को दबाने के लिए सन् 1938 तक नेतराम को गिरफ्तार कर जेल भेजा गया और सन् 1940 में दो वर्ष की सख्त सजा देकर उन्हें जयपुर की सेन्ट्रल जेल भेज दिया।

जेल से मुक्त होने के बाद इन्हें सबसे पहले माताजी के देहान्त का दुखद समाचार मिला। जयपुर से जब ये झुंझनू पहुंचे तो नेतराम का शानदार स्वागत किया गया। नेतराम ने उस समय अपने जेल के अनुभव सुनाये और भारत से ब्रिटिश सनत नत को तथा सामन्ती शक्तियों को उखाड़ फैंकने के लिए जनता का आह्वान किया। झुंझनू क्षेत्र में दौरा करके जब नेतराम जयपुर लौटकर आये तो इसी समय इनके पिता का भी देहान्त हो गया।

नेतराम ने राजनीति के साथ-साथ शिक्षा के प्रचार-प्रसार के लिए भी उल्लेखनीय कार्य किया। गांव-गाव में शिक्षा प्रसार के लिए पाठशालाएं खुलवाई और अपनी कन्या को पाठशाला भेज कर कन्या शिक्षा के क्षेत्र में भी महत्वपूर्ण कदम उठाया।

रामनारायण चौधरी

रामनारायण चौधरी का जन्म सन् 1896 में जयपुर राज्य के नीम का थाना कस्बे में हुआ था। चौधरीजी की प्रारम्भिक शिक्षा नीम का थाना में हुई। इसके बाद 1908 से 1915 तक जयपुर में महाराजा हाई स्कूल और महाराजा कालेज से मिडिल से इन्टर तक पढ़े। सन् 1912 में उनका सम्पर्क पण्डित अर्जुनलाल सेठी से हुआ और उसके बाद वे क्रांतिकारी गतिविधियों से जुड़ गए।

सन् 1929 में चौधरीजी को बापू का सान्निध्य मिला और सन् 1930 में नमक सत्याग्रह शुरू होने पर अजमेर लौट आए जहां उन्हें गिरफ्तार कर लिया गया और एक वर्ष की कड़ी कैद की सजा मिली। सन् 1932 में हरिजन सेवक संघ की राजपूताना शाखा का कार्यभार सम्भाला और 1934 में बापू की दक्षिण भारतीय हरिजन यात्रा मे उनके हिन्दी सचिव के रूप में साथ रहे। सन् 1939 से 42 तक चौधरीजी सेवाग्राम आश्रम में रहे और भारत छोड़ो आंदोलन के समय अजमेर लौट आए जहां वे स्टेशन से ही, जेल पहुंचा दिये गये।

जेल से छूटने के बाद चौधरीजी ने नया राजस्थान 'हिन्दी दैनिक' निकाला। सन् 1954 मे नेहरूजी जब अजमेर आये तो चौधरीजी से मिले और उन्हे दिल्ली आने का बुलावा दे गये। वहां वे भारत सेवक समाज के सूचना मंत्री बना दिये गये। सन 1959 में नंदाजी से मतभेद होने के कारण भारत सेवक समाज छोड़ दिया और ग्राम सहभोज नामक अपनी स्वतंत्र संस्था बनाली। सन् 1964 में नेहरूजी के निधन के बाद चौधरी जी का मन उचट गया और वे अपनी संस्था सहित अजमेर लौट आये।

साधु सीताराम दास

साधु सीताराम का जन्म सन् 1884 में बिजोलिया में हुआ था। उनकी आरम्भिक शिक्षा मेवाड़ मे ही हुई।

उन्होने अपने शिक्षाकाल में ही देश सेवा का व्रत ले लिया था और लोकमान्य तिलक उनकी प्रेरणा के स्रोत थे। उन्हे किसानों के बीच रह कर सामन्ती शोषण और किसानों की दयनीय दशा को निकटता से देखने का अवसर मिला था अतः वे अपने क्षेत्र में घूम घूमकर किसानों को संगठित करने का कार्य करने लगे। इतना ही नहीं इन्होने अपने क्षेत्र में विद्या प्रचारिणी सभा की स्थापना की और इसके अन्तर्गत गांवो मे पाठशालाएं, पुस्तकालय और वाचनालय स्थापित कर जेलों मे राष्ट्रीय भाधना का संचार किया।

उन दिनों जागीरदारों को अपने राज्य के राजाओं को अलग-अलग तरह के कई टैक्स देने पड़ते थे। बिजौलिया के जागीरदार को भी उदयपुर के महाराणा को टैक्स के रूप में एक लाख रुपया देना था। जब उसने यह रुपया किसानों से उगाहना शुरू किया तो इसका विरोध करने के लिए पहली बार वहां के किसान साधु सीतारामदास, फतहकरण चारण और ब्रह्मदेव के नेतृत्व में उठ खड़े हुए। सन् 1913 में साधु सीतारामदास के नेतृत्व में करीब एक हजार किसान इसी टैक्स वसूली का विरोध करने रावजी के महल गये किन्तु जब इसका कोई परिणाम नहीं निकला तो वहां के किसानों ने साधु सीतारामदास के नेतृत्व में फैसला किया कि कोई किसान बिजौलिया की जमीन पर खेती नहीं करे। फलस्वरूप ऊपर माल का क्षेत्र बिना जुता पड़ा रह गया और 15 हजार किसानों ने अपनी भूमि को पड़त रख लिया।

साधु सीतारामदास अपने राजनीतिक जीवन में कई बार जेल गये।

गोकुलभाई भट्ट

गोकुलभाई भट्ट का जन्म 25 जनवरी, 1899 को सिरोही राज्य के हाथल ग्राम मे हुआ था। इनके पिता बम्बई के एक सेठ के यहा नौकरी करते थे अतः इनकी प्रारम्भिक शिक्षा बम्बई में हुई।

आई.आर.सी. की परीक्षा पास कर कृषि विज्ञान के अध्ययन के लिए ये अमेरिका जाने वाले थे, किन्तु गांधी की आंधी ने इनका जीवन बदल दिया और ये विदेश जाने के बजाय देश की सेवा में जुट गये। असहयोग आंदोलन से लगाकर 1939 तक ये विलेपार्ले में रहे और वहां इन्होने विदेशी वस्त्रों की होली जलाने, नमक सत्याग्रह और शराबबन्दी तथा धरना सत्याग्रह का संचालन किया।

आगे चलकर ये विलेपार्ले छोड़कर सिरोही आये और वहां सिरोही राज्य प्रजामण्डल की स्थापना की। सिरोही के कार्यकर्ताओं को संगठित कर गांव-गाव जाकर राज्य में उत्तरदायी शासन की स्थापना का संदेश पहुंचाया।

देश की स्वाधीनता के बाद जब 1948 में जयपुर मे कांग्रेस का अधिवेशन हुआ तो गोकुलभाई भट्ट ने स्वागताध्यक्ष का कार्यभार सम्भाला। निश्चय ही राजस्थान के सार्वजनिक जीवन मे गोकुलभाई भट्ट का अपना एक अलग ही स्थान है। सर्वोदय के कार्य में जिस निष्ठा एवं समर्पण भाव से लगे हुए हैं वह सचमुच मे एक प्रेरणास्पद कार्य है।

मास्टर आदित्येन्द्र

मास्टर आदित्येन्द्र का जन्म 24 जून, 1907 को भरतपुर की नगर तहसील के घून ग्राम में हुआ था। जब ये ग्यारह वर्ष के थे तो इनके पिता का निधन हो गया।

सन् 1928 में आगरा से बी.एस.सी. की परीक्षा पास करके भरतपुर की हाई स्कूल मे गणित और विज्ञान के अध्यापक हो गये। वहां इन्होने अध्ययन कार्य के साथ-साथ छात्रों में राष्ट्रीय भावना को जाग्रत करने का कार्य भी शुरू कर दिया। आगे चलकर इन्होने इस राजकीय सेवा से त्याग-पत्र दे दिया और खुले तौर पर राजनीति में आ गये।

सन् 1935 मे रेवाड़ी चले गये और वहां अहीर स्कूल मे गणित के अध्यापक हो गये। 1938 में वहां से त्याग-पत्र देकर वापिस भरतपुर आ गये और प्रजामण्डल के माध्यम से तथा अन्य कार्यों से जनता मे राजनीतिक चेतना उत्पन्न करने के कार्य में जुट गये।

1942 मे भारत छोड़ो आंदोलन के सिलसिले मे इन्हे 11 अगस्त को गिरफ्-

तार कर लिया गया। इसके बाद भी आप विभिन्न आंदोलनों से जुड़े रहे और सरकार के दमन एवं अत्याचार का विरोध करते रहे।

आजादी के बाद 1949 मे राजस्थान राज्य के निर्माण होने पर संयुक्त मत्स्य राज्य का इसमे विलीनीकरण हो गया तो उसमें भी संगठन एवं अन्य रचनात्मक कार्यों को सम्पादित करते रहे। सन् 1954 से 60 तक राज्य सभा के सदस्य के अलावा 1967 के आम चुनाव मे विधान सभा के सदस्य चुने गये। राजस्थान मे जनता पार्टी के शासन के दौरान आप मंत्रिमण्डल मे भी रहे।

गोकुललाल आसावा

गोकुललाल आसावा का जन्म 2 अक्टूबर, 1901 मे हुआ था। इनका प्रारम्भिक अध्ययन शाहपुरा की मिडिल स्कूल मे हुआ। सन् 1926 मे हिन्दू विश्वविद्यालय से बी.ए. और 1928 मे दर्शन शास्त्र मे एम.ए. किया।

इसके बाद इन्होने कोटा के हर्वर्ड कालेज मे अध्यापन का कार्य शुरू कर दिया किन्तु इनकी राष्ट्रीय गतिविधियों को देखकर इन्हें कालेज सेवा से अलग कर दिया। इसके बाद आसावाजी कोटा से अजमेर आ गये और नमक सत्याग्रह मे सक्रिय रूप से जुट गये। यहीं से आसावाजी का जेल जाने का सिलसिला शुरू हो गया और 1930 से 32 के बीच इन्हें चार बार जेल जाना पड़ा।

गोकुललाल असावा का अधिकांश समय अजमेर में ही व्यतीत हुआ, और अजमेर की कांग्रेस के माध्यम से उन्होने अपने आपको देश के प्रति समर्पित कर दिया। आसावाजी 1930 से 1946 तक निरन्तर अजमेर-मेरवाड़ा प्रांतीय कांग्रेस कमेटी की व्यवस्थापिका सभा के सदस्य रहे और राजस्थान प्रदेश कांग्रेस कमेटी के निर्माण के बाद श्री आसावा 1951 तक उसकी कार्यकारिणी के सदस्य भी रहे। सन् 1952 के बाद इन्होने अपने आपको सार्वजनिक जीवन की राजनीति से अलग कर लिया।

भोगीलाल पंड्या

भोगीलाल पंड्या का जन्म 15 मार्च, 1904 को हुआ था। भोगीलाल पंड्या का जीवन एक ऐसे राजतंत्र के विरुद्ध संघर्ष की कहानी है जिसमे शिक्षा के कार्य कानूनन तौर पर बन्द कर रखा था और शिक्षा का प्रसार करने वाले कार्यकर्ताओं को राजद्रोह के अपराध में गिरफ्तार कर उसे सजा दी जाती थी।

यही कारण है कि पंड्याजी ने प्रारम्भ से ही शिक्षा के प्रचार-प्रसार का कार्य अपने हाथ मे लिया। सन् 1919 में पन्द्रह वर्ष की आयु में ही डूंगरपुर मे एक छात्रालय की स्थापना की। इसके बाद इन्होंने बच्चो व प्रौढ़ो के लिए पाठशालाओं की शृंखला स्थापित करना शुरू कर दिया ताकि उस आदिवासी क्षेत्र मे राजनीतिक चेतना का प्रादुर्भाव हो सके। इसी क्रम मे उन्होंने बागड़ सेवा मन्दिर

नाम से एक संस्था की स्थापना की। इसकी गतिविधियों से आतंकित होकर रियासत ने इस संस्था को बन्द कर दिया। इस संस्था के बन्द हो जाने पर इन्होंने सेवा संघ संस्था का गठन किया।

सन् 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन मे भोगीलाल पंड्या ने रियासत के कोने-कोने में इसका प्रचार किया और 1944 में रियासत के शासन के विरुद्ध उठ खड़े होने के लिए प्रमाण सभाओं का आयोजन किया गया। सन् 1944 मे डूंगरपुर राज्य प्रजा मण्डल का गठन किया गया। सन् 1945 में डूंगरपुर रियासत के कोने-कोने मे जाकर सभाओं का आयोजन किया और राजकीय शिक्षा तथा वन विभाग की नीतियों की कड़ी आलोचना की। इस दौरान उन्हें अनेक समस्याओं का सामना करना पड़ा और पुलिस द्वारा उनकी पिटाई भी की गई। सन् 1948 के बाद डूंगरपुर रियासत भी राजस्थान संघ मे मिल गई और भोगीलाल पंड्या इसमे मंत्री बनाये गये। सुखाड़िया मन्त्रिमण्डल में भी आप दो बार मंत्री बनाये गये।

स्वामी कुमारानन्द

स्वामी कुमारानन्द का जन्म 15 अप्रैल 1889 को हुआ था। इनके पिता रंगून के कमिश्नर थे। फलस्वरूप इनकी प्रारम्भिक शिक्षा बर्मा मे हुई और बाद में ढाका एवं कलकत्ता मे उच्च शिक्षा प्राप्त की।

सन् 1910 के नवम्बर माह मे स्वामीजी चीन गये और वहां के महान नेता डा. सन-यात-सेन से मिले। चीन से भारत वापिस आने के बाद भी जब स्वामीजी को पुलिस तग करने लगी तो वे संन्यासी के वेश मे पैदल ही कन्याकुमारी और कामेश्वर तक घूमते रहे।

सन् 1920 मे स्वामीजी नागपुर आये। यहां उनकी भेंट अरविन्द से हुई। इन्हीं दिनो हुए कांग्रेस अधिवेशन में स्वामीजी की भेंट अनेक बड़े नेताओं से हुई। सन् 1921 में स्वामीजी ब्यावर आये और वहां किसानों का एक बड़ा सम्मेलन किया। यद्यपि स्वामीजी के पीछे सदा ही पुलिस लगी रहती थी किन्तु इन्होंने अपना कार्य नही छोडा।

काकोरी षड्यन्त्र केस मे पुलिस जब बटुकेश्वरदत्त को पकड़ने आई तो इन्होने पुलिस को चकमा देकर बटुकेश्वरदत्त को बचाने में सहायता की।

स्वामीजी का सुभाष बाबू से भी गहरा सम्बन्ध था। सन् 1939 में स्वामीजी को फिर गिरफ्तार कर लिया और 6 साल बाद 1945 में रिहा कर दिये गये। राजस्थान की रियासतों में स्वामीजी के प्रवेश पर पाबन्दी थी किन्तु फिर भी ये वेश बदलकर रियासतों में जाते और लोगों से सम्पर्क करते थे। सन् 1945 में स्वामीजी ने राजपूताना मध्य भारत ट्रेड यूनियन कांग्रेस का एक विशाल सम्मेलन बुलाया। सन् 1948 मे स्वामीजी को फिर गिरफ्तार कर लिया गया और अजमेर जेल में नजरबन्द रखा गया।

29 दिसम्बर, 1971 को स्वामीजी का निधन हो गया।

शोभाराम—

अलवर निवासी शोभाराम ने लखनऊ से एम.ए., एल.एल.बी. करने के बाद अलवर मे ही वकालत करना शुरू किया लेकिन 1942 में भारत छोड़ो आंदोलन के समय उन्होने रामचन्द्र उपाध्याय और श्री कृपादयाल माथुर को साथ लेकर वकालत छोड दी। इसके बाद उन्होने वकालत नही की।

सन् 1942 में जब महात्मा गांधी ने आमरण अनशन किया था तो शोभारामजी ने भी उनके समर्थन मे 13 दिन तक उपवास किया था। उसके बाद अलवर में जितने भी आंदोलन हुए शोभारामजी ने उनमें सक्रिय भाग लिया।

16 मार्च, 1948 को मत्स्य संघ बनने के बाद इन्हें उस संघ का प्रधानमंत्री मनोनीत किया गया। विशाल राजस्थान संघ मे मत्स्य संघ का विलय होने के बाद जब हीरालाल शास्त्री ने अपना मन्त्रिमण्डल बनाया तो उसमे भी इन्हे मन्त्री के रूप मे सम्मिलित किया गया। उसके बाद ये सांसद, विधायक और बरकतुल्ला खां के मन्त्रीमंडल लतमे भी मंत्री रहे। अंत तक कांग्रेस की नीतियो का समर्थन करते और अनेक पदों पर कार्य करने के बाद सन् 1984 में इनका निधन हो गया।

———

वर्ष 1986-87 पर मु
का दृ

गत पांच वर्षों में एक वर्ष को छोड़कर प्रायः सूखे की स्थिति बनी रही तथा इस वर्ष की स्थिति तो पूर्ववर्ती वर्षों से भी ज्यादा विषम है। किन्तु योजनाबद्ध विकास के कारण राज्य के बुनियादी आर्थिक ढांचे का जो विकास हुआ है तथा कृषि, उद्योग, विद्युत् एवं सिंचाई के क्षेत्र में जो पूंजी निवेश कर आधारभूत सुविधायें उपलब्ध कराई गई हैं, उनके फलस्वरूप अर्थ व्यवस्था में कुल मिलाकर निरन्तर सुधार की प्रवृत्ति बनी रही है। वर्ष 1980–81 में राज्य की आय प्रचलित कीमतों पर 4121 करोड़ रुपये थी, जो वर्ष 1984–85 में बढ़कर 6954 करोड़ रुपये अनुमानित की गई है, तथा प्रति व्यक्ति आय प्रचलित कीमतों पर 1220 रुपये से बढ़कर 1838 रुपये हो गई है। इसी अवधि में खाद्यान्नों का उत्पादन 64 लाख टन से बढ़कर 78 लाख टन हो गया है। वर्ष 1980–81 में विद्युत की प्रस्थापित क्षमता 1201 मेगावाट थी जो वर्ष 1985-86 में बढ़कर 1803 मेगावाट हो गई है। इसी प्रकार अन्य क्षेत्रों में भी आर्थिक विकास एवं प्रगति का क्रम निरन्तर बना हुआ है।

1986–87 का योजना व्यय :

योजना आयोग से विचार-विमर्श करने के पश्चात् राज्य की वर्ष 1986–87 की योजना का आकार 525 करोड़ रुपये रखा गया है जो वर्ष 1985–86 की 430 करोड़ रुपये की योजना से 95 करोड़ रुपये अधिक है। यह बढ़ोतरी 22% से भी अधिक है। गत कई वर्षों की तुलना में यह बढ़ोतरी सबसे अधिक रही है। पिछले तीन वर्षों में (1983–84 से 1985–86 तक) योजना का आकार क्रमशः 416, 430 तथा पुनः 430 करोड़ रुपये रहा है।

वर्ष 1986–87 की वार्षिक योजना में मदवार प्रावधान एवं कुल योजना व्यय में उसका प्रतिशत निम्न प्रकार प्रस्तावित है :–

क्र. सं.	मद	राशि (करोड़ रुपयों में)	प्रतिशत
1	2	3	4
1.	विद्युत्	180·35	34.36
2.	सिंचाई एवं बाढ़ नियन्त्रण	125·00	[illegible]

मद 2	3	4
3. सामाजिक एवं सामुदायिक सेवायें	100·44	19·13
4. ग्रामीण विकास	33·57	6 39
5. कृषि एवं सम्बद्ध कार्यक्रम	27·00	5·14
6. उद्योग एवं खनिज	24·50	4.67
7. परिवहन एवं संचार	22·04	4·20
8. सहकारिता	7·65	1·46
9. अन्य सेवायें	4'45	0·84
योग	525·00	100 00

योजना व्यय के वित्त पोषण के लिये 226·08 करोड़ रुपये की केन्द्रीय सहायता उपलब्ध होगी। शेष 298·92 करोड़ रुपये की राशि मुख्यतः राज्य के संसाधनों से उपलब्ध करनी है।

आठवें वित्त आयोग द्वारा पूंजीगत कार्यों के लिए दी गई सहायता (9 88 करोड़ रुपये) तथा सीमावर्ती एवं सामरिक महत्व की सड़कों पर होने वाले व्यय (5·80 करोड़ रुपये) भी योजना व्यय का ही अंश है। वर्ष 1986–87 में राहत कार्यों के लिए 34 80 करोड़ रुपये की योजना व्यय की स्वीकृति भारत सरकार द्वारा दी गई है। इन सभी को योजना व्यय में शामिल करने पर 1986-87 की वार्षिक योजना का आकार 575 48 करोड़ रुपये हो जाता है।

मुख्य उपलब्धियां एवं भावी कार्यक्रम :

संक्षेप में चालू वित्त वर्ष की उपलब्धियों एवं आगामी वर्ष के कार्यक्रमों का विवरण निम्न प्रकार है --

विद्युत् :

विद्युत् आर्थिक विकास का मूलभूत आधार है। राजस्थान के पिछड़ेपन का एक प्रमुख कारण विद्युत् की मांग और आपूर्ति में लगातार अन्तर बने रहना है। अतः इसकी महत्ता को देखते हुए राज्य की सातवीं पंचवर्षीय योजना में इसके लिए 927 48 करोड़ रुपये का प्रावधान किया गया है जो कुल योजना व्यय का 30·9 प्रतिशत है। वर्ष 1986–87 में 180·35 करोड़ रुपये विद्युत उत्पादन एवं वितरण पर व्यय करना प्रस्तावित है जो वर्ष 1986–87 की कुल वार्षिक योजना का 34·36 प्रतिशत है।

कोटा थर्मल, राणा प्रताप सागर, जवाहर सागर और हाल में ही चालू की गई माही हाइडल प्रोजेक्ट्स को छोड़कर राजस्थान के अपने विद्युत उत्पादन के स्रोत नहीं है। राजस्थान में स्थित अटोमिक पावर स्टेशन अभी ठीक प्रकार कार्य नहीं कर रहे है और विद्युत आपूर्ति के लिये यह और भरोसे का नहीं है। अतः यह आवश्य

आवश्यक है कि राज्य मे विद्युत् उत्पादन पर अधिक से अधिक धनराशि का विनियोजन किया जावे, ताकि आगे आने वाले वर्षो में विद्युत् की कमी नहीं रहे। इसी आवश्यकता को ध्यान में रखते हुए वर्ष 1985-87 मे विद्युत् मद के लिये निर्धारित 180·35 करोड रुपये की राशि मे से विद्युत् उत्पादन के लिए माही जल विद्युत् परियोजना पर 29·08 करोड रुपये, कोटा तापीय विद्युत् घर पर 85·17 करोड़ रुपये, अनूपगढ़ पन बिजली एवं अन्य लघु बिजली योजनाओं पर 5·03 करोड रुपये पलाना लिगनाइट पर एक करोड रुपयेतथा रामगढ़ (जैसलमेर) मे गैस आधारित तापीय विद्युत गृह परियोजना पर 25 लाख रुपये व्यय किया जाना प्रस्तावित है।

वर्ष 1985–86 में माही पन-विद्युत् परियोजना की प्रथम चरण की 25-25 मेगावाट की दो इकाइयों ने फरवरी, 1986 से बिजली उत्पादन करना प्रारम्भ कर दिया है। इस प्रकार राजस्थान में विद्युत उत्पादन की अधिष्ठापित क्षमता 1753 मेगावाट से बढ़कर अब 1803 मेगावाट हो गई है। इस वर्ष विद्युत् उपलब्धि गत वर्ष की तुलना में 10 प्रतिशत अधिक रही है तथा जनवरी, 1986 तक 7209 कुओं का विद्युतीकरण किया जा चुका है। वर्ष 1986-87 मे 1000 गांवों का विद्युतीकरण एवं 10,000 कुओं को बिजली देने का लक्ष्य रखा गया है।

कोटा के पास अन्ता मे 425 मेगावाट का गैस आधारित तापीय विद्युत घर की स्थापना केन्द्रीय क्षेत्र में प्रस्तावित है। आशा है इससे उत्पादित समस्त बिजली राजस्थान को ही उपलब्ध हो सकेगी।

पलाना लिगनाइट योजना को सातवीं पंचवर्षीय योजना में सम्मिलित कर लिया गया है। इस परियोजना हेतु कई देशों से दीर्घकालीन वित्तीय सहायता प्राप्त करने के लिए बातचीत चल रही है।

सिंचाई सुविधायें :

आर्थिक विकास में दूसरी मूलभूत आवश्यकता सिंचाई साधनों के विकास एवं विस्तार की है। इस मद मे सातवीं पंचवर्षीय योजना मे 681 07 करोड रुपये का प्रावधान किया गया है जो कुल योजना व्यय का 22·7 प्रतिशत है। वर्ष 1986-87 मे 125 करोड रुपये का प्रावधान प्रस्तावित है जो वर्ष की कुल योजना का 23·81 प्रतिशत है। इससे राज्य में 64,500 हक्टेयर अतिरिक्त भूमि में सिंचाई क्षमता सृजित हो सकेगी।

कृषि :

इस वर्ष सूखे के कारण, खरीफ में होने वाली अधिकांश फसलें नष्ट हो गई हैं, किन्तु गत महीनों में कुछ वर्षा होने के कारण रबी फसल अपेक्षाकृत बेहतर होने की आशा है।

राजस्थान तिलहन उत्पादन में अब प्रमुख राज्यों में से एक हो गया है। पहले सरसों कुछ ही जिलों—अलवर, भरतपुर, जयपुर तथा श्रीगंगानगर में पैदा होती थी लेकिन अब कृषि विस्तार कार्यक्रमों के फलस्वरूप जालोर, सिरोही, उदयपुर, चित्तौड़गढ़, कोटा, बूंदी जिलों में वृद्धि होने के कारण, राजस्थान राज्य सहकारी क्रय विक्रय संघ ने 65 हजार मैट्रिक टन सरसों की समर्थित मूल्य पर खरीददारी की थी।

वर्ष 1986–87 में कृषि एवं सम्बद्ध कार्यक्रमों पर 27 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रावधान प्रस्तावित है। ऐसी आशा है कि आगामी वर्ष में 180 लाख हैक्टयर क्षेत्र में बुवाई हो सकेगी। फलस्वरूप खाद्यान्नों का उत्पादन लगभग 94 लाख टन, तिलहन का 13 लाख टन, गन्ने का 18·50 लाख टन एवं कपास की 6 20 लाख गाठें होने का अनुमान है। चालू रबी के लिए 1 लाख 50 हजार मैट्रिक टन खाद का उपयोग अनुमानित है।

भारत सरकार द्वारा प्रसारित फसल बीमा योजना को राज्य सरकार ने रबी फसल, 1985–86 में लागू किया है। यह योजना घोषित क्षेत्रों में गेहूं, चना व सरसों पर लागू है। लघु एवं सीमान्त कृषकों द्वारा बीमा प्रीमियम आधी दर पर देय है, शेष राशि राज्य सरकार व केन्द्र सरकार बराबर हिस्से में अनुदान के रूप में देगी।

कृषि विपणन :

वर्तमान में राज्य में 136 नियन्त्रित मण्डी समितियां कार्य कर रही हैं। इस वर्ष प्रशासन में चुस्ती लाने एवं राजस्व प्राप्ति में हानि को रोकने के लिए काफी प्रभावी कदम उठाये गए है जिसके फलस्वरूप कृषि विपणन बोर्ड की आय 15·82 करोड़ से बढ़कर 18 करोड़ रुपये हो जाने की आशा है। विभिन्न मण्डियों द्वारा इस वर्ष 400 किलो मीटर लम्बी सड़कें बनाई जा चुकी है तथा लगभग 200 किलो मीटर लम्बी सड़कों का निर्माण कार्य चल रहा है।

पशुपालन एवं डेयरी :

राजस्थान में पशुपालन एवं डेयरी, कृषि व्यवसाय का पूरक मात्र ही नहीं वरन् भौगोलिक परिस्थिति के कारण जनता के एक बहुत बड़े भाग के जीवन-यापन का भी प्रमुख साधन है। राज्य में राजस्थान कोआपरेटिव डेयरी फेडरेशन द्वारा एक महत्वाकांक्षी डेयरी विकास कार्यक्रम सहकारिता के आधार पर क्रियान्वित किया जा रहा है। फेडरेशन द्वारा इन दिनों 8.25 लाख लीटर दूध प्रति दिन संकलित किया जा रहा है जिसमें से 3.20 लाख लीटर प्रतिदिन देहली भेजा जाता है तथा लगभग एक लाख लीटर प्रतिदिन शहरों की माग की आपूर्ति के काम में

माना है। शेष दुग्ध से विभिन्न दुग्ध पदार्थ, यथा–घी, पनीर, सरस पेय, सुगन्धित दूध, छाछ लस्सी आदि तैयार किये जाते है। डेयरी फेडरेशन में घाटा होने के बावजूद हमने दुग्ध उत्पादकों को दूध का उचित मूल्य दिलाने के लिये दुग्ध की क्रय दरों में अभी 10 पैसे प्रति लीटर की वृद्धि की है। आज राजस्थान में दुग्ध उत्पादकों को दी जाने वाली दूध की दरें सम्पूर्ण उत्तरी भारत में सर्वाधिक है।

वर्ष 1985-86 में राजस्थान सहकारी डेयरी फेडरेशन द्वारा बन्द पड़ी हुई रानीवाड़ा में स्थित प्राइवेट डेयरी को राष्ट्रीय डेयरी विकास मण्डल के माध्यम से बातचीत करके 2.78 करोड़ रुपये की लागत पर अधिग्रहण किया है तथा यह केन्द्र चालू भी हो गया है।

दुग्ध उत्पादकों को उचित दर पर सन्तुलित पशु आहार उपलब्ध कराने के उद्देश्य से राज्य में 5 पशु आहार संयत्र कार्यरत है। इस वर्ष अब तक 33,400 मैट्रिक टन पशु आहार का वितरण किया जा चुका है। इसके अतिरिक्त 52 चल चिकित्सा इकाईयां एवं 19 आपात चिकित्सा इकाईयां कार्यरत है।

वर्ष 1986-87 मे पशुपालन के विकास पर 4.10 करोड रुपये एवं डेयरी विकास पर 2.20 करोड़ रुपये व्यय करने का प्रस्ताव है। राज्य के सभी पशु चिकित्सालयों मे रोग निदान (diagnosis) की सुविधा प्रदान करने के लिये आवश्यक उपकरण उपलब्ध कराना प्रस्तावित है। इस अवधि में 600 नई दुग्ध सहकारी समितियां गठित करने का कार्यक्रम है। इसके अतिरिक्त 2 नये दुग्ध संयंत्र तथा तीन अवशीतन केन्द्र बनाये जायेंगे। पशु विकास कार्यक्रम के अन्तर्गत 75,000 टन पशु आहार वितरित किया जायेगा।

सहकारिता —:

वर्ष 1986-87 में सहकारी क्षेत्र में विभिन्न कार्यक्रम एवं परियोजनाओं पर 7.65 करोड रुपये व्यय करने का लक्ष्य है। राज्य मे राष्ट्रीय सहकारी विकास निगम की विश्व बैंक द्वारा अनुमोदित योजनाओं के अन्तर्गत कोटा में सोयाबीन प्रोजेक्ट एवं श्रीगंगानगर मे एकीकृत कपास विकास योजना स्वीकृत की गई है। सोयाबीन प्रोजेक्ट राजस्थान राज्य क्रय-विक्रय संघ के माध्यम से क्रियान्वित किया जायेगा तथा इसमें अनुमानित 27.57 करोड रुपये की राशि विनियोजित की जायेगी। एकीकृत कपास विकास की योजना के अन्तर्गत 2 काटन एवं जिनिंग प्रोसेसिंग इकाईयां, एक स्पिनिंग मिल तथा एक तेल मिल स्थापित की जायेगी। इन इकाईयों की स्थापना में 48.45 करोड रुपये की राशि विनियोजित की जायेगी। इसके अतिरिक्त सातवीं पंचवर्षीय योजना काल मे राज्य में सरसों के आधार पर 6 तेल मिलें जालौर, श्रीगंगानगर, झुन्झुनू सवाईमाधोपुर तथा नागौर में लगाने का प्रावधान किया गया है।

विश्व बैंक की सहायता से एक गोदाम निर्माण परियोजना सहकारी क्षेत्र मे भण्डारण क्षमता मे वृद्धि करने के उद्देश्य से प्रारम्भ की गई है। वर्ष 1986-87 मे इस परियोजना के अन्तर्गत 298 गोदामों जिनकी क्षमता 22,750 मैट्रिक टनहोगी, के निर्माण का लक्ष्य रखा गया है।

वर्ष 1986-87 में 125 करोड़ रुपये के अल्पावधि ऋण 12 करोड़ रुपये के मध्यावधि ऋण तथा 25 करोड रुपये के दीर्घावधि ऋण सहकारी क्षेत्र मे वितरण करने का लक्ष्य है।

बीस सूत्री कार्यक्रम :

बीस सूत्री कार्यक्रम की क्रियान्विति मे जनवरी, 1986 तक राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम, आवासीय भू-खण्ड आवंटन, गन्दी बस्ती सुधार कार्यक्रम, वृक्षारोपण, आई. सी. डी. एस. खण्ड तथा उचित मूल्य की दुकानों के वार्षिक लक्ष्य पूरे कर लिये गये है, तथा एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम, ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम, बन्धक श्रमिकों का पुनर्वास, अनुसूचित जनजाति परिवारों को सहायता तथा लघु उद्योगों की स्थापना कार्यक्रम मे वार्षिक लक्ष्यों की 75% से अधिक उपलब्धि की जा चुकी है। हमें पूर्ण आशा है कि हम इस वर्ष भी बीस सूत्री कार्यक्रम मे सभी सूत्रों के लक्ष्यों की प्राप्ति अर्जित कर लेंगे।

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम :

राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम ग्रामीण क्षेत्रों में रोजगार उपलब्ध कराकर वहां के आधारभूत आर्थिक ढाचे को मजबूत करने तथा सामुदायिक परिसम्पत्तियों के निर्माण के उद्देश्य से लागू किया गया है। वर्ष 1985-86 के बजट अनुमानो मे इस कार्यक्रम के लिये 15.5 करोड़ रुपये का प्रावधान रखा गया था जिसमे भारत सरकार का हिस्सा 5.5 करोड़ रुपये था। हमारे प्रयासों से भारत सरकार ने अब तक 5.5 करोड रुपये की राशि अतिरिक्त उपलब्ध कराई है जिससे कुल प्रावधान अब 21 करोड़ रुपये हो गया है। इसके अतिरिक्त केन्द्र सरकार ने 48,000 मैट्रिक टन खाद्यान्न इस योजना के अन्तर्गत आवंटित किया है जिसका मूल्य 7.20 करोड रुपये है। जनवरी, 1986 तक 45 लाख मानव दिवस लक्ष्य के विरुद्ध 105.22 लाख मानव दिवस को रोजगार सृजित किया जा चुका है। राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार कार्यक्रम के अन्तर्गत जनवरी, 1986 के अन्त तक 10,699 निर्माण कार्य स्वीकृत किये गए है, जिनमें से 3195 कार्य पूर्ण हो चुके हैं। इन कार्यों में स्कूल भवन, पंचायत-घर, औषधालय-भवन, पेय-जल कूप, तालाब, सड़कें तथा इसी प्रकार के अन्य कार्य शामिल हैं।

वर्ष 1986-87 के लिये 20.32 करोड़ रुपए का प्रावधान प्रस्तावित है है जिसके द्वारा 81 लाख मानव दिवस सृजित किए जाने का लक्ष्य है। इसके अतिरिक्त भारत सरकार ने 39,200 मैट्रिक टन खाद्यान्न भी आवंटित करने का

प्रावधान रखा है। यह आवंटन मजदूरी का 40 प्रतिशत भाग खाद्यान्न के रूप में देने की भारत सरकार की नीति के अनुरूप है। जैसा माननीय सदस्यों को मालूम है राज्य सरकार मजदूरी का शत प्रतिशत भुगतान खाद्यान्न के रूप में कर रही है ताकि अधिक से अधिक लोगों को कार्य दिया जा सके, इसलिए हम भारत सरकार से एक लाख मैट्रिक टन गेहूं का आवटन करने का अनुरोध करेंगे। हमें पूर्ण आशा है कि यह हमें मिल जायेगा।

ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम :

ग्रामीण भूमिहीन रोजगार गारण्टी कार्यक्रम का मुख्य उद्देश्य रोजगार के अवसरों का इस प्रकार से विस्तार करना है कि प्रत्येक भूमिहीन परिवार के एक सदस्य को वर्ष में कम से कम 100 दिवस के लिए रोजगार मिल सके। वर्ष 1985-86 में केन्द्र सरकार से 9 31 करोड रुपये की स्वीकृति प्राप्त हुई तथा इस वर्ष 43 लाख मानव दिवस रोजगार का लक्ष्य रखा गया है। केन्द्र सरकार से इस वर्ष 48 हजार मैट्रिक टन खाद्यान्न नवम्बर, 1985 में प्राप्त हुआ है तथा अब कार्य के बदले अनाज दिया जा रहा है। इसके अतिरिक्त केन्द्र सरकार ने ग्रामीण क्षेत्रों में अनुसूचित जाति एवं अनुसूचित जन जाति के आवास गृह हेतु भी 1985-86 एवं 1986-87 में 3 57 करोड़ रुपये की स्वीकृति प्रदान की है। वर्ष 1986-87 के विभिन्न कार्यक्रमों के अन्तर्गत 19.65 करोड़ रुपए का प्रावधान प्रस्तावित है। उसके अतिरिक्त करीब 40,000 टन गेहूं भी भारत सरकार उपलब्ध करायेगी।

एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम :

राज्य के ग्रामीण क्षेत्रों में प्रगति का लाभ समाज के गरीब तबके तक पहुंचाने की दृष्टि से एकीकृत ग्रामीण विकास कार्यक्रम का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वर्ष 1986-87 में इस कार्यक्रम के अन्तर्गत 24 88 करोड़ रुपये का प्रावधान प्रस्तावित है जिससे लगभग 82,000 नए परिवार तथा 35,000 पुराने परिवार लाभान्वित होंगे।

वन :

वृक्षारोपण के कार्य में अधिकाधिक जन सहयोग को बढ़ावा देने के उद्देश्य से सातवीं पंचवर्षीय योजना के प्रारंभ से ही राज्य में विश्व बैंक की सहायता से राष्ट्रीय सामाजिक वानिकी परियोजना प्रारम्भ की गई। इस परियोजना के अन्तर्गत सातवीं पंचवर्षीय योजना काल में 35 करोड रुपये व्यय किए जाकर 36,500 हैक्टेयर क्षेत्र में वृक्षारोपण तथा 1200 लाख पौधों का कृषकों को नि शुल्क वितरण किया जाएगा। चालू वित्तीय वर्ष में इस परियोजना के अन्तर्गत 30(हैक्टेयर क्षेत्र में वृक्षारोपण किया गया है तथा 1986 वर्षा ऋतु के लिए 6,360 हैक्टेयर में वृक्षारोपण सम्पादित करने के लिए अग्रिम कार्य किया जा रहा है तथा कृषकों एवं जन साधारण को वितरण करने के लिए 275 लाख पौधे पौधशालाओं में तैयार किए जा रहे हैं।

वर्ष 1986-87 में 11 करोड़ पौधे लगाने का लक्ष्य है तथा 250 नई पौधशालाएं स्थापित की जायेगी। वर्ष 1986-87 के लिए 8.51 करोड़ रुपए का योजना व्यय प्रस्तावित है।

संस्थागत वित्तीय साधनों से वृक्षारोपण करने की दृष्टि से वन विकास निगम की स्थापना की गई है। राज्य में बंजर भूमि के विकास हेतु 42 करोड़ रुपए की योजना बनाकर केन्द्रीय सरकार को भेजी गई है जिसके अधीन दो वर्षों में दो लाख हैक्टेयर क्षेत्र में वृक्षारोपण किए जाने का प्रस्ताव है।

शिक्षा :

इस वर्ष शिक्षा के क्षेत्र मे वर्तमान ढाचे को अधिक सुदृढ़ करने का प्रयास जारी रहेगा व इसी के साथ-साथ सभी क्षेत्रों मे शैक्षणिक विकास की आवश्यकता को देखते हुए नए कार्यक्रम भी क्रियान्वित किए जायेंगे। वर्ष 1986-87 मे राज्य मे शिक्षकों की कमी को दूर करने के लिए एक हजार अतिरिक्त तृतीय वेतन शृंखला के अध्यापकों के पद सृजित करना प्रस्तावित है। इसके अतिरिक्त आठवें वित्त आयोग की सिफारिशों के आधार पर 937 और अध्यापकों के पद सृजित किए जाकर वर्तमान 937 एक-अध्यापकीय शालाओं को दो अध्यापकीय शालाओं मे परिवर्तित किया जाना प्रस्तावित है। वर्ष 1984-85 मे क्रमोन्नत 1550 उच्च प्राथमिक विद्यालयों के लिए 2325 अध्यापकों के नए पद भी सृजित करने का प्रस्ताव है। साथ ही 500 नए प्राथमिक विद्यालय खोले जाना व 200 प्राथमिक विद्यालयों को उच्च प्राथमिक स्तर तक क्रमोन्नत एवं 50 उच्च प्राथमिक विद्यालयों को माध्यमिक विद्यालयों मे क्रमोन्नत किया जाना प्रस्तावित है।

वर्ष 1986-87 मे देश के अन्य राज्यों की तरह, राजस्थान में भी 10 + 2 की योजना राज्य के सभी माध्यमिक व उच्च माध्यमिक विद्यालयों की कक्षा 9 से शुरू किए जाने का प्रस्ताव है। इसके अलावा माध्यमिक/उच्च माध्यमिक विद्यालयों में 100 नए विषय/वर्ग भी खोले जाना प्रस्तावित है।

उच्च शिक्षा के क्षेत्र मे राज्य में दो नए कालेज उन दो जिलों में खोले जाने का प्रस्ताव है जहां जन सहयोग से भवन उपलब्ध हो सकेंगे तथा क्षेत्रीय दृष्टि से भी इस सुविधा की आवश्यकता होगी। स्नातकोत्तर कालेजों मे कला/विज्ञान/वाणिज्य वर्गों मे 15 नए विषय/वर्ग खोले जाना प्रस्तावित है।

चिकित्सा एवं स्वास्थ्य :

लोक कल्याण में चिकित्सा एवं स्वास्थ्य का बड़ा महत्व है। वर्ष 1985-86 में 10 ग्रामीण डिस्पेंसरियों को प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों मे परिवर्तित करने के प्रावधान के स्थान पर 50 डिस्पेंसरियों को परिवर्तित किया गया एवं 500 नये उप केन्द्र खोले गये। नर्सों एवं कम्पाउन्डरों की कमी को दूर करने के लिये 9 ए. एन. एम. प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये। अब प्रत्येक जिले मे इस प्रकार का एक प्रशिक्षण केन्द्र हो गया है। एक लाख से अधिक आबादी वाले नगरों

मे कच्ची बस्तियों एवं स्लम्स में मातृ एवं शिशु कल्याण की सेवायें प्रारम्भ की गई हैं। कुछ चुने हुये स्थानों पर शतप्रतिशत बच्चों एवं गर्भवती महिलाओं को रोग निरोधक टीके लगाने का विशेष अभियान नवम्बर, 1985 से प्रारंभ किया गया है।

राज्य के विभिन्न मेडिकल कालेजो में अतिरिक्त सुविधायें उपलब्ध कराई गई हैं। जयपुर में प्लास्टिक सर्जरी, न्यूरो सर्जरी में पोस्ट डॉक्टोरल एम.सी.एच. का शिक्षण प्रारम्भ कर दिया गया है। न्यूरोलोजी, कार्डियोलोजी व नेफरोलोजी मे विशिष्टतायें प्रारम्भ कर दी गई है। जोधपुर में हड्डियों की चिकित्सा क्षेत्र में 50 नई शय्याओं की वृद्धि की गई है एव स्पाइनल सर्जरी की सुविधा भी प्रदान कर दी गई है। अजमेर, बीकानेर मेडिकल कॉलेजों मे डॉयलेसिस यूनिट की स्थापना हो गई है। उदयपुर मे कैंसर इलाज हेतु कोबाल्ट यूनिट की स्थापना का कार्य चालू कर दिया गया है।

राज्य मे चार सेटेलाइट हास्पिटल (जोधपुर में एक, उदयपुर में एक व जयपुर मे दो) वर्ष 1984-85 में स्वीकृत किये गये थे, जो इस वर्ष पूरी तौर से चालू कर दिये गये हैं। इन अस्पतालों में पचास शय्याओं का प्रावधान है एव सभी प्रकार के विशेषज्ञों की नियुक्ति की गई है।

वर्ष 1986-87 मे चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवाओं पर 18,38 करोड़ रुपये व्यय प्रस्तावित है। इसके अन्तर्गत 50 ग्रामीण डिस्पेंसरियों को प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों मे परिवर्तित करने एवं 50 नये प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र खोलने प्रस्तावित हैं। 10 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों को क्रमोन्नत कर 30 रोगी शय्याओं वाले सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र एव 700 नये उप केन्द्र खोलने प्रस्तावित हैं।

समस्त प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्रों पर आपरेशन थियेटर्स की विभिन्न चरणों में व्यवस्था करना प्रस्तावित है जिससे गाव के लोगों को आपरेशन की स्थानीय सुविधा मिल सके।

चार बहुउद्देश्यीय कार्यकर्ता प्रशिक्षण केन्द्र प्रस्तावित हैं जिसके लिए भारत सरकार से वित्तीय सहायता प्राप्त करने के प्रयास किये जा रहे है। जयपुर मेडिकल कालेज में फोरेन्सिक मेडिसन, बच्चों के स्वास्थ्य एव चिकित्सा प्रशासन मे डिप्लोमा कोर्स प्रारम्भ करने का प्रस्ताव है।

जयपुर मेडिकल कालेज मे गुर्दे के ट्रान्सप्लान्ट के लिए नेफरोलोजी का एक नया वार्ड, आग से जले रोगियों के उपचार हेतु एक विशेष बर्न यूनिट, दुर्घटना ग्रस्त रोगियों के शीघ्र उपचार हेतु कोमा यूनिट की स्थापना भी प्रस्तावित है। बेहतर चिकित्सा सुविधायें उपलब्ध कराने के लिए नए उपकरण खरीदे जायेंगे।

वर्ष 1986-87 मे बांगड़ रिसर्च सेन्टर को पूर्ण कराकर जनता के लिए उपलब्ध करने का प्रस्ताव है। साथ ही मेयो अस्पताल बिल्डिंग मे एक नया

जनाना अस्पताल प्रारम्भ कराना भी प्रस्तावित है जिससे वर्तमान जनाना अस्पताल पर भार कम होगा एवं जयपुर के बढ़ते हुए क्षेत्र को देखते हुए महिलाओं के लिए उनके निवास के नजदीक चिकित्सा सुविधा उपलब्ध हो सकेगी।

राजस्थान का इस वर्ष महिला एवं पुरुष नसबन्दी के 2 लाख 85 हजार आपरेशन करवाने का लक्ष्य था जिसके विरुद्ध अब तक 2 लाख 30 हजार आपरेशन किये जा चुके हैं। प्रतिदिन करीब दो हजार आपरेशन हो रहे हैं, इस हिसाब से 31 मार्च, 1986 तक शत-प्रतिशत लक्ष्य प्राप्त करने की पूरी सम्भावना है। झुंझुनूं, श्रीगंगानगर, जालोर, उदयपुर, डूंगरपुर एवं बांसवाड़ा लक्ष्यों की प्राप्ति में शत-प्रतिशत से आगे निकल चुके हैं। राजस्थान परिवार नियोजन के कार्यक्रम में 5वें स्थान पर आया है। पूर्व में कभी 12वें स्थान से ऊपर नहीं आया था।

अनुसूचित जाति, चयनित परिवार, शहरों की कच्ची बस्तियों/स्लम्स में रहने वाले सभी लोगों को परिवार कल्याण अपनाने पर 150 रुपये की अतिरिक्त प्रोत्साहन राशि देना प्रारंभ कर दिया है। दो बच्चों वाले परिवारों को एक ग्रीन कार्ड दिया जा रहा है जिसके आधार पर सुविधाओं में प्राथमिकता दी जायेगी।

वर्ष 1986-87 में आयुर्वेद विभाग के अन्तर्गत 30 नवीन "ब" श्रेणी औषधालय खोले जाना प्रस्तावित है।

पेय जल :

सातवीं पंचवर्षीय योजना के अन्त तक राज्य के समस्त गांवों में पेय जल की समुचित व्यवस्था करना हमारा लक्ष्य है। राज्य के कुल 34,968 गांवों में से जनवरी, 1986 तक 23,752 गांवों को पेय जल उपलब्ध कराया जा चुका है। वर्ष 1985-86 में 1600 गांवों को पेय जल से लाभान्वित करने का लक्ष्य रखा गया है जिसमें से जनवरी, 1986 तक 1489 गांवों को लाभान्वित कर दिया गया है। कई वर्षों से बन्द पड़ी हुई करीब 1250 परम्परागत स्रोत योजनाओं को भी पुनः चालू करने के लिए राज्य सरकार ने महत्वपूर्ण निर्णय इसी वर्ष लिया है। ब्यावर की जल प्रदाय योजना के पुनर्गठन के लिये अप्रेल, 1985 में 3.42 करोड़ रुपये की एक योजना स्वीकृत की गई है। इस योजना का कार्य प्रगति पर है।

अकाल की स्थिति से निपटने के लिये इस वर्ष 35.35 करोड़ रुपये का अतिरिक्त आवंटन किया है। इसके अन्तर्गत रिग्स भी खरीदी जायेंगी। इन रिग्स के माध्यम से चट्टान व मिट्टी वाले क्षेत्रों में काफी गहराई तक पानी उपलब्ध हो सकेगा। अकाल की स्थिति को ध्यान में रखते हुए राज्य सरकार ने करीब 3280 गांवों में जल समस्या के निराकरण हेतु पृथक् से स्वीकृति प्रदान की है जिसके अन्तर्गत करीब 7000 हैण्ड पम्प और 440 नल कूप तैयार करवाये जायेंगे। इस

वर्ग खराब हैण्ड पम्पों को ठीक करने के लिये दो बार मई, 1985 एवं दिसम्बर, 1985 में अभियान चलाया गया। दिसम्बर, 1985 में 11,769 हैण्ड पम्प ठीक किये गये।

राज्य सरकार द्वारा विद्युत् विभाग को यह निर्देश दिये गये हैं कि जन स्वास्थ्य अभियांत्रिक विभाग के जो जल स्रोत आदि तैयार हो गये हैं और विद्युत् अभाव में उनका उपयोग नहीं हो पा रहा है उनको उच्च प्राथमिकता के आधार पर विद्युत् कनेक्शन दे दिये जायें ताकि आने वाली गर्मी तक शत प्रतिशत जल स्रोत चालू किये जा सकें और जनता को अधिक से अधिक राहत मिल सके। एक दिसम्बर, 1985 तक करीब 489 कनेक्शन विद्युत् विभाग द्वारा दिये जा चुके हैं।

वर्ष 1986-87 में पेय जल योजना पर जल योजना पर 84.05 करोड़ रुपये का व्यय प्रस्तावित है। इसमें केन्द्रीय सरकार से ग्रामीण जल प्रदाय कार्यक्रम के लिये मिलने वाली राशि भी सम्मिलित है। शहरी जल प्रदाय योजना पर 13.45 करोड़ रुपये तथा ग्रामीण जल प्रदाय पर 70.60 करोड़ रुपये व्यय होने का अनुमान है। ग्रामीण एवं नगरीय जल प्रदाय योजनाओं पर होने वाले व्यय में से लगभग 7.41 करोड़ रुपये अनुसूचित जाति तथा जन जाति के एवं आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग के लोगों को पेय जल सुविधा उपलब्ध कराने पर व्यय किया जायेगा।

उद्योग :

आधारभूत सुविधाओं के अभाव में हमारा राज्य औद्योगिक विकास के क्षेत्र में कुछ पिछड़ा हुआ है। इस पिछड़ेपन को दूर करने के लिए हमने कई कदम उठाए हैं। औद्योगिक विकास एवं विनियोजन निगम द्वारा 171 औद्योगिक क्षेत्रों का विकास किया गया है एवं 190 नये उद्योगों को वित्तीय मदद दी गई है जिसके फलस्वरूप राज्य में 600 करोड़ रुपये का विनियोजन हुआ है। वर्ष 1986-87 में राजस्थान वित्त निगम द्वारा 75 करोड़ रुपये के ऋण स्वीकृत करने का लक्ष्य रखा गया है। राजस्थान हाथ कर्घा विकास निगम द्वारा बुनकरों की सुविधा के लिए एक प्रोसेसिंग हाउस स्थापित करने का विचार है।

भारत सरकार ने इलेक्ट्रोनिक्स के सम्बन्ध में अभी कुछ दिनों पहले नई नीति की घोषणा की थी। इलेक्ट्रोनिक्स के क्षेत्र में रोजगार की बाहुल्यता एवं बिजली की कम आवश्यकता को देखते हुए, राज्य सरकार इस ने किस्म के उद्योगों के विकास के लिए कई नई सुविधायें प्रदान की है। सातवीं पंचवर्षीय योजना के दौरान लगाई जाने वाली नई इलेक्ट्रोनिक्स इकाईयों को उत्पादन की तिथि से 5 वर्ष तक की अवधि के लिए बिक्री कर से मुक्त किया गया है। यह

छूट उन वर्तमान इकाईयों के लिये भी उपलब्ध होगी जो अपनी अनमोदित क्षमता से 50 प्रतिशत या उससे अधिक का विस्तार कर सकेंगे। वर्तमान इकाईयो के लिये बिक्री कर की दर 8 प्रतिशत से घटाकर 4 प्रतिशत कर दी गई है। इन सुविधाओं की घोषणा के पश्चात् रीको द्वारा हाल ही मे दिल्ली मे एक कैम्प का आयोजन किया गया, जिसमें 190 उद्यमियो ने भाग लिया और उससे यह आशा बनी है कि इस क्षेत्र मे लगभग 170 करोड़ रुपयों का पूंजी निवेश निकट भविष्य में हो सकेगा। हमे पूर्ण विश्वास है कि चालू पंचवर्षीय योजना अवधि मे राज्य में इलेक्ट्रोनिक्स के क्षेत्र मे बडे पैमाने पर उद्योग लगेंगे।

खनिज :

राज्य में प्रचुर मात्रा में खनिज सम्पदा उपलब्ध है। उपलब्ध खनिज सम्पदा का वैज्ञानिक पद्धति से खनन द्वारा ही राज्य को अधिकतम लाभ हो सकता है। खनिज विभाग मे सर्वेक्षण एवं पूर्वेक्षण का अत्यधिक महत्व होता है और इस समय राज्य मे ऐसी 60 परियोजनाओं पर कार्य चल रहा है। उदयपुर जिले के अंजनी क्षेत्र मे ताम्बा अयस्क एवं पाली जिले मे शीलाइट खनिज (टंगस्टन) के भण्डार मिले है। जैसलमेर, उदयपुर, बांसवाड़ा, चित्तौड़गढ़, भीलवाडा, सिरोही व पाली जिले के विभिन्न क्षेत्रो मे पाये जाने वाले चूना-पत्थर के भण्डारो की सकल मात्रा एवं श्रेणी निश्चित करने के लिये प्रोसपेक्टिंग कार्य चल रहा है, जिसके सिद्ध होने पर राज्य मे और सीमेन्ट प्लान्ट लग सकेंगे। इसी प्रकार बीकानेर के गुढा क्षेत्र मे लिग्नाइट के लगभग 1 करोड 50 लाख टन के भण्डार अनुमानित किये गये हैं।

वैज्ञानिक पद्धति मे टंगस्टन खनिज के दोहन हेतु, भारत सरकार के परमाणु ऊर्जा विभाग के सहयोग से एक लघु टंगस्टन परिष्करण संयंत्र लगाया गया है जो भारत मे इस प्रकार का पहला संयंत्र है। टंगस्टन एक बहुमूल्य खनिज है जो रक्षा मंत्रालय द्वारा बनाये जा रहे विविध आयुधों में बहुत उपयोगी है। अतः इसकी परम्परागत उत्पादन शैली मे तकनीकी परिवर्तन लाकर उत्पादन क्षमता मे वृद्धि करने का प्रयास किया जायेगा।

राक फास्फेट राज्य की आय का एक महत्वपूर्ण साधन है। यहां पाये जाने वाले निम्न श्रेणी के राक फास्फेट के परिशोधन हेतु एक बड़ा प्लान्ट लगाने के लिए विदेशी विशेषज्ञों से संभाव्यता रिपोर्ट प्राप्त हो गई है जो विचाराधीन है।

वर्ष 1986-87 में खनिज विकास के लिये 4.85 करोड रुपये का प्रावधान किया गया है।

परिवहन :

वाहन स्वामियों तथा समाज के विभिन्न वर्गों को परिवहन क्षेत्र में आने वाली कठिनाइयों के यथासमय निराकरण के लिये क्षेत्रीय स्तर पर परामर्शदात्री समिति और राज्य स्तर पर एक विकास परिषद् गठन करने का विचार है। मोटर वाहन अधिनियम की विभिन्न धाराओं के तहत जिन अपराधों का शमन (कम्पाउन्ड) किया जाना अधिकृत है, उनकी शमन दरो को अधिक व्यवहारिक बनाते हुये, उन्हें कम करने के भी आदेश राज्य सरकार ने दे दिये है। वाहन संचालन मे अनावश्यक रुकावटें कम करने के लिये चैकिंग प्रणाली को अधिक युक्तिसंगत बनाया जा रहा है।

परिवहन विभाग को अधिक प्रभावी एवं संवेदनशील बनाने तथा प्रशासनिक कार्य कुशलता बढाने के लिये मुख्यालय से लेकर जिला स्तरीय कार्यालयो तक का पुनर्गठन किया जाना प्रस्तावित है। जयपुर नगर के प्रादेशिक परिवहन अधिकारी के कार्यालय मे अगले वित्तीय वर्ष से काउन्टर प्रणाली प्रारभ की जा रही हैं। अपील सुनने के अधिकार प्रादेशिक स्तर के अधिकारियों को देने के साथ, अन्य कानूनी एव प्रशासनिक अधिकारो के विकेन्द्रीकरण पर भी राज्य सरकार विचार कर रही है।

राज्य मे आवागमन की यथोचित सुविधा उपलब्ध कराने के लिये बसो की सख्या बढाने हेतु राज्य सरकार की नीति को अधिक उदार बनाया जा रहा है।

भारत सरकार द्वारा राष्ट्रीय परमिट योजना के अन्तर्गत दिये जाने वाले परमिटो की सख्या पर प्रतिबन्ध हटाये जाने के फलस्वरूप राज्य सरकार इनकी वितरण की प्रणाली को अधिक सरल बना रही है। इसमे प्रार्थना पत्र सम्बन्धित सभी औपचारिकतायें क्षेत्रीय कार्यालयो मे पूरी की जा सकेंगी।

जयपुर शहर की यातायात समस्या सरकार के लिये सदैव चिन्ता का विषय रही है। कुछ वर्ष पहले शहर मे मिनी बसो के माध्यम से यातायात व्यवस्था संचालित करने का प्रयास किया गया था, परन्तु इनके सचालन मे कुछ व्यवहारिक कठिनाइया आ रही थी और यह संचालन आर्थिक दृष्टि से इनके लिये लाभदायक सिद्ध नहीं हो रहा था। अतः सरकार ने किसी अन्य वैकल्पिक व्यवस्था होने तक इन लोगों को आर्थिक दृष्टि से अधिक सतुलित एवं सक्षम बनाने के लिये कुछ निर्णय लिये हैं, जिनके अनुसार जहां एक ओर सरकार बैंकों तथा अन्य वित्तीय संस्थानो से प्राप्त किये हुये ऋण में दण्डनीय ब्याज की माफी, तथा ब्याज की दर में कमी के लिये भारत सरकार व रिजर्व बैंक से बातचीत करेगी वहीं दूसरी ओर इन्हें विशेष पथ कर में छूट दी गई है। अगले वित्तीय वर्ष से जयपुर शहर में

चलने वाली मिनी बसो मे 360 रुपये प्रति सीट प्रति वर्ष के स्थान पर 100 रुपये प्रति सीट प्रति वर्ष लिया जाएगा। इससे 21 सीट वाले वाहनो को 5,200 रुपए प्रतिवर्ष कर की राहत मिली है। इनके पुराने बकाया के बारे मे भी इनकी आर्थिक दशा को देखते हुये उपयुक्त निर्णय लिये गये है।

आवास :

राज्य मे विभिन्न नगरो मे आवास की समस्या जटिल होती जा रही है। माननीय सदस्यों को भी जयपुर मे आवास की बहुत कठिनाई रहती है। अतः उनके परिवारो एव उनके क्षेत्रों से आने वाले व्यक्तियो को ठहरने की उचित सुविधा हो, इस उद्देश्य से माननीय सदस्यों के आवास हेतु 150 मकान बनाने की योजना है। इनमे से एक करोड रुपये की लागत से 50 मकान वर्ष 1986–87 मे बनाना प्रस्तावित है।

जिला मुख्यालय, उप-खण्ड, तहसील एवं पंचायत समिति मुख्यालयों पर राजकीय आवास की कमी को ध्यान मे रखते हुये योजनाबद्ध रूप मे इन स्थानों पर सातवी पचवर्षीय योजना मे 13.32 करोड रुपये की लागत मे 1794 मकान बनाये जायेंगे। इसके लिये वित्तीय सस्थाओ से भी ऋण प्राप्त किया जायेगा। वर्ष 1986–87 मे 456 मकान बनवाना प्रस्तावित है जिनकी लागत 3.76 करोड़ रुपये होगी।

नगरीय आवासीय समस्या को दो तरीको से हल करने की राज्य सरकार की नीति रही है। प्रथम तो यह है कि आवासन मण्डल द्वारा विभिन्न स्थानो पर अधिक से अधिक मकान बनवाकर जनता को उपलब्ध कराया जावे तथा दूसरी यह कि जयपुर विकास प्राधिकरण, नगर विकास न्यासों एवं नगरपालिकाओं द्वारा शहरो मे अधिक से अधिक भूखण्ड लोगों को मकान बनाने के लिये उपलब्ध करावें तथा यथा संभव आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग के लोगों के लिए आवास निर्माण भी करावें।

आवासन मण्डल द्वारा वर्ष 1985–86 मे 11,785 मकान निर्मित किये गये है। आवासन मण्डल ने जयपुर की मान सरोवर आवासीय परियोजना के निर्माण से सम्बन्धित श्रमिको को कार्य स्थल पर ही बसाने की योजना प्रारम्भ की है। वित्तीय वर्ष 1986-87 मे आवासन मण्डल द्वारा 11,500 आवासो के निर्माण का लक्ष्य है जिसमे 5,000 मकान आर्थिक दृष्टि से कमजोर आय वर्ग के लिये निर्माण किये जायेंगे।"

आवासों के निर्माण का कार्य नगर विकास न्यासो के अतिरिक्त चयनित नगरपालिकाओं ने भी आर्थिक दृष्टि से कमजोर वर्ग के लिए प्रारम्भ किया है। इस वर्ष पर्यावरण सुधार कार्यक्रम के अन्तर्गत 15 नगरपालिकाओं को उनके क्षेत्र की कच्ची बस्तियों के सुधार के लिये 55 लाख रुपये आवंटित किये गये हैं।

लघु एवं मध्यम कस्बों का विकास :

इस योजना के अन्तर्गत राज्य के 11 कस्बे चयनित किये गये हैं। भारत सरकार द्वारा चालू वर्ष में राज्य के तीन कस्बों—जालौर, सिरोही एवं माउन्ट आबू के विकास के लिए 60 लाख रुपये की सहायता दी गई है। वर्ष 1986-87 में इस योजना के अन्तर्गत केन्द्र सरकार से 100 लाख रुपये का ऋण प्राप्त होने की आशा है।

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र विकास :

राष्ट्रीय राजधानी क्षेत्र विकास परियोजना मे अलवर जिले की 6 तहसीलों को सम्मिलित किया गया है। इस परियोजना के कार्यक्रम के क्रियान्वयन को प्रभावी बनाने हेतु नगर विकास न्यास अलवर के कार्यक्षेत्र को खैरथल व बहरोड़ नगरपालिका क्षेत्र व भिवाड़ी तथा शाहजहापुर पंचायत तक बढा दिया गया है। भिवाड़ी क्षेत्र के विकास के लिए भारत सरकार ने 75 लाख रुपये का ऋण भी स्वीकृत किया है।

समाज कल्याण :

अनुसूचित जाति, जनजाति एव अन्य पिछड़ी जातियों के सामाजिक तथा त्वरित आर्थिक उत्थान के लिए राज्य सरकार द्वारा अनेक योजनाऐं क्रियान्वित की जा रही है। इस वर्ष छात्रों के शैक्षणिक विकास हेतु दी जा रही वित्तीय सहायता मे 25 प्रतिशत की बढोत्तरी अक्टूबर, 1985 से लागू की गई है। इससे राज्य कोष पर 64 लाख रुपये का अतिरिक्त भार पडा है। साथ ही 35 नये छात्रावास खोले गये और इनमे 875 छात्रों के रहने की सुविधा उपलब्ध कराई गई है। बीस सूत्री कार्यक्रम के अन्तर्गत एक लाख बीस हजार अनुसूचित जाति के परिवारों को लाभान्वित कर गरीबी की रेखा से ऊपर उठाने का लक्ष्य निर्धारित किया गया था जिसके अन्तर्गत जनवरी, 1976 के अन्त तक 84,299 परिवारों को लाभान्वित किया जा चुका है जो लक्ष्य का 70 24 प्रतिशत है।

जनजाति विकास नीति का पुनः मूल्याकन किया गया है एवं कई योजनाओं को व्यक्तिपरक बनाया गया है। सिंचाई की क्षमता बढाने के लिए राष्ट्रीय ग्रामीण रोजगार योजना के अन्तर्गत आदिवासी क्षेत्रो मे अनुसूचित जाति एवं जनजाति के काश्तकारो के सिंचाई कुएं गहरे कराने का एक वृहद् एव महत्वाकाक्षी कार्यक्रम प्रारम्भ किया गया है, जो अगले वर्ष भी चालू रहेगा। इस कार्यक्रम के अन्तर्गत लगभग 10 हजार कुएं गहरे कराये जा सकेंगे।

शिक्षा को रोजगार प्रेरक बनाने के लिए जनजाति क्षेत्र के सभी जिलो मे औद्योगिक प्रशिक्षण केन्द्र खोले गये है और पचायत समिति स्तर पर प्रशिक्षण केन्द्र खोले जा रहे हैं।

राजस्थान के दक्षिणवर्ती क्षेत्रों में नारू की बीमारी की रोकथाम के लिए राज्य सरकार ने स्वीडिश अन्तर्राष्ट्रीय विकास अभिकरण (सीडा) एवं यूनिसेफ के सहयोग से 13 करोड़ रुपये की एक महत्वपूर्ण योजना बनाई है जिसकी क्रियान्विति अगले वर्ष में किया जाना प्रस्तावित है। इस योजना के अन्तर्गत 7 करोड़ रुपये की राशि सीडा व यूनिसेफ के माध्यम से प्राप्त होगी तथा शेष राशि राज्य सरकार अपने बजट में से देगी।

जनजाति क्षेत्रों में प्रत्येक पंचायत समिति के 10 गांवों का चयन कर वहां अधिक उत्पादन वाली फसलों के उत्पादन का सघन कार्यक्रम हाथ में लिया जाना प्रस्तावित है।

जनजाति क्षेत्रों में रेशम की खेती करने का प्रयास सफल रहा है। डूंगरपुर एवं बांसवाड़ा जिलों में इस कार्यक्रम का विस्तार किया जाना प्रस्तावित है।

महिला, बच्चे एवं पोषाहार कार्यक्रम :

ग्रामीण महिलाओं, विशेष रूप से पिछड़े वर्ग की महिलाओं को विकास की मूल धारा से जोड़ने हेतु महिला विकास कार्यक्रम योजना राज्य के 7 जिलों-अजमेर, भीलवाड़ा, बांसवाड़ा, जयपुर, जोधपुर, कोटा व उदयपुर में चालू किये जाने का प्रस्ताव है।

वर्ष 1985-86 में 10 बाल विकास परियोजनायें प्रारम्भ की गई थी। 1986-87 में भी 10 नवीन परियोजनायें और खोलने का लक्ष्य है जिससे इन विकास परियोजनाओं की संख्या बढ़कर 65 हो जायेगी। इन योजनाओं की क्रियान्विति के लिए वर्ष 1986–87 में 5.17 करोड़ रुपये का प्रावधान प्रस्तावित है।

राजस्व प्रशासन :

काश्तकारों की समस्याओं के समाधान पर पिछले एक वर्ष से राज्य सरकार विचार कर रही है। किसानों के हित में हम राजस्व प्रशासन के सुदृढ़ीकरण एवं आधुनिकीकरण के लिए सतत् प्रयत्नशील रहे हैं। राजस्व वादों के शीघ्रता से निपटारे के उद्देश्य से वर्ष 1985–86 में 11 नये सहायक जिलाधीश न्यायालय खोले गये हैं तथा एक नया उप खण्ड (शाहबाद जिला कोटा) सृजित किया गया है। 1076 ढाणियों को राजस्व गांव का दर्जा दिया गया है। जहां आवश्यक होगा तथा क्षेत्रफल एवं आबादी के दृष्टिकोण से औचित्यपूर्ण होगा नये राजस्व गांव तथा सहायक जिलाधीश न्यायालय वर्ष 1986–87 में भी खोले जायेंगे।

जिला प्रशासन को अधिक संवेदनशील एवं गतिशील बनाने के लिए प्रशासनिक सुधार किया जा रहा है। ऐसी व्यवस्था की जा रही है कि कुछ प्रकार के प्रकरणों का निस्तारण निश्चित अवधि में ही सकना सुनिश्चित हो जाय। 1986–

87 के प्रथम 6 माह में 13 जिलों में यह प्रयोगात्मक प्रशासनिक सुधार लागू करने का विचार है।

काश्तकारों की कुछ अन्य विशिष्ट समस्याओं का भी मेरे साथियों ने और स्वयं मैंने गहराई से अध्ययन किया है तथा सरकारी और गैर-सरकारी स्तरों पर इन पर विस्तृत विचार-विमर्श किया है। राजस्व मन्त्रीजी ने इनकी तह तक पहुँचने के लिए व्यापक दौरे किये हैं। मैं स्वयं भी कई स्थानों पर गया हूं, और जन-साधारण एवं जन प्रतिनिधियों दोनों ही से विचार विमर्श किया है। काफी मनन एवं चिन्तन के पश्चात् काश्तकारों की कुछ विशिष्ट मुश्किलात हल करने के दृष्टि-कोण से हमने कुछ महत्वपूर्ण निर्णय लिये हैं जिनकी जानकारी मैं सदन को देना चाहता हूं :

(1) काश्तकारों की बकाया वसूल करने के लिये खड़ी फसल के समय पानी की बारी नहीं काटी जाएगी। यदि किसी काश्तकार से बकाया है तो बुवाई के समय ही पानी की बारी काटी जायेगी। इसी प्रकार फसल के समय विद्युत् कनेक्शन भी नहीं काट जायेगा। यदि फसल काटने के पश्चात् भी, बकाया रकम नहीं जमा कराई जाती है तो अगली फसल से पहले ही विद्युत् कनेक्शन काटा दिया जायेगा।

(2) यदि किसी काश्तकार ने राजकीय भूमि, गोचर भूमि आदि पर कुआं खुदवा लिया है तो उसके नियमन की कार्यवाही की जायेगी ताकि वह अपने खेत में पानी दे सके।

(3) राजस्थान कृषि जोतों की अधिकतम सीमा अधिरोपण अधिनियम की धारा 15 में निर्णीत प्रकरणों को खोलने की निर्धारित अवधि नहीं बढ़ायी जायेगी।

(4) राजस्थान काश्तकारी अधिनियम की धारा 15-एएए में खातेदारी हेतु प्रार्थना-पत्र देने की तिथि 30-6-86 तक बढ़ाई जा रही है।

(5) राजस्थान काश्तकारी अधिनियम की धारा 5 (2) में कृषि भूमि की परिभाषा में फार्म फारेस्टरी को जोड़ा जावेगा। जो भूमि कृषि योग्य नहीं है किन्तु उस पर वृक्षारोपण किया जा सकता है और आमदनी का जरिया बनती है उसके आवंटन हेतु नियम बने हुए है। इन नियमों के अन्तर्गत व्यक्तियों, समितियों एवं कम्पनियों इत्यादि को आवंटन किया जा सकता है। इन नियमों में धर्मार्थ, पुण्यार्थ प्रन्यासों को जोड़ा जावेगा। इन नियमों में योजनाबद्ध तरीके से लगाये गये पेड़ों को समय-समय पर काटने की अनुमति देने का प्रावधान भी किया जायेगा।

(6) कृषि जोतों के कृषि कार्यों के लिए विखण्डन (फ्रेगमेन्टेशन) पर लगे प्रतिबन्ध को समाप्त करने का सरकार विचार कर रही है।

(18) यदि किसी कृषक उपभोक्ता ने अपने कुएं पर स्वयं का मीटर लगा रखा है तो उससे मीटर किराया वसूल नहीं किया जाएगा। यदि किसी काश्तकार से यह वसूली कर ली गई है तो आगामी 6 माह में उसे समायोजित कर लिया जाएगा।

(19) मीटर खराब हो जाने की दशा में काश्तकार से पिछले माहों की औसत के आधार पर विद्युत् चार्जेज वसूल नहीं किए जायेंगे बल्कि इस हेतु जिस माह मे मीटर बन्द हुआ है, गत वर्ष के उसी माह के बिलो के चार्जेज के अनुसार ही काश्तकार से वसूली की जाएगी।

(20) यदि किसी काश्तकार ने आगामी नियमित बिल दो महिने तक नहीं चुकाया तो विद्युत् मण्डल उसका कनेक्शन काट देने के लिए स्वतन्त्र होगा।

(21) यदि किसी विद्युत् उपभोक्ता की मृत्यु विद्युत् मण्डल की असावधानी के कारण हो जाती है तो उसका मुआवजा नियमानुसार निर्धारित हो जाने पर विद्युत् मण्डल द्वारा चुकाया जाएगा।

(22) कुओं पर दिए गए विद्युत् कनेक्शन से काश्तकार अपने खेत में कुट्टी की मशीन व थ्रेसर चला सकेंगे। यह छूट उतने ही हार्स पावर की होगी जितनी हार्स पावर की मोटर उसके कुएं पर लगी हुई है।

(23) विद्युत् मण्डल में किसानों एवं अन्य उपभोक्ताओं को प्रतिनिधित्व देने पर विचार किया जा रहा है।

लोक अदालतों की स्थापना :

जन साधारण को शीघ्र ही न्याय उपलब्ध हो सके, इसके लिये लोक अदालतों की परिपाटी प्रारंभ की गई है। राजस्थान मे दिनाक 30 नवम्बर, 1985 से लोक अदालतों का नियमित कार्यक्रम प्रारंभ किया गया है, जिसके अन्तर्गत 11 जिलो मे विभिन्न स्थानों पर लोक अदालतों ने अब तक 35139 मुकदमों का निस्तारण किया है। इनमें 1419 दीवानी, 5773 फौजदारी, 8873 राजस्व, 8031 मोटर गाडी अधिनियम, 2823 नगरपालिका अधिनियम तथा शेष अन्य किस्म के मामले हैं। सड़क दुर्घटना के मामलो में 102.52 लाख रुपये की राशि के अवार्ड जारी किये गए है तथा अधिकांश मे मौके पर ही क्लेम्स का भुगतान किया गया है।

फेमिली कोर्ट की स्थापना :

राज्य सरकार ने जयपुर में पारिवारिक मामलो को शीघ्र निपटाने के लिये फेमिली कोर्ट एक्ट, 1985 के अन्तर्गत एक फेमिली कोर्ट की स्थापना की है, जिसने दिनाक 1 जनवरी, 1986 से कार्य प्रारंभ कर दिया है। इस न्यायालय में लगभग 600 मुकदमे विचारार्थ आ चुके है जिनमे से 80 मामलो का फैसला भी हो

चुका है ।

उक्त अधिनियम के अन्तर्गत फैमिली कोर्ट की स्थापना करने में राजस्थान राज्य अग्रणी है ।

अल्प वचत :

अल्प वचत में संग्रहित राशि का दो तिहाई भाग ऋण के रूप में राज्य सरकार को प्राप्त होता है । वर्ष 1986-86 में अल्प बचत के अन्तर्गत 168 करोड़ रुपये की राशि जमा करने का लक्ष्य है । इससे राज्य सरकार को 112 करोड़ रुपए अल्प वचत में संग्रहण के पेटे भारत सरकार से उपलब्ध होंगे ।

भूतपूर्व सैनिकों को सहायता :

राज्य सरकार का भूतपूर्व सैनिकों एवं उनके परिवार के सदस्यों के प्रति सदैव ही उदार एवं सहानुभूतिपूर्ण रुख रहा है । जमीन के आवंटन में उन्हें प्राथमिकता दी जाती रही है । वर्ष 1985-86 में 1177 भूतपूर्व सैनिकों को इन्दिरा गांधी नहर परियोजना क्षेत्र में भूमि का आवंटन किया गया है । परम वीर चक्र तथा अशोक चक्र प्राप्तकर्त्ता सैनिकों को 10,000 रुपये के स्थान पर 15,000 रु० महावीर चक्र एवं कीर्ति चक्र प्राप्तकर्ता सैनिक को 5,000 रुपये के स्थान पर 7,500 रुपये तथा वीर चक्र व शौर्य चक्र प्राप्त करने वाले सैनिक को 2,000 रुपये के स्थान पर 2,500 रुपये की नकद राशि इनाम स्वरूप देना प्रस्तावित है ।

कर्मचारी कल्याण :

महँगाई भत्ते की तीन किश्तें

राज्य सरकार के कर्मचारियों को महगाई भत्ते की तीन अतिरिक्त किश्तें— पहली एक अगस्त, 1985 से, दूसरी एक नवम्बर 1985 से एवं तीसरी एक जनवरी, 1986 से दिये जाने का निर्णय लिया गया है । इस राशि का नकद भुगतान मार्च, 1986 के वेतन के साथ किया जायेगा । 28 फरवरी, 1986 तक की बकाया राशि कर्मचारियों के भविष्य निधि खातों में जमा की जायेगी । राज्य सरकार के सेवा निवृत्त पेंशनरों को भी पेंशन में बढ़ोत्तरी की तीन अतिरिक्त किश्तें देने का निर्णय लिया गया है । इससे राज्य सरकार पर प्रति वर्ष 27 करोड़ 60 लाख रुपये का अतिरिक्त वित्तीय भार पड़ेगा ।

सेवा निवृत्त होने वाले कर्मचारियों को सुविधायें

भारत सरकार द्वारा सेवा निवृत्त होने वाले अपने कर्मचारियों को हाल ही में जो कुछ सुविधायें दी गई हैं उन्हें राज्य सरकार के कर्मचारियों पर भी लागू करने का प्रस्ताव है जिसके अन्तर्गत पेंशन एवं ग्रेच्युटी की गणना में 568 मूल्य सूचकांक तक मिलने वाला महंगाई भत्ता सम्मिलित होगा । ग्रेच्युटी की अधिकतम सीमा 36,000 रुपये से बढ़कर 50,000 रुपये हो जायेगी । इस पर प्रति वर्ष

लगभग 3.24 करोड़ रुपये अतिरिक्त व्यय होंगे। पेंशन की राशि बढ़ने से अनुग्रह-पेंशन की राशि में 2.72 करोड़ रुपये का प्रतिवर्ष अधिक व्यय होगा।

सामान्य भविष्य निधि

राज्य कर्मचारियों को उनकी बचत पर अधिक लाभ देने के लिये सामान्य भविष्य निधि का वर्तमान ब्याज दर 10 5 प्रतिशत को बढ़ाकर 1-4-86 से 12 प्रतिशत करना प्रस्तावित है।

वृद्धावस्था पेंशन :

सामाजिक दायित्व को वहन करने के लिये वृद्धावस्था पेंशन तथा विकलांगों व विधवाओं को दी जाने वाली पेंशन की राशि क्रमशः 40 रुपये के स्थान पर 50 रुपये एवं 60 रुपये के स्थान पर 80 रुपये करने का प्रस्ताव है। इससे लगभग 30 000 पेंशनरों को लाभ होगा। इसका वार्षिक भार प्रतिवर्ष एक करोड़ रुपये होगा।

वर्ष 1985-86 की वास्तविक स्थिति :

वर्ष 1985-86 के परिवर्तित बजट में वर्ष के अन्त में घाटा 23 88 करोड़ रुपये आंका गया था। तत्पश्चात् 3.37 करोड़ रुपये की विद्युत् दरों में कमी, 0.30 करोड़ रुपये की विद्युत् शुल्क मे छूट एवं 5.65 करोड़ रुपये की खदानों के नीचे आने वाली भूमि से संभावित आय में कमी होने के फलस्वरूप यह घाटा 33.20 करोड़ रुपये अनुमानित था। इस वर्ष केन्द्रीय करों से राज्य के हिस्से के रूप में प्रारम्भिक अनुमानों की तुलना में 35.48 करोड़ रुपये की अधिक राशि प्राप्त होगी। कुछ मदो में आय व व्यय के अन्तर के कारण 3.25 करोड़ रुपये की बचत अनुमानित है। इस प्रकार 33.20 करोड रुपये का प्रारम्भिक घाटा 5.53 करोड़ रुपये के अधिशेष में परिवर्तित होने का अनुमान है।

आय-व्ययक अनुमान 1986–87 :

वर्ष 1986-87 के बजट अनुमानो का संक्षिप्त विवरण इस प्रकार है —

	(करोड़ रुपयो मे)
1. राजस्व प्राप्तियां	1637.60
2. राजस्व व्यय	1707.63
3. राजस्व खाते में घाटा	(–) 70.03
4. पूंजीगत प्राप्तियां	628.66
5. योग (3+4)	(+) 558.63
6. पूंजीगत व्यय	636.04
7. शुद्ध घाटा (5–6)	(–) 77.41

वर्ष 1985–86 के अन्त में रही 5.53 करोड़ रुपये की संभावित बचत को कम करने से, वर्ष 1986-87 के अन्त में समग्र घाटा 71.88 करोड़ रुपये रहने अनुमान है।

राजस्थान एक दृष्टि में 1986-87

1. स्थिति	23.3 उत्तरी अक्षांश से 30.12 उत्तरी अक्षांश तक तथा 69.30 से 78.17 तक पूर्वी देशान्तर के मध्य स्थित राज्य का विस्तार 784 कि० मी० उत्तर से दक्षिण 850 कि० मी० पूर्व से पश्चिम तक।
क्षेत्रफल	3,42,239 वर्ग किलोमीटर
जनसंख्या	3,42,61,862
पुरुष	1,78,54,154
स्त्रिया	1,64,07,708
कुल ग्रामीण जनसंख्या	2,70,51,354
पुरुष	1,40,13,454
स्त्रियां	1,30,37,900
कुल नगरीय जनसंख्या	72,10,508
पुरुष	38,40,700
स्त्रियां	33,69,808
कुल जनसंख्या में	
अनुसूचित जाति	58,38,879 (17.04 प्रतिशत)
अनुसूचित जन जाति	41,83,124 (12.21 प्रतिशत)
जनसंख्या का घनत्व	100 व्यक्ति (प्रति वर्ग कि० मी०)
स्त्री पुरुष अनुपात	919 स्त्री (प्रति 1000 पुरुष)
स्त्री पुरुष नगरीय अनुपात	877 स्त्री (प्रति 1000 पुरुष)
स्त्री पुरुष ग्रामीण अनुपात	930 प्रति 1000 पुरुष
साक्षरता प्रतिशत	(1981 जनगणना) 24.38 प्रतिशत
पुरुष साक्षरता	(" ") 36.30 "
स्त्री साक्षरता	(" ") 11.42 "
ग्रामीण क्षेत्र में साक्षरता	(" ") 17.99 "
नगरीय क्षेत्र में साक्षरता	(" ") 48.35 "
जिले	(" ") 27

[illegible]	(" ") 87	
[illegible]	(" ") 203	
पंचायत समितियाँ	(" ") 236	
ग्राम पंचायतें	(" ") 7292	
नगर व कस्बे	(" ") 201	
कुल गांवों की संख्या	(" ") 37124	
आबाद ग्राम	(" ") 34,968	
गैर आबाद ग्राम	(" ") 2155	
[illegible]	(" ") 192	

2 कृषि

कृषि योग्य भूमि		26606 लाख हैक्टेयर
कुल फसलित क्षेत्र तथा लक्ष्य	1983–84	188.78 " "
"	1984–85	163.44 " "
अनुमानित	1985–86	159.78 " "
लक्ष्य	1986–87	180.75 " "
सिंचित क्षेत्र	1983–84	40.14 " "
सिंचित क्षेत्र (अनुमानित)	1985–86	40.07 " "
सिंचित क्षेत्र लक्ष्य	1986–87	44,25 " "
कुल खाद्यान्न उत्पादन	1983–84	180.76 लाख टन
अधिक उपज देने वाली किस्मों के अन्तर्गत क्षेत्रफल	1983–84	29.53 लाख हैक्टेयर
अधिक उपज देने वाली किस्मों के अन्तर्गत क्षेत्रफल	1984–85	26,88 " "
अधिक उपज देने वाली किस्मों के अन्तर्गत सम्भावित	1985–86	27.07 " "
अधिक उपज देने वाली किस्मों के अन्तर्गत लक्ष्य	1986–87	34.70 " "

3 सिंचाई

सिंचाई के लिए उपयोग किया जा सकने योग्य पानी	41.20,000 लाख घनफुट
चालू वृहद् योजनायें	सिद्धमुख, धौलबान्ध, जाखम, बिसलपुर, गुड़गांव नहर, भोला बैराज, नर्मदा, इन्दिरा गांधी नहर, माही बजाज सागर, व्यास परियोजना, नोहरफीडर, चम्बल द्वितीय चरण।

वृहद् परियोजनाओं पर 1984–85 583.03 लाख रुपये

चालू मध्यम परियोजनायें। मेजा फीडर, भीम सागर, हरिश्चन्द्र सागर, सूकली, चोली, सोमकागदर, सोमकमला अम्बा, पाचना, बान्दी, सेन्दरा, बामन, डाइवर्सन, वस्सी, कोठारी, सावन भादों, कानोता, बिलास, छापी, पवन लिफ्ट स्कीम, गरदडा।

मध्यम परियोजनाओं पर व्यय 1984–85 1257.17 लाख रुपये

लघु सिंचाई परियोजनाओं पर व्यय 1984–85 569.10 " "

निर्माण कार्य प्रगति पर 1986–87 2 वृहद् 13 मध्यम 93 लघु सिंचाई योजनायें।

✓इन्दिरागांधी नहर की कुल लम्बाई 649 किलोमीटर

✓इन्दिरा गांधी फिडर की लम्बाई 204 किलोमीटर

✓प्रथम चरण पर मार्च 1985 तक व्यय 226.57 करोड़ रुपये

✓द्वितीय चरण पर " " " 220.45 करोड़ रुपये

✓सिंचाई हुई 1984–85 4.16 लाख हेक्टेयर

4. वन

✓प्रदेश मे वनों का क्षेत्रफल 9 प्रतिशत

आरक्षित वनो का क्षेत्रफल 12843 कि० मी०

रक्षित वनों का क्षेत्रफल 15491.98 वर्ग कि० मी०

वर्गीकृत वनों का क्षेत्रफल 6270.78 वर्ग कि० मी०

कुल क्षेत्रफल 30506.38 वर्ग कि० मी०

वनो से आय 1984–85 9.18 करोड़ रुपये

✓राज्य मे वन्यजीव अभ्यारण। सरिस्का (अलवर) घना (भरतपुर) तालछापर (चूरु) दर्रा (कोटा) रणथम्भौर (सवाई माधोपुर) नाहरगढ (जयपुर) राष्ट्रीय मरू उद्यान (जैसलमेर) जयसमद (उदयपुर) रामसागर (भरतपुर) वन विहार (धौलपुर) रणकपुर (पाली) कुम्भलगढ (उदयपुर) आबू संरक्षण स्थल (सिरोही) रावली टाडगढ़ (अजमेर) पीपल खूट (बांसवाडा) फुलवाड़ी की नाल (उदयपुर) बारोदा (भरतपुर) आदि।

सीतामाता (चित्तौड़गढ़)

राष्ट्रीय उद्यान — (1) रणथम्भोर वन्य जीव अभयारण्य
(2) केवलादेव राष्ट्रीय उद्यान, भरतपुर
(3) राष्ट्रीय मरू उद्यान, जैसलमेर

वन्य उपज — तेंदू पत्ता, गोंद, शहद, मोम, कागज लकडी, कोयला, आवला, चारा, कत्था, बाँस, खस आदि

5- उद्योग

लघु उद्योगों की संख्या	(31-1-85) तक	1,22,304
वर्ष 1960 मे इनकी संख्या थी		1334
विनियोजित पूंजी	(31-1-86)	475.07 करोड रुपये
श्रमिकों की सख्या	मार्च, 86)	462 हजार
औद्योगिक क्षेत्र	(मार्च, 86)	171
जिला उद्योग केन्द्र		27
पंजीकृत कारखानों की सख्या	(85 मे)	8233

राजकीय उपक्रम के अन्तर्गत उद्योग . गंगानगर सुगर मिल्स लि०, हनुमानगढ, डिस्टिलरिया, प्रीसीज ग्लास लि०, धौलपुर, राजस्थान स्टेट टेनेरीज लि०, टोंक राजकीय राजस्थान ऊनी मिल्स लि० बीकानेर डीडवाना राजकीय लवण स्त्रोत, पत्रपदार, टी० बी० रिसीविंग सैट, ग्रेनाइट कटाई पालिस, टूलसकम टेस्टिंग सेन्टर, वेलनयान, घडी परियोजना आदि ।

औद्योगिक वित्त संस्थायें . राज० लघु उद्योग निगम, राजस्थान राज्य औद्योगिक विकास एवं विनियोजना निगम, राजस्थान वित्त निगम, राजस्थान खादी एवं ग्रामोद्योग बोर्ड, राजस्थान कृषि उद्योग (RAIC) निगम, राजस्थान हाथ करघा विकास निगम।

राजस्थान वित्त निगम द्वारा ऋण स्वीकृत	(1984-85)	54.10 करोड़ रुपये
ऋण वितरित	(1984-85)	39.29 करोड़ रुपये
85-86 में जनवरी,86 तक		41.27 ,, ,,
ऋण स्वीकृति ,, ,,		24.74 ,, ,,
ऋण वितरित ,, ,,		

6. विद्युत

विद्युतिकृत कुओं की संख्या 289574

विद्युतिकृत ग्रामों की कुल संख्या 21409

कुल विद्युत उपलब्धता (84-85) 5821 मि. यू.

राज्य की विजली अधिष्ठापित (फरवरी, 86 तक) 1803.16 मे. वा. क्षमता

7. पेयजल

नगरीय जलदाय योजना	शत प्रतिशत	(सभी 201 नगर लाभान्वित)
लाभान्वित ग्राम	(दिसम्बर, 85)	23663
लाभान्वित ग्राम	(85-86)	1350

8. पशुपालन

पशुधन संख्या	(पशुगणना, 1983)		4 95 करोड़
गौवंश	,,	,,	134.66 लाख
भैंस	,,	,,	60.35 ,,
भेड वंश	,,	,,	132.86 ,,
बकरे-बकरियां	,,	,,	154.10 ,,
ऊंट वंश	,,	,,	7.35 ,,
शूकर वंश	,,	,,	1.79 ,,
अन्य	,,	,,	2.57 ,,

वार्षिक उत्पादन 35 5 लाख टन दूध, 1700 लाख अण्डे, 17.50 हजार टन मांस

पशुधन पर वित्तीय आवंटन	(86-87)	375 लाख रुपये	प्रस्तावित
पशुधन पर वित्तीय आवंटन	(85-86)	330 ,, ,,	अनुमानित
पशु चिकित्सा संस्थायें	(फरवरी, 86)	1083	
मछली उत्पादन से आय	(84-85)	138.81 लाख रुपये	
मछली उत्पादन से आय	(85-86) फरवरी, 86 तक	90 लाख रुपये	
मछली उत्पादन	(84-85)	16 हजार मै. टन	
कुक्कुट संख्या		22 लाख	
राज्य स्तरीय कुक्कुट शालायें		2	
वायलर फार्म		3	
सघन कुक्कुट विकास खण्ड		10	

भेड़ों की संख्या		1.34 करोड़
ऊन उत्पादन (वार्षिक)		1.56 करोड़ कि० ग्रा०
भेड़ पालक परिवार लगभग		2 लाख
भेड़ पालक जिला कार्यालय		17
भेड़ ऊन प्रसार केन्द्र		135
भेड़ कृत्रिम गर्भाधान केन्द्र		32

9. पर्यटन

राज्य में पर्यटकों की संख्या	(1985)	33.90 लाख
,, ,, स्वदेशी		31.21 ,,
,, ,, स्वदेशी		2.69 ,,
पर्यटन आवास		33
शैय्यायें		1707

10. सहकारिता

सहकारी समितियों की संख्या	(जून, 85 तक)	18696
,, ,, सदस्यों की संख्या	,, ,,	58.83 लाख
गोदामों का निर्माण	(1979–80 से मार्च, 86 तक)	2833
गोदामों की भण्डारण क्षमता		255200 मै. टन

11. डेयरी

जिला दुग्ध उत्पादन सहकारी संघ	(85–86)	14
दुग्ध उत्पादक सहकारी समितियां एवं संग्रहण केन्द्र (1985–86 में दिसम्बर, 1985 तक)		4206
दुग्ध उत्पादक लाभान्वित परिवार	(85-86 में दिसम्बर, 85 तक)	2.14 लाख
दुग्ध संग्रहण	(84–85)	18.08 करोड़ लीटर
दुग्ध संग्रहण लक्ष्य	(85–86)	17.52 करोड़ लि०
डेयरी संयंत्र		8
कुल क्षमता (दैनिक)		7.50 लाख लीटर
अवशीतन केन्द्र		23
दुग्ध संकलन (औसत प्रतिदिन)		8.25 लाख लीटर
पशु आहार संयंत्र		5
पशु खाद्य वितरण	(1984–85)	29179 मै. टन

12-चिकित्सा एवं स्वास्थ्य

1-चिकित्सालय (फरवरी 86 तक)	186
2-सामुदायिक स्वास्थ्य केन्द्र	25
3-ग्रोपधालय	763
4-प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र	388
5-प्रा० स्वा० केन्द्र उच्चीकृत	51
6-(क) ब्लाक प्रा० स्वा० केन्द्र	236
(ख) नये प्रा० स्वा० केन्द्र/सहायक स्वास्थ्य केन्द्र	252
6-मातृ शिशु कल्याण केन्द्र	111
7-परिवार कल्याण केन्द्र	390
8-लघु स्वास्थ्य केन्द्र (जनजाति क्षेत्र)	17
9-एडपोस्ट	280
10-उप केन्द्र (उच्चीकृत)	4261 (471)
11-रोगी शैय्याएं	22,261
12-ग्रायुर्वेदिक चिकित्सालय एवं ग्रोपधालय	3046
13-होमियोपैथिक	80
14-यूनानी	72
15-प्राकृतिक चिकित्सालय	3
16-चल चिकित्सालय	8
17-रोगी शैय्याएं	1118

13-सडकें

सड़कों की कुल लम्बाई	मार्च, 1986	49311 कि० मी०
डामर व पक्की सडकों की लम्बाई		37617 " "

14-परिवहन

पंजीकृत वाहन	(दिसम्बर, 85)	554388

15-पथ परिवहन निगम

यात्री वाहनों की संख्या (सार्वजनिक एवं ग्रनुबंधित)	मार्च, 85	2591
मार्गों की संख्या	82-83	1162
" "	83-84	1179

मार्गों की संख्या	84–85	1352
मार्ग किलोमीटर	(31 मार्च, 85)	180607
राष्ट्रीय मार्ग की लम्बाई	(मार्च, 85)	15134 कि० मी०

16–खनिज

राज्य नियंत्रित संस्थान	(1) राजस्थान स्टेट मिनरल डवलपमेन्ट कारपोरेशन लि. जयपुर (2) राजस्थान स्टेट माइन्स एण्ड मिनरल लि० उदयपुर।
सीमेन्ट कारखाने	7
कुल उत्पादन क्षमता	52 लाख टन वार्षिक
प्रधान खनिज	राज्य में लगभग 7 प्रकार के धात्विक, 45 प्रकार के अधात्विक एवं अनेक अप्रधान खनिज पाये जाते है।

17–शिक्षा

साक्षरता प्रतिशत	(1981)	24.38
प्राथमिक एवं उच्च प्राथमिक विद्यालय	(85–86)	35,508
माध्यमिक एवं उच्च माध्यमिक विद्यालय	" "	2944
मेडिकल कालेज		5
नर्सिंग महा विद्यालय		1
आयुर्वेद संस्थान		5
विधि महा विद्यालय		3
राजकीय महा विद्यालय		63
अनुदान प्राप्त महा विद्यालय		46
असहायता प्राप्त महा विद्यालय		26
बहु संकाय सम्बद्ध महा विद्यालय		128
संस्कृत महा विद्यालय		32
शिक्षक प्रशिक्षण महा विद्यालय		34
इंजीनियरिंग कालेज		5
पोलिटेकनिक कालेज		13
राजकीय एवं निजी औद्योगिक प्रशिक्षण संस्थान		48

क्रीड़ा परिषद — राजस्थान राज्य क्रीडा परिषद, जयपुर

अकादमी — राजस्थान साहित्य अकादमी, राजस्थान सिंधी अकादमी, राजस्थान संस्कृत अकादमी, राजस्थान हिन्दी ग्रंथ अकादमी राजस्थान उर्दू अकादमी, राजस्थानी भाषा साहित्य एवं संस्कृति अकादमी, श्री ब्रज भाषा अकादमी, राजस्थान ललित कला अकादमी

18–विधान सभा दलीय स्थिति

कुल सदस्य संख्या	200
काग्रेस (इ)	115
भारतीय जनता पार्टी	38
जनता पार्टी (जे. पी.)	10
लोकदल	27
सी. पी आई. एम.	1
निर्दलीय	9

19–लोकसभा दलीय स्थिति

काग्रेस (इ)	25 सदस्य
राज्य सभा मे राजस्थान के सदस्यों की संख्या	10

20–लोक सेवा आयोग राजस्थान, अजमेर

अध्यक्ष	श्री जे. एम. खान
सचिव	श्री दयाशकर शर्मा
सदस्य	श्री भवानी मल माथुर
	श्री धूल सिंह
	श्री देवी सिंह सारस्वत

21. निदेशक सूचना एवं जन सम्पर्क निदेशालय, जयपुर। — श्री एस॰ एन॰ सिंह

22. राजस्थान हाइकोर्ट — जोधपुर

राजस्थान हाइकोर्ट बेंच	जयपुर
1. श्री गुमानमल लोढा	न्यायाधीश
2. श्री एन॰ एम॰ कासलीवाल	"

3. श्री एस० सी० अग्रवाल	,,
4 श्री एम० एन० भार्गव	,,
5. श्री डी० एल० मेहता	,,
6. श्री जी० के० शर्मा	,,
7. श्री वी० एस० दवे	,,
8. श्री एम० बी० शर्मा	,,
9. श्री पी० सी० जैन	,,
10. श्री आई० एस० इसरानी	,,
11. श्री फारूख हसन	,,
12. श्रीमती मोहनी कपूर	,,
13. श्री सकठाराय	रजिस्ट्रार
14 श्री सुनीलकुमार गर्ग	अतिरिक्त रजिस्ट्रार

राजस्थान हाईकोर्ट **जोधपुर**

1. श्री जी० एम० लोढा	मुख्य न्यायाधीश (कार्यवाहक)
2. श्री एस० के० लोढा	न्यायाधीश
3. श्री एम० सी० जैन	,,
4. श्री के० सी० लोढा	,,
5. श्री एस० एस० व्यास	,,
6. सुश्री कान्ताकुमारी भटनागर	,,
7. श्री जे० आर० चोपडा	,,
8. श्री एस० एम० जैन	,,
9 श्री ए० के० माथुर	,,
10. श्री संकठाराय	,,
11. श्री निरंजन सिंह	,,

23. राजस्व मण्डल अजमेर

1. श्री ए० एम० लाल	अध्यक्ष
2. श्री रामखिलाडी	रजिस्ट्रार
3. श्री एम० डी० कोरानी	सदस्य
4. श्री शोभालाल दशोरा	,,
5. श्री टी० वी० रमणन	,,
6 श्री हरीश नैय्यर	,,
7. श्री नवीनचन्द शर्मा	,,
8. श्री चन्द्रप्रकाश	,,
9. श्री आर० के० नायर	,,
10. श्रीमती चित्रा चोपड़ा	,,
11. श्री धर्मसिंह मीणा	,,
12. श्री सुरेन्द्रकुमार	,,
13. श्री एल० सी० गुप्ता	,,

परिशिष्ट–1

राजस्थान तब और अब

मद	इकाई	1950–51	1980–81	81–82	82–83	83–84	84–85	85–86	86–87
1—कृषि									
(अ) खाद्यान्न उत्पादन	लाख टन	29.46	65.02	66.00	73.46	108.10	100.57	100.76	
(ब) अधिक उपज देने वाली फसलों का क्षेत्रफल	लाख है०	—	19.07	24–25	24.25	27.36	28.91	27.07	
2—सिंचाई									
कुल सिंचित क्षेत्र 84–85	लाख है०	11.71	30 95	40.84	40 84	38.28	40.88	39.01	
3—विद्युत									
(अ) उपलब्ध विद्युत क्षमता	मेगावाट	8	820 00	5106.00	1240.34	1713 17	1751.00	1803.16	
(ब) विद्युतीकृत ग्राम/नगर कस्बे/ढाणियां	संख्या	42	15440	16122	16862	19077	20271	21409	
(स) कुओं पर विजली			2,13.762	225526	238725	25700	12,74,971	289540	
4—उद्योग									
(अ) औद्योगिक इकाइयां	संख्या	—	42298	65000	826000	101081	1,12,724	1,24,000	
(ब) औद्योगिक क्षेत्र	"	—	134	134	145	148	161	171	
5—पशुपालन									
पशु चिकित्सालय एवं औषधालय	संख्या	145	657	687	587	587	1027	1083	
6—चिकित्सा एवं स्वास्थ्य सेवायें									
(अ) ऐलोपैथिक चिकित्सालय/ प्राथमिक स्वास्थ्य एव एडपोस्ट	संख्या	390	1169	1344	1318	1285	1281	1617	

मद	इकाई	1950-51	80-81	81-82	82-83	83-84	84-85	85-86	86-87
(ब) आयुर्वेदिक एवं यूनानी चिकित्सालय एवं औषधालय	संख्या	1350	2484	2528	2601	2854	3117	3118	
(स) होमियोपैथिक चिकित्सा	,,	—	63	63	63	63	80	3	
(द) चल चिकित्सालय	,,	—	2	2	2	2	2	80	
7—पेयजल									
(अ) नगरीय योजनाएं	संख्या	5	201 सभी नगरों में	201	201	201	201	201	
(ब) ग्रामीण योजनाएं	,,	—	11777	11777	14550	20,000	22,262	23752	
8—शिक्षा प्रसार									
(अ) प्राथमिक विद्यालय	संख्या	4494	27558	22840	23125	24672	27558	27558	
(ब) उच्च प्राथमिक विद्यालय	,,	834	7950	5597	5597	6745	7950	7950	
(स) माध्य एवं उच्च मा. वि.	,,	20	2944	2482	3025	2553	2944	2944	
(द) महा विद्यालय	,,	51	135	148	148	149	132	135	
(उ) विश्वविद्यालय	,,	1	5	3	3	5	5	5	
(ऊ) साक्षरता	प्रतिशत	8.95	24.38	24.05	24.05	24.38	24.38	24.38	
9—सड़कें	किलोमीटर	18,749	43311	41420	44691	48422	47709	49311	
10—सहकारिता									
(अ) सहकारी समितियां	संख्या	3,590	18696	18275	18275	18275 (जुला. 83)	18440 (जून. 84)	18696	
(ब) सदस्य संख्या	,,	1,45,000	5883000	43,05000	50,78000	5417000	5691000	5883000	

परिशिष्ट–2

राज्य विधानसभा के सदस्य

जिला	विधानसभा क्षेत्र	सदस्य का नाम	पार्टी
1	2	3	4
गंगानगर	भादरा	लालचन्द	लोकदल
	नोहर	लक्ष्मीनारायण	कांग्रेस (ई)
	टीबा	डूंगरराम	लोकदल
	गंगानगर	केदारनाथ	जनता
	हनुमानगढ़	श्योपतसिंह	माकपा
	केसरीसिंहपुर	हीरालाल इन्दोरा	कां. (ई)
	करणपुर	इकबाल कौर	कां. (ई)
	पीलीबंगा	जीवराजसिंह	कां. (ई)
	सूरतगढ़	हंसराज	जनता
	सांगरिया	कृष्णचन्द्र	कां (ई)
	रायसिंहनगर	मनफूलराम	"
बीकानेर	लूणकरणसर	माणकचन्द सुराना	जनता
	बीकानेर	बी. डी. कल्ला	कां. (ई)
	नोखा	चुन्नीलाल	लोकदल
	कोलायत	देवीसिंह	जनता
चूरू	चूरू	हमीदा बेगम	कां. (ई)
	सरदारशहर	भंवरलाल	भाजपा
	तारानगर	जयनारायण	जनता
	डूंगरगढ़	रेवतराम	कां. (ई)
	रतनगढ़	हरिशंकर भाभड़ा	भाजपा
	सुजानगढ़	फुन्नीलाल मेघवाल	"
	सादुलपुर	इन्द्रसिंह	कां. (ई)
झुन्झुनू	पिलानी	सुमित्रासिंह	लोकदल
	झुन्झुनू	शीशराम ओला	कां (ई)

1	2	3	4
	सूरजगढ़	सुन्दरलाल	,,
	गुढ़ा	भोलाराम	कां (ई)
	मण्डावा	सुधा	,,
	नवलगढ़	नवरंगसिंह	लोकदल
	खेतड़ी	मालाराम	भाजपा
सीकर	फतेहपुर	मकबूली	कां (ई)
	धोद	रामदेवसिंह	,,
	सीकर	घनश्याम तिवाड़ी	भाजपा
	नीम का थाना	फूलचंद	,,
	खण्डेला	महादेवसिंह	कां (ई)
	श्रीमाधोपुर	हरलालसिंह खर्रा	भाजपा
	दाता रामगढ़	नारायणसिंह	कां (ई)
	लक्ष्मणगढ़	केसरदेवी	लोकदल
जयपुर	चौमूं	रामेश्वरदयाल	,,
	जौहरी बाजार	कालीचरण सर्राफ	भाजपा
	किशनपोल	गिरधारीलाल भार्गव	,,
	बनीपार्क	शिवराम शर्मा	कां (ई)
	बस्सी	जगदीश तिवाड़ी	,,
	जमुवारामगढ	भैरूलाल भारद्वाज	,,
	बैराठ	श्रीमती कमला	,,
	दूदू	जयकिशन	,,
	फुलेरा	लक्ष्मीनारायण	लोकदल
	लालसोट	परसादी	कां (ई)
	कोटपूतली	मुक्तिलाल	निर्दलीय
	जयपुर ग्रामीण	श्रीमती उजला अरोड़	भाजपा
	आमेर	रामप्रताप कटारिया	कां (ई)
	सागानेर	श्रीमती विद्यापाठक	भाजपा
	सिकराय	प्रभुदयाल	कां (ई)
	बांदीकुई	चन्द्रशेखर शर्मा	,,
	दौसा	भूदरमल	,,
	हवामहल	भवरलाल शर्मा	भाजपा
	फागी	जयनारायण	कां (ई)

1	[illegible]	3	4
अलवर	अलवर	पुष्पादेवी	का (ई)
	राजगढ़	रामधन	"
	बहरोड़	सुजानसिंह	"
	बानसूर	जगतसिंह	लोकदल
	तिजारा	जगमालसिंह	"
	रामगढ	रघुवरदयाल	भाजपा
	लक्ष्मणगढ़	ईश्वरलाल सैनी	का (ई)
	थानागाजी	राजेश	"
	खैरथल	चन्द्रशेखर	"
	कठूमर	बाबूलाल	"
	मुन्डावर	महेन्द्र शास्त्री	लोकदल
भरतपुर	नगर	सम्पतसिंह	"
	कुम्हेर	नत्थीसिंह	"
	वैर	जगन्नाथ पहाड़िया	का (ई)
	रूपवास	विजयसिंह	"
	बयाना	ब्रिजेन्द्रसिंह	"
	कामाँ	शमशुल हसन	"
	नदबई	यदुनाथसिंह	लोकदल
	डीग	कृष्णेन्द्र कौर	निर्दलीय
	भरतपुर	गिरिराजप्रसाद तिवाड़ी	का (ई)
धौलपुर	बाड़ी	वसुन्धरा राजे	भाजपा
	धौलपुर	मोहनप्रकाश	लोकदल
	राजाखेड़ा	मोहनप्रकाश	लोकदल
सवाई माधोपुर	महुआ	किरोड़ीलाल	भाजपा
	टोडाभीम	मूलचन्द	काँ (ई)
	करौली	शिवचरणसिंह	भाजपा
	सवाई माधोपुर	मोतीलाल	निर्दलीय
	खंडार	रामगोपाल सिसोदिया	का (ई)
	हिण्डौन	उम्मेदीलाल	"
	गंगापुर	हरिश्चन्द्र पालीवाल	"
	बामनवास	भरतलाल	"

1	2	3	4
	सपोटरा	रिषीकेश	,,
अजमेर	केकड़ी	ललित भाटी	,,
	मसूदा	सोहनसिंह	,,
	ब्यावर	माणकचन्द दाणी	,,
	किशनगढ़	जगजीतसिंह	भाजपा
	पुष्कर	रमजान खान	भाजपा
	भिनाय	नीलिमा शर्मा	का (ई)
	नसीराबाद	गोविन्दसिंह	,,
	अजमेर पूर्व	डा. राजकुमार जयपाल	कां (ई)
	अजमेर पश्चिम	किशन मोटवानी	,,
टोंक	निवाई	प्यारसीलाल	भाजपा
	टोडारायसिंह	नाथूसिंह	भाजपा
	मालपुरा	नारायणसिंह	जनता
	उनियारा	दिग्विजय सिंह	,,
	टोंक	जकिया ईनाम	का (ई)
बूंदी	बूंदी	हरिमोहन	का (ई)
	हिण्डोली	गणेशलाल	भाजपा
	नैनवा	प्रभुलाल	,,
	पाटन	मांगीलाल	,,
कोटा	लाडपुरा	रामकिशन	का (ई)
	कोटा	ललित किशोर चतुर्वेदी	भाजपा
	छबडा	प्रतापसिंह	,,
	दीगोद	दाऊदयाल जोशी	,,
	अटरू	मदन महाराज	का (ई)
	रामगंज मण्डी	हरिकुमार	भाजपा
	बारा	शिवनारायण	कां (ई)
	किशनगंज	हीरालाल आर्य	निर्दलीय
	पीपलदा	हीरालाल आर्य	भाजपा
झालावाड़	झालरापाटन	ज्वालाप्रसाद	का (ई)
	खानपुर	हरीश	भाजपा
	पिड़ावा	इकबाल अहमद	कां (ई)

1	2	3	4
	मनोहर थाना	जगन्नाथ	भाजपा
	डग	दीपचन्द	का (ई)
चित्तौड़गढ़	बेंगूं	पकज पचोली	का (ई)
	चित्तौड़गढ़	लक्ष्मणसिंह	,,
	प्रतापगढ़	धनराज मीणा	,,
	गगरार	अमरचन्द	,,
	कपासन	दीनबन्धु वर्मा	,,
	बड़ी मादड़ी	उदयराम धाकड़	,,
	निम्बाहेड़ा	भैरोंसिंह शेखावत	भाजपा
बांसवाड़ा	कुशलगढ़	वरसिंह	का (ई)
	दानपुर	बहादुरसिंह	लोकदल
	घाटोल	नवनीतलाल	भाजपा
	बांसवाड़ा	हरिदेव जोशी	का (ई)
	बागीडोरा	पन्नालाल	,,
डूंगरपुर	सागवाड़ा	कमलादेवी	,,
	डूंगरपुर	नाथूराम	,,
	चौरासी	शकरलाल	,,
	आसपुर	महेन्द्रकुमार	,,
उदयपुर	लसाड़िया	कमल्या	,,
	वल्लभ नगर	गुलाबसिंह	,,
	मावली	हनुमानप्रसाद प्रभाकर	,,
	राजसमन्द	मदनलाल	,,
	नाथद्वारा	सी. पी. जोशी	,,
	उदयपुर	गिरीजा व्यास	,,
	उदयपुर ग्रामीण	खेमराज कटारा	,,
	सलुम्बर	थानसिंह	,,
	सराड़ा	भैरूलाल मीणा	,,
	खेरवाड़ा	दयाराम	निर्दलीय
	फलासिया	कुबेरसिंह	कां (ई)
	कुम्भलगढ़	हीरालाल देवपुरा	,,
	भीम	लक्ष्मणसिंह	,,
	गोगून्दा	देवेन्द्रकुमार मीणा	,,

1	2	3	4
भीलवाड़ा	मांडल	बिहारीलाल पारीक	,,
	माडलगढ़	शिवचरण माथुर	,,
	बनेड़ा	रामचन्द्र जाट	जनता
	शाहपुरा	देवीलाल	कां (ई)
	सहाड़ा	रामपाल उपाध्याय	,,
	आसीन्द	ब्रजेन्द्रपालसिंह	निर्दलीय
	भीलवाड़ा	अनवीर	कां (ई)
	जहाजपुर	रतनलाल ताम्बी	,,
पाली	पाली	पुष्पा जैन	भाजपा
	बाली	रघुनाथ	का (ई)
	रायपुर	हीरासिंह चौहान	भाजपा
	जैतारण	प्रतापसिंह	कां (ई)
	देसूरी	पोकरलाल परिहार	,,
	खारची	खगारसिंह चौधरी	भाजपा
	सोजत	माधोसिंह दीवान	का (ई)
	सुमेरपुर	बीना काक	,,
सिरोही	सिरोही	रामलाल	,,
	पिंडवाड़ा	सुरमाराम	,,
	रेवदर	छोगाराम	,,
जालोर	साचोर	रघुनाथ	,,
	आहोर	भगराज चौधरी	लोकदल
	रानीवाड़ा	अर्जुनसिंह	निर्दलीय
	जालोर	मागीलाल आर्य	का (ई)
	भीनमाल	सूरजपालसिंह	,,
बाड़मेर	शिव	उम्मेदसिंह	जनता
	बाड़मेर	गगाराम	लोकदल
	चौहटन	अब्दुल हादी	,,
	सिवाना	मोटाराम	कां (ई)
	पचपदरा	चम्पालाल	भाजपा
	गुढ़ामालानी	हेमाराम चौधरी	का (ई)
जैसलमेर	जैसलमेर	मुल्तानाराम	निर्दलीय

1	2	3	4
जोधपुर	शेरगढ़	रतनकंवर	भाजपा
	जोधपुर	विरादमल	,,
	फलोदी	मोहनलाल	निर्दलीय
	सरदारपुरा	मानसिंह देवड़ा	का (ई)
	सूरसागर	नरपतराम	,,
	भोपालगढ	नारायणराम बेड़ा	लोकदल
	लूनी	रामसिंह	का (ई)
	बिलाड़ा	राजेन्द्र चौधरी	,,
	ओसिया	नरेन्द्रसिंह भाटी	,,
नागौर जिला	नागौर	दामोदरदास	,,
	डीडवाना	भंवराराम	,,
	परबतसर	मोहनलाल	लोकदल
	मकराना	अब्दुल अजीज	,,
	डेगाना	कल्याणसिंह	जनत
	मेड़ता	नाथूराम मिर्धा	लोकदला
	लाडनूं	हरजीराम	,,
	जायल	मोहनलाल	,,
	मूंडवा	रामदेव	,,
\२००)	नावा	हरिशचंद्र	भाजपा

लोकसभा सदस्य

क्रम स. 1	निर्वाचन क्षेत्र 2	सदस्य का नाम 3	पार्टी 4
1.	गंगानगर	बीरबल राम	का (ई)
2.	बीकानेर	मनफूलसिंह चौधरी	,,
3.	अलवर	रामसिंह यादव	,,
4.	भरतपुर	नटवरसिंह	,,
5.	बयाना	लालाराम केन	,,
6.	सवाई माधोपुर	रामकुमार मीणा	,,
7.	टोंक	बनवारीलाल बैरवा	,,
8.	अजमेर	विष्णु मोदी	,,
9.	चित्तोड़	श्रीमती निर्मलासिंह	,,

1	2	3	4
10	बांसवाड़ा	प्रभूलाल	,,
11.	सलूम्बर	भलगाराम	,,
12.	उदयपुर	इन्दुबाला	,,
13.	भीलवाड़ा	गिरधारीलाल व्यास	,,
14.	पाली	मूलचन्द डागा	,,
15.	जालोर	बूटासिंह	,,
16.	बाड़मेर	वृद्धिचन्द जैन	,,
17.	जोधपुर	अशोक गहलोत	,,
18.	दौसा	राजेश पाइलेट	,,
19.	चूरू	नरेन्द्र बुडानिया	,,
20.	सीकर	बलराम जाखड़	,,
21.	झुन्झुनू	अयूब खां	,,
22.	जयपुर	नवलकिशोर शर्मा	,,
23.	कोटा	शांति धारीवाल	,,
24.	झालावाड़	जुझारसिंह	,,
25.	नागौर	रामनिवास मिर्धा	,,

मंत्रिगण

(1) श्री हरिदेव जोशी—मुख्य मंत्री कार्मिक एवं प्रशासनिक सुधार विभाग। सामान्य प्रशासन विभाग। राजनैतिक विभाग। मंत्रिमण्डल सचिवालय। गृह विभाग। भ्रष्टाचार निरोधक विभाग। आयोजना विभाग। वित्त विभाग। करारोपण विभाग। आबकारी विभाग। राजकीय उपक्रम विभाग। उद्योग विभाग। खान विभाग। सूचना एवं जन सम्पर्क विभाग। ~~जन स्वास्थ्य अभियान्त्रिकी विभाग~~। भू-जल विभाग।

(2) श्री हीरालाल देवपुरा—शिक्षा मंत्री ~~महाविद्यालय एवं विश्व-विद्यालय एवं शिक्षा विभाग। प्राथमिक एवं माध्यमिक शिक्षा विभाग। रोजगार एवं प्राथमिक शिक्षा विभाग। संस्कृत शिक्षा विभाग। भाषा विभाग~~। चिकित्सा एवं स्वास्थ्य विभाग। श्रम विभाग। विधि एवं न्याय विभाग। रावी व्यास नदियों के सिस्टम से सम्बन्धित कार्य। आयुर्वेद विभाग।

(3) श्रीमती कमला—राजस्व मंत्री राजस्व एवं भूमि सुधार विभाग। उप निवेशन विभाग (सिंचित क्षेत्रीय विकास विभाग को छोड़कर) इंदिरा गांधी नहर परियोजना विभाग। सिंचित क्षेत्रीय विकास विभाग। इंदिरा गांधी नहर परियोजना क्षेत्र की जन स्वास्थ्य अभियान्त्रिकी विभाग से सम्बन्धित समस्त योजना एवं

कार्य । कला, संस्कृति एवं पुरातत्व विभाग । पर्यटन विभाग ।

(4) श्री रामदेव सिंह,-सहकारिता मंत्री — सहकारिता विभाग। पशुपालन विभाग । दुग्ध विकास विभाग । भेड एवं ऊन विभाग । मत्स्य विभाग ।

(5) श्री गुलाब सिंह शक्तावत-सिंचाई मंत्री — सिंचाई विभाग (रावी व्यास नदियों के सिस्टम से सम्बन्धित कार्य को छोडकर) । ऊर्जा विभाग । सार्वजनिक निर्माण विभाग । बाढ एवं अकाल सहायता विभाग । संसदीय मामलात विभाग विशिष्ट योजना संगठन । गृह, PHED.

(6) श्री शीश राम ओला-वन मंत्री— वन विभाग (बंजर भूमि विकास कार्य सहित) पर्यावरण विभाग । सैनिक कल्याण विभाग । यातायात विभाग ।

(7) श्री छोगाराम बाकोलिया,-खाद्य एवं आपूर्ति मंत्री—खाद्य एवं आपूर्ति विभाग ।

निम्नांकित राज्य मंत्रीगण उनके नाम के आगे उल्लेखित विभागों का कार्य स्वतंत्र चार्ज के रूप में सभालेंगे ।

(1) श्री हीरालाल इन्दौरा— जेल (कारागार) विभाग । स्टेट मोटर गैरेज विभाग ।

(2) श्री दामोदर दास आचार्य —पुनर्वास विभाग । भाषायी अल्पसंख्यक विभाग । चुनाव विभाग ।

(3) श्री मूलचन्द मीणा — नागरिक सुरक्षा एवं होमगार्ड विभाग ।

(4) श्री महेन्द्र कुमार भील – खेलकूद विभाग ।

(5) श्री राम किशन वर्मा– मुद्रण एवं लेखन सामग्री विभाग । आर्थिक एवं सांख्यकी विभाग ।

(6) श्रीमती जाकिया इनाम – परिवार कल्याण विभाग ।

(7) श्री सुजानसिंह यादव – स्वायत शासन विभाग । नगर विकास एवं आवासन विभाग । नगर आयोजना विभाग ।

निम्नांकित राज्य मंत्रिगण उनके समक्ष अंकित मंत्रिगण को उनके विभागों के कार्य सम्पादन में सहायता देंगे ।

(1) श्री हीरालाल इन्दौरा

मुख्य मंत्री के निम्न विभागों के कार्य सम्पादन में सहायता देंगे :—

आयोजना विभाग । वित्त विभाग । करारोपण विभाग । आबकारी विभाग । उद्योग विभाग । राजकीय उपक्रम विभाग । खान विभाग ।

(2) श्री दामोदर दास आचार्य – श्री गुलाब सिंह शक्तावत, सिंचाई मंत्री को उनके समस्त विभागों के कार्य संचालन में सहायता देंगे ।

(3) श्री मूलचन्द मीणा – श्री रामदेव सिंह, सहकारिता मंत्री को। पशुपालन । दुग्ध विकास विभाग । भेड एवं ऊन विभाग । मत्स्य विभाग के कार्य संचालन में

सहायता देंगे ।

(4) श्री महेन्द्र कुमार भील—ग्रामीण विकास एवं पंचायत राज मंत्री के समस्त विभागों के कार्य सचालन में सहायता देंगे ।

(5) श्री रामकिशन वर्मा — श्री रामदेव सिंह, सहकारिता मंत्री को सहकारिता विभाग के कार्य संचालन में सहायतादेंगे ।

(6) श्रीमती जकिय इनाम — श्री हीरालाल देवपुरा, शिक्षा मंत्री को उनके समस्त विभागों के कार्य सचालन में सहायता देंगी ।

(7) श्री सुजानसिंह यादव — मुख्य मत्री जी के निम्न विभागो के कार्य में सहायता देंगे । गृह विभाग । भ्रष्टाचार निरोधक विभाग । सूचना एवं सम्पर्क विभाग । जन स्वास्थ्य अभियान्त्रिकी विभाग । भू-जल विभाग । श्री शीशराम ओला, वन मत्री को यातायात विभाग के कार्य सचालन मे सहायता देंगे ।

उप मंत्री

(1) श्रीमती बीना काक —मुख्य मंत्रीजी को उनके निम्न विभागों के संचालन मे सहायता देंगी । कार्मिक एव प्रशासनिक सुधार विभाग । सामान्य प्रशासन विभाग । राजनैतिक विभाग । मत्री मण्डल सचिवालय इसके अलावा वे श्रीमती कमला, राजस्व मत्री को उनके समस्त विभागो के कार्य संचालन में सहायता देंगी ।

राज्यसभा सदस्य

1. श्री कृष्ण कुमार बिरला	निर्दलीय
,, जसवंत सिंह	भा. ज. पा.
,, धूलेश्वर मीणा	का (ई)
,, नत्था सिंह	,,
,, भीम राज	,,
, भुवनेश चतुर्वेदी	,,
श्रीमती शान्ती पहाडिया	,,
श्री भंवर लाल	,,
,, हरि प्रसाद शर्मा	,,
10. ,, संतोष कुमार	,,